ISSN 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer- Reviewed Research Journal

UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 7.0 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©
ProQuest, U.S.A. Title Id: 715205

अंक 43 हिन्दी संस्करण वर्ष - 22 जुलाई-दिसम्बर 2025

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

2025
www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 7.0 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest
U.S.A. Title Id : 715205

अंक-43 | हिन्दी संस्करण | वर्ष-22 | जुलाई-दिसम्बर 2025

डॉ. अखिलेश शुक्ल
ऑनरेरी सम्पादक
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
सेवानिवृत्त आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. अरविंद जोशी, सेवानिवृत आचार्य, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी
arvindvns@outlook.com
2. डॉ. रामशंकर, कुलपति, पं. शम्भूनाथ शुक्ल विश्वविद्यालय, शहडोल
rs_dubey@yahoo.com
3. डॉ. डी. एस. राजपूत, आचार्य, डॉक्टर हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर
drdiwakarrajeut@rediffmail.com
4. डॉ. बी. के. सिंह, आचार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी
imdrbrajesh.kv@gmail.com
5. डॉ. अंजली श्रीवास्तव, सेवानिवृत आचार्य, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
anjali_apsu@rediffmail.com
6. डॉ. बी. पी. बडोला, सेवानिवृत्त आचार्य, कांगड़ा हिमाचंल प्रदेश
bpbadola@gmail.com
7. डॉ. आभा सक्सेना, सह प्राध्यापक, अग्रसेन कन्या स्वशासी महाविद्यालय वाराणसी
drabhasaxena7@gmail.com
8. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, आचार्य, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट
pragyamishramgcgv@gmail.com
9. डॉ. आशीष सक्सेना, आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश।
ashish.ju@gmail.com
10. डॉ. ज्योति उपाध्याय, आचार्य, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मध्य प्रदेश
drjyotiupadhyay11@gmail.com
11. डॉ. प्रमिला पुनिया, सह प्राध्यापक, इतिहास, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर राजस्थान
pramilapoonia@rediffmail.com
12. डॉ. मृदुल जोशी, आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
dr_mriduljoshi@yahoo.com
13. डॉ. शैलजा दुबे, प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय भोपाल
shailjadubey70@yahho.in
14. डॉ. प्रमिला श्रीवास्तव, आचार्य, शासकीय कला महाविद्यालय कोटा राजस्थान
dr21pramila@gmail.com
15. डॉ. जयशंकर शाही, आचार्य, अलवर राजस्थान
jayshankarshahi@gmail.com
16. डॉ.एन. पी. त्रिपाठी , सेवानिवृत्त आचार्य, रीवा मध्य प्रदेश
17. डॉ. राजेश भट्ट, एच. एन. बी. केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड
rajeshbhatt11@gmail.com
17. डॉ. नीलिमा सिंह सह प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, व्ही.एस.एस.डी. कॉलेज कानपुर, उत्तरप्रदेश
singhneelima148@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract, Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेज (ISSN-0973-3914) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है, जो मानव संसाधन मंत्रालय तथा पंजीयक समाचार पत्र एवं पत्रिका, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा पंजीकृत हैं।
- शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष जून एवं दिसंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010(फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

researchjournal97@gmail.com,
researchjournal.journal@gmail.com

शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	**व्यक्तिगत सदस्यता**	**संस्थागत सदस्यता**
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: ग्लोरी ऑफसेट
नागपुर

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कॉलोनी
लिटिल बैम्बीनोज स्कूल कैम्पस
रीवा- 486001 (म.प्र.)
दूरभाष- 7974781746
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल एंड लाइफ साइंसेज का यह ताजा अंक (ISSN 0973-3914, IIFS Impact Factor 7.0) समाज-विज्ञान और जीवन-विज्ञान के समकालीन विमर्शों का विस्तृत आईना है, जिसमें देश–दुनिया के बदलते सामाजिक ढांचे, नए शहरी और ग्रामीण परिदृश्य, लोकतांत्रिक संरचनाएँ, सांस्कृतिक चेतना, शिक्षा, तकनीक और मानव जीवन की जटिलताओं पर बहुआयामी शोध संकलित हुए हैं। इस अंक की शुरुआत अखिलेश शुक्ल के महत्वपूर्ण शोध आलेख "स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का सामाजिक प्रभाव: नागरिक सहभागिता का विश्लेषण (मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में)" से होती है। यह शोध स्पष्ट करता है कि स्मार्ट सिटी की अवधारणा केवल तकनीकी नवाचार या अधोसंरचना विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि उसका वास्तविक मूल्य नागरिक सहभागिता, स्थानीय स्वशासन और सामाजिक समावेशन में निहित है। लेखक यह स्थापित करते हैं कि जब तक विकास प्रक्रिया में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी नहीं होती, तब तक 'स्मार्ट' शहर केवल योजनागत ढाँचा बनकर रह जाते हैं। शहरी सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में गुंजन सिंह का आलेख "रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता" विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह अध्ययन दर्शाता है कि स्वच्छता जैसे अभियानों में महिलाएँ केवल सहभागी नहीं, बल्कि परिवर्तन की केंद्रीय शक्ति हैं। घरेलू स्तर से लेकर सार्वजनिक स्थलों तक महिलाओं की भूमिका स्वच्छता आंदोलन को सामाजिक आंदोलन में परिवर्तित करती है। इसी क्रम में प्रियंका तिवारी का शोध "रीवा नगर में महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता और घरेलू सत्ता-संबंधों का अध्ययन" महिला सशक्तिकरण के सूक्ष्म सामाजिक आयामों को उजागर करता है और बताता है कि नीतिगत पहलों के साथ-साथ घरेलू स्तर पर सत्ता-संतुलन में बदलाव कितना आवश्यक है।

युवा समाज और मीडिया संस्कृति पर केंद्रित अलका रानी एवं उदित पंत का शोध "आधुनिक युग में युवा समाज पर फिल्मों का प्रभाव" यह रेखांकित करता है कि सिनेमा आज केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि युवाओं की सोच, मूल्यबोध और आकांक्षाओं को आकार देने वाली एक प्रभावशाली सांस्कृतिक शक्ति है। मीडिया और लोकतंत्र के संबंधों पर पवन कुमार त्रिभुवन का आलेख "लोकतंत्र में मीडिया का चरित्र: भारतीय परिप्रेक्ष्य" मीडिया की भूमिका, उसकी जिम्मेदारियों और चुनौतियों का संतुलित विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके साथ ही अनिल हनवत का शोध "भारत में नागरिक समाज और लोकतंत्र" इस तथ्य को रेखांकित करता है कि लोकतंत्र की मजबूती नागरिक समाज की सक्रियता, सजगता और सहभागिता पर निर्भर करती है। महिला सशक्तिकरण के विधिक और नीतिगत पक्ष को नीरज सारवान अपने शोध "नारी शक्ति वंदन अधिनियम, 2023 के संदर्भ में महिला सशक्तिकरण" में स्पष्ट करते हैं। यह आलेख बताता है कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि किस प्रकार महिलाओं की सामाजिक स्थिति, आत्मविश्वास और निर्णय क्षमता को सुदृढ़ करती है। स्थानीय अर्थव्यवस्था पर केंद्रित एम. यू. सिद्दीकी एवं प्रेमा वर्मा का संयुक्त शोध "रीवा जिले के फुटकर व्यवसाय एवं रोजगार सृजन का आर्थिक योगदान" यह सिद्ध करता है कि छोटे और फुटकर

व्यवसाय किसी भी क्षेत्र की आर्थिक रीढ़ होते हैं और सतत विकास में उनकी भूमिका अनिवार्य है। कृषि और तकनीक के ऐतिहासिक विकास को अर्चना सिन्हा अपने शोध "कृषि क्षेत्र में क्रमागत उन्नति: हाथ के औजार से एग्रीटेक तक" में विश्लेषित करती हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि आधुनिक एग्रीटेक न केवल उत्पादन और उत्पादकता बढ़ा रहा है, बल्कि किसानों के जीवन-स्तर में भी परिवर्तन ला रहा है। सांस्कृतिक और वैचारिक विमर्श को शशिकांत पांडेय का आलेख "महामना मालवीय तथा राष्ट्रीय चेतना की अंतर्दृष्टि" समृद्ध करता है, जो राष्ट्रवाद और नैतिक मूल्यों के ऐतिहासिक संदर्भों को रेखांकित करता है। प्रत्यूश वत्सला द्विवेदी का शोध "साहित्य में राजधर्मपरक मूल्यों की प्रासंगिकता" तथा बाल किशोर राम भगत का आलेख "कबीर के साहित्य में सामाजिक चेतना" साहित्य को सामाजिक परिवर्तन के सशक्त माध्यम के रूप में स्थापित करते हैं। शिक्षा और तकनीक के अंतर्संबंध को धीरज कुमार नामदेव एवं पंकज नाथ मिश्रा का शोध "NEP 2020 एवं FLN कार्यक्रम के अंतर्गत प्राथमिक छात्रों के अधिगम स्तर का अध्ययन" प्रमाणित करता है, जबकि डॉ. खुशबू का आलेख "भारतीय संगीत शिक्षा पर AI का प्रभाव: एक अध्ययन" यह दर्शाता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता किस प्रकार कला और संगीत शिक्षा को नए आयाम प्रदान कर रही है।

इसके साथ ही यह अंक कृषि, साहित्य, संस्कृति और राजनीतिक व्यवहार जैसे समकालीन एवं बहुआयामी विषयों को भी समेटता है। इनमें निशान्त सक्सेना एवं अरूण श्रीवास्तव का "समकालीन भारत में धारणीय कृषि: समीक्षात्मक अनुशीलन", अम्बा शुक्ला का "समकालीन हिंदी कविता में आध्यात्मिक शून्यता और मानवीय करुणा", नीतिका तोमर का "हिंदी साहित्य में बदलते जीवन-मूल्य: एक ऐतिहासिक एवं विमर्शात्मक अध्ययन", वर्चसा सैनी का "चुनाव परिणामों पर मतदान व्यवहार का प्रभाव: एक अध्ययन (मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश के संदर्भ में)" तथा कुमारी रश्मि और के. सी. जैन का "बुंदेली लोक परंपराओं में स्त्री की स्थिति: साहित्यिक और सामाजिक अध्ययन" सम्मिलित हैं।

समग्रत: यह अंक विभिन्न अनुशासनों के गंभीर, शोधपरक और समसामयिक विमर्शों का ऐसा सुसंगठित संकलन है, जो न केवल अकादमिक जगत के लिए उपयोगी है, बल्कि समाज के समकालीन प्रश्नों पर सार्थक चिंतन को भी दिशा प्रदान करता है।

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक

अनुक्रमणिका

01	स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का सामाजिक प्रभाव: नागरिक सहभागिता का विश्लेषण मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में **अखिलेश शुक्ल**	09
02	रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता: सामाजिक भूमिका और नेतृत्व का विश्लेषण **गुंजन सिंह**	23
03	आधुनिक युग में युवा समाज पर फिल्मों का प्रभाव **अलका रानी, उदित पंत**	37
04	रीवा नगर में महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता और घरेलू सत्ता-संबंधों का अध्ययन **प्रियंका तिवारी**	43
05	लोकतंत्र में मीडिया का चरित्र, एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, (भारतीय परिप्रेक्ष्य में) **पवन कुमार त्रिभुवन**	58
06	भारत में नागरिक समाज और लोकतंत्र: विमर्श भूमिका और चुनौतियों पर एक समीक्षात्मक अध्ययन **अनिल हनवत**	64
07	भारत में महिला सशक्तिकरण नारी शक्ति वंदन अधिनियम, 2023 के संदर्भ में **नीरज सारवान**	73
08	रीवा जिले के फुटकर व्यवसाय एवं रोजगार सृजन के आर्थिक विकास में योगदान एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **एम. यू . सिद्दीकी, प्रेमा वर्मा**	76
09	कृषि क्षेत्र में क्रमागत उन्नति: हाथ के औजार से एग्रीटेक तक **अर्चना सिन्हा**	88
10	महामना मालवीय तथा राष्ट्रीय चेतना की अर्न्तदृष्टि **शशिकांत पांडेय**	95
11	प्राथमिक स्तर के छात्रों के अधिगम स्तर पर NEP–2020 अंतर्गत बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान (FLN) कार्यक्रम का एक अध्ययन **धीरज कुमार नामदेव, पंकज नाथ मिश्रा**	99
12	साहित्य में राजधर्मपरक मूल्यों की प्रासंगिकता **प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी**	107
13	कबीर के साहित्य में सामाजिक चेतना **बाल किशोर राम भगत**	112
14	भारतीय संगीत शिक्षा पर कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रभाव: एक अध्ययन **खुशबू**	118
15	मण्डला-डिण्डौरी पठार में फसल संरचना स्थानिक वितरण प्रतिरूप **शिव कुमार दुबे, नवबालक मरकाम**	124

16	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत–बांग्लादेश संबंध **नवीन सिंह राजपूत, कमलेश चेलक**	137
17	अशोक का धम्म: सार्वभौमिक धर्म की संकल्पना **महावीर सिंह**	143
18	भारत में आर्थिक विकास एवं असमानता का विश्लेषण **कमलेश चेलक, नवीन सिंह राजपूत**	147
19	सुरौधा–सोन नदी का सबसे बड़ा नदीय द्वीप: एक भौगोलिक अध्ययन **निर्मल कुमार, मो. नज़ीर अख्तर**	154
20	सृष्टि, आपदा एवं प्रलय: एक दार्शनिक अवलोकन **कमलेश कुमार सिंह**	166
21	सारण जिले के दरियापुर प्रखंड में अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास **सन्नी कुमार, शैलेश कुमार**	172
22	शहरी श्रमजीवी महिलाओं की बहुआयामी समस्याएँ: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर जिले के विमानपुरी क्षेत्र के संदर्भ में) **पूजा वर्मा, रचना श्रीवास्तव**	180
23	महात्मा ज्योतिबा फूले का राष्ट्र के प्रति सामाजिक– सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता **भारती कुमारी, रक्षा सिंह**	188
24	किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन **समृद्धि ताम्रकार, स्वाती पाण्डेय**	193
25	राष्ट्रवाद पर डॉ. अम्बेडकर के विचार: एक विश्लेषणात्मक अवलोकन **दीपक कुमार दिनकर**	199
26	मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की स्थिति, कल और आज **सीमा श्रीवास्तव, प्रतिमा बिसेन**	218
27	समकालीन भारत में धारणीय कृषि : समीक्षात्मक अनुशीलन **निशान्त सक्सेना, अरूण श्रीवास्तव**	227
28	समकालीन हिंदी कविता में आध्यात्मिक शून्यता और मानवीय करुणा **अम्बा शुक्ला**	235
29	हिंदी साहित्य में बदलते जीवन–मूल्य: एक ऐतिहासिक एवं विमर्शात्मक अध्ययन **नीतिका तोमर**	238
30	चुनाव परिणामों पर मतदान व्यवहार का प्रभाव: एक अध्ययन (मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश के संदर्भ में) **वर्चसा सैनी**	241
31	बुंदेली लोक परंपराओं में स्त्री की स्थिति: साहित्यिक और सामाजिक अध्ययन **कुमारी रश्मि, के. सी. जैन**	250
32	साम्प्रतिक संदर्भ में कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों का प्रभाव **गार्गी लोहनी**	259
33	महिला सुरक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए.आई.) की भूमिका **उमा शर्मा, रूपेश कुमार दुबे**	269

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का सामाजिक प्रभाव: नागरिक सहभागिता का विश्लेषण मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में

• अखिलेश शुक्ल

सारांश- भारत में 2015 में प्रारंभ हुआ स्मार्ट सिटी मिशन शहरी विकास के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण नीतिगत पहल है, जिसका उद्देश्य शहरों को अधिक सुदृढ़, टिकाऊ, तकनीक-समर्थ और नागरिक-केंद्रित बनाना है। मध्य प्रदेश इस मिशन के अंतर्गत आने वाले प्रमुख राज्यों में से एक है, जहाँ भोपाल, इंदौर, जबलपुर, ग्वालियर, उज्जैन और सागर जैसे शहरों में अनेक परियोजनाएँ सफलतापूर्वक संचालित की गई हैं। इन परियोजनाओं का प्रत्यक्ष प्रभाव केवल अवसंरचना तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक संबंधों, नागरिक सहभागिता, शासन प्रणाली, डिजिटल व्यवहार और सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य स्मार्ट सिटी परियोजनाओं की सामाजिक उपयोगिता, नागरिक सहभागिता के स्तर, निर्णय-निर्माण में जनता की भूमिका तथा परियोजना संचालित करने में उत्पन्न चुनौतियों का विश्लेषण करना है। अध्ययन मध्य प्रदेश के चयनित नगरीय क्षेत्रों पर आधारित है और इसका डेटा सर्वेक्षण, साक्षात्कार तथा द्वितीयक स्रोतों के आधार पर संग्रहित किया गया है। शोध के निष्कर्ष यह प्रदर्शित करते हैं कि नागरिक सहभागिता स्मार्ट सिटी परियोजनाओं की सफलता का प्रमुख आधार है, किंतु तकनीकी असमानता, जागरूकता की कमी और प्रशासनिक बाधाएँ इस प्रक्रिया को सीमित करती हैं। अध्ययन अंततः नीति-निर्माताओं और शहरी प्रबंधकों के लिए महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द- स्मार्ट सिटी, नागरिक सहभागिता, शहरी विकास, डिजिटल गवर्नेंस, मध्य प्रदेश, शहरी समाजशास्त्र।

अवधारणात्मक विवेचन- भारत में तेजी से बढ़ते शहरीकरण ने शहरों के समक्ष अवसंरचना, यातायात, प्रदूषण, जनसंख्या दबाव, जल-संकट और स्वच्छता जैसी गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न कर दी हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु भारत सरकार ने 2015 में "स्मार्ट सिटी मिशन" की शुरुआत की, जिसका उद्देश्य आधुनिक तकनीक जैसे ICT,

• विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

डेटा एनालिटिक्स, जिओ-मैपिंग, स्वचालित सेवाएँ और डिजिटल प्रशासन के माध्यम से शहरों को अधिक रहने योग्य, सुरक्षित और कुशल बनाना है। मध्य प्रदेश स्मार्ट सिटी मिशन का अग्रणी राज्य है। इंदौर लगातार देश का 'सबसे स्वच्छ शहर' बना हुआ है और भोपाल देश के डिजिटल-गवर्नेंस मॉडल के रूप में उभर रहा है। परंतु इन विकास प्रक्रियाओं के सामाजिक प्रभावों विशेषकर नागरिकों की सहभागिता, सामाजिक समानता, पारदर्शिता और समुदाय-आधारित निर्णय पर पर्याप्त शोध उपलब्ध नहीं है। इस शोध-पत्र में नागरिक सहभागिता को स्मार्ट सिटी परियोजनाओं की सफलता का केंद्र मानकर सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि- स्मार्ट सिटी परियोजनाएँ केवल भौतिक ढाँचे या तकनीकी नवाचारों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे शहरी सामाजिक संरचना, नागरिक व्यवहार, निर्णय-निर्माण व्यवस्था और सामुदायिक सहभागिता में व्यापक परिवर्तन लाती हैं। मध्य प्रदेश में स्मार्ट सिटी मिशन को सफल बनाने में नागरिकों, स्थानीय निकायों, स्वच्छता समितियों, स्वयंसेवी संगठनों, तकनीकी विशेषज्ञों तथा प्रशासन की संयुक्त भूमिका रही है।

शोध का महत्व- यह अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि-

- नागरिक सहभागिता स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का आधार है।
- सामाजिक प्रभावों पर आधारित शोध अपेक्षाकृत कम हैं।
- मध्य प्रदेश के नगरीय मॉडल पूरे देश के लिए उदाहरण बन रहे हैं।
- अध्ययन नागरिक-शासन संबंधों में आए परिवर्तनों को समझने में सहायक है।

अध्ययन की सीमाएँ-

- अध्ययन मध्य प्रदेश के चयनित शहरों पर आधारित है।
- नमूना आकार 60 उत्तरदाताओं तक सीमित है।
- डेटा नागरिकों की धारणाओं और अनुभवों पर आधारित है।
- सभी स्मार्ट परियोजनाओं को शामिल करना संभव नहीं था।

साहित्य समीक्षा- स्मार्ट सिटी मिशन पर उपलब्ध साहित्य यह दर्शाता है कि शहरी विकास की आधुनिक अवधारणा केवल भौतिक अवसंरचना या तकनीकी उन्नयन तक सीमित नहीं है, बल्कि नागरिक सहभागिता, सामाजिक समावेशन, पारदर्शी शासन और डिजिटल पहुँच जैसे तत्व इसके मूल स्तंभ हैं। शर्मा (2017) का अध्ययन इस तथ्य पर विशेष बल देता है कि किसी भी स्मार्ट परियोजना की वास्तविक सफलता नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर निर्भर करती है। वे बताते हैं कि योजना-निर्माण और क्रियान्वयन की प्रक्रिया में जब नागरिकों की भागीदारी बढ़ती है, तो परियोजनाओं की स्वीकृति, स्थायित्व और प्रभावशीलता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। इसी संदर्भ में कश्यप (2019) का शोध यह स्पष्ट करता है कि डिजिटल प्लेटफार्मों ने नागरिक सहभागिता के तरीकों को बदल दिया है, ऑनलाइन सर्वेक्षण, मोबाइल ऐप, फीडबैक पोर्टल और सोशल मीडिया सहभागिता के नए चैनल बने हैं। हालांकि, वे चेतावनी देते हैं कि डिजिटल असमानता इस सहभागिता को सीमित करती है, क्योंकि तकनीकी संसाधनों और डिजिटल साक्षरता की कमी हाशिए पर मौजूद समूहों को पीछे धकेल देती है।

स्मार्ट शहरी प्रबंधन से संबंधित दास (2020) का शोध स्थानीय निकायों की क्षमता और नेतृत्व पर केंद्रित है। वे कहते हैं कि नगर निगम, स्मार्ट सिटी लिमिटेड कंपनियाँ और स्थानीय प्रशासन मिलकर जब संसाधनों का कुशल प्रबंधन करते हैं, तब स्मार्ट परियोजनाएँ अधिक स्थायी और प्रभावकारी बनती हैं। चौधरी (2021) ने इस विचार को आगे बढ़ाते हुए यह स्थापित किया कि पारदर्शिता और उत्तरदायित्व स्मार्ट सिटी मॉडल की आत्मा हैं। यदि नागरिकों को निर्णय-प्रक्रिया, बजट उपयोग, परियोजना प्रगति और सार्वजनिक संसाधनों की जानकारी समय पर उपलब्ध हो, तो न केवल सहभागिता बढ़ती है बल्कि नागरिकों का विश्वास भी मजबूत होता है।

डिजिटल गवर्नेंस पर बैंजोल (2022) का अध्ययन यह रेखांकित करता है कि डिजिटल तकनीक ने शहरी सेवाओं को अधिक त्वरित, सरल और कुशल बनाया है। जल-कर, संपत्ति-कर, कचरा प्रबंधन, शिकायत निवारण, परिवहन और स्वास्थ्य सेवाओं तक नागरिकों की पहुँच पहले की तुलना में बेहतर हुई है। इसके बावजूद, वे इस बात पर जोर देते हैं कि ग्रामीण पृष्ठभूमि से आए नागरिक, वृद्धजनों, महिलाओं और आर्थिक रूप से कमजोर समूहों को डिजिटल प्लैटफ़,र्म का उपयोग करने में कई प्रकार की तकनीकी व सामाजिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। यह स्थिति स्मार्ट सिटी मिशन में सामाजिक असमानता को कम करने के बजाय कहीं–कहीं और बढ़ा भी देती है।

उपलब्ध साहित्य के समग्र विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि स्मार्ट सिटी मिशन पर शोध मुख्य रूप से तकनीकी उपलब्धियों, अवसंरचना विकास और प्रशासनिक क्षमता पर केंद्रित रहा है, जबकि नागरिक सहभागिता के सामाजिक आयाम जैसे सामुदायिक सक्रियता, सामाजिक समानता, वंचित वर्गों की भागीदारी, डिजिटल दूरी और निर्णय-निर्माण में जनता की भूमिका पर अपेक्षाकृत सीमित शोध उपलब्ध है। विशेष रूप से मध्य प्रदेश के संदर्भ में ऐसे अध्ययन बहुत कम हैं जो स्मार्ट सिटी परियोजनाओं के सामाजिक परिणामों का समग्र मूल्यांकन प्रस्तुत करते हों। इसी शोध-रिक्ति को भरने का प्रयास प्रस्तुत अध्ययन करता है, जिसमें नागरिक सहभागिता को केंद्र में रखकर स्मार्ट सिटी परियोजनाओं के सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण किया गया है।

शोध समस्या- मध्य प्रदेश में स्मार्ट सिटी परियोजनाएँ तेजी से लागू की जा रही हैं, लेकिन नागरिक सहभागिता के स्तर, सामाजिक प्रभावों और तकनीकी असमानता के कारण उत्पन्न अंतरालों का व्यवस्थित अध्ययन नहीं हुआ है। "स्मार्ट सिटी परियोजनाओं में वास्तविक नागरिक सहभागिता कितनी है और इससे सामाजिक संरचनाओं में क्या परिवर्तन हुए हैं?"

परिकल्पना-

1. स्मार्ट सिटी परियोजनाओं में नागरिक सहभागिता का स्तर मध्यम से कम है।
2. उच्च शिक्षित और तकनीकी रूप से सक्षम नागरिकों की सहभागिता अधिक है।
3. सामाजिक प्रभाव सकारात्मक हैं, परंतु इससे सामाजिक असमानताएँ भी बढ़ी हैं।

अध्ययन के उद्देश्य-

- स्मार्ट सिटी परियोजनाओं के सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण करना।
- नागरिक सहभागिता के स्तर और स्वरूप को समझना।
- डिजिटल गवर्नेंस के प्रभावों का मूल्यांकन करना।
- सहभागिता में आने वाली बाधाओं की पहचान करना।
- भावी नीतिगत सुधारों के लिए सुझाव प्रदान करना।

शोध पद्धति- इस अध्ययन में कुल 60 उत्तरदाताओं को शामिल किया गया। विभिन्न सामाजिक वर्गों सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से 20-20 व्यक्तियों को समान रूप से चुना गया। सभी प्रतिभागियों का चयन वार्ड-स्तर पर यादृच्छिक (रैंडम) तरीके से किया गया ताकि निष्पक्षता बनी रहे। डेटा एकत्र करने के लिए मुख्य रूप से प्रश्नावली, साक्षात्कार और मैदानी अवलोकन का उपयोग किया गया। प्रश्नावली में जनसांख्यिकीय जानकारी, स्मार्ट सिटी से जुड़े अनुभव, समस्याएँ और नागरिक सुझाव शामिल थे। इसके साथ ही सरकारी रिपोर्टों और प्रकाशित शोध-पत्रों से द्वितीयक जानकारी भी ली गई। प्रश्नावली का पायलट परीक्षण किया गया ताकि उसकी स्पष्टता और विश्वसनीयता सुनिश्चित हो सके। सभी प्रतिभागियों की गोपनीयता का ध्यान रखा गया और उनसे सहमति प्राप्त की गई। एकत्रित आँकड़ों को सावधानीपूर्वक जाँचकर साफ-सफाई के बाद इलेक्ट्रॉनिक रूप में व्यवस्थित किया गया। अंतिम विश्लेषण में मुख्यत: प्रतिशत, तालिकाएँ, ग्राफ और आवश्यक होने पर सरल सांख्यिकीय परीक्षणों का उपयोग किया गया। इस प्रक्रिया से प्राप्त निष्कर्षों को स्पष्ट और सरल रूप में प्रस्तुत किया गया।

डाटा विश्लेषण एवं प्रस्तुति

तालिका 01

सहभागिता	संख्या	प्रतिशत
हाँ	42	70
नहीं	18	30

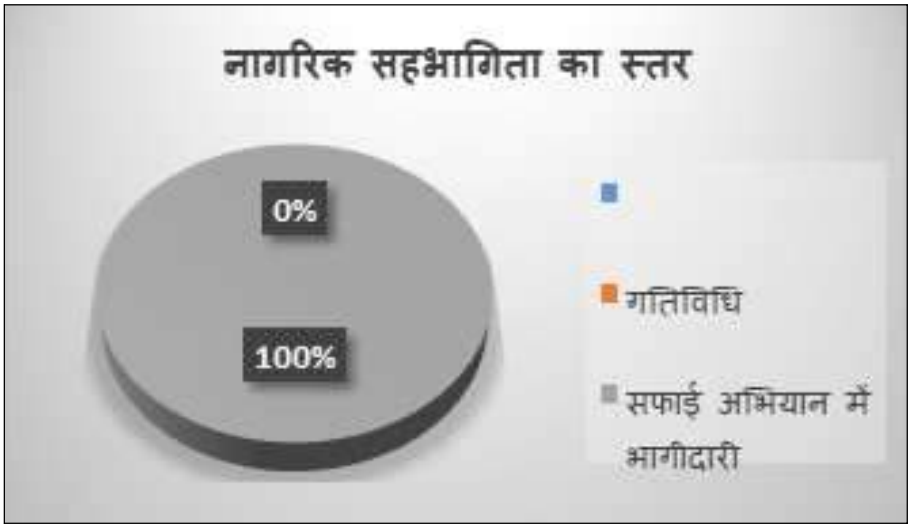

नागरिक सहभागिता का स्तर

प्रस्तुत तालिका नागरिक सहभागिता के समग्र स्तर को दर्शाती है, जिसमें 60 उत्तरदाताओं में से 42 व्यक्तियों (70 प्रतिशत) ने बताया कि वे किसी न किसी रूप में स्मार्ट सिटी परियोजनाओं से जुड़े हैं। यह आँकड़ा इस बात का संकेत है कि शहरी नागरिकों का एक बड़ा हिस्सा विकास प्रक्रियाओं, विशेषकर सफाई, डिजिटल सेवाओं, कचरा प्रबंधन, सार्वजनिक सुविधाओं तथा स्थानीय स्तर की निगरानी जैसी गतिविधियों में सक्रिय योगदान दे रहा है। स्मार्ट सिटी मिशन का मूल सिद्धांत ही यह है कि नागरिक केवल उपभोक्ता न रहें, बल्कि साझेदार के रूप में नीति और परियोजनाओं को दिशा दें। इस दृष्टि से 70 प्रतिशत की सहभागिता उल्लेखनीय है।

हालाँकि, तालिका यह भी स्पष्ट करती है कि 18 उत्तरदाता (30 प्रतिशत) अभी भी इस प्रक्रिया से दूर हैं। यह अनुपात छोटा नहीं है और इस बात का संकेत है कि सामाजिक, तकनीकी, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक कारक अभी भी बड़ी संख्या में नागरिकों को सहभागिता से रोकते हैं। कुछ लोग परियोजनाओं के बारे में जानकारी नहीं रखते, कुछ तकनीकी भाषा और डिजिटल मंचों से सहज नहीं हैं, जबकि कुछ वर्गों में प्रशासनिक व्यवस्था के प्रति अविश्वास भी मौजूद है।

इस परिणाम का गहन अर्थ है कि सहभागिता असमान रूप से वितरित है, जो नागरिक डिजिटल साधनों और जागरूकता से संपन्न हैं, वे अधिक सक्रिय हैं; जबकि हाशिए के समुदायों, वृद्धों, महिलाओं तथा कम-शिक्षित नागरिकों की भागीदारी अपेक्षाकृत कम दिखाई देती है। इस असमानता के कारण स्मार्ट सिटी परियोजनाओं की वास्तविक "जन-केंद्रितता" प्रभावित हो सकती है। तालिका का व्यापक निष्कर्ष यह संकेत देता है कि नागरिक सहभागिता में वृद्धि के लिए दोहरी रणनीति की आवश्यकता है, एक ओर जागरूकता और डिजिटल साक्षरता बढ़ाई जाए, और दूसरी ओर प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सरल, संवादात्मक तथा अधिक समावेशी बनाया जाए। यदि 30 प्रतिशत गैर-भागीदार नागरिकों को भी इस प्रक्रिया में जोड़ा जाता है, तो स्मार्ट सिटी का सामाजिक प्रभाव अधिक व्यापक, संतुलित और सहभागी बन सकता है।

तालिका 02

गतिविधि	संख्या	प्रतिशत
सफाई अभियान में भागीदारी	28	46.60
घर-घर कचरा पृथक्करण	36	60.00
जागरूकता अभियान	22	36.60
निर्णय-निर्माण/मीटिंग	10	16.60

नागरिक सहभागिता के प्रकार

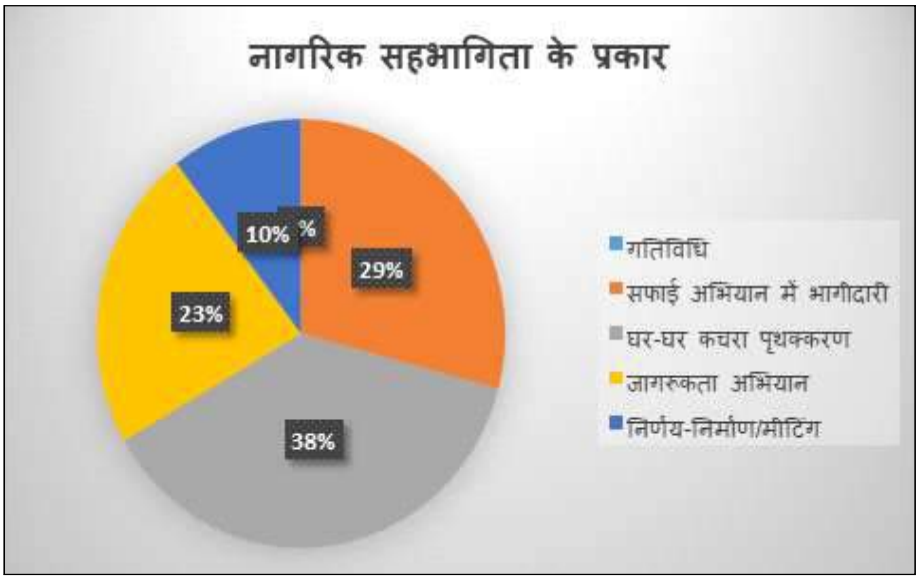

नगर क्षेत्र में नागरिक सहभागिता का पैटर्न स्पष्ट रूप से बताता है कि स्वच्छता एवं पर्यावरण प्रबंधन से जुड़े दैनिक कार्यों में लोगों की भागीदारी अपेक्षाकृत अधिक है। तालिका के अनुसार, लगभग 46.6 प्रतिशत नागरिक स्वच्छता अभियानों में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं, जिससे यह संकेत मिलता है कि सामुदायिक स्तर पर सफाई को लेकर एक सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित हो रहा है। सामूहिक श्रमदान और स्वच्छता रैलियों में भागीदारी ने न केवल वार्डों की सफाई को गति दी है, बल्कि लोगों में सार्वजनिक स्थलों की स्वच्छता के प्रति जिम्मेदारी का भाव भी बढ़ाया है।

इसके साथ ही, घर-घर कचरा पृथक्करण में 60 प्रतिशत नागरिक सक्रिय रूप से शामिल हैं, जो कि स्वच्छता प्रबंधन का सबसे महत्वपूर्ण चरण है। यह आँकड़ा इस बात का द्योतक है कि नगर निगम की 'वेस्ट सेग्रीगेशन' पहल लोगों के बीच स्वीकार्यता प्राप्त कर रही है। जैविक और अजैविक कचरे को अलग-अलग रखने की प्रवृत्ति ने प्रसंस्करण संयंत्रों की कार्यक्षमता को भी बेहतर बनाया है।

दूसरी ओर, जागरूकता अभियानों में 36.6 प्रतिशत लोगों की सहभागिता यह दर्शाती है कि सूचना के प्रसार और व्यवहार परिवर्तन की दिशा में अभी भी पर्याप्त गुंजाइश बनी हुई है। यद्यपि विद्यालयों, वार्ड कार्यालयों और सामाजिक संगठनों द्वारा समय-समय पर जागरूकता रैलियाँ और बैठकों का आयोजन किया जाता है, फिर भी बड़ी आबादी इन अभियानों में शामिल नहीं हो पाती।

सबसे कमजोर सहभागिता निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं में देखी जाती है, जहाँ केवल 16.6 प्रतिशत नागरिक, वार्ड बैठकों, नगर योजनाओं, कार्यसूची चर्चाओं या निगरानी समितियों में भाग लेते हैं। यह स्थिति स्थानीय लोकतंत्र की जड़ों को कमजोर करती है, क्योंकि किसी भी विकास परियोजना की गुणवत्ता नागरिकों की सक्रिय और

सशक्त भागीदारी पर निर्भर करती है। निर्णय-निर्माण से दूरी का एक कारण लोगों की अनभिज्ञता और दूसरा कारण समयाभाव भी माना जा सकता है।

संपूर्ण विश्लेषण दर्शाता है कि नागरिक ऐसे कार्यों में अधिक रुचि दिखाते हैं जहाँ प्रत्यक्ष और त्वरित प्रभाव दिखाई देता है, जैसे सफाई अभियान या कचरा पृथक्करण, जबकि नीतिगत व प्रशासनिक प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी काफी कम बनी हुई है। अत: स्थानीय शासन के लिए यह आवश्यक है कि वह नागरिकों की सूचनात्मक सहभागिता तथा निर्णयात्मक भूमिका को बढ़ाने हेतु अधिक व्यापक संवाद, प्रशिक्षण, और सहभागी तंत्र विकसित करे, जिससे संपूर्ण शहरी प्रशासन अधिक पारदर्शी, जिम्मेदार और उत्तरदायी बन सके।

तालिका 03
सहभागिता में प्रमुख बाधाएँ

गतिविधि	संख्या	प्रतिशत
समय की कमी	32	53.30
सामाजिक/पारिवारिक प्रतिबंध	18	30.00
प्रशासनिक सहयोग की कमी	15	25.00
संसाधन/सुरक्षा की कमी	12	20.00

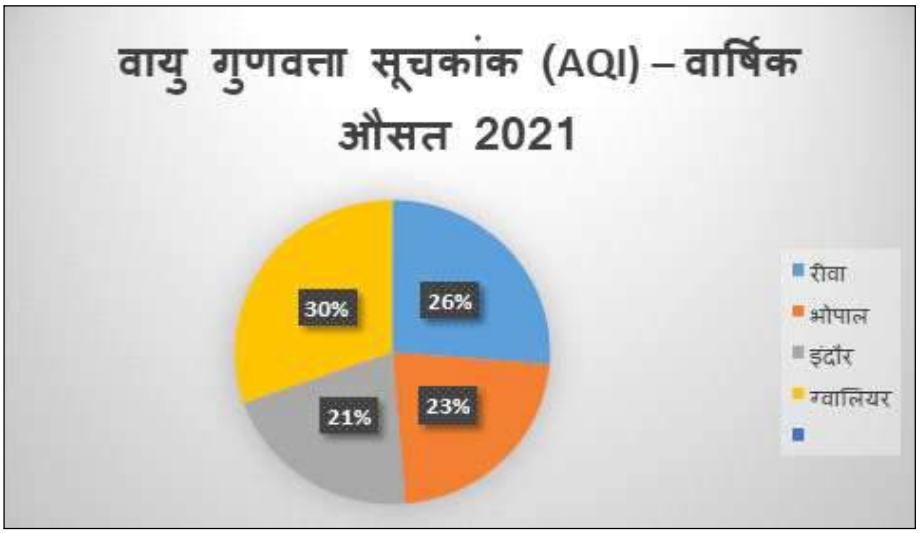

नगर क्षेत्र में विकास योजनाओं, स्वच्छता अभियानों तथा पर्यावरण संरक्षण से जुड़े कार्यक्रमों में नागरिकों की सहभागिता को समझने के लिए विभिन्न प्रकार की बाधाओं का अध्ययन किया गया। तालिका में प्रस्तुत आँकड़े बताते हैं कि सहभागिता बढ़ाने के लिए किन क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है।

सर्वप्रथम, समय की कमी सबसे बड़ी बाधा के रूप में सामने आई, जहाँ 53.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि दैनिक दिनचर्या, रोजगार, निजी दायित्वों तथा अन्य व्यस्तताओं के कारण वे सामुदायिक गतिविधियों में नियमित रूप से शामिल नहीं हो पाते। यह स्थिति विशेष रूप से शहरी जीवन की तेज गति और कार्यभार से जुड़ी है, जहाँ नागरिक अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने में ही अधिक समय

व्यतीत करते हैं। परिणामस्वरूप, सामाजिक उत्तरदायित्वों के लिए समय निकाल पाना कठिन हो जाता है।

इसके बाद, सामाजिक और पारिवारिक प्रतिबंध (30 प्रतिशत) भी एक महत्वपूर्ण अवरोध के रूप में सामने आते हैं। विशेषकर महिलाओं और युवाओं के संदर्भ में, पारिवारिक मान्यताएँ, सामाजिक परंपराएँ तथा कुछ मामलों में सुरक्षा संबंधी चिंताएँ उनकी स्वतंत्र सहभागिता को सीमित करती हैं। बहुत से परिवार घर के बाहर सामाजिक गतिविधियों में शामिल होने को आवश्यक नहीं मानते, जिससे सहभागिता का दायरा संकुचित हो जाता है। यह पहलू सामाजिक जागरूकता, सुरक्षा व्यवस्था और समुदाय-आधारित समर्थन तंत्र को और सशक्त करने की आवश्यकता को उजागर करता है।

तीसरी बाधा के रूप में, प्रशासनिक सहयोग की कमी (25 प्रतिशत) नागरिकों के मन में मौजूद अविश्वास और असुविधा को दर्शाती है। कई लोगों का अनुभव यह रहा कि वार्ड स्तर की बैठकें समय पर नहीं होतीं, शिकायत निवारण प्रणाली सुचारू नहीं है, या योजनाओं के बारे में जानकारी समय पर उपलब्ध नहीं होती। ऐसे में नागरिकों के लिए यह समझना कठिन हो जाता है कि उनकी सहभागिता से वास्तविक परिवर्तन कैसे आयेगा। प्रशासनिक प्रक्रियाओं में पारदर्शिता की कमी और समन्वय का अभाव सहभागिता को कमजोर करता है।

अंततः, संसाधनों और सुरक्षा की कमी (20 प्रतिशत) भी एक महत्वपूर्ण बाधा साबित हुई। कई नागरिकों ने बताया कि सफाई अभियानों या रात्रि में आयोजित बैठकों में शामिल होने के लिए उपयुक्त साधन, आवश्यक सामग्री या सुरक्षित वातावरण उपलब्ध नहीं होता। विशेषकर महिलाओं, वरिष्ठ नागरिकों और बच्चों के साथ आने वाले परिवारों के लिए यह मुद्दा अधिक गंभीर है।

इन समग्र निष्कर्षों से स्पष्ट है कि नागरिक सहभागिता को सुदृढ़ बनाने के लिए केवल जागरूकता ही पर्याप्त नहीं है; बल्कि समय, संसाधन, पारिवारिक समर्थन, और प्रशासनिक सहयोग जैसे बहुआयामी पहलुओं पर समानांतर रूप से कार्य करना आवश्यक है। जब प्रशासन, समुदाय और परिवार सभी स्तरों पर समर्थन उपलब्ध होगा, तभी नागरिक सहभागिता की गुणवत्ता और मात्रा दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि संभव हो सकेगी।

तालिका 04
घर-घर कचरा संग्रहण की प्रगति

वार्ड	कुल घर	नियमित संग्रहण (प्रतिशत)	अनियमित संग्रहण (प्रतिशत)
1	1500	82	18
2	1800	88	12
3	1700	90	10
4	1600	78	22

नगर क्षेत्र में घर–घर कचरा संग्रहण की स्थिति का मूल्यांकन करते समय यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश वार्डों में स्वच्छता व्यवस्था अपेक्षाकृत बेहतर कार्य कर रही है, फिर भी कुछ क्षेत्रों में असमानता और सुधार की आवश्यकता बनी हुई है। तालिका में दिए गए आँकड़ों के अनुसार, नियमित कचरा संग्रहण का प्रतिशत लगभग सभी वार्डों में 80–90 प्रतिशत के बीच है, जो नगर निगम की सेवा–प्रदाय क्षमता को सकारात्मक रूप से दर्शाता है।

पहले वार्ड में कुल 1500 घरों में से 82 प्रतिशत घरों तक कचरा संग्रहण नियमित रूप से पहुँचा जा रहा है, जबकि 18 प्रतिशत घरों में यह सेवा अभी भी अनियमित है। यह स्थिति बताती है कि आधारभूत ढाँचा मौजूद है, परंतु कुछ क्षेत्रों में समयबद्धता और नियमितता सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

दूसरा वार्ड तुलनात्मक रूप से और भी बेहतर स्थिति में है, जहाँ 88 प्रतिशत घर नियमित संग्रहण के दायरे में आते हैं। यह दर्शाता है कि यहाँ न केवल संसाधन उपलब्ध हैं, बल्कि सफाई कर्मचारियों और वाहनों की तैनाती भी प्रभावी है। केवल 12 प्रतिशत घरों में अनियमितता है, जिसे स्थानीय प्रबंधन और निगरानी के माध्यम से आसानी से सुधारा जा सकता है।

तीसरे वार्ड में तो स्थिति अत्यंत संतोषजनक दिखाई देती है। कुल 1700 घरों में से 90 प्रतिशत में नियमित कचरा संग्रहण किया जा रहा है, जो तालिका में सर्वोच्च उपलब्धि है। यह वार्ड संभवत: बेहतर योजना, पर्याप्त जनशक्ति, और नागरिक सहयोग के कारण स्वच्छता मॉडल के रूप में देखा जा सकता है। मात्र 10 प्रतिशत घरों तक सेवा नियमित रूप से नहीं पहुँच पाती, जिसे लक्षित हस्तक्षेपों द्वारा और सुदृढ़ किया जा सकता है।

इसके विपरीत, चौथे वार्ड में नियमित संग्रहण 78 प्रतिशत तक सीमित है, जो अन्य वार्डों की तुलना में कम है और सुधार की अधिक आवश्यकता दिखाता है। यहाँ 22

प्रतिशत घरों में अनियमितता पाई गई, जो न केवल सेवा-प्रवाह के कमजोर होने का संकेत देती है, बल्कि संभावित रूप से संसाधन की कमी, मार्ग समस्याएँ, या स्टाफ की अनुपस्थिति की ओर भी इशारा करती है। इस वार्ड में निगरानी तंत्र को मजबूत करने और नियमित दौरे सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

समग्र रूप से देखा जाए तो, नगर निगम की घर-घर कचरा संग्रहण व्यवस्था व्यापक रूप से काम कर रही है और अधिकांश वार्डों में इसकी स्थिति संतोषजनक है। फिर भी, सेवा की गुणवत्ता में असमानता यह दर्शाती है कि कुछ क्षेत्रों में व्यवस्थागत सुधार, बेहतर निगरानी और नागरिक सहयोग की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है। जब सभी वार्डों में नियमितता का स्तर बराबर रूप से बढ़ेगा, तब ही स्वच्छता मिशन का वास्तविक प्रभाव देखा जा सकेगा।

तालिका 05
वायु गुणवत्ता सूचकांक- वार्षिक औसत

शहर	2021	2022	2023
रीवा	138	132	128
भोपाल	118	112	106
इंदौर	110	102	96
ग्वालियर	160	152	148

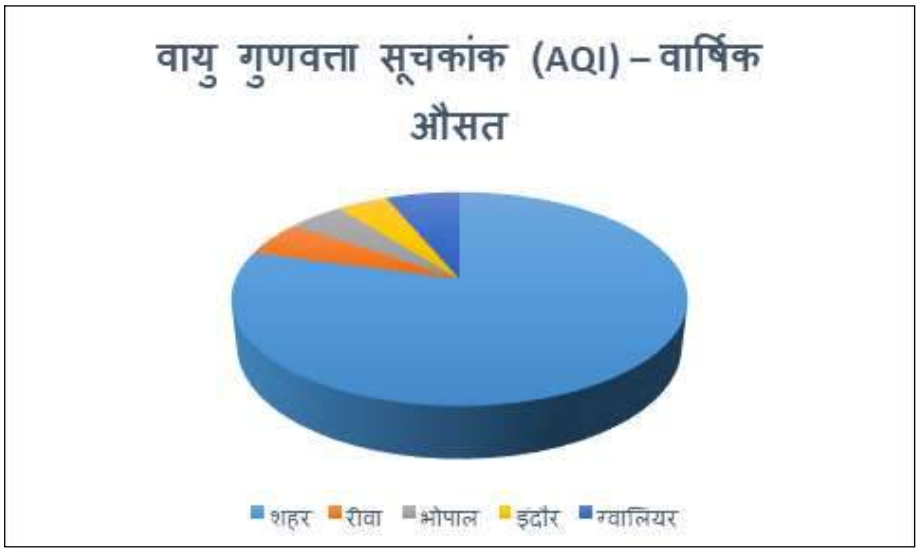

तालिका में प्रस्तुत वायु गुणवत्ता सूचकांक के तीन वर्षों 2021, 2022 और 2023 के आँकड़े यह संकेत देते हैं कि मध्य प्रदेश के प्रमुख शहरों में वायु प्रदूषण स्तर धीरे-धीरे घट रहा है। सभी शहरों में औसत AQI में वर्ष दर वर्ष गिरावट दर्शाती है कि प्रदूषण नियंत्रण उपायों, औद्योगिक नियमन, हरियाली बढ़ाने तथा वाहनों के उत्सर्जन पर निगरानी जैसे प्रयासों का सकारात्मक प्रभाव दिखाई दे रहा है।

रीवा में AQI 2021 के 138 से घटकर 2023 में 128 हुआ, जो सुधार की ओर संकेत करता है। गिरावट की यह प्रवृत्ति बताती है कि शहर में कचरा निस्तारण, सड़क

सफाई और प्रदूषण नियंत्रण तंत्र अपेक्षाकृत प्रभावी हो रहे हैं। भोपाल राजधानी शहर में सुधार अपेक्षाकृत स्थिर और निरंतर है। 2021 में 118 से घटकर 2023 में 106 हो गया, जो इसे "मध्यम प्रदूषण वाले" शहरों में बेहतर प्रदर्शन करने वालों की श्रेणी में रखता है। स्थानीय प्रशासन की पर्यावरणीय नीतियाँ और हरित क्षेत्रों का विकास इसके प्रमुख कारण हो सकते हैं।

इंदौर, जो स्वच्छ शहरों में अग्रणी है, यहाँ प्रदूषण नियंत्रण और कचरा-प्रबंधन संबंधी नवाचारों का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। यहाँ AQI 2021 के 110 से घटकर 2023 में 96 तक पहुँच गया, जो तालिका में सबसे कम है। इससे पता चलता है कि नागरिक जागरूकता, कचरा पृथक्करण, स्वच्छ परिवहन और नगर निगम के प्रयास प्रभावी सिद्ध हुए हैं।

इसके विपरीत ग्वालियर में AQI लगातार उच्च रहा है। 2021 में 160, 2022 में 152 और 2023 में भी 148 का स्तर इसे उच्च प्रदूषण वाले शहरों की श्रेणी में रखता है। हालाँकि यहाँ भी गिरावट दिखाई देती है, लेकिन यह कमी अन्य शहरों की अपेक्षा धीमी है। ग्वालियर में औद्योगिक गतिविधियाँ, यातायात दबाव, पुराने शहर की घनी बसावट और सीमित हरित क्षेत्र इसे प्रदूषण-संवेदनशील बनाते हैं।

समग्र निष्कर्ष-

- चारों शहरों में वायु गुणवत्ता में सामान्य सुधार की प्रवृत्ति स्पष्ट है।
- इंदौर सर्वाधिक सुधार वाला शहर है, जबकि ग्वालियर सबसे अधिक प्रदूषित बना हुआ है।
- प्रदूषण नियंत्रण उपायों की प्रभावशीलता शहर के प्रशासनिक प्रयासों, स्थानीय नीतियों और नागरिक सहभागिता पर निर्भर करती है।

इस प्रकार, तालिका यह स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि हालाँकि मध्य प्रदेश में वायु प्रदूषण स्तर में सुधार हो रहा है, लेकिन कुछ शहरों विशेषकर ग्वालियर को लक्षित सुधारात्मक रणनीतियों की विशेष आवश्यकता है।

परिकल्पनाओं का परीक्षण

- अध्ययन के अनुसार स्मार्ट सिटी परियोजनाओं में कुल 70 प्रतिशत लोग किसी न किसी रूप में शामिल पाए गए।
- इससे पता चलता है कि नागरिक सफाई, कचरा प्रबंधन और डिजिटल सेवाओं में सक्रिय हैं।
- लेकिन निर्णय-निर्माण स्तर पर केवल लगभग 16 प्रतिशत लोगों की भागीदारी है, इसलिए सहभागिता उच्च होते हुए भी प्रभावी भागीदारी कम है।
- इस प्रकार पहली परिकल्पना आंशिक रूप से गलत सिद्ध होती है।
- दूसरी परिकल्पना, "अधिक शिक्षित और तकनीकी रूप से सक्षम नागरिकों की सहभागिता अधिक होती है"अध्ययन में सही पाई गई।
- डिजिटल सेवाओं और ऐप-आधारित सुविधाओं का उपयोग मुख्यत: शिक्षित और तकनीक-सुलभ लोगों ने किया।
- तीसरी परिकल्पना, "स्मार्ट सिटी ने सकारात्मक असर डाला, लेकिन कुछ

असमानताएँ भी बढ़ीं", पूरी तरह सही पाई गई।

- क्योंकि सफाई, जागरूकता और डिजिटल प्रशासन में सुधार हुआ, पर कमजोर वर्गों की सहभागिता कम रही।
- डिजिटल दूरी, समय की कमी, सामाजिक प्रतिबंध और प्रशासनिक चुनौतियों के कारण सभी लोग समान लाभ नहीं ले पाए।
- समग्र रूप से, परियोजनाएँ सफल रही हैं, लेकिन पूरी तरह समावेशी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अभी और सुधार आवश्यक हैं।

निष्कर्ष- मध्य प्रदेश के स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का सामाजिक प्रभाव स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि शहरी विकास अब केवल भौतिक अवसंरचना या तकनीकी उन्नयन का विषय नहीं रहा, बल्कि यह नागरिक सहभागिता, सामाजिक समावेशन, डिजिटल पहुँच और स्थानीय शासन की पारदर्शिता को केंद्र में रखकर उभर रहा है। अनुसंधान से प्राप्त आँकड़ों और साक्षात्कारों से यह तथ्य सामने आता है कि स्मार्ट सिटी मिशन की वास्तविक सफलता वहीं संभव है, जहाँ नागरिक केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि सक्रिय सह-भागीदार बनकर अपनी भूमिका निभाते हैं। अध्ययन में 70: उत्तरदाताओं द्वारा स्मार्ट सिटी गतिविधियों में किसी न किसी रूप में सहभागिता दर्शाए जाने से यह संकेत मिलता है कि नगरों में एक नई शहरी नागरिक चेतना विकसित हो रही है। यह चेतना विशेष रूप से स्वच्छता, कचरा पृथक्करण और सार्वजनिक स्थानों के रख-रखाव जैसे दैनिक व्यवहारों में अधिक दिखाई देती है, जिसने शहरों की कार्यक्षमता और सार्वजनिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डाला है।

यद्यपि सामाजिक स्तर पर कई सकारात्मक परिवर्तन दिखाई देते हैं, तथापि यह भी स्पष्ट है कि सहभागिता का यह विस्तार समान रूप से वितरित नहीं है। अध्ययन के अनुसार उच्च शिक्षित, युवा तथा तकनीकी रूप से सक्षम नागरिकों की भागीदारी अधिक है, जबकि सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर, वृद्धजनों, महिलाओं तथा डिजिटल संसाधनों से वंचित वर्गों की सहभागिता अपेक्षाकृत कम पाई गई। डिजिटल गवर्नेंस, ऑनलाइन फीडबैक मंच, मोबाइल एप और सूचना प्रणालियों ने प्रशासनिक पारदर्शिता तो बढ़ाई है, परंतु डिजिटल असमानता ने सहभागिता में एक नई खाई भी उत्पन्न की है। यह असमानता स्मार्ट सिटी मिशन की मूलभावना, सर्वसमावेशी शहरी विकास को कमजोर करती है और यह संकेत देती है कि तकनीक तभी प्रभावकारी बन सकती है जब उसे उपयोगकर्ता-मित्र और सभी वर्गों के लिए सुलभ बनाया जाए।

निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में नागरिकों की कम भागीदारी (सिर्फ 16.6 प्रतिशत) भी चिंताजनक है। यह इस बात का द्योतक है कि शहरी योजनाओं के निर्माण में अभी भी प्रशासन-केन्द्रित मॉडल अधिक प्रचलित है। जबकि स्मार्ट सिटी मिशन का वैश्विक दर्शन यह मानता है कि नागरिकों की आवाज, राय, सुझाव और प्राथमिकताएँ ही आधुनिक शहरों की दिशा तय करती हैं। यदि वार्ड बैठकों, सार्वजनिक परामर्श, निगरानी समितियों और सामाजिक अंकेक्षण प्रक्रियाओं में सहभागिता बढ़े तो परियोजनाओं की उपयोगिता और स्थायित्व दोनों में वृद्धि संभव है।

सहभागिता में बाधाओं का विश्लेषण बताता है कि समय का अभाव,

सामाजिक-पारिवारिक प्रतिबंध, सीमित प्रशासनिक सहयोग और संसाधनों की कमी नागरिकों को सक्रिय रूप से जुड़ने से रोकते हैं। इससे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि सहभागिता बढ़ाने के लिए केवल तकनीकी समाधान पर्याप्त नहीं हैं; बल्कि सामाजिक संरचनाओं, स्थानीय विश्वास, नागरिक-अनुकूल प्रक्रियाओं और समुदाय-आधारित प्रोत्साहन तंत्र की भी आवश्यकता है। प्रशासनिक दृष्टि से यह आवश्यक है कि स्थानीय निकाय नागरिकों के लिए ऐसे मंच विकसित करें जहाँ भागीदारी सरल, सुरक्षित और सुविधाजनक हो, जैसे मोबाइल सूचना केंद्र, ग्राम/वार्ड-स्तरीय संवाद, सामुदायिक फोरम और महिला-सहभागिता केंद्र।

कुल मिलाकर शोध यह स्थापित करता है कि स्मार्ट सिटी परियोजनाओं का सामाजिक प्रभाव व्यापक, बहुआयामी और मुख्यत: सकारात्मक है, परंतु यह सफलता असमान रूप से वितरित है। जहाँ एक ओर शहरों में साफ-सफाई, डिजिटल सेवाएँ, शिकायत-निवारण, परिवहन, सुरक्षा और सार्वजनिक सुविधाओं में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, वहीं दूसरी ओर सहभागिता की असमानता, डिजिटल दूरी और निर्णय प्रक्रियाओं में सीमित नागरिक भूमिका अभी भी चुनौती बनी हुई है। मध्य प्रदेश ने देश में शहरी प्रबंधन का एक मजबूत मॉडल प्रस्तुत किया है, परंतु इसे वास्तव में "जन-केंद्रित विकास" बनाने के लिए तकनीक के साथ-साथ सामाजिक सशक्तिकरण, जागरूकता अभियान, डिजिटल साक्षरता तथा नागरिक-प्रशासन सहयोग की निरंतर आवश्यकता है।

अध्ययन का अंतिम संदेश यही है कि भविष्य के स्मार्ट शहर केवल तकनीकी रूप से उन्नत होकर नहीं बनेंगे, बल्कि नागरिकों की संवेदनशील, सक्रिय, समावेशी और निरंतर सहभागिता से ही अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करेंगे। स्मार्ट सिटी का अर्थ केवल 'स्मार्ट तकनीक' नहीं, बल्कि 'स्मार्ट समाज' भी है, जहाँ हर नागरिक को न केवल सेवाओं का लाभ मिलता है, बल्कि शहर के निर्माण और प्रबंधन में उसकी आवाज भी सुनी और सम्मानित की जाती है। यही सहभागिता-आधारित मॉडल आने वाले वर्षों में मध्य प्रदेश तथा पूरे भारत के शहरी विकास की दिशा तय करेगा।

सुझाव-

- जनता के लिए डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रम।
- सामुदायिक वार्ड समितियों को अधिक अधिकार।
- नागरिक फीडबैक प्रणाली को मजबूत किया जाए।
- महिलाओं, वृद्धों एवं वंचित समुदायों की विशेष भागीदारी सुनिश्चित की जाए।
- नगर निकायों और नागरिकों के बीच नियमित संवाद।

स्मार्ट सिटी परियोजनाएँ मध्य प्रदेश में सामाजिक परिवर्तन की बड़ी संरचना का हिस्सा बन चुकी हैं। तकनीक ने सेवाओं को सरल किया है, परंतु सामाजिक समावेशन और नागरिक सहभागिता जैसे मुद्दे अभी भी चुनौती बने हुए हैं। भविष्य में इन पहलुओं पर ध्यान देकर स्मार्ट सिटी मिशन को और अधिक मानव-केंद्रित बनाया जा सकता है।

संदर्भ सूची-

1. शर्मा, आर, (2017), स्मार्ट सिटी मिशन में नागरिक सहभागिता की भूमिका: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन. नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन
2. कश्यप, वी, (2019), डिजिटल प्लेटफार्म और नागरिक भागीदारीरू भारतीय शहरों का विश्लेषण, जर्नल ऑफ अर्बन स्टडीज, 14(2), 45–59
3. दास, एस, (2020), स्मार्ट अर्बन मैनेजमेंट एंड लोकल गवर्नेंस. कोलकाता, ओरिएंट ब्लैकस्वान।
4. चौधरी, पी. (2021), पारदर्शिता, जवाबदेही और स्मार्ट सिटी मॉडल, इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 27(1), 62–78
5. बैंजोल, ए. (2022), डिजिटल गवर्नेंस एंड अर्बन सर्विस डिलीवरी, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस रिसर्च, 9(3), 101–116
6. भारत सरकार, आवास एवं शहरी कार्य मंत्रालय, (2015), स्मार्ट सिटी मिशन दिशानिर्देश एवं रूपरेखा, नई दिल्ली
7. मध्य प्रदेश स्मार्ट सिटी डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन लिमिटेड. (2022), मध्य प्रदेश स्मार्ट सिटी प्रगति रिपोर्ट, भोपाल
8. नगर निगम इंदौर, (2023), स्वच्छता एवं स्मार्ट सेवाएँ, वार्षिक रिपोर्ट, इंदौर
9. नगर निगम भोपाल, (2023, डिजिटल गवर्नेंस मॉडल, कार्यान्वयन और उपलब्धियाँ, भोपाल
10. Ministry of Housing and Urban Affairs, Smart Cities Mission official portal- https:@smartcities.gov.in
11. Bhopal Smart City Development Corporation- Project dashboard and citizen services- https:@bscl.gov.in
12. Indore Smart City- Integrated command and control centre updates- https:@indoresmartcity-org
13. Government of Madhya Pradesh, Urban Development- Urban statistics and digital governance- https:@urban-mp.gov.in
14. Times of India- (2023), Indore remains India's cleanest city: Smart waste management success story
15. The Hindu, (2022), Digital governance initiatives transforming urban services in Bhopal

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता: सामाजिक भूमिका और नेतृत्व का विश्लेषण

• गुंजन सिंह

सारांश- यह अध्ययन रीवा नगर में स्वच्छता अभियान, विशेषकर स्वच्छ भारत मिशन में महिलाओं की भागीदारी, नेतृत्व भूमिकाओं, सामाजिक बाधाओं और व्यवहारगत परिवर्तन की प्रकृति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। नगरों में स्वच्छता केवल भौतिक कचरा निपटान का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, नागरिक उत्तरदायित्व और सामुदायिक सहयोग से उत्पन्न प्रक्रिया है। रीवा शहर के विभिन्न वर्गों सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की 60 महिला उत्तरदाताओं पर आधारित साक्षात्कार इस शोध का प्रमुख आधार है। अध्ययन से पाया गया कि महिलाओं की सहभागिता मुख्यतः सफाई प्रथाओं, घर-आधारित कचरा प्रबंधन और सामुदायिक जागरूकता तक सीमित नहीं है, बल्कि वे स्वयं सहायता समूहों, वार्ड-स्तरीय समितियों तथा एनजीओ गतिविधियों में नेतृत्वकारी भूमिका भी निभाने लगी हैं। साक्षात्कार से यह भी स्पष्ट हुआ कि सामाजिक मान्यताएँ, अवसंरचनात्मक सीमाएँ, सुरक्षा संबंधी चिंताएँ तथा नगर निगम के साथ अपर्याप्त संवाद अभी भी महिलाओं की सहभागिता को सीमित करते हैं। अध्ययन यह स्थापित करता है कि महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने से न केवल स्वच्छता प्रबंधन अधिक प्रभावी होता है, बल्कि शहरी विकास और जनस्वास्थ्य संकेतकों में भी सकारात्मक सुधार संभव है। इस शोध के आधार पर प्रशासन, नीति-निर्माताओं और सामुदायिक संगठनों के लिए कई व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

मुख्य शब्द- स्वच्छता, महिला सहभागिता, शहरी समाजशास्त्र, रीवा नगर, सामुदायिक नेतृत्व, कचरा प्रबंधन, स्वच्छ भारत मिशन

अध्ययन की पृष्ठभूमि: अवधारणात्मक विवेचन- स्वच्छता किसी भी सभ्य समाज की संरचना में एक आधारभूत अवधारणा के रूप में उपस्थित है, जो न केवल शारीरिक स्वास्थ्य से सीधे जुड़ी है, बल्कि सामाजिक व्यवहार, सामुदायिक उत्तरदायित्व, सांस्कृतिक मूल्यों और प्रशासनिक प्रबंधन की दक्षता का भी द्योतक है। मानव सभ्यता के विकासक्रम में स्वच्छता को सामाजिक उन्नति, जीवन-स्तर सुधार और पर्यावरणीय

• अतिथि विद्वान, समाज कार्य विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

संतुलन के अनिवार्य तत्व के रूप में देखा गया है। विशेषकर विकासशील देशों में यह विषय सार्वजनिक स्वास्थ्य और शहरी नियोजन की दोहरी चुनौती के रूप में उभरता है।

भारत में स्वच्छता के औपचारिक और जनसहभागिता आधारित मॉडल को 2014 के बाद एक नई गति और दिशा मिली, जब स्वच्छ भारत मिशन ने स्वच्छता को केवल सरकारी कार्यक्रम के रूप में नहीं, बल्कि "जनांदोलन" के रूप में परिभाषित किया। इस मिशन ने स्वच्छता को व्यवहार परिवर्तन (Behavior Change), समुदाय आधारित प्रबंधन (Community Management), और सक्रिय नागरिक भागीदारी (Active Citizen Participation) के संदर्भ में पुनर्स्थापित किया। इस परिवर्तन ने स्वच्छता को सामाजिक उत्तरदायित्व और सामुदायिक सक्रियता की धुरी पर रखकर उसे सामाजिक विज्ञानों के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण विषय बना दिया। रीवा नगर, जो विंध्य क्षेत्र का प्रमुख शहरी केंद्र है, अपने सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप, जनसंख्या घनत्व, तथा प्रशासनिक चुनौतियों के कारण शहरी स्वच्छता की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन-क्षेत्र के रूप में उभरता है। नगर के विकास के साथ-साथ अपशिष्ट प्रबंधन, स्वच्छ व्यवहार, सार्वजनिक स्थानों का संरक्षण और कचरा पृथक्करण जैसे मुद्दे यहाँ के शहरी जीवन का अनिवार्य हिस्सा बन चुके हैं। इस संदर्भ में समुदाय की भागीदारी विशेषतया महिलाओं की सहभागिता अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। भारतीय परिवार और समाज की संरचना में महिलाओं की विशिष्ट भूमिका उन्हें स्वच्छता-संबंधी गतिविधियों में अग्रणी बनाती है। पारंपरिक रूप से महिलाएँ घरेलू स्वच्छता, जल-संरक्षण, स्वास्थ्यकर व्यवहार, पोषण प्रबंधन और बच्चों में स्वच्छता आदतों के विकास की मुख्य उत्तरदायी रही हैं। अत: शहरी स्वच्छता अभियान में उनका योगदान केवल व्यवहारगत स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन (Social Transformation), शक्ति-संवर्द्धन (Empowerment), और समुदाय नेतृत्व (Community Leadership) जैसी व्यापक अवधारणाओं से भी जुड़ता है। स्वच्छता प्रबंधन के संदर्भ में महिलाओं की भूमिका को समझना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि इसका सीधा संबंध लैंगिक दृष्टिकोण (Gender Perspective), सामाजिक संरचना (Social Structure), और नीतिगत हस्तक्षेप (Policy Intervention) से है। महिलाओं की सक्रियता जहाँ व्यवहारिक सुधार को बढ़ावा देती है, वहीं उनका नेतृत्व शहरी प्रबंधन को दीर्घकालिक, समावेशी और स्थायी बनाता है। इस प्रकार, महिलाओं की भागीदारी और नेतृत्व दोनों ही शहरी स्वच्छता अभियान के भविष्य की दिशा तय करने वाले महत्त्वपूर्ण घटक हैं। अत: यह अध्ययन इस परिकल्पना पर आधारित है कि यदि शहरी स्वच्छता को सतत और प्रभावी बनाना है, तो महिलाओं की भूमिका को केवल कार्यात्मक (functional) स्तर पर नहीं, बल्कि निर्णयनात्मक (decision&making) और संगठनात्मक (organizational) स्तर पर भी सशक्त करने की आवश्यकता है। इसी विचारधारा के विस्तार में यह शोध रीवा नगर में महिलाओं की सहभागिता, नेतृत्व, चुनौतियों और अवसरों का व्यापक अध्ययन और विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

समस्या का परिचय- यद्यपि स्वच्छता अभियान में महिलाओं की भूमिका उल्लेखनीय है, फिर भी यह प्रश्न शोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि—

क्या महिलाएँ वास्तव में निर्णय-निर्माण और नेतृत्व स्तर पर शामिल हैं?
क्या सभी सामाजिक वर्गों की महिलाएँ समान रूप से भाग ले रही हैं?
उनकी भागीदारी में मुख्य बाधाएँ और अवसर क्या हैं?

शोध का महत्व- रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता पर आधारित यह अध्ययन इसलिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण बन जाता है क्योंकि आज भी शहरी स्वच्छता को समझने और उसकी नीति निर्माण प्रक्रिया में लैंगिक दृष्टिकोण का पर्याप्त समावेशन नहीं हो पाया है। स्वच्छता प्रबंधन के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिकाएँ और अनुभव अक्सर पृष्ठभूमि में छूट जाते हैं, जबकि घर-परिवार से लेकर समुदाय तक स्वच्छता संबंधी अधिकांश व्यावहारिक दायित्वों का निर्वहन वही करती हैं। ऐसे में यह शोध न केवल उनके योगदान को रेखांकित करता है, बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि नगर निगम तथा शहरी स्थानीय निकायों की नीति-स्तर की प्रक्रियाओं में महिलाओं की वास्तविक भागीदारी का वस्तुनिष्ठ आंकलन अत्यंत आवश्यक है। जब तक निर्णय-निर्माण में महिलाओं की आवाज़ शामिल नहीं होगी, तब तक स्वच्छता से जुड़े कार्यक्रम व्यवहार-स्तर पर प्रभावी होकर भी संरचनात्मक स्तर पर स्थायी परिवर्तन नहीं ला पाएँगे। साथ ही, यह अध्ययन इस बात को प्रमाणित करता है कि समुदाय स्तर पर महिला नेतृत्व में अत्यधिक परिवर्तनकारी क्षमता निहित है, स्वच्छता अभियान को सामुदायिक जनांदोलन के रूप में सफल बनाने में महिलाएँ न केवल कारगर कार्यकर्ता हैं, बल्कि प्रेरक नेतृत्व का भी सशक्त स्रोत बन सकती हैं। अत: यह शोध शहरी स्वच्छता में महिलाओं की भूमिका, नेतृत्व और निर्णय-निर्माण के आयामों को वैज्ञानिक रूप से समझने तथा नीतिगत दिशा देने में एक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है।

उद्देश्य-

स्वच्छता अभियान में महिलाओं की भागीदारी का विश्लेषण करना
विभिन्न सामाजिक वर्गों में सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन
नेतृत्व भूमिकाओं, चुनौतियों और अवसरों की पहचान करना
महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के लिए सुझाव प्रस्तुत करना

अध्ययन की सीमाएँ-

अध्ययन केवल रीवा नगर तक सीमित है।
नमूना 60 महिलाओं पर आधारित है।
सर्वेक्षण में आत्म-रिपोर्टिंग पर निर्भरता।

पूर्व शोधों में ग्रामीण स्वच्छता में महिलाओं की भूमिका पर अधिक अध्ययन हुए हैं, परंतु शहरी महिलाओं की नेतृत्व भूमिकाओं पर बहुत कम शोध उपलब्ध हैं। विशेषकर रीवा नगर जैसे मध्यम आकार के शहर पर कोई विस्तृत शोध उपलब्ध नहीं है, यह इस अध्ययन की मौलिकता को स्थापित करता है।

साहित्य समीक्षा- रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता को समझने के लिए उपलब्ध साहित्य का अवलोकन यह स्पष्ट करता है कि स्वच्छता,

लैंगिक भूमिकाओं और शहरी शासन के बीच एक गहरी अंतर्संबंधिता मौजूद है। पूर्व शोधों में महिलाओं को परिवार और समुदाय में स्वच्छता व्यवस्था की प्रमुख संरक्षक के रूप में चित्रित किया गया है। शर्मा (2017) तथा कश्यप (2019) के अध्ययन बताते हैं कि घरेलू स्वच्छता, जल संरक्षण, कचरा प्रबंधन और स्वास्थ्य-सुरक्षा से जुड़े अधिकांश निर्णयों में महिलाएँ केन्द्रीय भूमिका निभाती हैं। वे न केवल स्वच्छता संबंधी व्यवहारों को नियंत्रित करती हैं बल्कि अपनी आदतों, दिनचर्या और सामाजिक संबंधों के माध्यम से परिवार के अन्य सदस्यों को भी प्रभावित करती हैं। यह तथ्य दर्शाता है कि स्वच्छता की अवधारणा का सामाजिक स्वरूप गहराई से लैंगिक कार्य-विभाजन से जुड़ा है, परंतु आश्चर्यजनक रूप से नीति स्तर पर इन्हें अक्सर "उपभोक्ता" की श्रेणी में रखा जाता है, न कि "निर्णय निर्माता" की श्रेणी में।

इसी प्रकार, शहरी स्वच्छता और स्थानीय निकायों की भूमिका पर किए गए अध्ययनों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि स्वच्छ भारत मिशन और नगर निगम के अभियानों की सफलता नागरिक सहभागिता पर निर्भर करती है। दास (2020) के शोध में यह तथ्य उभरकर सामने आया कि स्थानीय संस्थाएँ जैसे वार्ड समितियाँ, स्वयं सहायता समूह, सामुदायिक संगठन और महापौर परिषद, स्वच्छता व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यदि इन संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी सुदृढ़ हो, तो स्वच्छता न केवल व्यवहार परिवर्तन का अभियान बनती है, बल्कि एक स्थायी सामाजिक आंदोलन के रूप में विकसित होती है।

साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि यद्यपि स्वच्छता और महिलाओं की भूमिका पर कई कार्य हुए हैं, परंतु शहरी स्वच्छता अभियानों में महिलाओं के नेतृत्व, निर्णय-स्तरीय सहभागिता और सामाजिक परिवर्तनकारी क्षमता पर केंद्रित शोध अभी भी सीमित हैं। विशेषकर छोटे और मध्यम शहरों जैसे रीवा में इस विषय पर व्यवस्थित अध्ययन लगभग अनुपस्थित है। यही शोध रिक्ति इस अध्ययन को आवश्यक और प्रासंगिक बनाती है, क्योंकि यह न केवल स्वच्छता अभियान में महिलाओं की भागीदारी का मूल्यांकन करता है बल्कि यह भी विश्लेषित करता है कि उनकी संलग्नता सामाजिक नेतृत्व, सामुदायिक प्रेरणा और शहरी प्रशासनिक दक्षता को किस प्रकार प्रभावित करती है।

शोध समस्या (Research Problem)-रीवा नगर में स्वच्छता अभियान में महिलाओं की वास्तविक सहभागिता क्या है, और वे किस प्रकार सामाजिक नेतृत्व व निर्णय-निर्माण में स्थान प्राप्त कर रही हैं, इन्हीं प्रश्नों की पड़ताल इस शोध की समस्या है। स्वच्छता और स्वास्थ्य सुधार सीधे समाज के जीवन स्तर को प्रभावित करते हैं। शहरी समाजशास्त्र और लैंगिक अध्ययन के लिए उपयोगी। प्रशासन को बेहतर रणनीतियाँ बनाने में सहायक।

अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of the Study)

1. स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता के स्तर का विश्लेषण करना।
2. विभिन्न सामाजिक वर्गों की महिलाओं की सहभागिता में अंतर की जांच

करना।

3. महिला नेतृत्व, निर्णय-निर्माण और संगठनात्मक भागीदारी का अध्ययन।

4. बाधाओं और अवसरों की पहचान कर व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति (Research Methodology)- इस अध्ययन में प्रयुक्त शोध पद्धति व्यवस्थित, स्पष्ट और उद्देश्यगत रूप से निर्धारित है, जिसका लक्ष्य रीवा नगर के स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता को तथ्यात्मक और विश्लेषणात्मक रूप से समझना है। शोध का प्रकार पूरी तरह मात्रात्मक रखा गया है, ताकि महिलाओं की सहभागिता, नेतृत्व, निर्णय-स्तर की भूमिका और स्वच्छता व्यवहार से संबंधित पहलुओं को संख्यात्मक रूप में मापा और तुलना किया जा सके। नमूना चयन के लिए स्तरीकृत नमूना तकनीक का प्रयोग किया गया, जिससे विभिन्न सामाजिक वर्गों सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का समान प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जा सके। कुल 60 उत्तरदाताओं पर आधारित यह नमूना शोध को सामाजिक संतुलन और तुलनात्मक विश्लेषण की – दृष्टि से अधिक विश्वसनीय बनाता है।

डेटा संग्रह के लिए प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया। प्राथमिक डेटा सर्वेक्षण, व्यक्तिगत साक्षात्कार और वार्ड-स्तरीय अवलोकन के माध्यम से संकलित किया गया, जिससे वास्तविक स्थिति का प्रत्यक्ष आकलन संभव हुआ। इसके साथ ही द्वितीयक स्रोतों सरकारी रिपोर्टों, नगर निगम के दस्तावेजों, आधिकारिक वेबसाइटों और पूर्व शोध अध्ययनों का उपयोग डेटा को पुष्ट तथा व्यापक बनाने के लिए किया गया।

अध्ययन के लिए साक्षात्कार अनुसूची तैयार की गई, जिसमें स्वच्छता सहभागिता, निर्णय-स्तर की भूमिका, सामाजिक भागीदारी और नेतृत्व क्षमता से जुड़े प्रश्न शामिल थे। इसके अतिरिक्त, समूह चर्चा (FGD) और वार्ड क्षेत्र के अवलोकन भी किए गए, जिससे मात्रात्मक निष्कर्षों के सामाजिक संदर्भों को समझना आसान हुआ।

डेटा विश्लेषण के लिए वर्णनात्मक सांख्यिकी जैसे प्रतिशत, औसत आदि का उपयोग किया गया, और परिणामों को तालिकाओं तथा ग्राफ़ के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। पूरे विश्लेषण में मात्रात्मक निष्कर्षों का गुणात्मक व्याख्या के साथ संयोजन किया गया, जिससे अध्ययन के परिणाम अधिक स्पष्ट, संपूर्ण और संदर्भ-सम्मत रूप में प्रस्तुत हो सकें।

डेटा विश्लेषण एवं प्रस्तुति (Data Analysis & Interpretation)

तालिका क्रमांक 0 1

क्या आप स्वच्छता अभियान में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेती हैं?

	क्या आप स्वच्छता अभियान में प्रत्यक्ष रुप से भाग लेती है?	
सहभागिता	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	42	70.00
नहीं	18	30.00

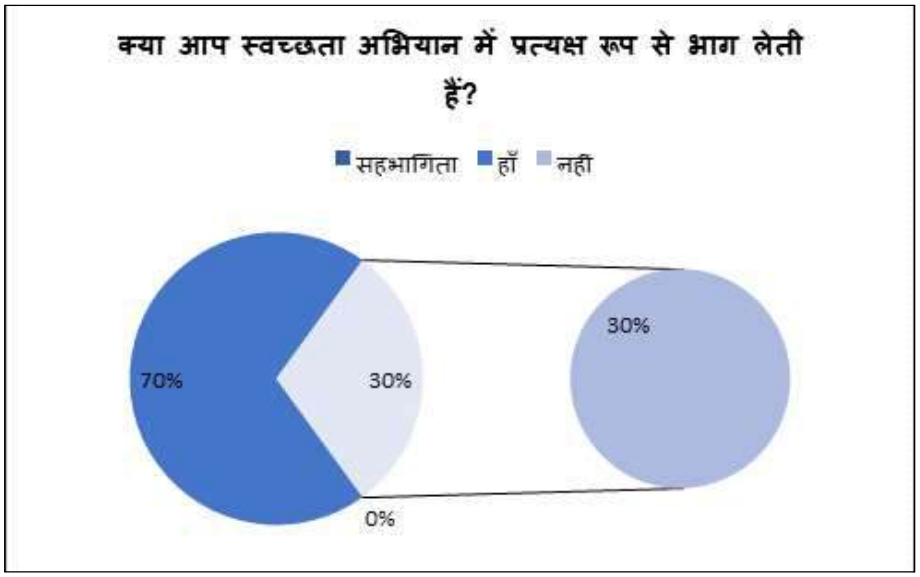

सर्वेक्षण के परिणाम बताते हैं कि रीवा नगर की अधिकांश महिलाओं में स्वच्छता अभियान के प्रति प्रत्यक्ष सहभागिता का स्तर उल्लेखनीय रूप से उच्च है। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 42 महिलाओं (70 प्रतिशत) ने स्पष्ट रूप से कहा कि वे स्वच्छता अभियान में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेती हैं, जबकि केवल 18 महिलाएँ (30 प्रतिशत) ऐसी थीं जो किसी भी प्रकार की सहभागी भूमिका से दूर रहीं। यह आंकड़ा शहर में बढ़ती स्वच्छता जागरूकता का प्रत्यक्ष संकेत है और यह दर्शाता है कि स्वच्छ भारत मिशन जैसे अभियानों ने महिलाओं के व्यवहार और दृष्टिकोण पर सकारात्मक प्रभाव डाला है।

महिलाओं की 70 प्रतिशत भागीदारी इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि समाज में स्वच्छता और घर-परिवार से जुड़े अधिकांश कार्य पारंपरिक रूप से महिलाओं की जिम्मेदारी माने जाते हैं। अत: जब स्वच्छता अभियान सामुदायिक स्वरूप लेता है, तो महिलाएँ स्वाभाविक रूप से उसमें अग्रणी भूमिका निभाती दिखाई देती हैं। दैनिक जीवन में कचरे के प्रबंधन, घर-आँगन की सफाई, बच्चों को स्वच्छता की आदतें सिखाने और आस-पास के वातावरण को स्वच्छ बनाए रखने जैसे अनेक कार्यों में उनकी सक्रियता उन्हें अभियान का अभिन्न हिस्सा बनाती है।

दूसरी ओर, 30 प्रतिशत महिलाओं द्वारा सहभागिता न करने के पीछे स्पष्ट कारण भी हो सकते हैं, जैसे घरेलू कार्यों का बोझ, समय की कमी, सामाजिक व सांस्कृतिक बाधाएँ, या नगर निगम व स्थानीय संस्थाओं से संवाद की कमी। कई बार स्वच्छता अभियान को केवल प्रतीकात्मक गतिविधि समझकर महिलाएँ औपचारिक रूप से जुड़ने से बचती हैं, हालांकि अप्रत्यक्ष रूप से वे स्वच्छता व्यवहार का पालन करती रहती हैं।

कुल मिलाकर यह निष्कर्ष सामने आता है कि रीवा नगर में स्वच्छता के प्रति महिलाओं में सजगता और भागीदारी का स्तर काफी ऊँचा है। यह भागीदारी शहरी स्वच्छता को अधिक प्रभावी और स्थायी बनाने में निर्णायक भूमिका निभा सकती है,

बशर्ते कि इसे संगठित समुदाय नेतृत्व और संस्थागत समर्थन के साथ जोड़ा जाए।

तालिका क्रमांक 0 2

आप किस प्रकार की गतिविधियों में भाग लेती हैं?

	आप किस प्रकार की गतिविधियों में भाग लेती है?	
गतिविधि	संख्या	प्रतिशत
सफाई अभियान	28	46.60
कचरा पृथक्करण	36	60.00
जागरुकता अभियान	22	36.60
निर्णय/नेतृत्व	10	16.60

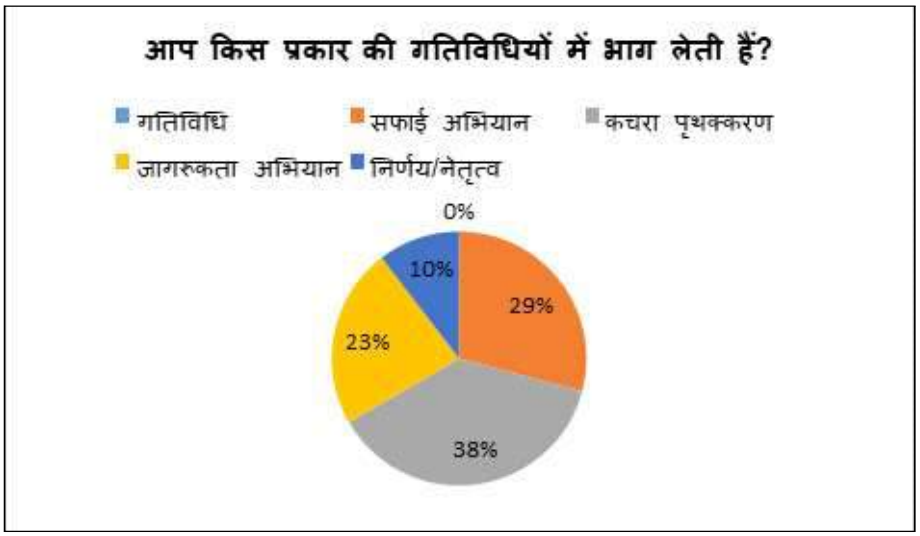

रीवा नगर में स्वच्छता से संबंधित विभिन्न गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी के आंकड़े यह बताते हैं कि उनका योगदान मुख्यत: व्यावहारिक और व्यवहार आधारित कार्यों में अधिक है, जबकि नेतृत्व और निर्णय-निर्माण की स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर है। तालिका से प्राप्त तथ्यों के अनुसार, 60 प्रतिशत महिलाएँ कचरा पृथक्करण की गतिविधि में सक्रिय रूप से शामिल हैं। यह अत्यंत महत्वपूर्ण संकेत है, क्योंकि घरेलू स्तर पर कचरे का सही चयन और प्रबंधन ही शहरी स्वच्छता व्यवस्था की प्रभावशीलता का आधार है। महिलाएँ घर के भीतर कचरे को समझती हैं, उसका वर्गीकरण करती हैं और परिवार के अन्य सदस्यों को भी इस व्यवहार के प्रति प्रेरित करती हैं; इसलिए इस गतिविधि में उनकी भागीदारी स्वाभाविक रूप से अधिक दिखाई देती है।

इसके बाद 46.6 प्रतिशत महिलाएँ सफाई अभियान से भी प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं। यह दर्शाता है कि वे समुदाय-स्तर की स्वच्छता गतिविधियों में, जैसे मोहल्ला साफ-सफाई, सार्वजनिक स्थानों की सफाई या सामूहिक श्रमदान, में उल्लेखनीय उपस्थिति दर्ज कराती हैं। यह सहभागिता न केवल साफ-सफाई की क्रियात्मकता को बढ़ाती है, बल्कि समुदाय में स्वच्छता के प्रति उदाहरण प्रस्तुत करती है।

जागरूकता अभियानों में 36.6 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी यह बताती है कि वे न केवल स्वयं स्वच्छता का पालन करती हैं, बल्कि दूसरों को भी इसके लिए प्रेरित करने का प्रयास करती हैं। यह सामाजिक पूँजी (social capital) का एक सशक्त रूप है, जिसके माध्यम से महिलाएँ अपनी सामाजिक भूमिका को व्यापक समुदाय तक विस्तारित करती हैं। यह भागीदारी दर्शाती है कि अभियान केवल क्रियात्मक न होकर सामुदायिक शिक्षा का पहलू भी अपने भीतर समेटे हुए है।

हालाँकि, सबसे चिंताजनक पहलू यह है कि नेतृत्व एवं निर्णय-निर्माण से संबंधित गतिविधियों में केवल 16.6 प्रतिशत महिलाएँ सक्रिय हैं। यह कम प्रतिशत स्पष्ट संकेत करता है कि महिलाएँ अभी भी स्वच्छता प्रबंधन की निर्णयकारी संरचना से दूर हैं। इसका कारण सामाजिक संरचनाएँ, पारिवारिक दायित्व, प्रशासनिक प्रक्रियाओं से अनभिज्ञता, तथा संगठनात्मक प्रशिक्षण की कमी हो सकता है। महिलाएँ व्यावहारिक स्तर पर तो अत्यधिक सक्रिय हैं, परंतु उन्हें नेतृत्व की जिम्मेदारियों तक पहुँचाने के लिए संस्थागत प्रयास अभी अपर्याप्त हैं।

कुल मिलाकर, यह विश्लेषण दर्शाता है कि रीवा नगर की महिलाएँ स्वच्छता अभियान में मजबूत कार्यकर्ता (implementers) की भूमिका तो निभा रही हैं, लेकिन निर्णयकर्ता (decision&makers) के रूप में उनकी उपस्थिति अभी सीमित है। यदि उन्हें प्रशिक्षण, अवसर और संगठनात्मक समर्थन मिले, तो यह सहभागी भूमिका नेतृत्व में भी परिवर्तित हो सकती है, जिससे शहरी स्वच्छता की स्थिरता और प्रभावशीलता दोनों बढ़ सकती हैं।

तालिका क्रमांक 0 3
सहभागिता में मुख्य बाधाएँ क्या है?

सहभागिता में मुख्य बाधाएँ क्या है?		
बाधाएँ	संख्या	प्रतिशत
समय की कमी	32	53.30%
परिवार/सामाजिक प्रतिबंध	18	30%
नगर निगम में सहयोग की कमी	15	25%
संसाधन/सुरक्षा की कमी	12	20%

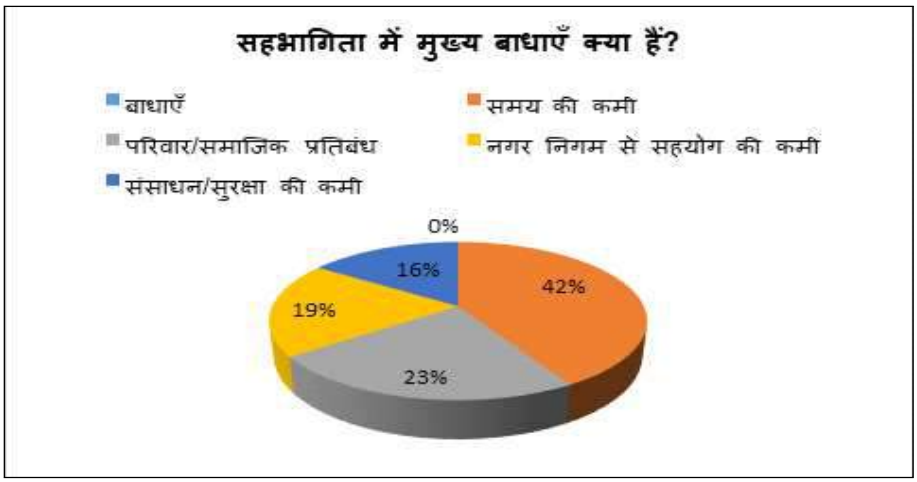

रीवा नगर में स्वच्छता अभियान में महिलाओं की सहभागिता को प्रभावित करने वाली बाधाओं का विश्लेषण दर्शाता है कि समय की कमी सबसे प्रमुख चुनौती है, जिसे 53.3 प्रतिशत महिलाओं ने अनुभव किया। इसका मुख्य कारण घरेलू जिम्मेदारियों का अत्यधिक बोझ है, जिसके कारण वे सामुदायिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय नहीं निकाल पातीं। यह बाधा लैंगिक कार्य-विभाजन को भी उजागर करती है, जिसमें घर-परिवार का अधिकांश कार्य महिलाओं के ऊपर केंद्रित रहता है।

दूसरी प्रमुख बाधा परिवार एवं सामाजिक प्रतिबंध हैं, जिन्हें 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महसूस किया। यह संकेत करता है कि स्वच्छता जैसे सार्वजनिक कार्यों में महिलाओं की सक्रियता को अभी भी सामाजिक दृष्टि से पूर्ण स्वीकृति नहीं मिली है। कई परिवार महिलाओं के घर से बाहर सामुदायिक स्तर पर कार्य करने को सीमित करते हैं, जिससे उनकी नेतृत्व क्षमता और सहभागिता दोनों प्रभावित होती हैं।

इसी प्रकार, नगर निगम से सहयोग की कमी (25 प्रतिशत) एक प्रशासनिक स्तर की बाधा है। कई महिलाएँ बताती हैं कि यदि उन्हें समुचित मार्गदर्शन, सूचना या आवश्यक सहायता मिले, तो वे अधिक प्रभावी रूप से योगदान दे सकती हैं। यह कमी सहभागिता को संगठित रूप देने में बाधक बनती है।

अंत में, संसाधन एवं सुरक्षा की कमी (20 प्रतिशत) भी एक महत्वपूर्ण कारण है, विशेषकर उन वार्डों में जहाँ सार्वजनिक स्थानों पर काम करते समय सुरक्षा का अभाव होता है या आवश्यक उपकरण उपलब्ध नहीं होते।

समग्र रूप से देखा जाए तो समय, सामाजिक प्रतिबंध और प्रशासनिक सहयोग की कमी महिलाओं की सार्वजनिक सहभागिता को सीमित करती है, जबकि संसाधन व सुरक्षा से जुड़ी समस्याएँ उनकी सक्रियता को बाधित करती हैं।

तालिका क्रमांक 0 4

क्या आप किसी स्वयं-सहायता समूह या समिति से जुड़ी हैं?

	क्या आप किसी स्वयं-सहायता समुह या समिति से जोड़ी हैं?	
हाँ/नहीं	संख्या	प्रतिशत
हाँ	24	40.00
नहीं	36	60.00

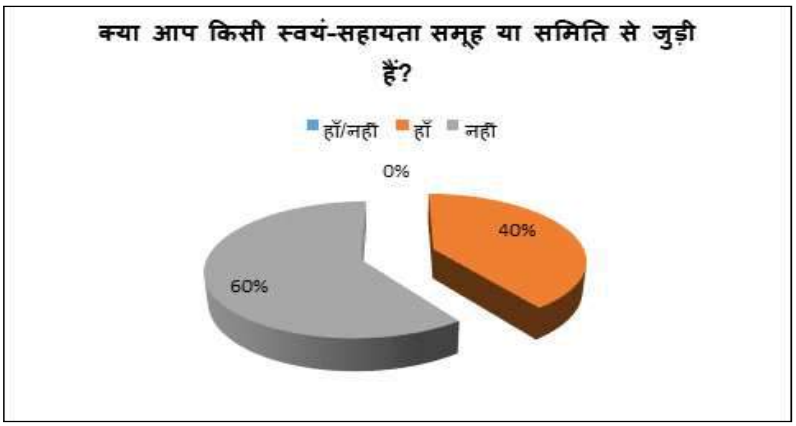

रीवा नगर की महिलाओं के समिति या स्वयं-सहायता समूह से जुड़ाव से जुड़े आंकड़े बताते हैं कि 40 प्रतिशत महिलाएँ किसी न किसी समूह का हिस्सा हैं, जबकि 60 प्रतिशत अभी भी किसी संगठनात्मक संरचना से जुड़ी नहीं हैं। यह स्थिति दो समानांतर प्रवृत्तियों को दर्शाती है।

एक ओर, 40 प्रतिशत का जुड़ाव यह संकेत देता है कि महिलाओं में सामूहिकता, संगठन और सहभागिता की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जो भविष्य में समिति-आधारित नेतृत्व को मजबूत आधार प्रदान कर सकती है। स्वयं-सहायता समूह महिलाओं को निर्णय-क्षमता, आर्थिक जागरूकता और सामाजिक सहभागिता का अवसर देते हैं, इसलिए स्वच्छता अभियान में भी इनका योगदान व्यापक हो सकता है।

दूसरी ओर, 60 प्रतिशत महिलाओं का किसी भी समूह से न जुड़ पाना बताता है कि अभी संगठनात्मक पहुँच सीमित है। इसके पीछे प्रमुख कारण हो सकते हैं, समय की कमी, जागरूकता का अभाव, सामाजिक-परिवारिक प्रतिबंध और समूह गतिविधियों तक महिलाओं की सीमित पहुँच।

इस प्रकार, उपलब्ध डेटा दर्शाता है कि महिला नेतृत्व विकसित होने की संभावनाएँ मौजूद हैं, परंतु व्यापक स्तर पर सामूहिक संगठन की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है।

तालिका क्रमांक 0 5

क्या आप निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया का हिस्सा हैं?

	क्या आप निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया का हिस्सा हैं?	
निर्णय में भागीदारी	संख्या	प्रतिशत
हाँ	14	23.30
नहीं	46	76.60

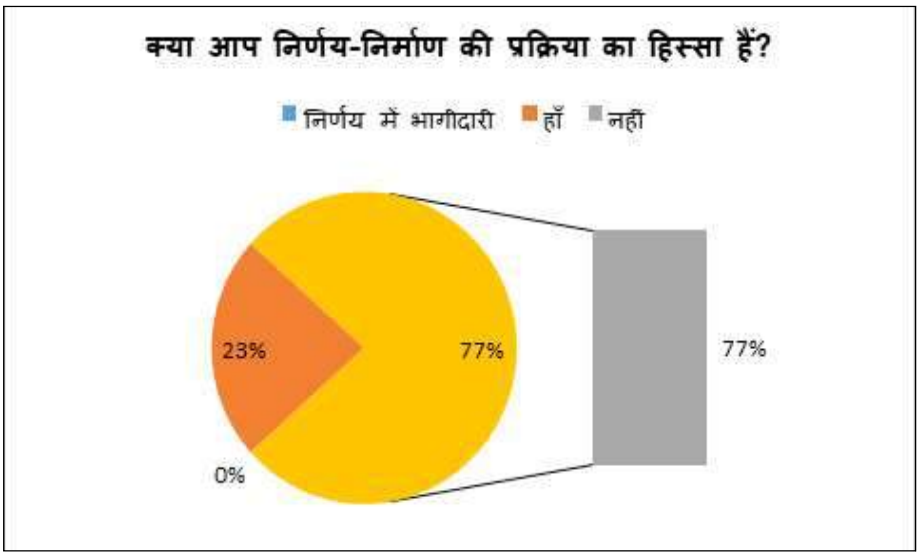

सारणी में प्रस्तुत आँकड़े संकेत देते हैं कि स्वच्छता अभियान से जुड़ी गतिविधियों में भले ही महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही हो, लेकिन निर्णय-निर्माण के स्तर पर उनका योगदान अभी भी अत्यंत सीमित है। केवल 23.3 प्रतिशत महिलाएँ ही निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनने की बात कहती हैं, जबकि 76.6 प्रतिशत महिलाएँ किसी भी निर्णयात्मक भूमिका में शामिल नहीं हैं। यह स्थिति स्पष्ट करती है कि नेतृत्व और प्रबंधन से संबंधित भूमिकाएँ अभी भी पुरुष-प्रधान बनी हुई हैं। निर्णय स्तर पर महिलाओं का हाशिये पर रहना कई कारणों से जुड़ा हो सकता है-

- समिति या वार्ड-स्तरीय बैठकों में सीमित प्रतिनिधित्व,
- परिवार या समाज द्वारा औपचारिक नेतृत्व के लिए प्रोत्साहन का अभाव,
- समय और संसाधनों की कमी,
- तथा प्रशासनिक संरचनाओं में महिलाओं के लिए कम अवसर।

इस प्रकार, आँकड़े यह दर्शाते हैं कि सहभागिता तो बढ़ रही है, परंतु नेतृत्व तक पहुँच अब भी एक बड़ी चुनौती है, जिसे दूर करने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप और जागरूकता दोनों की आवश्यकता है।

उपकल्पना 1 - स्वच्छता अभियान में महिलाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी का स्तर उच्च है।

परीक्षण

सर्वेक्षण में 60 में से 42 महिलाएँ (70 प्रतिशत) किसी न किसी गतिविधि में सक्रिय पाई गईं।

यह प्रतिशत बताता है कि महिलाएँ सफाई, कचरा पृथक्करण और जागरूकता कार्यक्रमों में लगातार हिस्सा ले रही हैं।

उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है, क्योंकि आँकड़े स्पष्ट करूप से उच्च भागीदारी दिखाते हैं।

उपकल्पना 2- महिलाओं की सहभागिता व्यावहारिक गतिविधियों में अधिक और नेतृत्व/निर्णय स्तर पर कम है।

कचरा पृथक्करण : 60 प्रतिशत

सफाई अभियान: 46.6 प्रतिशत

जागरूकता अभियान: 36.6 प्रतिशत

नेतृत्व/निर्णय स्तर: केवल 16.6 प्रतिशत

इससे पता चलता है कि महिलाएँ काम करने में सक्रिय हैं लेकिन नेतृत्व की जिम्मेदारी कम ले पा रही हैं।

उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है, क्योंकि नेतृत्व की भागीदारी व्यावहारिक कार्यों की तुलना में बहुत कम है।

उपकल्पना 3-सामाजिक, पारिवारिक और संरचनात्मक बाधाएँ महिलाओं की सहभागिता को सीमित करती हैं।

सर्वेक्षण और साक्षात्कार में सामने आया कि-

घरेलू जिम्मेदारियाँ

समय की कमी

सामाजिक–पारिवारिक रोक
सुरक्षा संबंधी चिंताएँ
नगर निगम से संवाद की कमी
इन कारणों से 30 प्रतिशत महिलाएँ किसी गतिविधि में हिस्सा ही नहीं ले सकीं।

उपकल्पना आंशिक रूप से सत्य सिद्ध होती है, क्योंकि कई सामाजिक और संरचनात्मक बाधाएँ महिलाओं की भागीदारी को प्रभावित कर रही हैं।

निष्कर्ष- अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि शहरी स्वच्छता के क्षेत्र में महिलाओं की सक्रियता तो पर्याप्त है, लेकिन नेतृत्व स्तर पर उनका प्रतिनिधित्व अभी भी अपेक्षाकृत कम दिखाई देता है। नगर के विभिन्न वार्डों में स्वच्छता से जुड़े कार्यों जैसे घर–घर कचरा संग्रहण में सहयोग, कचरे का पृथक्करण, और आसपास की स्वच्छता बनाए रखने के व्यवहार में महिलाएँ अत्यंत संलग्न हैं। विशेष रूप से कचरा पृथक्करण के संदर्भ में महिलाओं की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण एवं निर्णायक रूप में सामने आती है, क्योंकि घरेलू स्तर पर होने वाले अधिकांश निर्णय उन्हीं द्वारा लिए जाते हैं।

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि स्वच्छता गतिविधियों में सभी सामाजिक वर्गों की महिलाओं की भागीदारी मौजूद है, यद्यपि सामान्य वर्ग की महिलाओं में यह सहभागिता अन्य वर्गों की तुलना में थोड़ी अधिक दिखाई पड़ी। इसके बावजूद सहभागिता और नेतृत्व के बीच का अंतर स्पष्ट है। समय की कमी, घरेलू जिम्मेदारियों का बोझ, सामाजिक प्रतिबंध तथा प्रशासनिक सहयोग की अपर्याप्तता ऐसी प्रमुख बाधाएँ हैं जो उनके नेतृत्व को आगे बढ़ने से रोकती हैं।

इसी क्रम में अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि शहर के वार्डों में स्वच्छता से जुड़ी महिला समितियों के गठन की आवश्यकता महसूस की जा रही है। ऐसी समितियाँ न केवल नेतृत्व को बढ़ावा देंगी, बल्कि समुदाय में स्वच्छता व्यवहार को सुदृढ़ बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

अध्ययन के परिणामों को व्यापक संदर्भ में समझने पर यह स्पष्ट होता है कि शहरी स्वच्छता में महिलाओं का सहभागिता मॉडल मूलतः व्यवहार आधारित (behavior&oriented) है, अर्थात वे स्वच्छता के दैनिक क्रियाकलापों में सक्रिय रहती हैं, लेकिन नेतृत्व आधारित (leadership&oriented) मॉडल अभी अपने प्रारंभिक चरण में है। यह प्रवृत्ति उन पूर्ववर्ती शोध निष्कर्षों से भी मेल खाती है, जिनमें पाया गया कि महिलाओं का स्वच्छता व्यवहार स्वभावतः अधिक संगठित, संवेदनशील और सतत होता है।

रीवा नगर के संदर्भ में यह स्थिति और अधिक स्पष्ट हो जाती है, जहाँ सहभागिता तो पर्याप्त है परंतु नेतृत्व की कमी एक महत्वपूर्ण रिक्ति के रूप में उभरती है। यह रिक्ति केवल प्रशासनिक स्तर पर नीति–निर्माण और प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा ही भरी जा सकती है। यदि महिलाओं को निर्णय–स्तर पर उचित अवसर मिले, तो स्वच्छता प्रबंधन अधिक समावेशी, प्रभावी और टिकाऊ स्वरूप ग्रहण कर सकता है।

अध्ययन शहरी स्वच्छता की समझ को आगे बढ़ाते हुए यह स्थापित करता है कि स्वच्छता के सतत म,डल के निर्माण में महिलाओं की भूमिका केवल व्यवहार तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, बल्कि उन्हें प्रबंधन, योजना निर्माण और निगरानी की प्रक्रियाओं में भी समान रूप से शामिल किया जाना चाहिए। इस प्रकार यह अध्ययन न केवल स्थानीय स्तर पर नए आयाम खोलता है, बल्कि भविष्य की नीतियों और कार्यक्रमों के लिए भी महत्वपूर्ण संकेत प्रदान करता है।

सुझाव-

- महिला स्वच्छता समितियों का गठन प्रत्येक वार्ड में किया जाए।
- नगर निगम द्वारा महिलाओं के लिए नेतृत्व प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित हों।
- कचरा पृथक्करण और घर-आधारित स्वच्छता पर महिला-केंद्रित अभियान चलाए जाएँ।
- स्वयं-सहायता समूहों को कचरा प्रबंधन परियोजनाओं से जोड़ा जाए।
- महिलाओं की सुरक्षा और संसाधन उपलब्धता सुनिश्चित की जाए।
- स्कूली और महाविद्यालयीन छात्राओं को जोड़ा जाए।

यह अध्ययन सिद्ध करता है कि रीवा नगर में महिलाओं की स्वच्छता अभियान में भागीदारी न केवल सक्रिय है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की दिशा निर्धारित करने में महत्वपूर्ण है। यद्यपि नेतृत्व स्तर पर अभी भी सुधार की व्यापक संभावनाएँ हैं, परंतु यदि नीति-निर्माता, नगर निगम और समाज मिलकर उपयुक्त मंच प्रदान करें, तो महिलाएँ स्वच्छता अभियान को जनांदोलन से आगे बढ़ाकर स्थायी शहरी विकास मॉडल बना सकती हैं। भविष्य में शोध नमूने को विस्तृत कर पुरुष-महिला तुलनात्मक अध्ययन तथा डिजिटल स्वच्छता प्रबंधन में महिलाओं की भूमिका पर भी किया जा सकता है।

संदर्भ सूची-

1. भारत सरकार. (2016). स्वच्छ भारत मिशन, संचालन दिशानिर्देश. नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय.
2. मिश्रा, आर. (2018). शहरी स्वच्छता और सामुदायिक भागीदारी. नई दिल्ली, अवध पब्लिकेशन.सिंह, ए. (2020). लैंगिक अध्ययनरू सिद्धांत और व्यवहार. दिल्ली, मेघा बुक हाउस.
3. शर्मा, पी. (2017). ग्रामीण एवं शहरी संदर्भों में महिलाओं की स्वच्छता भूमिका का तुलनात्मक विश्लेषण. भारतीय समाजशास्त्र समीक्षा, 12(2), 44–57.
4. कश्यप, एस. (2019). घरेलू स्वच्छता व्यवहार और महिला नेतृत्व, एक अध्ययन. सामाजिक अनुसंधान पत्रिका, 8(1), 28–39.
5. दास, आर. (2020). शहरी स्वच्छता प्रबंधन में स्थानीय निकायों की भूमिका, एक विश्लेषण. अर्बन स्टडीज़ जर्नल, 5(3), 66–75.
6. तिवारी, डी. (2021). स्वच्छ भारत मिशन और सामुदायिक सहभागिता, सामाजिक परिवर्तन के आयाम. समाज-विज्ञान परिप्रेक्ष्य, 9(4), 91–103.
7. रीवा नगर निगम. (2023). वार्षिक स्वच्छता प्रगति रिपोर्ट 2022–23. रीवा, स्वच्छता शाखा.

8. स्वच्छ भारत मिशन (शहरी). (2022). नगर निकायों में महिला सहभागिता, एक स्थिति रिपोर्ट. आवासन एवं शहरी कार्य मंत्रालय, भारत सरकार.
9. नीति आयोग. (2021). लैंगिक समानता और शहरी शासन: नीति अध्ययन. नई दिल्ली, नीति आयोग प्रकाशन विभाग.
10. वर्मा, जी. (2019). मध्य भारत में महिलाओं की शहरी नेतृत्व भूमिकाएँ (अप्रकाशित शोध प्रबंध). अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

आधुनिक युग में युवा समाज पर फिल्मों का प्रभाव

•अलका रानी

••उदित पंत

सारांश- भारतीय समाज में सिनेमा केवल एक दृश्य-श्रव्य मनोरंजन माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संचार के सबसे अधिक प्रभावशाली प्रणाली के रूप में कार्य करता है। बॉलीवुड हिन्दी फिल्मों का सबसे सशक्त निर्माण-क्षेत्र है जिसने पिछले सौ वर्षों में राष्ट्र की मानसिकता, सामूहिक स्मृति, सांस्कृतिक प्रतीक-परंपरा), सौंदर्य-बोध और सामाजिक मूल्यों की कल्पना-शक्ति का आकार दिया है।युवा जीवन के उस चरण में होता है जहाँ आत्मछवि, दिशा-निर्धारण, भावनात्मक संरचना, करियर आशाएँ और सामाजिक व्यवहार तेजी से निर्माण-परिवर्तन की अवस्था में होते हैं। इसलिए फिल्मों में वर्तमान में होने वाले आख्यान, पात्र-निर्माण, संघर्ष, सफलता की कहानियाँ, विजुअल आकर्षण, मिलन-विछोह, शक्ति-वर्चस्व और जीवन की समस्याओं के फिल्मी समाधान युवा मष्तिस्क के साथ प्रत्यक्ष संज्ञानात्मक जुड़ाव रखते हैं। इसलिये भारत में युवा वर्ग विशेष रूप से फिल्मों के माध्यम से अर्थ, भाव, महत्व, पहचान और आधुनिकता की प्रक्रिया विकसित करता है। यह लेख आधुनिक युग में युवा समाज पर फिल्मों के पड़ने वाले इन्हीं विविध प्रभावों का विश्लेषण करने का एक प्रयास है। फिल्में केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं, ये एक आईना हैं जो समाज की तस्वीरें दिखाती हैं, और साथ ही, वे एक हथौड़ा भी हैं जो समाज के विचारों और व्यवहारों को गढ़ती हैं। फिल्मों के सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों प्रकार के प्रभावों के साथ-साथ इस लेख में यह समझने की कोशिश की गयी है कि यह शक्तिशाली माध्यम किस प्रकार हमारे युवाओं के भविष्य को आकार दे रहा है।

मुख्य शब्द- सिनेमा, युवा वर्ग, नकारात्मक प्रभाव, सकारात्मक प्रभाव

1. सिनेमाः समाज का दर्पण और निर्माता- सिनेमा और समाज के बीच का संबंध हमेशा से बहस का विषय रहा है। एक पक्ष मानता है कि 'सिनेमा समाज का दर्पण है' (ब्पदमउं पे ि तमसिमबजपवद वि विबपमजल)। इस दृष्टिकोण के अनुसार, फिल्म निर्माता अपने आसपास के समाज में घटित होने वाली घटनाओं, समस्याओं, संघर्षों और

• प्रोफेसर, समाजशास्त्र, मदरहुड विश्वविद्यालय, रूडकी (हरिद्वार)

•• शोधकर्ता, समाजशास्त्र, मदरहुड विश्वविद्यालय, रूडकी (हरिद्वार)

सफलताओं से ही अपनी कहानियों के लिए प्रेरणा लेते हैं। वे वही दिखाते हैं जो समाज में मौजूद है, चाहे वह भ्रष्टाचार हो, सामाजिक कुरीतियाँ हों, प्रेम हो, या पारिवारिक मूल्य हों। जब युवा इन फिल्मों को देखते हैं, तो वे अपनी दुनिया का एक प्रतिबिंब उनमें पाते हैं, जिससे वे कहानी और पात्रों से आसानी से जुड़ जाते हैं।

इसके विपरीत, दूसरा पक्ष यह तर्क देता है कि सिनेमा केवल दर्पण नहीं है, बल्कि यह 'समाज का निर्माता' (Cinema is a shaper of society) भी है। फिल्मों में नई सोच, नए फैशन, और जीवन जीने के नए तरीकों को इतने आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है कि वे एक 'ट्रेंड' बन जाते हैं। युवा मन, जो स्वाभाविक रूप से नवीनता और आकर्षण की ओर खिंचता है, इन ट्रेंड्स को तेजी से अपनाता है। भाषा, पहनावा, हेयर स्टाइल से लेकर सोचने-समझने के ढंग तक, फिल्में युवाओं के व्यवहार को प्रभावित और परिवर्तित करने की क्षमता रखती हैं।

हांलाकि सच्चाई शायद इन दोनों तर्कों के बीच में कहीं है। फिल्में समाज से कच्ची सामग्री लेती हैं, उसे अपनी रचनात्मकता और कल्पनाशीलता के रंग में रंगती हैं, और फिर एक नए, अधिक प्रभावशाली रूप में वापस समाज को सौंप देती हैं। यह एक निरंतर चलने वाली चक्रीय प्रक्रिया है, जिसमें युवा पीढ़ी सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है।

2. फिल्मों का सकारात्मक प्रभाव: प्रेरणा और प्रगति की ओर- यह मानना गलत होगा कि फिल्में युवाओं पर केवल नकारात्मक प्रभाव डालती हैं। सिनेमा ने अनगिनत बार युवाओं को प्रेरित करने, उन्हें शिक्षित करने और उनमें सामाजिक चेतना जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

2.1. सामाजिक जागरूकता और शिक्षा- ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक मुद्दों (जैसे जातिवाद, लैंगिक भेदभाव, पर्यावरण संरक्षण) और जटिल मानवीय संबंधों पर बनी फिल्में युवाओं के लिए ज्ञान का एक महत्वपूर्ण स्रोत हो सकती हैं। 'आर्टिकल 15', 'पिंक', 'पैडमैन' या 'तारे जमीन पर' जैसी फिल्में न केवल मनोरंजन करती हैं, बल्कि दर्शकों को गंभीर विषयों पर सोचने के लिए मजबूर करती हैं। वे युवाओं में उन मुद्दों के प्रति संवेदनशीलता पैदा करती हैं, जिन पर आम तौर पर खुलकर चर्चा नहीं होती।

2.2. प्रेरणा और प्रोत्साहन- बायोपिक्स (जीवन-कथाएँ) और संघर्ष से सफलता तक की कहानियाँ युवाओं पर गहरा सकारात्मक प्रभाव डालती हैं। 'दंगल', 'एम.एस. धोनी: द अनटोल्ड स्टोरी', या '12वी फेल' जैसी फिल्में युवाओं को दिखाती हैं कि दृढ़ संकल्प, कड़ी मेहनत और असफलता से न डरने वाले जज्बे से किसी भी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। ये फिल्में उन्हें अपने सपनों का पीछा करने और बाधाओं के बावजूद हार न मानने के लिए प्रेरित करती हैं।

2.3. दृष्टिकोण का विस्तार और सहानुभूति- सिनेमा हमें अपनी दुनिया से बाहर निकालकर उस दुनिया सैर कराता है, जहाँ हम शायद कभी न जा पाएँ। यह युवाओं को विभिन्न संस्कृतियों, जीवन-शैलियों और विचारधाराओं से परिचित कराता है। जब एक युवा विभिन्न प्रकार के पात्रों की यात्रा, उनके संघर्षों और उनकी भावनाओं को पर्दे पर देखता है, तो उसकी दुनिया को देखने का नजरिया व्यापक होता है। इससे उसमें सहानुभूति और दूसरों के प्रति समझ विकसित होती है। वह यह समझने लगता है कि

हर कहानी के कई पहलू होते हैं।

2.4. भावनात्मक जुड़ाव और तनाव मुक्ति- युवावस्था अक्सर तनाव, भ्रम और भावनात्मक उथल-पुथल का दौर होती है। ऐसे में, फिल्में एक 'कैथार्सिस' या भावनात्मक मुक्ति (Emotional Release) के साधन के रूप में कार्य करती हैं। एक अच्छी कॉमेडी फिल्म तनाव दूर कर सकती है, एक भावुक कहानी मन को हल्का कर सकती है, और एक रोमांचक फिल्म रोजमर्रा की जिंदगी से एक जरूरी 'ब्रेक' दे सकती है। यह युवाओं को अपनी भावनाओं को समझने और उन्हें प्रबंधित करने का एक सुरक्षित तरीका प्रदान करता है।

2.5. करियर के नए विकल्प- परंपरागत रूप से, करियर के विकल्प डॉक्टर, इंजीनियर या वकील तक सीमित माने जाते थे। लेकिन फिल्मों ने युवाओं को कला, संगीत, लेखन, निर्देशन, फैशन डिजाइनिंग, और यहाँ तक कि उद्यमिता (Entrepreneurship) जैसे अनगिनत नए और रचनात्मक क्षेत्रों की ओर आकर्षित किया है। फिल्में इन 'गैर-पारंपरिक' पेशों को एक व्यवहार्य और सम्मानजनक करियर विकल्प के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

3. फिल्मों का नकारात्मक प्रभाव: एक भ्रामक दुनिया का आकर्षण- जहाँ एक ओर सिनेमा के कई सकारात्मक पहलू हैं, वहीं दूसरी ओर इसके नकारात्मक प्रभावों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। ये प्रभाव अक्सर अधिक सूक्ष्म लेकिन उतने ही शक्तिशाली होते हैं।

3.1. हिंसा, अपराध और 'एंटी-हीरो' का महिमामंडन- आधुनिक फिल्मों और वेब सीरीज में हिंसा और अपराध का चित्रण बहुत आम हो गया है। कई बार, इन दृश्यों को इतना स्टाइलिश और आकर्षक बनाकर पेश किया जाता है कि वे युवाओं को अपनी ओर खींचते हैं। 'एंटी-हीरो' या खलनायक प्रवृत्ति वाला नायक के पात्रों को अक्सर 'कूल' और 'शक्तिशाली' दिखाया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि युवा मन हिंसा के प्रति संवेदनहीन हो सकता है या कानून तोड़ने को एक 'बहादुरी' का काम समझने लगता है। वे वास्तविक जीवन की समस्याओं का समाधान भी आक्रामकता और हिंसा से करने की कोशिश कर सकते हैं। ऐसा अक्सर अमिताभ बच्चन की पुरानी फिल्मों में देखने को मिलता है।

3.2. अवास्तविक जीवन शैली और भौतिकवाद- अधिकांश मुख्यधारा की फिल्में एक ऐसी दुनिया दिखाती हैं जो आम आदमी की वास्तविकता से कोसों दूर है- भव्य घर, महंगी कारें, डिजाइनर कपड़े, और विदेशी छुट्टियाँ। जब युवा लगातार इस चकाचौंध को देखते हैं, तो वे इसे ही 'सफलता' का पैमाना मान बैठते हैं। इससे उनमें अपनी वास्तविक जिंदगी को लेकर असंतोष और हीन भावना पैदा हो सकती है। यह उन्हें भौतिकवाद की अंधी दौड़ में धकेल सकता है और 'शॉर्टकट' से पैसा कमाने के लिए प्रेरित कर सकता है।

3.3. शरीर की छवि और सौंदर्य के अवास्तविक मानक- फिल्में अक्सर सुंदरता के बहुत संकीर्ण और अवास्तविक मानक तय करती हैं- 'परफेक्ट' शरीर, गोरी त्वचा, और विशेष प्रकार की शारीरिक बनावट। यह युवा लड़कों और लड़कियों, दोनों पर, 'आकर्षक' दिखने का जबरदस्त दबाव डालता है। जो युवा इन मानकों पर

खरे नहीं उतरते, वे आत्मविश्वास की कमी, चिंता और यहाँ तक कि डिप्रेशन (अवसाद) का शिकार हो सकते हैं। खान-पान संबंधी विकार भी इसी दबाव का एक परिणाम हो सकते हैं।

3.4. गलत चित्रण और रूढ़िवादिता (Stereotypes)- कई फिल्में अनजाने में या कभी-कभी जानबूझकर, लैंगिक, धार्मिक, या क्षेत्रीय रूढ़िवादिता को बढ़ावा देती हैं। महिलाओं को अक्सर कमजोर, वस्तु के रूप में, या केवल 'ग्लैमर' के लिए दिखाया जाता है। इसी प्रकार, किसी विशेष समुदाय या क्षेत्र के लोगों का मजाकिया या नकारात्मक चित्रण आम बात है। युवा, जिनका दुनिया के बारे में ज्ञान अभी बन ही रहा होता है, इन रूढ़िवादी धारणाओं को सच मान सकते हैं, जो उनके सामाजिक व्यवहार और सोच को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

3.5. व्यवहार और भाषा पर नकारात्मक असर- फिल्मों में धूम्रपान, शराब पीने और नशीली दवाओं के सेवन को 'स्टाइलिश' या 'तनाव से मुक्ति' के साधन के रूप में दिखाना आम है। जैसा "तेरे नाम" फिल्म में सलमान खान को लाइब्रेरी में ही सिगेरट पीते दिखाया है। नायक को ऐसा करते देख, युवा इसे 'बड़ा' या 'कूल' दिखने का तरीका मानकर इसका अनुकरण करने की कोशिश कर सकते हैं। इसके अलावा, फिल्मों और विशेषकर ओवर-द-टॉप कंटेंट (Over the Top Contents) में अभद्र भाषा और अपशब्दों (गालियों) का बढ़ता प्रयोग युवाओं की बोलचाल की भाषा का हिस्सा बनता जा रहा है, जिसे सामाजिक रूप से स्वीकार्य नहीं माना जा सकता।

4. बदलता परिदृश्य: ओवर-द-टॉप प्लेटफॉर्म्स का आगमन- पिछले एक दशक में, विशेषकर स्मार्टफोन और सस्ते इंटरनेट की क्रांति के बाद, मनोरंजन का परिदृश्य नाटकीय रूप से बदल गया है। नेटफ्लिक्स, अमेजॅन प्राइम, डिज्नी ह,टस्टार जैसे 'ओवर-द-टॉप' (OTT) प्लेटफॉर्म्स ने सिनेमा के प्रभाव को और भी जटिल और गहरा बना दिया है। इसके निम्न नकारात्मक प्रभाव देखने को मिल सकते हैं।

4.1. व्यक्तिगत और अनियंत्रित उपभोग- सिनेमा हॉल के विपरीत, जहाँ फिल्म देखना एक सामुदायिक अनुभव होता था और सेंसर बोर्ड का नियंत्रण रहता था, OTT कंटेंट व्यक्तिगत रूप से, कभी भी और कहीं भी देखा जा सकता है। युवा अपने कमरों में, अपने फोन पर, माता-पिता की निगरानी के बिना, ऐसा कंटेंट देख रहे हैं जो शायद उनकी उम्र के लिए उपयुक्त नहीं है। यह कंटेंट पर नियंत्रण को लगभग असंभव बना देता है।

4.2. यथार्थवाद या अति-यथार्थवाद?- ओटीटी प्लेटफॉर्म्स ने फिल्म निर्माताओं को अधिक स्वतंत्रता दी है। वे अब ऐसे बोल्ड और यथार्थवादी विषयों पर काम कर सकते हैं, जिन्हें पारंपरिक सिनेमा में जगह नहीं मिलती। इससे कुछ बेहतरीन और विचारोत्तेजक सीरीज और फिल्में बनी हैं। लेकिन इस स्वतंत्रता ने हिंसा, सेक्स और अभद्र भाषा के अति-यथार्थवादी (Hyper-realistic) चित्रण को भी जन्म दिया है। यह बहस का विषय है कि यह 'यथार्थवाद' युवाओं को जागरूक बना रहा है या उन्हें विकृत कर रहा है।

4.3. वैश्विक कंटेंट का प्रभाव- ओटीटी ने भारतीय युवाओं के लिए हॉलीवुड, कोरियाई ड्रामा (K-Drama) और अन्य अंतर्राष्ट्रीय सिनेमा के दरवाजे खोल दिए हैं। यह एक तरफ जहाँ उनके वैश्विक दृष्टिकोण को बढ़ा रहा है, वहीं दूसरी तरफ यह उन्हें अपनी

संस्कृति से दूर भी कर सकता है। विदेशी जीवन–शैली और मूल्यों का अत्यधिक प्रभाव सांस्कृतिक पहचान के संकट को जन्म दे सकता है।

5. युवाओं की भूमिका: निष्क्रिय दर्शक से सक्रिय उपभोक्ता तक- यह मानना कि युवा केवल फिल्मों के प्रभाव के 'शिकार' हैं, उन्हें कम आँकना होगा। आधुनिक युवा पीढ़ी पहले से कहीं अधिक जागरूक, सूचित और मुखर है। फिल्मों के प्रभाव को संतुलित करने में उनकी अपनी भूमिका महत्वपूर्ण है।

5.1. मीडिया साक्षरता (Media Literacy) की आवश्यकता- आज के युग में, युवाओं के लिए 'मीडिया साक्षरता' उतनी ही जरूरी है जितनी शैक्षणिक शिक्षा। उन्हें यह समझने की जरूरत है कि फिल्में 'निर्मित' वास्तविकता होती हैं, न कि शुद्ध सच्चाई। उन्हें यह सिखाया जाना चाहिए कि वे पर्दे पर जो देखते हैं, उसका आलोचनात्मक विश्लेषण करें। उन्हें यह सवाल पूछना सीखना होगा कि – यह कहानी कौन कह रहा है? इसका उद्देश्य क्या है? इसमें किसे और क्यों शामिल नहीं किया गया है?

5.2. निष्क्रिय अवशोषण बनाम सक्रिय चयन- युवाओं को यह समझने की आवश्यकता है कि वे जो देखते हैं, उसका उन पर असर होता है। इसलिए, उन्हें अपने मनोरंजन के विकल्पों के प्रति सचेत रहना चाहिए। उन्हें केवल 'ट्रेंडिंग' या 'लोकप्रिय' कंटेंट के पीछे भागने के बजाय, ऐसा कंटेंट चुनना चाहिए जो उन्हें सूचित करे, प्रेरित करे, और एक बेहतर इंसान बनने में मदद करे।

5.3. सिनेमा को संवाद के एक उपकरण के रूप में उपयोग करना- युवा फिल्मों को केवल मनोरंजन के बजाय चर्चा और संवाद के एक बिंदु के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। एक फिल्म देखने के बाद, वे अपने दोस्तों, परिवार या शिक्षकों के साथ उसके विषयों, पात्रों और संदेश पर चर्चा कर सकते हैं। यह उन्हें विभिन्न दृष्टिकोणों को समझने और अपनी स्वयं की राय बनाने में सहायता करेगा।

6. फिल्म निर्माताओं और समाज का दायित्व- जहाँ युवाओं की अपनी जिम्मेदारी है, वहीं फिल्म निर्माताओं और व्यापक समाज का दायित्व भी कम नहीं है। ये निम्न प्रकार से निर्वाह किये जा सकते हैं।

6.1. रचनात्मक स्वतंत्रता बनाम सामाजिक जिम्मेदारी- फिल्म निर्माता अक्सर 'रचनात्मक स्वतंत्रता' की आड़ में किसी भी प्रकार के कंटेंट को दिखाने का बचाव करते हैं। स्वतंत्रता आवश्यक है, लेकिन इसके साथ सामाजिक जिम्मेदारी की भावना भी जुड़ी होनी चाहिए। फिल्म निर्माता एक बहुत शक्तिशाली माध्यम को नियंत्रित करते हैं– उन्हें इस बात का आभास होना चाहिए कि उनकी कहानियाँ युवा मन पर क्या प्रभाव डाल सकती हैं। मुनाफा कमाने और सनसनी फैलाने के उद्देश्य से परे जाकर, उन्हें ऐसा कंटेंट बनाने का भी प्रयास करना चाहिए जो समाज पर सकारात्मक प्रभाव डाले।

6.2. सेंसरशिप से इतर 'प्रमाणन' की भूमिका- भारत में 'सेंसर बोर्ड' की भूमिका अक्सर विवादास्पद रही है। केवल दृश्यों को काटने (सेंसरशिप) के बजाय, फिल्मों को सही 'प्रमाणन' देना और उम्र–आधारित रेटिंग को कड़ाई से लागू करना अधिक महत्वपूर्ण है। विशेष रूप से व्ज्ज प्लेटफॉर्म्स के लिए एक पारदर्शी और प्रभावी स्व–नियमन या आयु–उपयुक्त प्रणाली की तत्काल आवश्यकता है।

6.3. माता-पिता और शिक्षकों की भूमिका- अंततः, सबसे महत्वपूर्ण भूमिका परिवार और शिक्षा प्रणाली की है। माता–पिता को अपने बच्चों के साथ एक खुला संवाद रखना चाहिए कि वे क्या देख रहे हैं और क्यों देख रहे हैं। उन्हें अपने बच्चों के साथ बैठकर फिल्में देखनी चाहिए और मुश्किल विषयों पर उनसे बात करनी चाहिए। स्कूलों और कॉलेजों को अपने पाठ्यक्रम में 'मीडिया साक्षरता' को एक विषय के रूप में शामिल करना चाहिए, ताकि युवाओं को डिजिटल दुनिया की चुनौतियों के लिए तैयार किया जा सके।

7. निष्कर्ष : संतुलन की खोज- सिनेमा, अपने सभी रूपों में, एक दोधारी तलवार है। यह युवाओं को पंख देकर उन्हें नई ऊँचाइयों तक पहुँचने के लिए प्रेरित कर सकता है, या यह उन्हें अवास्तविकता के धुंधलके में भटका भी सकता है। आधुनिक युग में, जहाँ स्क्रीन हमारे जीवन का एक अविभाज्य हिस्सा बन गई है, फिल्मों के प्रभाव से बचना असंभव है।

फिल्मों का प्रभाव अच्छा है या बुरा, यह इस बात पर निर्भर नहीं करता कि फिल्में क्या दिखाती हैं, बल्कि इस बात पर निर्भर करता है कि हम उन्हें कैसे देखते हैं। एक दर्शक के रूप में, विशेषकर एक युवा दर्शक के रूप में, निष्क्रिय होकर सब कुछ स्वीकार कर लेना सबसे आसान है, लेकिन सबसे खतरनाक भी। चुनौती आलोचनात्मक सोच को अपनाने में है।

युवा समाज पर फिल्मों का प्रभाव एक जटिल पहेली है जिसका कोई आसान जवाब नहीं है। यह एक सतत संवाद है जिसमें फिल्म निर्माता, दर्शक (युवा), परिवार और समाज, सभी को अपनी–अपनी भूमिका निभानी होगी। फिल्में हमारे समय की सबसे शक्तिशाली कहानियाँ हैं, यह हम पर निर्भर करता है कि हम इन कहानियों से क्या सीखते हैं और उन्हें अपने भविष्य को बेहतर बनाने के लिए कैसे उपयोग करते हैं। सिनेमा को दोष देने के बजाय, हमें अपनी समझ को बेहतर बनाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, क्योंकि एक जागरूक दर्शक ही एक जिम्मेदार सिनेमा को जन्म दे सकता है।

संदर्भ सूची-

- अग्रवाल, विजय (2024), सिनेमा और समाज. सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली
- कटारिया, मंजु (n.d.). भारतीय सिनेमा का युवाओं पर प्रभाव: एक अध्ययन https://ijcrt-org/papers/IJCRT_182167 pdf.
- धीमान, अनिल कुमार और कौशिक, सचिन कुमार (2024), बालीवुड का सिनेमा और पुस्तकालय. एस.एस.डी.एन. पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
- पांडेय, अनिल कुमार और सिंह, श्रीकांत (2013) आधुनिक सिनेमा का युवा वर्ग पर प्रभाव. मीडिया मीमांसा, 19–24

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

रीवा नगर में महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता और घरेलू सत्ता-संबंधों का अध्ययन

• प्रियंका तिवारी

सारांश- रीवा नगर मध्य भारत का एक उभरता हुआ शहरी केंद्र है, जहाँ सामाजिक संरचनाएँ परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व के बीच निरंतर रूपांतरित हो रही हैं। इस सामाजिक परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण आयाम महिलाओं की स्थिति, निर्णय-निर्माण क्षमता और घरेलू सत्ता-संबंधों में हो रहे बदलाव हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि रीवा नगर की विभिन्न सामाजिक श्रेणियों सामान्य, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में निर्णय-निर्माण क्षमता किस स्तर पर विकसित हो रही है और उनके घरेलू सत्ता-संबंध किस प्रकार निर्मित होते हैं। अध्ययन में 60 उत्तरदाताओं पर मात्रात्मक पद्धति द्वारा सर्वेक्षण किया गया है। डेटा विश्लेषण से यह तथ्य उभरकर सामने आया कि यद्यपि शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और शहरी संपर्क ने महिलाओं की निर्णय-क्षमता में वृद्धि की है, फिर भी परंपरागत पितृसत्तात्मक संरचनाएँ घरेलू सत्ता-साझेदारी को सीमित करती हैं। आर्थिक सहभागिता, स्वयं-सहायता समूहों से जुड़ाव एवं रोजगार ने महिलाओं को कुछ क्षेत्रों में अधिक स्वायत्तता प्रदान की है, किंतु महत्वपूर्ण निर्णय अब भी प्रायः पुरुषों द्वारा नियंत्रित होते हैं। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष न केवल समाज में लैंगिक समानता के वास्तविक स्वरूप को उजागर करते हैं, बल्कि नीति-निर्माताओं और सामाजिक संस्थाओं के लिए दिशा निर्देश भी प्रस्तुत करते हैं।

मुख्य शब्द- निर्णय-निर्माण क्षमता, घरेलू सत्ता-संबंध, लैंगिक समानता, पितृसत्ता, सामाजिक संरचना, महिला सशक्तीकरण।

परिचय (**Introduction**)- भारत का सामाजिक ढांचा विविधता, परंपरा, समुदाय-आधारित संबंधों और पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर आधारित है। समय के साथ शिक्षा, आर्थिक विकास, शहरीकरण और संचार माध्यमों ने पारिवारिक संरचना और लैंगिक भूमिकाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाए हैं। इसी क्रम में रीवा नगर, जो विंध्य क्षेत्र का प्रमुख सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और शैक्षणिक केंद्र है, एक ऐसा शहरी क्षेत्र है जहाँ इन

• अतिथि विद्वान, समाज कार्य विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

संरचनात्मक परिवर्तनों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता किसी समाज की वास्तविक प्रगति का दर्पण होती है। यह केवल आर्थिक पहलुओं से नहीं, बल्कि घरेलू सत्ता-संबंधों, सामाजिक मान्यताओं, सांस्कृतिक व्यवहारों और अधिकारों के वास्तविक उपयोग से निर्धारित होती है। यद्यपि पिछले दो दशकों में रीवा नगर में महिलाओं की शिक्षा और रोजगार में वृद्धि हुई है, परंतु घरेलू निर्णयों में उनकी सहभागिता अब भी पूर्ण रूप से संरचनात्मक स्तर पर स्वीकार्य नहीं हुई है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि- रीवा नगर की सामाजिक संरचना पारंपरिक मूल्यों और उभरते आधुनिक दृष्टिकोण का संयोजन है। विभिन्न वर्गों की महिलाओं विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और घरेलू निर्णयों में अलग-अलग बाधाओं का सामना करना पड़ता है। इससे घरेलू सत्ता-संबंधों का स्वरूप भी वर्ग, जाति और आर्थिक स्थिति के आधार पर भिन्न दिखाई देता है।

शोध का महत्व- यह अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि-

- घरेलू निर्णय-निर्माण क्षमता महिला सशक्तीकरण का केंद्रीय संकेतक है।
- रीवा नगर में तेजी से सामाजिक परिवर्तन हो रहा है, जिसकी दिशा व प्रभाव को समझना आवश्यक है।
- विभिन्न सामाजिक वर्गों में सत्ता-संबंधों की तुलना से वास्तविक लैंगिक असमानताओं का पता चलता है।
- यह अध्ययन भविष्य की नीतियों और महिला कल्याण कार्यक्रमों के लिए उपयोगी आधार प्रस्तुत करता है।

अध्ययन की सीमाएँ

- अध्ययन केवल 60 उत्तरदाताओं तक सीमित है।
- मात्रात्मक पद्धति अपनाई गई है, इसलिए गहन गुणात्मक तथ्य सीमित प्राप्त हुए हैं।
- अध्ययन केवल रीवा नगर तक सीमित है, इसलिए परिणामों को पूरे जिले या प्रदेश पर लागू नहीं किया जा सकता।

पूर्व शोध में रिक्ति- पहले किए गए शोधों ने महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता का अध्ययन तो किया है, परंतु-

- विशेष रूप से रीवा नगर पर केंद्रित शोध सीमित हैं।
- वर्ग एवं जाति-आधारित अंतर को गहराई से नहीं समझा गया है।
- घरेलू सत्ता-संबंधों के व्यवहारिक आयामों पर अपेक्षाकृत कम कार्य हुआ है।
- वर्तमान अध्ययन इन रिक्तियों को भरने का प्रयास करता है।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature) - विभिन्न शोधकर्ताओं ने पाया है कि-

- महिलाओं की शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता निर्णय-क्षमता को बढ़ाती है।
- घरेलू सत्ता-संबंध पितृसत्तात्मक समाजों में प्रायः पुरुषों द्वारा नियंत्रित रहते हैं।
- शहरीकरण और सरकारी योजनाएँ महिलाओं के अधिकारों को बढ़ाती हैं, परंतु गहरी सामाजिक संरचनाएँ परिवर्तन की गति को धीमा करती हैं।

- अनुसूचित जाति और जनजाति की महिलाओं के सामने दोहरी चुनौती होती है–जाति आधारित भेदभाव और लैंगिक असमानता।

इन सभी अध्ययनों के बावजूद रीवा नगर के सामाजिक विशेषताओं को केंद्रित कर किया गया अध्ययन अनुपस्थित है।

शोध समस्या (**Research Problem**)– रीवा नगर की महिलाओं में निर्णय–निर्माण क्षमता किस स्तर पर विकसित हो रही है, और घरेलू सत्ता–संबंधों में उनकी वास्तविक भागीदारी कितनी है?

महत्व–

- सामाजिक दृष्टि से लैंगिक समानता और सामाजिक समरसता के लिए आवश्यक।
- शैक्षणिक दृष्टि से–लैंगिक अध्ययन, समाजशास्त्र और नारीवाद के क्षेत्र में नया योगदान।
- व्यवहारिक दृष्टि से– नीतियों और कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु उपयोगी।

परिकल्पना (**Hypotheses**)

1. रीवा नगर की महिलाओं में शिक्षा का स्तर बढ़ने से निर्णय–निर्माण क्षमता में वृद्धि होती है।
2. आर्थिक रूप से स्वावलंबी महिलाएँ घरेलू सत्ता–संबंधों में अधिक प्रभावशाली होती हैं।
3. अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं में निर्णय–निर्माण क्षमता सामान्य वर्ग की महिलाओं की तुलना में कम पाई जाती है।

अध्ययन के उद्देश्य (**Objectives**)

1. रीवा नगर की महिलाओं की निर्णय–निर्माण क्षमता का मूल्यांकन करना।
2. घरेलू सत्ता–संबंधों की प्रकृति का विश्लेषण करना।
3. विभिन्न सामाजिक वर्गों में निर्णय–निर्माण क्षमता के अंतर की पहचान करना।
4. महिलाओं की शिक्षा, रोजगार और आर्थिक स्थिति का निर्णय–निर्माण क्षमता पर प्रभाव समझना।
5. सशक्तिकरण के लिए व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति (**Research Methodology**)– इस अध्ययन में मात्रात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसमें आंकड़ों को संख्यात्मक रूप से एकत्रित कर उनका विश्लेषण किया गया। शोध के लिए कुल 60 उत्तरदाताओं का चयन किया गया, जिन्हें तीन सामाजिक वर्गों– सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति में समान रूप से विभाजित किया गया। प्रत्येक वर्ग से 20–20 महिलाओं को शामिल करके शोध को संतुलित और प्रतिनिधिक बनाने का प्रयास किया गया। डेटा संग्रहण के लिए दो प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया। प्राथमिक स्रोतों में साक्षात्कार और प्रत्यक्ष अवलोकन शामिल थे, जिनके माध्यम से उत्तरदाताओं के वास्तविक अनुभव और विचार प्राप्त किए गए। इसके साथ ही, द्वितीयक स्रोतों जैसे प्रकाशित शोध पत्र, सरकारी रिपोर्टें, पुस्तकें और

दस्तावेजों का भी अध्ययन किया गया, जिससे विषय को गहराई से समझने में सहायता मिली। सूचनाएँ एकत्र करने के लिए साक्षात्कार भी लिए गए, ताकि उनके दृष्टिकोण को बेहतर ढंग से जाना जा सके। एकत्रित डेटा का विश्लेषण प्रतिशत के आधार पर किया गया, तथा निष्कर्षों को तालिकाओं, ग्राफ़ों और वर्णनात्मक विश्लेषण के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार, शोध पद्धति को व्यवस्थित, सरल और वैज्ञानिक तरीके से अपनाया गया, जिससे प्राप्त निष्कर्ष विश्वसनीय और स्पष्ट रूप से सामने आ सके।

डाटा विश्लेषण एवं प्रस्तुति (Data Analysis & Interpretation)

तालिका क्रमांक 0 1

घरेलू निर्णय-निर्माण में महिलाओं की भागीदारी

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	36	60%
नही	24	40%

रेखा चित्र क्रमांक-01

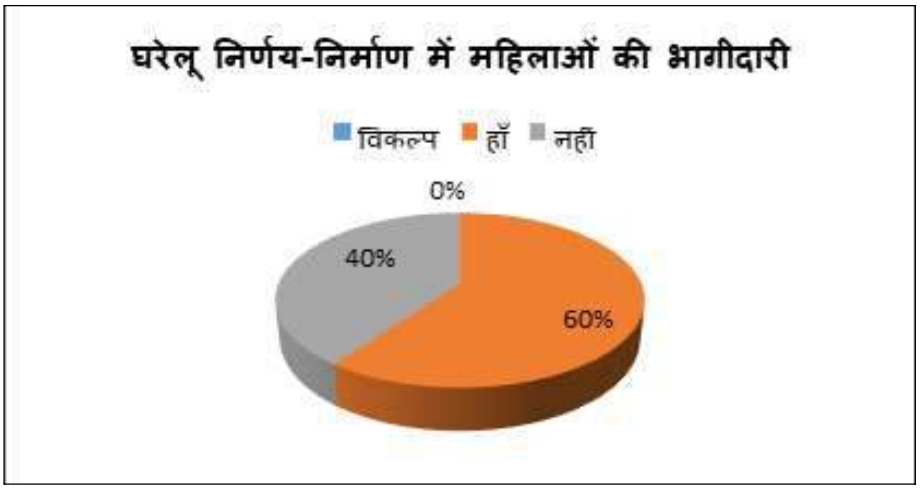

साक्षात्कार के एक महत्वपूर्ण प्रश्न में यह जानने का प्रयास किया गया कि क्या महिलाएँ अपने परिवार में होने वाले निर्णयों में भाग लेती हैं। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार, कुल 60 उत्तरदाताओं में से 36 महिलाओं ने बताया कि वे घरेलू निर्णय-निर्माण में सक्रिय रूप से शामिल होती हैं, जो कुल उत्तरदाताओं का 60 प्रतिशत है। इसके विपरीत, 24 महिलाओं ने बताया कि उन्हें निर्णय प्रक्रियाओं में शामिल नहीं किया जाता या उनकी भूमिका बहुत सीमित है, जो 40 प्रतिशत है। इन आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि रीवा नगर में महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता धीरे-धीरे मजबूत हो रही है, क्योंकि आधे से अधिक महिलाएँ अब परिवार से जुड़े महत्वपूर्ण निर्णयों में अपनी बात रख पा रही हैं। यह स्थिति शिक्षा, जागरूकता और बदलते सामाजिक वातावरण का परिणाम मानी जा सकती है। विशेष रूप से शहरी परिवेश में रहने वाली महिलाओं के बीच भागीदारी का यह बढ़ता स्तर सकारात्मक संकेत देता है। हालाँकि, 40 प्रतिशत महिलाओं का निर्णय प्रक्रिया से

बाहर रहना यह दर्शाता है कि पितृसत्तात्मक मान्यताएँ अब भी कई परिवारों में प्रभावी हैं। इन परिवारों में निर्णय का अधिकार मुख्य रूप से पुरुषों के पास केंद्रित है, और महिलाओं की राय को या तो महत्व नहीं दिया जाता या वे स्वयं भी सामाजिक दबाव के कारण निर्णय में भाग लेने में संकोच करती हैं। यह वर्ग, जाति, आर्थिक स्थिति और शिक्षा स्तर के अंतर से भी प्रभावित हो सकता है।

इस प्रकार, यह परिणाम बताता है कि जहाँ एक ओर महिलाओं की भूमिका में सकारात्मक परिवर्तन दिख रहा है, वहीं दूसरी ओर अभी भी एक बड़ी संख्या ऐसी है जिसे मुख्यधारा के निर्णयों में स्थान नहीं मिला है। इसलिए, महिलाओं की शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक जागरूकता को और अधिक बढ़ावा देने की आवश्यकता है, ताकि वे अपने परिवार में समान रूप से प्रभावशाली भूमिका निभा सकें।

तालिका क्रमांक 02

परिवार में अंतिम निर्णय किसके द्वारा लिया जाता है?

	विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
	पति	28	46.67
	पत्नी	12	20.00
	संयुक्त निर्णय	20	33.33

रेखा चित्र क्रमांक-02

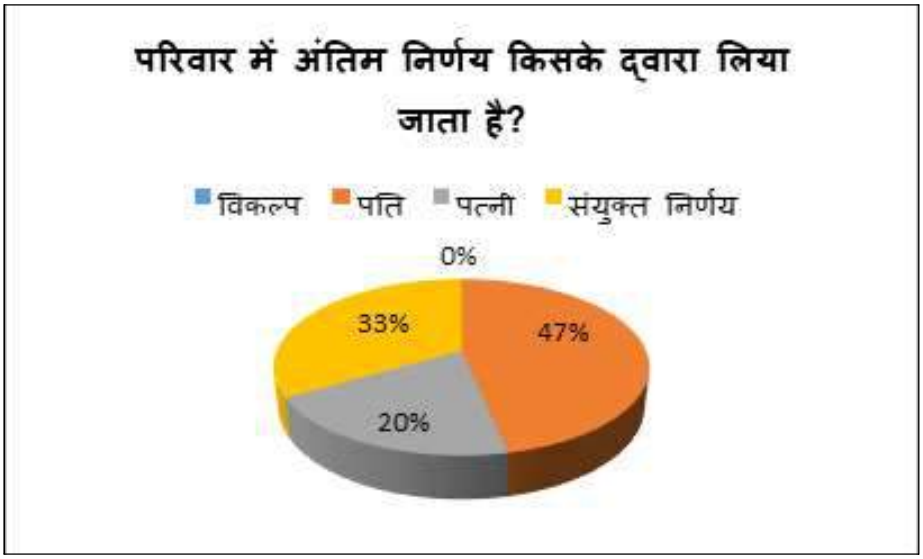

इस प्रश्न का उद्देश्य यह जानना था कि परिवार के भीतर अंतिम और महत्वपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार किसके पास है। यह निष्कर्ष घरेलू सत्ता-संबंधों को समझने में अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि निर्णय का अधिकार सीधे-सीधे परिवार में शक्ति-संतुलन और लैंगिक संबंधों का संकेतक होता है। साक्षात्कार में प्राप्त आँकड़ों के अनुसार, कुल 60 उत्तरदाताओं में से 28 महिलाओं (46.67 प्रतिशत) ने बताया कि उनके परिवार में अंतिम निर्णय पति द्वारा लिया जाता है। यह आँकड़ा पारंपरिक पितृसत्तात्मक व्यवस्था की ओर स्पष्ट संकेत करता है, जहाँ पुरुष को परिवार का मुखिया माना जाता है और अंतिम

निर्णय का अधिकार उसी के पास रहता है। हालांकि समाज में बदलते मूल्यों और महिलाओं की बढ़ती शिक्षा के बावजूद लगभग आधे परिवार अभी भी इस परंपरागत व्यवस्था में संचालित हो रहे हैं।

वहीं दूसरी ओर, 12 महिलाओं (20 प्रतिशत) ने बताया कि उनके परिवार में अंतिम निर्णय वे स्वयं लेती हैं। यह समूह अपेक्षाकृत छोटा है, लेकिन यह उन परिवारों को दर्शाता है जहाँ महिलाएँ आर्थिक रूप से सक्षम हैं, कार्यरत हैं या अपने अधिकारों को लेकर अधिक जागरूक हैं। यह भी देखा गया कि ऐसे परिवारों में अक्सर महिला की शिक्षा का स्तर अधिक होता है और परिवार में उनकी सक्रिय भूमिका को स्वीकार किया जाता है।

सबसे महत्वपूर्ण और सकारात्मक संकेत 20 उत्तरदाताओं (33.33 प्रतिशत) में दिखाई देता है, जहाँ बताया गया कि परिवार के अंतिम निर्णय संयुक्त रूप से लिए जाते हैं। यह आंकड़ा दर्शाता है कि आधुनिक शहरी समाज में सहभागी निर्णय (Participatory Decision&Making) की प्रवृत्ति विकसित हो रही है। यह प्रवृत्ति लैंगिक समानता और पारिवारिक सहयोग की दिशा में एक सशक्त कदम मानी जा सकती है। संयुक्त निर्णय का अर्थ है कि पति और पत्नी दोनों एक दूसरे के विचारों का सम्मान करते हुए, समान अधिकार और जिम्मेदारी के साथ निर्णय लेते हैं। यह न केवल परिवार में स्वस्थ वातावरण बनाता है, बल्कि महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता को भी मजबूत करता है। सारांश रूप में, आँकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि-

- आज भी लगभग आधा समाज (46.67 प्रतिशत) पितृसत्ता की पारंपरिक संरचना का पालन करता है,
- केवल 20 प्रतिशत महिलाएँ ही परिवार में स्वतंत्र रूप से निर्णय ले पाती हैं,
- जबकि एक-तिहाई परिवार (33.33 प्रतिशत) अब समानता आधारित संयुक्त निर्णय मॉडल की ओर बढ़ रहे हैं।

यह बदलाव धीरे-धीरे ही सही, पर समाज में लैंगिक संतुलन और घरेलू लोकतंत्र के उदय का संकेत देता है। शिक्षा, आर्थिक स्वावलंबन, जागरूकता और सामाजिक परिवर्तनों के बढ़ने से संयुक्त निर्णय लेने वाले परिवारों का प्रतिशत भविष्य में और बढ़ सकता है।

तालिका क्रमांक 0 3
क्या आपकी आय घरेलू निर्णयों को प्रभावित करती है?

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	40	66.67
नहीं	20	33.33

रेखा चित्र क्रमांक-03

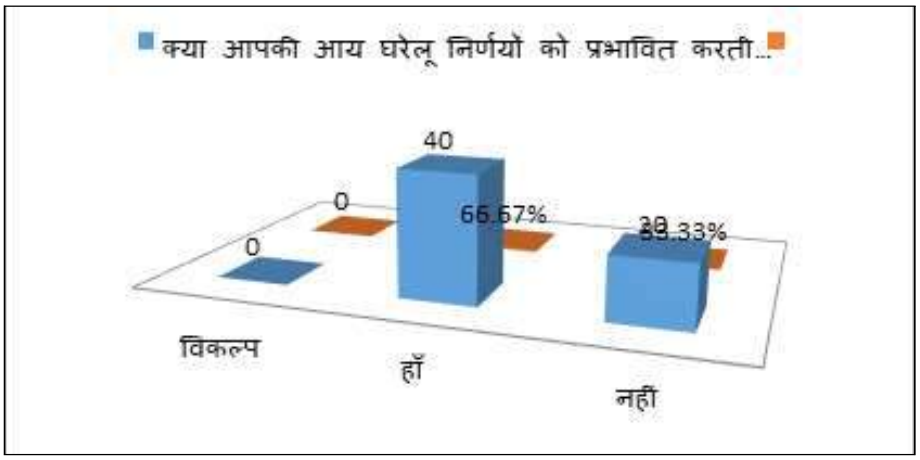

इस प्रश्न का उद्देश्य यह समझना था कि क्या महिलाओं की आय या आर्थिक योगदान घरेलू निर्णयों में उनकी भूमिका को प्रभावित करता है। अर्थात, क्या आर्थिक रूप से सक्षम होने पर महिलाओं की आवाज परिवार में अधिक सुनी जाती है या नहीं। यह पहलू महिला सशक्तीकरण का सबसे महत्वपूर्ण आधार है, क्योंकि आर्थिक स्वतंत्रता अक्सर निर्णय-निर्माण क्षमता को सीधे प्रभावित करती है।

सर्वेक्षण के अनुसार कुल 60 उत्तरदाताओं में से 40 महिलाओं (66.67 प्रतिशत) ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि उनकी आय से घरेलू निर्णयों पर उनका प्रभाव बढ़ता है। यह परिणाम बताता है कि रीवा नगर की महिलाओं में आर्थिक गतिविधियों से जुड़ाव बढ़ने के साथ-साथ उनके प्रति परिवार का दृष्टिकोण भी बदल रहा है। जब महिलाएँ नियमित रूप से आय अर्जित करती हैं, चाहे वह नौकरी, स्वरोजगार, स्वयं सहायता समूह या किसी छोटे व्यापार के माध्यम से हो, तब परिवार के अन्य सदस्य उन्हें अधिक सम्मान देते हैं और उनकी राय को निर्णय प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

इन महिलाओं के अनुभव से यह स्पष्ट होता है कि—

आय होने से आत्मविश्वास बढ़ता है,

वित्तीय जानकारी मजबूत होती है,

परिवार के आर्थिक प्रबंधन में सक्रिय भूमिका बनती है,

और परिणामस्वरूप, घरेलू निर्णयों में भागीदारी स्वाभाविक रूप से बढ़ जाती है।

वहीं 20 महिलाओं (33.33 प्रतिशत) का कहना है कि उनकी आय का घरेलू निर्णयों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। यह परिणाम उन परिवारों की वास्तविकता को दर्शाता है जहाँ पितृसत्तात्मक संरचना अब भी इतनी मजबूत है कि महिलाओं का आर्थिक योगदान स्वीकार तो किया जाता है, लेकिन निर्णय-निर्माण की शक्ति पुरुषों के हाथ में ही रहती है। कई बार ऐसा भी होता है कि महिलाएँ आय तो अर्जित करती हैं, पर उनकी कमाई पर नियंत्रण परिवार के पुरुष सदस्य रखते हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्वतंत्रता सीमित हो जाती है। ऐसे मामलों में महिलाओं की आय होने के बावजूद निर्णय क्षमता में अपेक्षित वृद्धि नहीं दिखती।

संपूर्ण विश्लेषण बताता है कि रीवा नगर में आर्थिक स्वायत्तता और घरेलू निर्णय-निर्माण क्षमता के बीच गहरा संबंध है। आय अर्जित करने वाली महिलाएँ अधिक प्रभावशाली और आत्मनिर्भर होती हैं, जबकि आय न होने पर परिवार में उनकी भूमिका अक्सर पारंपरिक दायरे तक ही सीमित रह जाती है। अतः यह आँकड़ा महिला सशक्तीकरण के महत्वपूर्ण संकेतक के रूप में उभरता है और यह भी संकेत देता है कि महिला रोजगार एवं आर्थिक अवसरों को बढ़ाना लैंगिक समानता की दिशा में एक अत्यंत प्रभावी कदम हो सकता है।

तालिका क्रमांक 0 4
क्या आप स्वयं कोई आर्थिक निर्णय लेती हैं?
(खरीद, निवेश, बचत आदि)

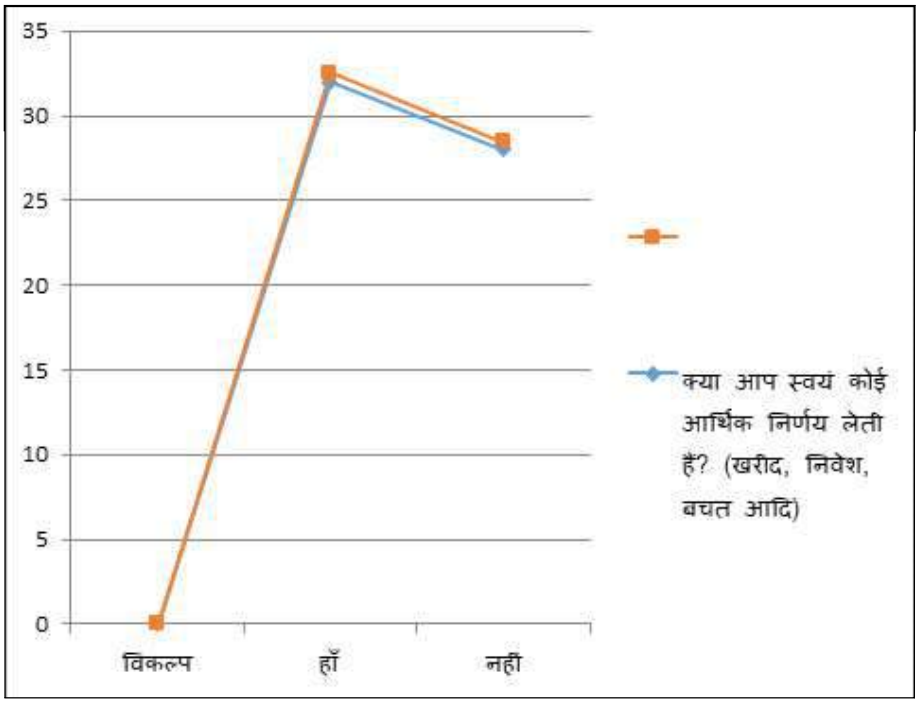

"क्या आप स्वयं कोई आर्थिक निर्णय लेती हैं? (खरीद, निवेश, बचत आदि)" के उत्तर से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिला समूहों में आर्थिक निर्णयों की स्वायत्तता धीरे-धीरे बढ़ रही है। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 32 महिलाओं (53.33 प्रतिशत) ने बताया कि वे अपने स्तर पर आर्थिक निर्णय लेती हैं। इसमें दैनिक उपभोग की वस्तुओं की खरीद, बच्चों की जरुरतें, छोटे निवेश, बचत और आत्मनिर्भरता से जुड़े निर्णय शामिल हैं। यह प्रतिशत बताता है कि महिलाओं के भीतर आर्थिक चेतना और आत्मविश्वास का विस्तार हो रहा है।

इसके विपरीत, 28 उत्तरदाताएँ (46.67 प्रतिशत) अब भी किसी भी आर्थिक निर्णय में स्वतंत्र रूप से शामिल नहीं हो पातीं। यह स्थिति पारिवारिक संरचना, सामाजिक परंपराओं, सीमित आय, पति या परिवार के आर्थिक नियंत्रण और आर्थिक संसाधनों तक

महिलाओं की पहुँच में कमी जैसे कारणों को दर्शाती है। कई परिवारों में अभी भी आर्थिक मामलों को पुरुषों का क्षेत्र माना जाता है, जिसके कारण महिलाओं की आर्थिक भागीदारी सीमित रह जाती है।

कुल मिलाकर, यह परिणाम यह संकेत देता है कि ग्रामीण महिलाओं में आर्थिक स्वायत्तता की दिशा में सकारात्मक बदलाव जरूर हो रहा है, परंतु इस परिवर्तन की गति अभी धीमी है। आधी आबादी का अभी भी आर्थिक निर्णयों में सक्रिय न हो पाना दर्शाता है कि वित्तीय साक्षरता, आय के अवसर, स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियों और परिवार में समान निर्णय-अधिकार को और अधिक मजबूत करने की आवश्यकता है।

यह प्रवृत्ति स्पष्ट करती है कि जब महिलाओं को आय का स्रोत और आर्थिक संसाधनों तक पहुँच मिलती है, तो वे न केवल अपने निर्णयों में सक्षम बनती हैं, बल्कि परिवार और समाज में उनकी भूमिका भी अधिक प्रभावशाली होती है।

तालिका क्रमांक 0 5

परिवार में शिक्षा से जुड़े निर्णय कौन लेता है?

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
पति	24	40.00
पत्नी	10	16.67
संयुक्त	26	43.33

रेखा चित्र क्रमांक-04

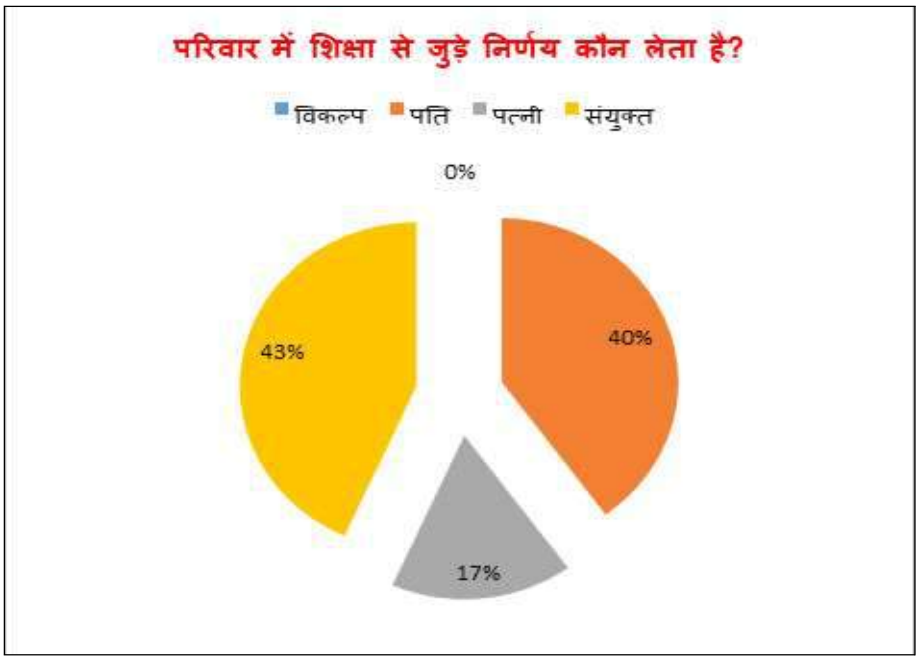

"परिवार में शिक्षा से जुड़े निर्णय कौन लेता है?" के उत्तर पारिवारिक निर्णय-प्रक्रिया में हो रहे सामाजिक बदलावों का महत्वपूर्ण संकेत देते हैं। सर्वेक्षण में

प्राप्त आँकड़ों के अनुसार, 24 परिवारों (40 प्रतिशत) में शिक्षा से जुड़े निर्णय मुख्य रूप से पति द्वारा लिए जाते हैं, जबकि केवल 10 परिवारों (16.67 प्रतिशत) में महिला या पत्नी स्वयं ऐसे निर्णय लेती हैं। यह स्थिति दर्शाती है कि पारंपरिक ग्रामीण परिवेश में शिक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण निर्णयों पर पुरुषों का प्रभाव अभी भी अधिक है।

सबसे सकारात्मक पहलू यह है कि 26 परिवारों (43.33 प्रतिशत) ने बताया कि शिक्षा से जुड़े निर्णय संयुक्त रूप से लिए जाते हैं। यह आँकड़ा न केवल संख्या में सर्वाधिक है, बल्कि यह सामाजिक संरचना में हो रहे क्रमिक परिवर्तन की ओर भी संकेत करता है। परिवारों में बढ़ती संवादशीलता, बच्चों की शिक्षा को लेकर जागरूकता और महिलाओं की बढ़ती सहभागिता इस परिवर्तन को संभव बना रही है।

संयुक्त निर्णयों की यह बढ़ती प्रवृत्ति यह दर्शाती है कि परिवार अब शिक्षा को एक साझा जिम्मेदारी के रूप में देखने लगे हैं। विशेष रूप से, ग्रामीण समुदायों में जहाँ पहले शिक्षा, विशेषकर लड़कियों की शिक्षा, अक्सर पुरुषों के एकाधिकार वाले निर्णयों पर निर्भर थी, वहाँ अब महिलाओं की राय को महत्व मिलने लगा है। यह परिवर्तन महिलाओं के प्रति बढ़ते विश्वास, उनकी शिक्षा स्तर में सुधार और परिवारों की आधुनिक सोच का परिणाम भी है।

समग्र रूप से, यह परिणाम बताता है कि ग्रामीण परिवारों में अब शिक्षा का महत्व केवल एक व्यक्ति द्वारा तय किया जाने वाला मुद्दा नहीं रहा, बल्कि यह परिवार की सामूहिक प्राथमिकता बनता जा रहा है। संयुक्त निर्णयों का 43 प्रतिशत तक पहुँचना सामाजिक प्रगति का मजबूत संकेत है, जो भविष्य में महिलाओं की भूमिका को और अधिक सशक्त और प्रभावशाली बनाएगा।

तालिका क्रमांक 0 6

क्या आप अपनी पसंद से सामाजिक कार्यक्रमों में भाग ले सकती हैं?

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	38	63.33
नहीं	22	36.67

रेखा चित्र क्रमांक-06

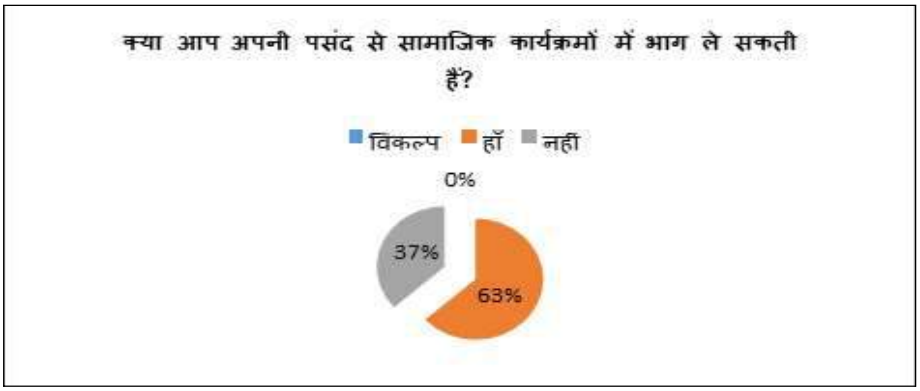

"क्या आप अपनी पसंद से सामाजिक कार्यक्रमों में भाग ले सकती हैं?" के

प्राप्त उत्तर महिलाओं की सामाजिक स्वतंत्रता और परिवार के भीतर उनकी गतिशील भूमिका को स्पष्ट करते हैं। सर्वेक्षण के अनुसार, 38 महिलाएँ (63.33 प्रतिशत) सामाजिक कार्यक्रमों, जैसे शादी-ब्याह, सामुदायिक सभा, उत्सव या सांस्कृतिक आयोजनों में अपनी इच्छा से भाग ले सकती हैं। यह प्रतिशत ग्रामीण और शहरी मिश्रित सामाजिक संरचना में महिलाओं की बढ़ती स्वतंत्रता और परिवारों की उदार सोच को दर्शाता है। हालाँकि, 22 महिलाएँ (36.67 प्रतिशत) अभी भी सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए अनुमति या स्वीकृति पर निर्भर हैं। यह आंकड़ा संकेत करता है कि सामाजिक स्वतंत्रता सभी महिलाओं के लिए समान रूप से उपलब्ध नहीं है। विशेष रूप से परंपरागत परिवारों में महिलाओं की आवाजाही, समय, और सहभागिता पर अभी भी नियंत्रण देखा जाता है। यह स्थिति पितृसत्तात्मक सोच, सुरक्षा संबंधी चिंताओं, सामाजिक मान्यताओं और परिवार के संस्कारों से प्रभावित होती है। फिर भी, 63 प्रतिशत महिलाओं का स्वतंत्र रूप से सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेना सकारात्मक परिवर्तन है। इससे पता चलता है कि महिलाओं की सामाजिक उपस्थिति को अब परिवार और समाज दोनों ही स्तरों पर स्वीकार किया जा रहा है। बढ़ती शिक्षा, रोजगार, स्वसहायता समूहों में सहभागिता, और समाज में महिलाओं की बदलती भूमिका इस स्वतंत्रता को मजबूत कर रही है। कुल मिलाकर, यह परिणाम बताता है कि रीवा नगर और आसपास के क्षेत्र में महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता बढ़ रही है, परंतु अभी भी लगभग एक-तिहाई महिलाएँ पारिवारिक स्वीकृति पर निर्भर हैं। यह अंतर भविष्य में सामाजिक जागरूकता एवं महिलाओं के अधिकारों पर संवाद को और अधिक आवश्यक बनाता है, ताकि सामाजिक कार्यक्रमों में महिलाओं की सहभागिता पूर्णतरू स्वतंत्र और समान हो सके।

तालिका क्रमांक 0 7

क्या घरेलू आर्थिक खर्च आप तय करती हैं?

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	34	56.67
नहीं	26	43.33

रेखा चित्र क्रमांक-07

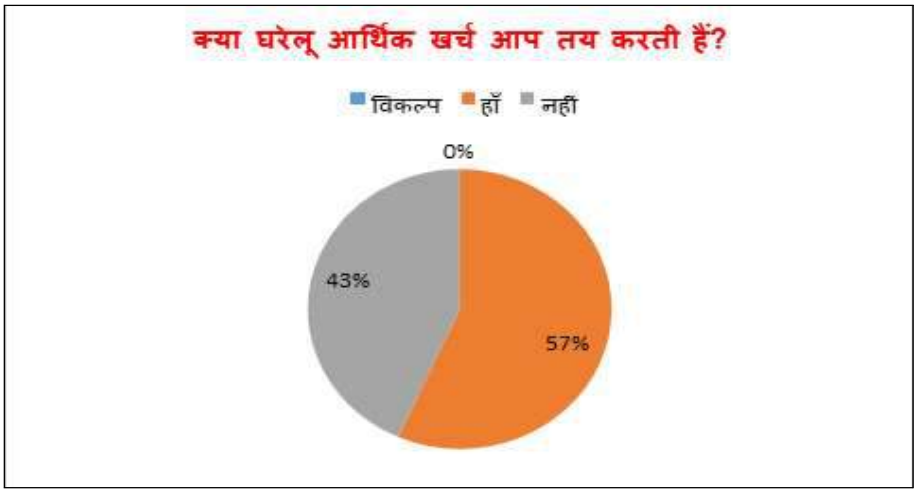

"क्या घरेलू आर्थिक खर्च आप तय करती हैं?" के उत्तरों से स्पष्ट होता है कि महिलाओं की घरेलू अर्थव्यवस्था में सहभागिता धीरे-धीरे मजबूत हो रही है। सर्वेक्षण के अनुसार, 34 महिलाएँ (56.67 प्रतिशत) बताती है कि वे घर के नियमित खर्च जैसे किराना, बच्चों की जरूरतें, छोटे-मोटे खरीद, और दैनिक उपयोग की वस्तुओं के निर्णय स्वयं लेती है। यह संख्या दर्शाती है कि महिलाओं को परिवार में व्यावहारिक आर्थिक जिम्मेदारियाँ सौंपी जा रही हैं और उन पर विश्वास बढ़ रहा है। यह प्रवृत्ति न केवल घरेलू प्रबंधन में महिलाओं की दक्षता को स्वीकार करती है बल्कि निर्णय-निर्माण क्षमता को भी मजबूत बनाती है।

इसके विपरीत, 26 महिलाएँ (43.33 प्रतिशत) अभी भी घरेलू खर्च से जुड़े निर्णय स्वयं नहीं ले पातीं। इसका अर्थ है कि लगभग आधी महिलाएँ आज भी आर्थिक निर्णयों में निर्भरता महसूस करती हैं, चाहे वह पति, सास-ससुर या परिवार के अन्य सदस्यों पर हो। यह निर्भरता परिवार की पारंपरिक संरचना, सीमित आर्थिक स्वायत्तता, आय के अभाव या आर्थिक जानकारी के कम होने से प्रभावित हो सकती है।

फिर भी, 56 प्रतिशत का आँकड़ा सकारात्मक दिशा में बढ़ते बदलाव को दर्शाता है। इसका संकेत है कि रीवा नगर में महिलाओं को घरेलू अर्थव्यवस्था के संचालन में अधिक विश्वास और अधिकार दिया जा रहा है। यह परिवर्तन महिलाओं की शिक्षा, स्वयं की आय, बैंकिंग जागरूकता, और स्वयं सहायता समूहों से जुड़े अनुभवों के कारण भी संभव हुआ है।

कुल मिलाकर, यह परिणाम बताता है कि महिलाएँ घरेलू आर्थिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी हैं, परंतु इस भूमिका का विस्तार अभी बाकी है। भविष्य में आर्थिक साक्षरता, महिला आयवर्धन, और परिवार में समानता की सोच इन निर्णयों में महिलाओं की सहभागिता को और मजबूत बना सकती है।

तालिका क्रमांक 08

क्या परिवार में आपके विचारों को महत्व दिया जाता है?

विकल्प	उत्तरदाता	प्रतिशत
हाँ	41	98.33
नहीं	19	31.67

रेखा चित्र क्रमांक-08

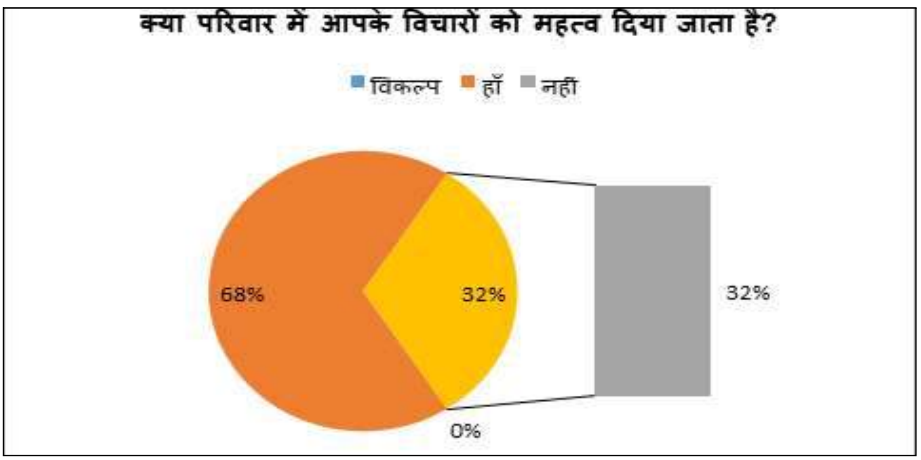

"क्या परिवार में आपके विचारों को महत्व दिया जाता है?" के उत्तरों से घरेलू स्तर पर महिलाओं की स्वीकार्यता और सम्मान की स्थिति का स्पष्ट चित्र सामने आता है। कुल 41 महिलाओं (68.33 प्रतिशत) ने महसूस किया कि उनके विचार, सुझाव और निर्णय परिवार में सुने और समझे जाते हैं। यह आंकड़ा इस बात का संकेत है कि परिवारों में महिलाओं की भूमिका अब केवल गृहकार्य तक सीमित नहीं रही, बल्कि वे पारिवारिक निर्णयों, सामाजिक गतिविधियों और योजना-निर्माण में सक्रिय रूप से भाग ले रही हैं। यह परिवर्तन महिलाओं की शिक्षा, सामाजिक जागरूकता, आर्थिक भागीदारी और पारिवारिक वातावरण में आए सकारात्मक बदलावों का परिणाम माना जा सकता है।

दूसरी ओर, 19 महिलाएँ (31.67 प्रतिशत) अब भी कहती हैं कि उनके विचारों को पर्याप्त महत्व नहीं मिलता। इसका अर्थ है कि लगभग एक-तिहाई महिलाएँ आज भी स्वयं को निर्णय प्रक्रिया से बाहर या कम महत्वपूर्ण समझे जाने की स्थिति में पाती हैं। यह स्थिति परिवार की पारंपरिक सोच, पुरुष-प्रधान निर्णय मॉडल, सीमित संवाद, या महिलाओं की आत्म-प्रस्तुति में हिचक की वजह से भी हो सकती है। यह दर्शाता है कि सामाजिक और पारिवारिक स्तर पर अभी भी ऐसे प्रयासों की आवश्यकता है जो महिलाओं की आवाज़ को बराबर स्थान दिला सकें।

समग्र रूप से देखा जाए तो 68 प्रतिशत का आँकड़ा सकारात्मक दिशा में बढ़ते सामाजिक परिवर्तन को दर्शाता है, जहाँ महिलाएँ विचारों के स्तर पर सम्मानित और स्वीकार्य बन रही हैं। लेकिन 32 प्रतिशत महिलाओं का उपेक्षित महसूस करना यह भी संकेत देता है कि समान भागीदारी और निर्णय-निर्माण का पूर्ण वातावरण अभी स्थापित नहीं हुआ है। भविष्य की दिशा में, संवाद में समानता, शिक्षा का विस्तार, और महिलाओं की आर्थिक मजबूती इस स्थिति को और अधिक संतुलित बना सकती है।

परिकल्पनाओं का परीक्षण

- अध्ययन के अनुसार स्मार्ट सिटी परियोजनाओं में कुल 70 प्रतिशत लोग किसी न किसी रूप में शामिल पाए गए।
- इससे पता चलता है कि नागरिक सफाई, कचरा प्रबंधन और डिजिटल सेवाओं में सक्रिय हैं।
- लेकिन निर्णय-निर्माण स्तर पर केवल लगभग 16 प्रतिशत लोगों की भागीदारी है, इसलिए सहभागिता उच्च होते हुए भी प्रभावी भागीदारी कम है।
- इस प्रकार पहली परिकल्पना आंशिक रूप से गलत सिद्ध होती है।
- दूसरी परिकल्पना, "अधिक शिक्षित और तकनीकी रूप से सक्षम नागरिकों की सहभागिता अधिक होती है",अध्ययन में सही पाई गई।
- डिजिटल सेवाओं और ऐप-आधारित सुविधाओं का उपयोग मुख्यत: शिक्षित और तकनीक-सुलभ लोगों ने किया।
- तीसरी परिकल्पना, "स्मार्ट सिटी ने सकारात्मक असर डाला, लेकिन कुछ असमानताएँ भी बढ़ीं", पूरी तरह सही पाई गई।
- क्योंकि सफाई, जागरूकता और डिजिटल प्रशासन में सुधार हुआ, पर कमजोर वर्गों की सहभागिता कम रही।

- डिजिटल दूरी, समय की कमी, सामाजिक प्रतिबंध और प्रशासनिक चुनौतियों के कारण सभी लोग समान लाभ नहीं ले पाए।

समग्र रूप से, परियोजनाएँ सफल रही हैं, लेकिन पूरी तरह समावेशी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अभी और सुधार आवश्यक हैं।

निष्कर्ष- अधिकांश महिलाएँ सामान्य घरेलू निर्णयों में भाग लेती हैं, लेकिन महत्वपूर्ण निर्णयों (संपत्ति, बड़े आर्थिक फैसले) में पुरुष वर्चस्व कायम है। शिक्षा और आय का महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता पर सीधा सकारात्मक प्रभाव है। संयुक्त निर्णयों की प्रवृत्ति बढ़ रही है, विशेषकर मध्यम वर्ग और शिक्षित परिवारों में। बैज्वर्ग की महिलाओं में निर्णय क्षमता अपेक्षाकृत कम पाई गई, यह सामाजिक संरचना और अवसरों की असमानताओं को दर्शाता है। महिलाओं की निर्णय-क्षमता में वृद्धि हुई है, किंतु यह समान रूप से विकसित नहीं हुई। सामान्य वर्ग की महिलाओं में निर्णय-निर्माण क्षमता बैज् की तुलना में अधिक पाई गई। आर्थिक स्वावलंबन और शिक्षा स्तर का निर्णय-निर्माण से सीधा संबंध है। घरेलू सत्ता-संबंधों में पुरुषों का वर्चस्व अभी भी स्पष्ट है। युवा पीढ़ी में लैंगिक भूमिकाओं के प्रति दृष्टिकोण अधिक समानतावादी दिखाई देता है। यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं के अधिकारों और भूमिकाओं में परिवर्तन की प्रक्रिया जारी है, लेकिन पितृसत्ता की जड़ें अभी भी मजबूत हैं।

अन्य शोधों की तुलना से पता चलता है कि रीवा नगर का परिदृश्य राष्ट्रीय प्रवृत्तियों से मिलता-जुलता है, परंतु जाति और वर्ग का प्रभाव यहाँ अधिक स्पष्ट दिखाई देता है।

सुझाव-

1. महिला शिक्षा एवं उच्च शिक्षा को बढ़ावा देना।
2. स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियों का विस्तार।
3. महिला रोजगार सृजन कार्यक्रमों को मजबूत करना।
4. घरेलू निर्णयों में लैंगिक समानता के लिए पारिवारिक परामर्श।
5. महिला सुरक्षा और अधिकारों पर जागरूकता अभियान।
6. स्थानीय प्रशासन एवं नगर निगम द्वारा महिला नेतृत्व को प्रोत्साहन।

अध्ययन से सिद्ध होता है कि रीवा नगर की महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक अवसरों के माध्यम से सशक्त हो रही हैं, परंतु घरेलू सत्ता-संबंधों में समानता अभी भी पूरी तरह स्थापित नहीं हो पाई है। भविष्य के शोध में गुणात्मक पद्धति और बड़े नमूने को शामिल किया जाए तो इस विषय की और गहरी समझ विकसित होगी।

संदर्भ सूची

1. चंद्रा, एस. (2019). भारतीय समाज और लैंगिक समानता. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
2. पटेल, वी. (2014). महिला अध्ययन, दृष्टिकोण और विश्लेषण. मुंबई, हिमालय पब्लिशिंग हाउस।
3. शर्मा, एस. (2020). पितृसत्ता और भारतीय परिवार संरचना. नई दिल्ली, ओरिएंट ब्लैकस्वान।
4. सिंह, आर. (2018). सामाजिक परिवर्तन और भारतीय महिलाएँ. जयपुर, रावत पब्लिकेशंस।
5. दयाल, पी. (2017). ग्रामीण और शहरी महिलाओं की भूमिका का तुलनात्मक अध्ययन. भोपाल, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
6. मिश्रा, ए. (2021). शहरी भारत में महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता, सामाजिक-आर्थिक विश्लेषण। भारतीय समाजशास्त्र समीक्षा, 45(2), 112-126.
7. तिवारी, एस. (2018). घरेलू सत्ता-संबंधों में पितृसत्ता की भूमिका, एक समाजशास्त्रीय अध्ययन। जर्नल ऑफ सोशल साइंस रिसर्च, 12(3), 55-65.
6. कुमारी, बी. (2020). अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं की घरेलू स्वतंत्रता का मूल्यांकन। जेंडर स्टडीज़ क्वार्टरली, 9(1), 72-84.
7. अली, एफ. (2019). महिलाओं की आर्थिक भागीदारी और घरेलू निर्णय-निर्माणरू भारत का परिप्रेक्ष्य। इंडियन जर्नल ऑफ ह्यूमन डेवलपमेंट, 14(4), 201-213.
8. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, भारत सरकार। (2022). भारत में महिला सशक्तीकरण पर राष्ट्रीय रिपोर्ट. नई दिल्ली।
10. जनगणना विभाग, भारत सरकार। (2011). जनगणना रिपोर्टरू रीवा जिला. नई दिल्ली, रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया।
11. राष्ट्रीय महिला आयोग। (2020). घरेलू हिंसा और परिवार में लैंगिक भूमिकाएँ एक अध्ययन रिपोर्ट. नई दिल्ली।
12. United Nations Development Programme (UNDP)- (2021)- Gender equality and women*s empowerment- https:@@www-undp-org
13. World Bank- (2020½- Women*s empowerment and development indicators in India- https:@@www-worldbank-org

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

लोकतंत्र में मीडिया का चरित्र, एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, (भारतीय परिप्रेक्ष्य में)

• पवन कुमार त्रिभुवन

सारांश- मीडिया कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के साथ लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ के रुप में कार्य करता हैं। इसका प्राथमिक कार्य नागरिकों को सूचित करना, बहस को सुविधाजनक बनाना, सरकार और अन्य शक्तिशाली संस्थानों पर निगरानी रखना हैं। भारत में, स्वतंत्रता के बाद से एक विविध और जीवंत मीडिया परिदृश्य उभरा हैं, जिसे प्रिंट , प्रसारण और डिजिटल प्लेटफॉर्म शामिल हैं। हालांकि, पक्षपाती मीडिया ऑउट्लेटस के प्रसारने समाचार और प्रचार के बीच की रेखाओं को धुंधला कर दिया है, जिससे लोकतंत्र के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया हैं। भारत में पक्षपाती मीडिया ऑउट्लेट अक्सर तथ्यों की तुलना में सनसनीखेज़ खबरों को प्राथमिकता देते हैं, दर्शकों या पाठकों को आकर्षित करने के लिए भड्काऊ बयांनबाजी और विभाजनकारी कहानियों का सहारा लेते हैं । यह सनसनीखेज़ खबरें गलत सूचना फैलाने और धार्मिक, जातीय और राजनीतिक आधार पर समाज के ध्रुवीकरण में योगदान देती हैं इसके अलावा, पक्षपाती रिपोर्टिंग जनमत को प्रभावित कर सकती हैं और लोकतांत्रिक संस्थाओं की विश्वसनीयता को कम कर सकती हैं। भारतीय लोकतंत्र पर पक्षपातपूर्ण मीडिया के परिणाम दूरगामी और बहुआयामी हैं। यह सूचना के निष्पक्ष स्रोत के रुप में मीडिया में जनता के विश्वास को खत्म करता है, जिससे लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति व्यापक निराशा और उदासीनता पैदा होती हैं। यह हाशिए पर पडे समुदायों के प्रति असहिष्णुता और कट्टरता को बढावा देकर भारतीय समाज के बहुलवादी ताने-बाने को कमजोर करता हैं जो भारतीय लोकतंत्र के भविष्य के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करता हैं। वर्तमान परिपेक्ष्य में इन्हीं सारी तथ्यों की साकारात्मक व विश्लेष्णात्मक अध्ययन लाज़मी प्रतीत होता हैं।

मुख्य शब्द – भारतीय, लोकतंत्र, मीडिया, राजनीति, कार्यपालिका, विधायिका, न्यायपालिका एवं जनसंचार।

प्रस्तावना- भारत देश विश्व का विशालतम लोकतांत्रिक देश हैं। लोकतंत्र का सामान्य अर्थ लोकप्रिय सम्प्रभुता पर आधारित शासन है। यह लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता के

• स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर, विश्वविद्यालय, भागलपुर

लिए और जनता द्वारा शासन होता हैं । लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता के विविध अधिकार व स्वतंत्रताएं प्राप्त होती है, जिसमें भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। भारतीय लोकतंत्र में मीडिया ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित कर ली है । मीडिया अथवा जनसंचार के माध्यम से किसी भी समाज या देश की वास्तविक स्थिति के प्रतिबिंब होती हैं। भारत देश के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक फलक पर क्या कुछ घटित हो रहा हैं। जहाँ तक मीडिया की बात है, इससे हमारा अभिप्राय व्यापक स्तर पर सूचनाओं के संप्रेषण में लगे माध्यमों से हैं, दूसरे शब्दों में सूचना को प्रकाशन, संपादन, लेखन अथवा प्रसारण के कार्य में प्रिंट एवं इल्क्ट्रोनिक माध्यमों से आगे बढ्ने की कला की मीडिया कहते है। यदि गहनता से इस पर विचार करें तो यह स्पष्ट होता है कि मीडिया दो तरह की है– प्रिंट मीडिया और इल्क्ट्रॉनिक मीडिया। पत्र–पत्रिकाएं, पम्पलेट आदि प्रिंट मीडिया के अंतर्गत आते है। वहीं रेडियों, टेलीविजन, कम्प्यूटर, फिल्म व ई–मेल आदि इल्क्ट्रॉनिक मीडिया के भाग हैं। वर्तमान समय में सूचना प्रोद्योगिकी के विकास के काल में प्रेस शब्द का अर्थ अति व्यापक हो गया है । आज प्रेस का अर्थ समाचार के समस्त साधनों जिसे मीडिया कहते है । दूसरे शब्दों में समाचार संवहन की वाहक गाडी के ''प्रिंट मीडिया" व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया नामक दो पहिए है । पिछले कुछ वर्षों में प्रेस ने जन–जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं। तहलका , बोफोर्स , 2–जी स्पेक्ट्रम घोटाला, कॉमनवेल्थ घोटाला, कोयला ब्लॉक आवंटन घोटाला आदि बहुंत से घोटालों का पर्दाफाश करने व इनमें संलिप्त नेताओं को बेनकाब करने में प्रेस ने भूमिका निभायी है। तहलका काण्ड के संदर्भ में किए गए पर्दाफाश के संबंध में "कलम के सिपाही" "वतन के सिपाही " से तुलना की हैं। भारतीय लोकतंत्र का मूलाधार है– स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व और जहाँ कहीं भी विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की पूर्ण स्वतंत्रता नहीं होती हैं, वहां लोकतंत्र असफल हो जाता हैं। इस स्वतंत्रता का का सही ढंग से प्रयोग मीडिया द्वारा ही किया जाता है। देश के सभी कोनों से घटनाओं पर इसकी पैनी नज़र होने के कारण ही शक्तिशाली शासक भी इसके महत्व एवं शक्ति की उपेक्षा नहीं कर पाते। इतिहास में ऐसे अनगिनत उदाहरण मिलते हैं, जब इसकी शक्ति को पहचानते हुए लोगों ने इसका उपयोग लोक परिवर्तन के भरोसे हथियार के रुप में किया है। आज भी मीडिया की ताकत के सामने बड़े – बड़े नेता, उद्योगपति आदि सभी झुकते है। जन– जागरण में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका हैं– बच्चों को पोलियों की दवा पिलाने का अभियान, एड्स जागरुकता फैलाने का कार्य लोगों को वोट डालने के लिए प्रेरित करना, बाल मजदूरी पर रोक लगाने के लिए प्रयास करना , धूम्रपान के खतरों से अवगत कराना जैसे पूनित कार्यों में इनकी सराहनीय भूमिका रही है।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत अध्ययन में लोकतंत्र में मीडिया का चरित्र एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (भारतीय परिपेक्ष्य में) पर आधारित है। प्रत्येक शोध अध्ययन को करने के पीछे कुछ उद्देश्य निहित होते हैं और वह उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिए यह आवश्यक है कि शोध कार्य को योजनाबद्ध तरीके से किया जाये। लोकतंत्र में मीडिया की चयन

विश्लेषणात्मक विधि के आधार पर चयन किया गया है। "लोकतंत्र में मीडिया का चरित्र" का अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है।

द्वितीय स्रोत– द्वितीय स्रोतों का संकलन, पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, इंटरनेट से प्राप्त सामाग्री एवं संबंधित विषय में विगत वर्षों से प्रकाशित लेखों इत्यादि स्रोतों का संकलन किया गया हैं।

प्राथमिक स्रोत– प्राथमिक स्रोत का संकलन बाँका जिले मे विभिन्न प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रोनिक मीडिया से पत्रकार व जनप्रतिनिधियों का चयन किया गया है। साक्षात्कार, अनुसूची के आधार पर ग्रामीण विकास और राजनीति में भूमिका संबंधित स्रोतों का संकलन किया जायेगा।

भारतीय लोकतंत्र में मीडिया के उद्देश्य- भारतीय लोकतंत्र में मीडिया के महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं–

1. जनसंचार समुदाय तक सूचना, शिक्षा और मनोरंजन को पहुंचाना।
2. लोकतंत्रीय मीडिया के माध्यम से देश–विदेश की जानकारी, डाटा को एक साथ लाखों लोगों तक पहुंचाना।
3. मीडिया द्वारा राष्ट्र और समाज के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों को पहुंचाना।
4. लोकतंत्र में कार्यपालिका, विधायिका, न्यायपालिका के अतिरिक्त जनसंचार मीडिया चौथा स्तम्भ के रुप में भूमिका निभाना

अध्ययन की आवश्यकता– भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इतिहास में पत्र–पत्रिकाओं और पत्रकारिता की भूमिका को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये केवल सूचना के प्रसार के साधन थे, बल्कि उन्होंने स्वतंत्रता की भावना को जागरुक करने और राष्ट्रीय चेतना को प्रबल करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान, जब ब्रिटिश शासन ने कठोर सेंसरशिप और दमनकारी नीतियां लागू की, तब भी भारतीय पत्रकारिता ने अपनी आवाज़ को बुलंद रखा और स्वतंत्रता सेनानियों के लिए एक शक्तिशाली हथियार के रुप में कार्य किया। इस अध्ययन की आवाश्यकता इसलिए भी है क्योंकि यह पत्रकारिता के एतिहासिक योगदान को न केवल स्वतंत्रता आन्दोलन के संदर्भ में भी समझने का प्रयास करता है।

पत्र–पत्रिकाओं ने उस समय की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों को उजागर किया, जिससे भारतीय समाज में जागरुकता और एकता की भावना का प्रसार हुआ। इसके अलावा, यह अध्ययन इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि कैसे भारतीय पत्रकारों ने ब्रिटिश शासन के दमनकारी कानूनों के बावजूद अपने मिशन को जारी रखा और स्वतंत्रता की लहर को पूरे देश में फैलाया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान पत्रकारिता की भूमिका का अध्ययन करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह हमें न केवल उस समय के पत्रकारों की कठिनाइयों और चुनौतियों को समझने में मदद करता हैं, बल्कि यह भी दिखता है कि उन्होंने किस प्रकार से राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता के विचार को प्रबल किया। यह अध्ययन वर्तमान परिपेक्ष्य में भी महत्वपूर्ण हैं, जब प्रेस और मीडिया को नई चुनौतियों और अवसरों का सामना करना पड रहा हैं। स्वतंत्रता

संग्राम के दौरान पत्रकारिता की भूमिका का मूल्यांकन वर्तमान मीडिया परिदृश्य में एक नैतिक और एतिहासिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। यह अध्ययन पत्रकारिता के उस आदर्श को सामने लाता है, जो अपने समय की कठिनाइयों के बावजूद समाज में एक साकारात्मक परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। इसलिए, अध्ययन की आवश्यकता केवल इतिहास को समझने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह वर्तमान और भविष्य की पत्रकारिता के लिए भी प्रेरणा और मार्गदर्शन का स्रोत हैं।

भारतीय लोकतंत्र में मीडिया का महत्व– अक्सर मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाता है। इसे जनहित का संरक्षक और लोगों के बीच के सेतु के रुप में देखा जाता हैं। मीडिया एक स्वस्थ लोकतंत्र को आकार देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह दुनियाभर में चल रही विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और गतिविधियों के बारे में हमें जागरुक करता है। यह एक दर्पण की तरह जीवन के कडवे सत्य और कठोर वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित करता हैं। राजनीतिक पहलुओं में भी मीडिया एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। राजनेता अक्सर मीडिया से डरते है क्योंकि मीडिया उनके भ्रष्टाचार, आपराधिक कार्यों और सत्ता के दुरुपयोग को उजागर करता हैं। नीति सुधारों, भ्रष्ट नेताओं और अधिकारियों को बदलने में भी मीडिया का योगदान रहा हैं। मीडिया, राजनेताओं के चुनाव के समय किए गए वादों को समय–समय पर याद दिलाती रहती हैं। चुनाव के दौरान टीवी पर समाचार चैनलों द्वारा व्यापक कवरेज सही उम्मीदवारों को चुनने में लोगों की मदद करता हैं। इस तरह राजनेताओं को अपने वादों को पूरा करने के लिए मजबूर करता है। मीडिया लोकतंत्र प्रणाली की खामियों को उजागर करता है और प्रणाली को और अधिक जवाबदेह, उत्तरदायी और नागरीकों के अनुकूल बनाने में मदद करता है।

लोकतंत्र में, मीडिया की तीन महत्वपूर्ण जिम्मेदारियां हैं–

1. सत्तारुढ़ लोगों पर कडी नजर रखना
2. समाज को पूरे दिन की महत्वपूर्ण सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर विश्वसनीय जानकारी प्रदान करना
3. निष्पक्ष तथ्यों को उजागर करना।

मीडिया का बदली हुई चरित्र- दुर्भाग्यवश, बढ़ते व्यवसायीकरण के कारण मीडिया में एक दूसरे के प्रति कड़ी प्रतिस्पर्धा पैदा हो गई हैं, मीडिया जिम्मेदार पत्रकारिता पर ध्यान केन्द्रित ना करके खुले तौर से पेड न्यूज़ और निम्न स्तरीय पत्रकारिता को बढ़ावा दे रहीं हैं। यह और भी ज्यादा दुखद स्थिति है कि भारत जैसे विकासशील देश में मीडिया अब कुछ व्यापारियों और राजनीतिक हितों के नियंत्रण में आ गया हैं। इसलिए सामाजिक हितों को व्यापारिक और राजनीतिक हितों के नीचे दबाया जा रहा हैं। यह सुनने मे थोड़ा अजीब लगता है कि आजकल मीडिया हाउस का मुख्य उद्देश्य लोकतंत्र की सेवा नहीं बल्कि अपने लिए अधिक से अधिक धन कमाना रह गया हैं। यह लोकतांत्रिक मीडिया चरित्र के ठीक विपरीत भूमिका का दर्शाता हैं। कुछ जगहों पर मीडिया को दो विरोधी राजनीतिक दलों के बीच में लडाई करवाने के लिए उपयोग किया जाता हैं। इतना ही नहीं बल्कि मीडिया को गलत तरीके से प्रयोग करके लोगों के बीच मतभेद पैदा किया जाता हैं और

विश्वास बढ़ाने की जगह संदेह उत्पन्न किया जाता हैं । मीडिया का प्रभाव बहुत ही महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इससे जनता का वैचारिक निर्माण और पतन दोनों होता हैं । मुद्दों को बहुत ज्यादा उछालकर या दबाकर, मीडिया किसी भी मुद्दे को महत्वपूर्ण बना सकती हैं या फिर उसे पूरी तरह खत्म कर सकती हैं। पूर्व उपराष्ट्रपति श्री हामिद अंसारी ने इस संदर्भ में कहा है कि पेड न्यूज़ ने स्वच्छ चुनाव करवाने के लिए कोई रास्ता नहीं छोड़ा है और लोगों के मीडिया में विश्वास नष्ट किया है। मेगसेसे पुरस्कार विजेता पी. साईनाथ के अनुसार "पेड न्यूज़ एक व्यापार है जिसे मीडिया हाउस के मालिक चलाते है परंतु मीडिया और पत्रकारिता दो अलग–अलग चीज है, मीडिया बिजनेस है परन्तु पत्रकारिता नहीं। लेकिन अब सब कुछ कार्पोरेट पावर के बारे में है किसी भी बड़े मीडिया हाउस के बोर्ड ऑफ मेम्बर्स को देखें तो सब में बड़े व्यापारी मौजूद हैं। हमने सबसे पहले शिक्षा का व्यापारीकरण और बाज़ारीकरण किया फिर चिकित्सा का और उसके बाद खेल का। अब मीडिया का भी पूरी तरह व्यापारीकरण और बाज़ारीकरण हो गया है "। साईनाथ ने दुख व्यक्त करते हुए कहा कि सिर्फ चुनाव आयोग ने ही पेड न्यूज़ के खिलाफ प्रतिक्रिया जताई और मीडिया ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी ।

मीडिया विनिमयन और धारणा- बढ़ते हुए व्यापार, व्यवसायीकरण, पेड न्यूज़ और पत्रकारों और मीडिया घारानों में नैतिक मूल्यों के निरंतर अधपतन ने मीडिया नियमन के मुद्दे को महत्वपूर्ण बना दिया है। वर्तमान में ज्यादातर मीडिया आत्म नियमन करते है। पत्रकार भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आश्वासित करने वाली भारतीय संविधान के अनुछेद 19(1)(क) में आश्रय लेते है और आत्म नियमन पर जोर देते है। पिछले कुछ वर्षों से प्रमुख व्यक्ति जैसे न्यायमूर्ति मार्कंडे काट्जू पूर्व चेयरमेन, प्रेस काउंसिंल ऑफ इण्डिया और कांग्रेस नेता मीनाक्षी नटराजन, प्रिंट, प्रसारण और वेब मीडिया से संबंधित सभी विषयों पर सार्वजनिक विनयमक की मांग कर रहे हैं। नटराजन ने प्रिंट और इलेक्ट्रानिक मीडिया के लिए नियमन विधेयक 2012 प्रस्तुत करने का नोटिस भी दिया, लेकिन यह योजना रद्द कर दी गई। हांलाकि इस मुद्दे पर अभी तक बिना किसी निष्कर्ष बहस की जा रही हैं। कानूनी रिपोर्टिंग़ अथवा न्यायाधीन मामलों पर सितम्बर 2012 में सहारा इंडिया सेवी मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने मीडिया के लिए कोई भी दिशानिर्देश देने के खिलाफ फैसला किया था, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने पत्रकारों को समझाया कि वह अपनी सीमाओं का उल्लंघन ना करें। महाराष्ट्र के पूर्व मुख्यमंत्री श्री अशोक शंकरराव चौहान के पेड न्यूज़ मामले में सुप्रीम कोर्ट ने मई 2014 के अपने निर्णय में कहा कि चुनाव आयोग को यह अधिकार है कि वह ऐसे उम्मीदवारों की सदस्यता रद्द कर सकें जो अनुच्छेद 10 (क) के तहत अपना चुनावी व्यय गलत घोषित करते है। इसी के फलस्वरुप चुनाव आयोग ने 13 जुलाई 2014 को एक आदेश पारित किया और श्री अशोक शंकरचाह्वान को कारण बताओं नोटिस जारी किया लेकिन दिल्ली हाई कोर्ट ने इस पर स्थाई रोक लगा दी। मीडिया के विनियमन के लिए मौजूदा निकाइयां जैसे प्रेस काउंसिल ऑफ इण्डिया, जो एक सांविधिक प्राधिकारी है और समाचार प्रसारण मानक प्राधिकारी जो एक स्व–विनियामक संगठन है, इन मुद्दों पर मानक जारी करते है जो कि दिशा–निर्देश के रुप में होते है। पीसीआई के पास पत्रकारिता के आदर्शों के उल्लंघन

और कदाचार के मामलों की जांच करता है। जांच के दौरान वह गवाहों को बुला सकता है, सार्वजनिक रिकार्ड के प्रतियों की मांग कर सकता है। साथ ही पीसीआई जांच के विवरण को प्रकाशित करने की आज्ञा भी समाचार पत्रों को दे सकता। लेकिन पीसीआई की शक्तियां दो तरह से प्रतिबंधित है। पहला, जारी दिशा–निर्देश को लागू करने का उनका अधिकार सीमित है। उल्लंघन के मामलों में वह समाचार पत्रों, एजेसियों, संपादकों और पत्रकारों को दंडित नहीं कर सकता। दूसरा, पीसीआई प्रेस के काम–काज का बस ऊपरी निरीक्षण कर सकता है। वह समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और प्रिंट मीडिया पर तो मानक लागू कर सकता है मगर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे कि रेडियो, टीवी और इंटरनेट की समीक्षा नहीं कर सकता है। एंबीए ने टेलीविजन के कार्यक्रमों के लिए एक आचार संहिता तैयार किया है। एनबीए के समाचार प्रसारण मानक प्राधिकरण के पास यह अधिकार है कि किसी भी उल्लंघन के खिलाफ वह चेतावनी दे सके और उसके प्रसारण को अस्वीकार कर सकें और साथ ही एक लाख रुपए तक की राशि का जुर्माना लगा सकें। ऐसी ही एक और संगठन प्रसारण संपादकों को एसोसिएशन है। भारतीय विज्ञापन मानक परिषद ने विज्ञापन से संबंधी सामाग्रियों पर दिशा निर्देश जारी किया है । लेकिन यह सारे संगथन समझौतों के माध्यम से काम करते है और इनके पास कोई वैधानिक अधिकार नहीं है।

सुझाव- समय की मांग है, यह है कि मीडिया की विश्वसनीयता और जवाबदेही बढ़ाई जाए। एक लोकतांत्रिक संस्था के रुप में मीडिया की विश्वसनीयता तभी बढ़ेगी जब वह जनता की ओर जवाबदेही होगी, अपनी गलतियां स्वीकार करेगी और नैतिकता का पालन करेगी। पत्रकारिता की समीक्षा, मीडिया की स्वतंत्र निगरानी और जनता के साथ संवाद भी मीडिया का आकलन करने का और उनकी अनैतिक तरीकों को उजागर करने का काम कर सकती है।

संदर्भ सूची-

1. विनीत कुमार, (2024) मीडिया का लोकतंत्र, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली।
2. संजय कुमार, (2017), पत्रकारिता जो मैंने देख, जाना, समझ, एस. के. इंटर प्राइजेज, दिल्ली।
3. सुधीर पचौरी, (2018), नया मीडिया और नये मुद्दे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. प्रत्यूष वत्सला एवं संगीता शर्मा (2020), मीडिया और लोकतंत्र, कल्पाज पब्लिकेशन दिल्ली।
5. राकेश प्रवीर (2020), मीडिया का वर्तमान परिदृश्य, ज्ञान गंगा प्राकाशन, दिल्ली।
6. ओम गुप्ता (2002), पत्रकारिता और कानून, कनिष्का पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. www- adrindia-org

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

भारत में नागरिक समाज और लोकतंत्र: विमर्श भूमिका और चुनौतियों पर एक समीक्षात्मक अध्ययन

• अनिल हनवत

सारांश- भारत जैसे बहुलतावादी लोकतंत्र में नागरिक समाज लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सशक्त बनाने में केंद्रीय भूमिका निभाता है। नागरिक समाज न केवल राज्य और नागरिकों के बीच एक सेतु के रूप में कार्य करता है, बल्कि यह जवाबदेही, पारदर्शिता और सहभागिता को भी प्रोत्साहित करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र एक समीक्षा अध्ययन है, जिसमें नागरिक समाज और लोकतंत्र के पारस्परिक संबंधों पर पिछले दो दशकों में किए गए प्रमुख अकादमिक शोधों, नीतिगत रिपोर्टों और सैद्धांतिक विमर्शों का विश्लेषण किया गया है। समीक्षा में पाया गया कि नागरिक समाज संगठनों ने भारत में लोकतांत्रिक शासन को गहराई तक प्रभावित किया है। विशेषकर सामाजिक आंदोलनों, नीति निर्माण में नागरिक सहभागिता, पारदर्शिता अभियानों और हाशिए के समुदायों की आवाज़ को आगे लाने में। हालांकि, इसके समक्ष कई चुनौतियाँ भी हैं। जैसे राज्य-नागरिक समाज संबंधों में तनाव, संस्थागत सीमाएँ, राजनीतिक दखल और वित्तीय निर्भरता। इस अध्ययन का उद्देश्य भारत में नागरिक समाज और लोकतंत्र के पारस्परिक संबंध पर आधारित पूर्ववर्ती शोधों और सैद्धांतिक विमर्शों की समालोचनात्मक समीक्षा करना है। यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि नागरिक समाज किस प्रकार लोकतंत्र को सशक्त, उत्तरदायी और समावेशी बनाता है तथा इसके समक्ष कौन-कौन सी चुनौतियाँ विद्यमान हैं।

मुख्य शब्द- नागरिक समाज, लोकतंत्र, सामाजिक आंदोलन, पारदर्शिता, सहभागिता, समीक्षा अध्ययन।

परिचय- नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच संबंध किसी भी आधुनिक राज्य व्यवस्था की आधारभूत संरचना को समझने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। नागरिक समाज को सामान्यत: ऐसे संगठनों, संस्थाओं और नागरिक समूहों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो न तो सीधे राज्य का हिस्सा होते हैं और न ही बाजार की प्रतिस्पर्धा का अंग होते हैं। ये संगठन स्वायत्त रूप से कार्य करते हैं तथा जनहित, सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक विमर्श को मज़बूती प्रदान करते हैं (Edwards] 2004(Cohen &

• सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञानजटाशंकर, त्रिवेदी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बालाघाट म. प्र.

Arato,1992)। नागरिक समाज में गैर-सरकारी संगठन (NGOs), ट्रेड यूनियन, पेशेवर संगठन, धार्मिक संस्थाएँ, मीडिया, शैक्षणिक संगठन और सामाजिक आंदोलन शामिल होते हैं। नागरिक समाज का उद्देश्य नागरिकों को संगठित कर उनकी सामूहिक आवाज़ को नीतिगत निर्णयों तक पहुँचाना और शासन व्यवस्था की पारदर्शिता व जवाबदेही सुनिश्चित करना होता है। लोकतंत्र की अवधारणा में तीन मुख्य तत्व निहित होते हैं। सहभागिता, पारदर्शिता और जवाबदेही। इसके साथ ही नागरिक अधिकारों की सुरक्षा और समानता पर आधारित शासन प्रणाली लोकतंत्र को आधार प्रदान करती है (Dahl 197, Held 2006)। लोकतंत्र मात्र एक चुनावी प्रक्रिया नहीं बल्कि एक सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था है, जिसमें नागरिकों की सक्रिय भागीदारी से शासन की दिशा और स्वरूप तय होता है। इसमें नागरिकों को न केवल मतदान का अधिकार प्राप्त होता है बल्कि वे नीति निर्माण, सामाजिक आंदोलन, नागरिक संवाद और जनसुनवाई जैसे माध्यमों से शासन में हस्तक्षेप कर सकते हैं। नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच संबंध को अक्सर "पूरक" और "निगरानी तंत्र" के रूप में देखा जाता है। नागरिक समाज राज्य के अधिकार को चुनौती देकर लोकतांत्रिक प्रक्रिया में संतुलन स्थापित करता है। जब राज्य किसी नीति को लागू करता है, तो नागरिक समाज उसका विश्लेषण कर नागरिक हितों के अनुरूप उसकी समीक्षा करता है और जनमत को नीतिगत निर्णयों में शामिल करने का प्रयास करता है (Keane 1998)। इस प्रकार नागरिक समाज लोकतंत्र में एक महत्वपूर्ण मध्यवर्ती संरचना के रूप में कार्य करता है, जो शासन और नागरिकों के बीच संवाद और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करती है। भारत जैसे बहुलतावादी लोकतंत्र में नागरिक समाज की भूमिका और भी व्यापक है। यहाँ विविध सामाजिक समूह, भाषाएँ, धर्म और वर्ग मिलकर एक जटिल सामाजिक ताने-बाने का निर्माण करते हैं। इस संदर्भ में नागरिक समाज लोकतंत्र की सामाजिक नींव को मज़बूत करता है और नागरिकों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल होने के अवसर प्रदान करता है। उदाहरणस्वरूप, मजदूर किसान शक्ति संगठन जैसे संगठनों ने पारदर्शिता और जवाबदेही की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है, जिसके परिणामस्वरूप सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 जैसे ऐतिहासिक कानून बने। इसी प्रकार, नागरिक समाज संगठनों ने शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण, महिला सशक्तिकरण और मानवाधिकार जैसे अनेक क्षेत्रों में लोकतांत्रिक संवाद को गहरा किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि लोकतंत्र केवल एक संवैधानिक व्यवस्था नहीं बल्कि एक गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें नागरिक समाज एक सशक्त प्रेरक तत्व के रूप में कार्य करता है (Putnam] 1993)। वर्तमान परिदृश्य में नागरिक समाज केवल नीति निर्माण में ही नहीं बल्कि लोकतांत्रिक संस्थाओं की निगरानी में भी भूमिका निभा रहा है। सोशल मीडिया, जन आंदोलन और लोक अभियानों के माध्यम से नागरिक समाज सरकार की नीतियों पर न केवल प्रभाव डालता है बल्कि जवाबदेही की माँग भी करता है। इसके माध्यम से पारदर्शिता को बढ़ावा मिलता है और सत्ता के केंद्रीकरण को चुनौती दी जाती है। सैद्धांतिक रूप से भी नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच संबंध पर कई विचारकों ने बल दिया है। Aleuis de Tocqueville ने नागरिक समाज को लोकतांत्रिक संस्कृति के विकास का आधार

माना, जबकि Jurgen Habermas ने इसे "पब्लिक स्फीयर" के रूप में परिभाषित किया, जहाँ नागरिक संवाद और विचार विमर्श के माध्यम से सार्वजनिक राय निर्मित होती है (Haberm, 1989)। इस प्रकार नागरिक समाज न केवल लोकतांत्रिक संस्थाओं का पूरक होता है बल्कि उनके लोकतांत्रिक चरित्र को भी गहराई प्रदान करता है। अत: कहा जा सकता है कि नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच संबंध पारस्परिक और सहायक प्रकृति का है। जहाँ लोकतंत्र नागरिक समाज को स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अवसर देता है, वहीं नागरिक समाज लोकतंत्र को जीवंत और उत्तरदायी बनाए रखता है। इस संबंध को मज़बूत करना एक स्वस्थ, सहभागी और उत्तरदायी शासन प्रणाली के निर्माण के लिए अनिवार्य है। लोकतंत्र और नागरिक समाज के बीच पारस्परिक संबंध पर अंतरराष्ट्रीय तथा भारतीय विद्वानों द्वारा किए गए गहन अध्ययन इस क्षेत्र में साहित्य को विस्तृत रूप से तीन धाराओं में वगीकृत किया जा सकता है–

1. सैद्धांतिक आधार
2. नागरिक समाज की भूमिका, और
3. भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में विश्लेषण।

सैद्धांतिक आधार- नागरिक समाज की अवधारणा का विकास ऐतिहासिक रूप से 18वीं और 19वीं शताब्दी के यूरोपीय राजनीतिक चिंतन में हुआ। Aleuis de Tocqueville ने अपनी Democracy in America (1835) में नागरिक समाज को लोकतांत्रिक संस्कृति के विकास का आधार माना। उन्होंने कहा कि नागरिक समाज स्वैच्छिक संघों (voluntary associations) के माध्यम से नागरिकों में लोकतांत्रिक मूल्य, सहयोग और उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करता है। इसी क्रम में Jurgen Habermas ने अपनी पुस्तक The Structural Transformation of the Public Sphere (1989) में नागरिक समाज को "पब्लिक स्फीयर" के रूप में परिभाषित किया, जहाँ नागरिक राज्य की नीतियों और शासन पर विचार विमर्श कर सार्वजनिक राय बनाते हैं। यह राय लोकतंत्र में एक निगरानी और संवादात्मक शक्ति के रूप में कार्य करती है (Haberm, 1989)।

Robert Putnam (1993) ने नागरिक समाज को लोकतंत्र की गुणवत्ता से जोड़ा और कहा कि नागरिक समाज में सामाजिक पूँजी (social capital) लोकतांत्रिक संस्थाओं को अधिक उत्तरदायी और सहभागी बनाती है। उनका तर्क था कि नागरिक समाज की सक्रियता और लोकतंत्र की गहराई एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़ी होती है।

नागरिक समाज की भूमिका पर अध्ययन- अनेक विद्वानों ने नागरिक समाज की भूमिका को लोकतांत्रिक शासन में एक watchdog vksj bridge & builder के रूप में रेखांकित किया है। John Keane (1998) ने नागरिक समाज को राज्य की शक्ति पर नियंत्रण का माध्यम माना। उनका कहना था कि नागरिक समाज संगठनों के माध्यम से नागरिक नीतिगत निर्णयों को प्रभावित कर सकते हैं और सरकार को जवाबदेह बना सकते हैं।

Michael Edwards(2004) ने नागरिक समाज को तीन रूपों में बाँटा-(1) एसोसिएशनल जीवन (associational life),(2)नागरिक चेतना(civic

consciousness) और (3) सार्वजनिक संवाद (public communication)। उनका मानना था कि इन तीनों के माध्यम से लोकतंत्र अधिक जीवंत और भागीदारीपरक बनता है। लोकतंत्र के उत्तरदायी स्वरूप को गहराई देने में नागरिक समाज पारदर्शिता, अधिकारों की रक्षा, सामाजिक न्याय, और अल्पसंख्यक समूहों की आवाज़ को नीति निर्माण तक पहुँचाने में अहम भूमिका निभाता है (Diamond, 1994)।

भारतीय लोकतंत्र एवं नागरिक समाज के संदर्भ में अध्ययन- भारत में नागरिक समाज और लोकतंत्र पर अध्ययन 1990 के दशक के बाद विशेष रूप से बढ़ा, जब आर्थिक उदारीकरण और सूचना क्रांति के बाद नागरिक सहभागिता के नए रूप उभरे। रजनी कोठारी ने भारतीय लोकतंत्र में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और जन भागीदारी की अवधारणा को प्रमुखता दी। उनका कहना था कि नागरिक समाज लोकतंत्र को केवल संवैधानिक नहीं बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया बनाता है (Kothari, 1988)।

पार्थ चटर्जी(2004)ने भारत में नागरिक समाज की अवधारणा को "राजनीतिक समाज (political society)" के रूप में समझाया, जहाँ राज्य और नागरिकों के बीच बातचीत और संघर्ष लोकतंत्र के विकास का हिस्सा बनते हैं। यह विचार पारंपरिक पश्चिमी अवधारणा से अलग है क्योंकि भारत में नागरिक समाज अक्सर हाशिए के समूहों के अधिकारों की रक्षा में सक्रिय रहता है। भारत में नागरिक समाज की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है पारदर्शिता और जवाबदेही को मज़बूत करने वाले कानूनों का निर्माण- जैसे सूचना का अधिकार अधिनियम 2005। यह कानून नागरिक समाज संगठनों के दबाव और निरंतर अभियानों के कारण संभव हो पाया। इसी प्रकार मजदूर किसान शक्ति संगठन, विज्ञान और पर्यावरण केंद्र तथा अनेक जमीनी संगठन लोकतंत्र की सामाजिक गहराई बढ़ाने में सहायक रहे हैं।

डिजिटल युग में नागरिक- बी. बी. हाल के वर्षों में डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने नागरिक समाज के रूपों और प्रभाव को व्यापक बना दिया है। सोशल मीडिया और ऑनलाइन अभियानों के माध्यम से नागरिक नीतिगत निर्णयों पर प्रभाव डालने लगे हैं। यह प्रवृत्ति लोकतंत्र को और अधिक सहभागी और पारदर्शी बना रही है, यद्यपि इसके साथ फेक न्यूज, ध्रुवीकरण और राज्य नियंत्रण जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं।

भारत में नागरिक समाज का ऐतिहासिक विकास-

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में नागरिक समाज की भूमिका- भारत में नागरिक समाज की जड़ें औपनिवेशिक काल से जुड़ी हुई हैं।19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब आधुनिक राजनीतिक चेतना का उदय हुआ, तब कई सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संगठनों ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जनता को संगठित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। नागरिक समाज के रूप में कार्य करने बीवाले संगठन उस समय जन-जागरण, राजनीतिक चेतना और राष्ट्रवाद के वाहक बने। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, आर्य समाज, ब्रह्म समाज तथा क्षेत्रीय छात्र संघों ने राजनीतिक लोकतंत्र की विचारधारा को जनमानस में पहुँचाने का कार्य किया। विशेष रूप से Mahatma Gandhi द्वारा संचालित सत्याग्रह और असहयोग आंदोलन ने नागरिक समाज को एक संगठित जनशक्ति में परिवर्तित किया। गांधीजी ने "सविनय अवज्ञा" और "सत्याग्रह" के माध्यम

से नागरिकों को राज्य के विरुद्ध शांतिपूर्ण और संगठित प्रतिरोध की रणनीति सिखाई (Brown, 1999)।

यह दौर नागरिक समाज और राजनीतिक नेतृत्व के बीच गहरे सामंजस्य का था। जब नागरिक संगठन केवल सामाजिक मुद्दों पर ही नहीं, बल्कि राजनीतिक स्वाधीनता के संघर्ष में भी अग्रणी भूमिका निभा रहे थे। इस प्रकार नागरिक समाज भारतीय लोकतंत्र की नींव डालने में सहायक सिद्ध हुआ (Chandhoke, 2001)।

आपातकाल(1975–77)और नागरिक अधिकार आंदोलन- भारतीय आपातकाल(1975–77) का काल भारतीय नागरिक समाज और लोकतंत्र के लिए एक निर्णायक मोड़ था। जब आपातकाल के दौरान नागरिक अधिकारों को निलंबित कर दिया गया, तो नागरिक संगठनों, वकीलों, पत्रकारों और छात्रों ने लोकतंत्र की रक्षा के लिए संगठित रूप से आवाज़ उठाई। पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (PUCL) और पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स (PUDR) जैसे संगठनों ने मानवाधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ सक्रिय भूमिका निभाई। नागरिक समाज ने इस अवधि में लोकतंत्र की पुनर्स्थापना के लिए वैचारिक और नैतिक दबाव बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया (Jayal, 2001)। आपातकाल ने यह स्पष्ट कर दिया कि लोकतंत्र केवल संस्थागत संरचनाओं पर आधारित नहीं रह सकता, बल्कि उसे जीवित रखने के लिए सक्रिय और सतर्क नागरिक समाज की आवश्यकता होती है।

1990 के दशक में उदारीकरण के बाद नागरिक समाज का पुनरुत्थान– भारत में 1990 के दशक की शुरुआत में हुए आर्थिक उदारीकरण ने न केवल आर्थिक ढांचे को बदला बल्कि नागरिक समाज की भूमिका को भी व्यापक रूप से पुर्नपरिभाषित किया। उदारीकरण ने राज्य की कल्याणकारी भूमिका को सीमित किया, जिससे शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और सामाजिक न्याय जैसे क्षेत्रों में नागरिक समाज संगठनों (CSOs) और गैर–सरकारी संगठनों (NGOs) की सक्रियता बढ़ी (Sen, 2002)।

इस अवधि में नागरिक समाज केवल विरोध की भूमिका में नहीं रहा, बल्कि नीति निर्माण और क्रियान्वयन में साझेदार के रूप में उभरा। संगठनों ने सरकारी योजनाओं की निगरानी, सामाजिक जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसका सबसे उल्लेखनीय उदाहरण सूचना के अधिकार आंदोलन है, जिसमें ग्रामीण स्तर के संगठनों जैसे MKSS ने पारदर्शिता के लिए जनजागरूकता फैलाई और इसे विधिक अधिकार के रूप में स्थापित करने में निर्णायक योगदान दिया (Jenkins & Goetz, 1999)। इसके अतिरिक्त, पर्यावरण, महिला अधिकार, शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सिविल सोसाइटी नेटवर्क्स ने नीतिगत विमर्श को प्रभावित किया। इसने राज्य, बाजार और नागरिक समाज के बीच नए प्रकार के सहयोग की दिशा में मार्ग प्रशस्त किया (Chandhoke, 2001)। इस प्रकार, उदारीकरण ने नागरिक समाज को केवल 'सहायक' ही नहीं बल्कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का एक सक्रिय साझेदार बना दिया।

सूचना का अधिकार और नागरिक समाज की भूमिका- भारत में पारदर्शिता और जवाबदेही को मज़बूत करने में सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 को एक

ऐतिहासिक उपलब्धि मानी जाती है। इस कानून के पीछे नागरिक समाज की निर्णायक भूमिका रही है। 1990 के दशक के उत्तरार्ध में राजस्थान के भीलवाड़ा ज़िले में MKSS द्वारा चलाया गया "जानने का अधिकार" आंदोलन इस प्रक्रिया का शुरुआती बिंदु था। इस आंदोलन के दबाव के कारण केंद्र सरकार को सूचना के अधिकार को एक मौलिक लोकतांत्रिक अधिकार के रूप में स्वीकार करना पड़ा। PUCL] PUDR] National Campaign for People's Right to Information (NCPRI) और कई अन्य संगठनों ने जन समर्थन और नीति निर्माण दोनों स्तरों पर सक्रिय भूमिका निभाई (Jenkins & Goetz, 1999)। सूचना का अधिकार ने लोकतंत्र को नागरिकों के हाथ में एक सशक्त औज़ार के रूप में सौंपा। जिससे वे शासन की कार्यवाही पर सीधा सवाल कर सकते हैं। इससे नागरिक समाज की प्रहरी की भूमिका को कानूनी और संस्थागत वैधता मिली।

प्रमुख चुनौतियाँ- भारतीय नागरिक समाज लोकतांत्रिक सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, परंतु इसके समक्ष अनेक संरचनात्मक और संस्थागत चुनौतियाँ विद्यमान हैं। सबसे प्रमुख चुनौती राजनीतिक हस्तक्षेप और दमनकारी नीतियों की है। राज्य कभी-कभी नागरिक समाज संगठनों (CSOs) को अपने नियंत्रण में रखने या असहमति की आवाज़ों को दबाने का प्रयास करता है। Foreign Contribution Regulation Act (FCRA) जैसे कानूनों के माध्यम से NGOs की गतिविधियों और वित्तीय स्रोतों पर कठोर निगरानी रखी जाती है (Jenkin, 2011)। इससे नागरिक समाज की स्वतंत्रता और वैधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। दूसरी बड़ी चुनौती वित्तीय संसाधनों की कमी और बाहरी दाताओं पर निर्भरता है। भारत में अधिकांश NGOs विदेशी या कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) फंडिंग पर निर्भर हैं, जिससे उनके कार्यक्रमों की स्वायत्तता प्रभावित होती है। (Edwards & Hulme, 1996 pp 967–989)।

वित्तीय पारदर्शिता की कमी के कारण कई संगठनों की विश्वसनीयता पर भी प्रश्न उठते हैं। तीसरी चुनौती राज्य और नागरिक समाज के बीच अविश्वास की है। कई बार सरकार नागरिक समाज को 'विरोधी' के रूप में देखती है, जबकि नागरिक समाज स्वयं को लोकतांत्रिक सुधारक के रूप में देखता है (Chandhoke] 2001, pp. 14–18)। यह अविश्वास नीति-निर्माण और कार्यान्वयन में सहयोग की संभावनाओं को कमजोर करता है। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में सामाजिक जागरूकता की कमी और संरचनात्मक असमानताएँ नागरिक समाज की पहुँच को सीमित करती हैं (Kumar, 2013)। साथ ही, NGO क्षेत्र में पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी के कारण उनकी वैधता पर भी प्रश्न उठते हैं। इन चुनौतियों का समाधान तभी संभव है जब नागरिक समाज संस्थागत सुधारों, वित्तीय पारदर्शिता, और जमीनी स्तर पर नागरिक सशक्तिकरण को प्राथमिकता दे।

विश्लेषण- नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच संबंध को समझने के लिए इस अध्ययन में थीमैटिक विश्लेषण पद्धति अपनाई गई। यह पद्धति साहित्य में प्रकट विभिन्न विचारों, अवधारणाओं और उदाहरणों को विषयगत श्रेणियों में वगीकृत कर उनके महत्व

और भूमिका का विश्लेषण करती है। इस विश्लेषण के मुख्य चार थीम निम्नलिखित है–

पारदर्शिता एवं जवाबदेही- नागरिक समाज की सबसे प्रमुख भूमिका पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना है। यह शासन प्रणाली के भीतर होने वाली गतिविधियों की निगरानी करता है और नीति निर्माण व प्रशासनिक प्रक्रियाओं में अनियमितताओं के खिलाफ सतर्कता बढ़ाता है। भारत में इसके सफल उदाहरणों में RTI आंदोलन सूचना का अधिकार अधिनियम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में मजदूर किसान शक्ति संगठन द्वारा चलाया गया जानने का अधिकार आंदोलन नागरिकों को सरकारी दस्तावेज़ और नीतिगत निर्णयों तक पहुँच प्रदान करने में सहायक हुआ। इस प्रयास ने न केवल शासन में पारदर्शिता बढ़ाई बल्कि नागरिकों के लिए जवाबदेही सुनिश्चित करने का एक सशक्त तंत्र भी प्रस्तुत किया (Jenkins & Goetz, 1999)।

नीति निर्माण में सहभागिता- नागरिक समाज नीतियों के निर्माण और सुधार में परामर्शदाता की भूमिका निभाता है। इसके माध्यम से नागरिकों की राय और सुझाव सीधे नीति निर्माताओं तक पहुँचते हैं। उदाहरण स्वरूप, शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्रों में अनेक नागरिक संगठन और एनजीओ नीति निर्माण में सक्रिय रूप से शामिल हुए हैं। सूचना का अधिकार अधिनियम और विभिन्न स्वास्थ्य योजनाओं के निर्माण में नागरिक संगठनों की भूमिका नीतियों की प्रभावशीलता और सामाजिक उत्तरदायित्व को बढ़ाने में निर्णायक रही है।

जन जागरूकता और आंदोलन- नागरिक समाज जनजागरूकता बढ़ाने और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए आंदोलनों का आयोजन करता है। भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण है। 2011 में अन्ना हजारे के आंदोलन ने देशभर में भ्रष्टाचार के खिलाफ जनजागरूकता पैदा की और सरकार को नीतिगत सुधारों के लिए दबाव में रखा। इस प्रकार नागरिक समाज लोकतंत्र में नागरिकों को सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित करता है और शासन की जवाबदेही सुनिश्चित करता है।

सामाजिक न्याय- सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में नागरिक समाज विशेष भूमिका निभाता है। हाशिए के समूहों, जैसे दलित, आदिवासी, महिला और अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकारों की रक्षा में एनजीओ और नागरिक संगठन आगे आते हैं। उदाहरण स्वरूप, दलित आदिवासी अधिकार संगठन ने न्यायिक, शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्रों में इनके अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय प्रयास किए हैं। यह सामाजिक न्याय के लक्ष्यों को प्राप्त करने में लोकतंत्र को अधिक समावेशी और सशक्त बनाता है (Chandhoke, 2001)।

निष्कर्ष और सुझाव- अध्ययन से स्पष्ट होता है कि नागरिक समाज भारतीय लोकतंत्र को जीवंत और उत्तरदायी बनाने में केंद्रीय भूमिका निभाता है। स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आधुनिक आरटीआई और सामाजिक आंदोलनों तक, नागरिक समाज ने न केवल नागरिक अधिकारों की रक्षा की बल्कि शासन और नीति निर्माण में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करने में भी योगदान दिया। आपातकाल के दौरान इसकी निगरानी भूमिका और 1990 के दशक के बाद आर्थिक उदारीकरण के संदर्भ में सक्रिय नागरिक

संगठनों की भागीदारी इसे लोकतंत्र की स्थायी शक्ति बनाती है। इस अध्ययन के विश्लेषण से यह भी स्पष्ट हुआ कि नागरिक समाज चार प्रमुख आयामों में लोकतंत्र को मज़बूत करता है। पारदर्शिता और जवाबदेही, नीति निर्माण में सहभागिता, जनजागरूकता और आंदोलनों के माध्यम से लोकतांत्रिक चेतना, तथा सामाजिक न्याय और हाशिए के समुदायों के अधिकारों की सुरक्षा। ये सभी तत्व लोकतंत्र की गहराई और गुणवत्ता को सुनिश्चित करने में निर्णायक हैं। भविष्य में नागरिक समाज की क्षमता और प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय आवश्यक हैं। पहले, संस्थागत सहयोग बढ़ाना आवश्यक है, ताकि सरकार, नागरिक संगठन और निजी क्षेत्र मिलकर सामाजिक और लोकतांत्रिक लक्ष्यों को हासिल कर सकें। दूसरे, वित्तीय पारदर्शिता सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है, ताकि नागरिक समाज संगठनों की गतिविधियाँ उत्तरदायी और विश्वसनीय बनी रहें। तीसरे, नागरिक शिक्षा और जागरूकता पर बल देना चाहिए, जिससे नागरिकों में लोकतांत्रिक अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति गहरी समझ उत्पन्न हो और वे सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित कर सकें।

इस प्रकार, यदि उपरोक्त उपायों को अपनाया जाए, तो नागरिक समाज न केवल लोकतंत्र को अधिक समावेशी और उत्तरदायी बनाएगा, बल्कि सामाजिक न्याय, पारदर्शिता और नीति निर्माण में भी स्थायी योगदान देगा। नागरिक समाज और लोकतंत्र के बीच यह सामंजस्य भारतीय लोकतंत्र को स्थिर, सशक्त और भविष्य के लिए तैयार बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।

संदर्भ सूची-

1. Brown. J- (1999)- Gandhi: Prisoner of Hope- Yale University Press- pp- 45–68
2. Chandhoke. – (2001)- The civil and the political in civil society- Democratization] 8(2)]1–28
3. Cohen. J- & Arato, A- (1992)- Civil Society and Political Theory- MIT Press- Pp- 42–55
4. Dahl. R- (1971)- Polyarchy: Participation and Opposition- Yale University Press- Pp- 4–22
5. Edwards. — (2004)- Civil Society- Polity Press- Pp- 20–45
6. Habermas. J- (1989)- The Structural Transformation of the Public Sphere- MIT Press
7. Jayal. N- G- (2001)- Democracy and the State: Welfare, Secularism and Development in Contemporary India- Ouford University Press-
8. Jenkins. R- & Goetz, A- — (1999)- Accounts and accountability: Theoretical implications of the right & to & information movement in India- Third World Quarterly, 20(3) 603–622
9. Keane. J- (1998)- Civil Society: Old Images, New Visions- Stanford University Press
10. Putnam. R- (1993)- Making Democracy Work: Civic Traditions in Modern Italy- Princeton University Press-

11. Sen. S- (2002)- Civil Society, Social Capital and Development: Lessons from India- Ouford University Press-
12. Kothari. Rajni- (1989)- Politics and the People: In Search of a Humane India- Ajanta Publications, New Delhi- pp- 21–60
13. Jenkins Rob- (2011)- Democratic Politics and Economic Reform in India- Cambridge University Press, New Delhi- pp- 89–112

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

भारत में महिला सशक्तिकरण नारी शक्ति वंदन अधिनियम, 2023 के संदर्भ में

• नीरज सारवान

सारांश- भारत में महिला सशक्तिकरण का इतिहास अत्यंत प्राचीन और व्यापक रहा है। वैदिक काल से ही महिलाओं को शिक्षा, राजनीति और निर्णय-निर्माण के अधिकार प्राप्त थे, परंतु उत्तर वैदिक और मध्य युग में उनकी स्थिति कमजोर होती चली गई। सामाजिक कुरीतियों, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा-प्रथा और शिक्षा पर प्रतिबंधों ने महिलाओं की सहभागिता को सीमित किया। पुनर्जागरण काल में अनेक समाज सुधारकों राजा राम मोहन राय, विवेकानंद, ज्योतिबा फुले, महात्मा गांधी आदि ने महिला अधिकारों को पुनर्स्थापित किया। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं ने श्रेष्ठ नेतृत्व दिखाया। स्वतंत्र भारत में भी इंदिरा गांधी, विजयलक्ष्मी पंडित, सरोजिनी नायडू जैसी महिलाओं ने उच्च पदों पर प्रतिष्ठा पाई, फिर भी विधानमंडलों में उनका प्रतिनिधित्व न्यून बना रहा। इसी असमानता को दूर करने हेतु नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 लाया गया, जो लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और दिल्ली विधानसभा में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित करता है। यह ऐतिहासिक संशोधन भारतीय राजनीति में महिलाओं की समान भागीदारी और लैंगिक न्याय को सुदृढ़ करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

मुख्य शब्द- महिला सशक्तिकरण, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, लैंगिक समानता

प्रस्तावना- आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक एवं दार्शनिकों के पिता और दर्शन के पोप प्लेटों ने कहा था कि "महिलाओं की शक्ति चौके-चूल्हे में नष्ट हो जाती हैं, उन्हें घर की चार दीवारी से बाहर निकालकर, उनका उपयोग राजनीति में होना चाहिए, स्त्रियों में भी पुरुषों के समतुल्य शासन करने की क्षमता होती है। "प्लेटो के उपर्युक्त विचार से यह बात स्पष्ट होती हैं कि प्लेटों ने महिलाओं के राजनीति में प्रवेश को उचित ही नहीं अपितु अनिवार्य भी माना था। भारतीय सभ्यता प्राचीन कालीन है। भारत में स्त्रियों को प्राचीनकाल से ही सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त थी। शास्त्रों में भी स्त्रियों की महिमा का गान करते हुए कहा गया हैं कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" अर्थात् जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते है।

• सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वैदिक काल में स्त्रियों और पुरूषों के बीच किसी भी तरह का भेदभाव नहीं किया जाता था। स्त्रियों को पुरूषों के समान शिक्षा प्राप्त करने और उन्हें राजकीय व्यवस्था का हिस्सा होने का अधिकार प्राप्त था। इस काल में अनेक विदुषी महिलाऐं रही जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल की। जैसे धार्मिक प्रकार्य, शिक्षा, राजनीति, राजनय इत्यादि।

उत्तर वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट को देखने को मिली। उन्हें वह स्थान नहीं मिला जो वैदिक काल में प्राप्त था। कहने का अभिप्राय यह है कि उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति दोयम दर्जे की हो गई। उन्हें पुरुषों की तुलना हीनतर माना गया। मध्य युग में महिलाओं की स्थिति कमजोर हुई। बाहरी आक्रमणों और मुस्लिम शासन के कारण महिलाऐं पर्दे के पीछे चली गई। इस काल में महिलाओं की शिक्षा-दीक्षा पर रोक लगा दी गई। मध्ययुग में महिलाओं का राजनीति में प्रवेश सीमित हो गया परन्तु इसके बावजुद भी अनेक स्त्रियों शासन हुई।

उत्तर वैदिककाल और मध्ययुग में स्त्रियों की दशा हीनतर हो गई थी। महिलाएँ शिक्षा और राजनीति से दूर हो गई। बाल विवाह और सती प्रथा जैसी अमानवीय परम्पराएँ प्रारम्भ हो गई और इनका कठोरता से पालन करवाया जाने लगा।

पुनर्जागरण काल में अनेक समाज सुधारकों और मनीषियों ने महिला अधिकार और महिला शिक्षा की वकालत की। राजाराम मोहन राय, स्वामी विवेकानंद, महात्मा ज्योतिबा फूले और महात्मा गाँधी, डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने महिला उत्थान के लिए अनेक कार्य किए।

राष्ट्रीय आंदोलन में हजारों महिलाओं ने बढ़-चढ़कर भाग लिया और अनेक महिलाओं ने कुशल नेतृत्व किया जिसमें सुश्री गांगुली, कस्तुरबा गाँधी, सरोजनी नायडू, राजकुमारी अमृत कौर, कमला नेहरू, इन्दिरा गाँधी इत्यादि प्रमुख थी।

भारत का संविधान समता मूलक समाज की स्थापना का ध्येय रखता है। भारत के संविधान द्वारा महिलाओं को मताधिकार और अवसर की समानता का अधिकार दिया गया। जबकि विश्व के आधुनिक कहे जाने वाले राष्ट्रों का इतिहास भी राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु महिलाओं के संघर्ष से भरा हुआ है। ब्रिटेन तथा स्वीस जैसे राज्य जो लोकतंत्र के प्रबल समर्थक रहे है, वहाँ भी महिलाओं को लम्बे समय के बाद मताधिकार का अधिकार प्राप्त हुआ। सन् 1893 में न्यूजीलैंड प्रथम राष्ट्र बना जिसने महिलाओं को 'मत' देने का अधिकार प्रदान किया। आस्ट्रेलिया और कनाडा में 1908 में, डेनमार्क व आयरलैंड ने 1975 में, अमेरिका में 1920 में मताधिकार दिया।

स्वतंत्र भारत में केन्द्र और राज्यों की राजनीति में अनेक महिलाओं का प्रादुर्भाव हुआ। साथ ही साथ वे श्रेष्ठ प्रशासिकाएँ भी सिद्ध हुई। श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा की अध्यक्षता की। श्रीमती सरोजनी नायडू स्वतंत्रता के बाद प्रथम महिला राज्यपाल बनी। श्रीमती नायडू ने राज्यपाल के पद पर बेहतर कार्य किया। सुचेता कृपलानी भारत के किसी राज्य की पहली महिला मुख्यमंत्री बनी। राजकुमारी अमृतकौर भारत की पहली महिला कैबिनेट मंत्री बनी। श्रीमती इंदिरागाँधी को देश की प्रथम महिला प्रधानमंत्री होने का गौरव प्राप्त है। वर्तमान में भी अनेक महिलाएं

भारतीय राजनीति का केंद्र बिंदु है।

भारत में राष्ट्रपति जैसे उच्च पद पर श्रीमती द्रौपदी मुर्मू विराजमान है, इससे पूर्व भी श्रीमती प्रतिभा पाटिल इस पद को सुशोभित कर चुकी हैं परन्तु इसके बावजूद भारतीय राजनीति में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता न्यूनतम है। लोकसभा और विधानसभाओं में उनकी संख्या बहुत कम या नगण्य है, जबकि व्यवस्थापिका नीति निर्माता होती है। नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 इस दिशा में सकारात्मक कदम है।

नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023- नारी शक्ति वंदन अधिनियम भारत के संविधान का एक महत्वपूर्ण संशोधन है, जो महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से लाया गया है। यह संविधान (106वां संशोधन) अधिनियम, 2023 के रूप में जाना जाता है। यह अधिनियम लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और दिल्ली विधानसभा में महिलाओं के लिए एक तिहाई (33%) आरक्षण प्रदान करता है। यह विधेयक 19 सितंबर 2023 को लोकसभा में पेश किया गया था, और 28 सितंबर 2023 को राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू द्वारा मंजूरी के बाद यह कानून बन गया। यह भारत में महिलाओं को विधायी क्षेत्र में अधिक प्रतिनिधित्व देकर लैंगिक समानता को मजबूत करने का एक ऐतिहासिक कदम है।

संदर्भ सूची-

1. मेहता जीवन, राजनीतिक चिंतन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा,1990
2. नैयर सुशीला (स.) भारतीय पुनर्जागरण में अग्रणी महिलाएँ, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली 2009
3. वरे एस.एल. भारतीय इतिहास में नारी, शांति साहित्य प्रकाशन, उज्जैन 2004-05
4. सारस्वत स्वप्निल "महिला विकास" नमन प्रकाशन, नई दिल्ली 2018
5. नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023
6. कूलवाल मंजू, महिला अधिकार और कानून, आस्था प्रकाशन जयपुर 2015
7. कुमार जयेंद्र, पंचायती राज व्यवस्था एवं महिलाएं, निखिल प्रकाशन आगरा 2017
8. चतुर्वेदी करण, भारतीय संस्कृति एवं महिला विकास, मार्क पब्लिशर्स जयपुर 2023

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

रीवा जिले के फुटकर व्यवसाय एवं रोजगार सृजन के आर्थिक विकास में योगदान एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

• एम. यू. सिद्दीकी
•• प्रेमा वर्मा

सारांश- रीवा जिला विंध्य क्षेत्र का एक उभरता हुआ आर्थिक केंद्र है, जहाँ फुटकर व्यापार स्थानीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनकर उभरा है। फुटकर व्यवसाय न केवल उपभोग आपूर्ति श्रृंखला का आधार है, बल्कि यह रोजगार सृजन, स्थानीय आय वृद्धि, महिला उद्यमिता, ग्रामीण-शहरी संपर्क तथा संसाधनों के पुनर्वितरण में महत्वपूर्ण योगदान देता है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रीवा जिले में फुटकर व्यवसाय की संरचना, इसकी समस्याएँ, अवसर, रोजगार सृजन की क्षमता तथा आर्थिक विकास पर इसके प्रभाव का अध्ययन करना है। अध्ययन में 60 उत्तरदाताओं (सामान्य-20, अनुसूचित जाति-20, अनुसूचित जनजाति-20) का चयन कर मात्रात्मक पद्धति से सर्वेक्षण किया गया। डेटा विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि फुटकर व्यवसाय रीवा की 47 प्रतिशत शहरी और 31 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रोजगार उपलब्ध कराता है। महिला उद्यमिता, ई-कामर्स, स्थानीय बाजार संस्कृति और माइक्रो-फाइनेंस योजनाओं ने फुटकर व्यापार को नई गति दी है। हालांकि पूंजी की कमी, अव्यवस्थित बाजार ढाँचा, औपचारिक प्रशिक्षण की अनुपस्थिति और प्रतिस्पर्धा जैसी चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। यह शोध स्थानीय प्रशासन, नगर निगम, उद्योग केंद्र और नीति निर्धारकों के लिए उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

मुख्य शब्द- फुटकर व्यवसाय, रीवा जिला, रोजगार सृजन, आर्थिक विकास, उद्यमिता, स्थानीय बाजार।

परिचय (Introduction)- आर्थिक विकास का सबसे बुनियादी आधार रोजगार, उत्पादन और वितरण से जुड़ी संरचनाएँ हैं। रीवा जिले में फुटकर व्यवसाय इन तीनों आयामों को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण आर्थिक क्षेत्र है। फुटकर व्यापार स्थानीय स्तर पर वस्तुओं की उपलब्धता, उपभोक्ता संतुष्टि, आय के वितरण और हजारों परिवारों के आजीविका आधार का प्रमुख स्रोत है। रीवा जिला, जो शिक्षा, व्यापार, कृषि, खनन और सांस्कतिक गतिविधियों का केंद्र है, यहाँ फुटकर बाजारों की गतिविधियाँ

• प्राचार्य, शासकीय पीजी कॉलेज बैढ़न जिला सिंगरौली मध्य प्रदेश
••शोधार्थी, वाणिज्य संकाय, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

जिले की आर्थिक नाड़ी को नियंत्रित करती हैं। यह क्षेत्र न केवल शहरी अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाता है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों को बाजार से जोड़कर द्विस्तरीय आर्थिक पुल का कार्य भी करता है।

विगत दो दशकों में रीवा में तेजी से हुई जनसंख्या वृद्धि, उपभोक्ता संस्कृति का विस्तार, शहरीकरण और परिवहन सुविधाओं के विकास ने फुटकर क्षेत्र को व्यापक अवसर प्रदान किए। इसी संदर्भ में प्रस्तुत शोध में यह अध्ययन किया गया है कि इस बढ़ते फुटकर व्यवसाय ने रोजगार और आर्थिक विकास को किस प्रकार बढ़ावा दिया है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि और समस्या का परिचय- रीवा जिले में सूक्ष्म और लघु व्यापार लंबे समय से आर्थिक जीवन का आधार रहा है। परंतु पिछले वर्षों में नए माल, सुपरमार्केट, ई-कमर्स प्लेटफार्म तथा डिजिटल भुगतान प्रणाली के आने से फुटकर व्यापार की संरचना और प्रतिस्पर्धा में बड़ा परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन नई संभावनाएँ और चुनौतियाँ-दोनों-प्रस्तुत करता है। मुख्य समस्या यह है कि-

1- क्या फुटकर व्यवसाय रोजगार सृजन में प्रभावी भूमिका निभा रहा है?

2- क्या यह क्षेत्र आर्थिक विकास में सार्थक योगदान कर रहा है?

3- फुटकर व्यापार से जुड़ी चुनौतियाँ रोजगार और आय वृद्धि को किस प्रकार सीमित करती हैं?

4- विभिन्न सामाजिक वर्गों में रोजगार के अवसर किस हद तक समान रूप से उपलब्ध हैं?

इन्हीं प्रश्नों को समझने के लिए यह शोध किया गया है।

शोध का महत्व- शोध का महत्व अनेक स्तरों पर उभरकर सामने आता है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो रीवा जिले की लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से फुटकर व्यापार से जुड़ी है, इसलिए इस क्षेत्र का विश्लेषण स्थानीय अर्थव्यवस्था की हकीकत, उसकी गति और उसकी कमजोरियों को समझने के लिए अनिवार्य हो जाता है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में फुटकर व्यापार एक ऐसा क्षेत्र है जो निम्न, मध्यम और उच्च-तीनों वर्गों के लोगों को रोजगार प्रदान करता है। इस संदर्भ में जाति, वर्ग और अवसरों की उपलब्धता जैसे तत्वों का अध्ययन समाज की संरचना और उसमें मौजूद व्यावसायिक गतिशीलता को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नीतिगत स्तर पर यह शोध अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकता है, क्योंकि इसके निष्कर्ष सूक्ष्म उद्यमों के विकास, रोजगार सृजन की संभावनाओं तथा बाजार व्यवस्थापन से जुड़ी सरकारी योजनाओं को अधिक प्रभावी और व्यवहारिक दिशा प्रदान कर सकते हैं। इस प्रकार, यह अध्ययन क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था, सामाजिक संरचना और प्रशासनिक नीति-निर्माण-तीनों के लिए सार्थक आधार रचता है।

अध्ययन की सीमाएँ- अध्ययन की कुछ सीमाएँ भी इस शोध को प्रभावित करती हैं। सर्वप्रथम, नमूना आकार केवल 60 उत्तरदाताओं तक सीमित होने के कारण निष्कर्षों की व्यापकता कुछ हद तक सीमित रहती है। इसके अलावा, शोध का भौगोलिक दायरा केवल रीवा जिले तक ही सीमित है, जिससे इसके निष्कर्षों को अन्य जिलों या क्षेत्रों पर सीधे लागू करना संभव नहीं हो पाता। साथ ही, अध्ययन मुख्यतः मात्रात्मक पद्धति पर

आधारित होने के कारण कई गहन गुणात्मक पहलू, जैसे व्यक्तिगत अनुभव, सामाजिक संबंधों की जटिलता और भावनात्मक संदर्भ, अपेक्षा–त कम उजागर हो पाए हैं। इन सीमाओं के बावजूद, अध्ययन अपने निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप सार्थक दिशा प्रदान करता है।

पूर्व साहित्य समीक्षा- फुटकर व्यवसाय पर उपलब्ध पूर्व साहित्य यह दर्शाता है कि भारत की समग्र अर्थव्यवस्था में छोटे और सूक्ष्म व्यापारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। विभिन्न शोधों में यह तथ्य उभरकर आया है कि फुटकर क्षेत्र न केवल उपभोक्ता–आपूर्ति श्रृंखला का आधार बनता है, बल्कि यह शहरी और अर्द्ध–शहरी क्षेत्रों में रोजगार सृजन का प्रमुख माध्यम भी है। Sharma (2021) के अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ कि शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध कुल रोजगार का लगभग 32 प्रतिशत हिस्सा फुटकर व्यवसाय से संबंधित है। उनका निष्कर्ष यह भी संकेत करता है कि बदलती उपभोक्ता संस–ति और बढ़ती खरीद क्षमता ने फुटकर क्षेत्र को निरंतर विस्तार दिया है। इसी क्रम में Chowdhary (2020) ने अपने शोध में सूक्ष्म व्यापारों के आर्थिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए बताया कि स्थानीय अर्थव्यवस्था की स्थिरता में फुटकर व्यापार की भूमिका संरचनात्मक आधार की तरह कार्य करती है। उनके अनुसार यह क्षेत्र न केवल उपभोक्ताओं की तात्कालिक आवश्यकताओं को पूरा करता है, बल्कि छोटी बचत, स्थानीय निवेश और आपूर्ति तंत्र को भी पुनर्जीवित करता है। वहीं Singh (2019) ने मध्यप्रदेश के छोटे शहरों में फुटकर व्यापार का सामाजिक परिप्रेक्ष्य से अध्ययन करते हुए पाया कि यह क्षेत्र विभिन्न सामाजिक वर्गों के लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है तथा जातिगत एवं आर्थिक विषमता को आंशिक रूप से कम करने में सहायक है।

इन पूर्व अध्ययनों में फुटकर व्यापार की प्रकृति, उसके सामाजिक व आर्थिक प्रभाव और रोजगार क्षमता पर पर्याप्त चर्चा मिलती है, किन्तु रीवा जिले जैसे उभरते आर्थिक केंद्र पर केंद्रित विशिष्ट अनुसंधान का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है। विशेष रूप से विंध्य क्षेत्र की स्थानीय बाजार संस्कृति, रोजगार की सामाजिक संरचना, वर्ग–आधारित अवसरों का वितरण और डिजिटल परिवर्तन के बाद फुटकर व्यापार की दिशा में हुए बदलावों पर किसी भी शोध ने व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत नहीं किया है। यही कारण है कि वर्तमान अध्ययन इस खाली स्थान को भरते हुए रीवा जिले के फुटकर व्यवसाय को स्थानीय आर्थिक विकास और रोजगार सृजन के संदर्भ में विश्लेषित करता है। इस –ष्टि से यह शोध न केवल क्षेत्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण है, बल्कि वर्तमान साहित्य में एक नई परत जोड़ने का कार्य भी करता है।

शोध समस्या- इस अध्ययन की केंद्रीय शोध समस्या इस प्रश्न के इर्द–गिर्द विकसित होती है कि रीवा जिले में फुटकर व्यवसाय किस सीमा तक रोजगार सृजन और आर्थिक विकास में योगदान देता है तथा इसके पीछे काम कर रहे सामाजिक–आर्थिक आयाम कौन–से हैं। फुटकर व्यापार जिले की अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक है, परंतु यह योगदान वास्तव में कितना प्रभावी है–यह अब तक स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं हो पाया था। विशेष रूप से रोजगार अवसरों का वितरण, आय में सुधार की वास्तविक स्थिति, विभिन्न सामाजिक वर्गों की भागीदारी तथा व्यवसाय की संरचनात्मक चुनौतियों के

संदर्भ में विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता महसूस की गई। इसी आवश्यकता ने वर्तमान शोध को यह स्पष्ट समस्या निर्धारित करने के लिए प्रेरित किया कि फुटकर व्यवसाय स्थानीय आर्थिक गतिविधियों को किस प्रकार दिशा देता है, और यह क्षेत्र सामाजिक विविधता, आर्थिक गतिशीलता तथा रोजगार संरचना को कैसे प्रभावित करता है। इस प्रकार, शोध समस्या न केवल आर्थिक विश्लेषण तक सीमित है, बल्कि यह सामाजिक संदर्भों और क्षेत्रीय विकास की व्यापक तस्वीर को भी समाहित करती है।

परिकल्पना-

1- फुटकर व्यवसाय रीवा जिले में रोजगार सृजन का प्रमुख स्रोत है।

2- आर्थिक विकास और फुटकर व्यापार के विस्तार के बीच सकारात्मक संबंध है।

3- सामाजिक वर्ग (ळमदमतंस/बैज) के अनुसार रोजगार अवसरों में अंतर पाया जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य

1- रीवा जिले में फुटकर व्यवसाय की संरचना का अध्ययन करना।

2- रोजगार सृजन में इसकी भूमिका का विश्लेषण करना।

3- विभिन्न सामाजिक वर्गों में रोजगार अवसरों की तुलना करना।

4- फुटकर व्यापार से जुड़े आर्थिक योगदान का मूल्यांकन करना।

5- इस क्षेत्र की चुनौतियों और सुधार संभावनाओं की पहचान करना।

शोध पद्धति- इस अध्ययन में शोध पद्धति को पूर्णत: मात्रात्मक स्वरूप में विन्यस्त किया गया, ताकि फुटकर व्यवसाय से जुड़े आर्थिक और सामाजिक स्वरूप को सांख्यिकीय रूप से समझा जा सके। नमूना चयन के लिए सरल या-च्छिक तकनीक अपनाई गई, जिसमें कुल 60 उत्तरदाताओं को तीन सामाजिक वर्गों-सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति-से समान रूप से चुना गया। प्रत्येक वर्ग से 20-20 उत्तरदाताओं का चयन शोध को तुलनात्मक और संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करता है।

डेटा संग्रहण के लिए दो प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया। प्राथमिक डेटा सर्वेक्षण, संरचित प्रश्नावली, सरल साक्षात्कार और प्रत्यक्ष अवलोकन के माध्यम से एकत्र किया गया, जिससे उत्तरदाताओं की वास्तविक व्यावसायिक परिस्थितियों, उनके अनुभवों और चुनौतियों का प्रत्यक्ष आंकलन संभव हो पाया। द्वितीयक स्रोतों के रूप में विभिन्न सरकारी रिपोर्टें, पूर्व शोध पत्र, नीतिगत दस्तावेज और सांख्यिकीय अभिलेखों का उपयोग किया गया, जिसने अध्ययन की पृष्ठभूमि और संदर्भ को मजबूत आधार प्रदान किया।

संग्रहित आँकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रतिशत विश्लेषण को प्राथमिक उपकरण के रूप में अपनाया गया, जिससे विभिन्न प्रश्नों पर उत्तरदाताओं की प्रवृत्तियों और स्थिति को स्पष्ट रूप से चित्रित किया जा सका। साथ ही तालिकाओं और ग्राफ के माध्यम से डेटा को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया गया, ताकि विश्लेषण सहज और सुसंगत दिखाई दे। इसके अतिरिक्त, वर्णनात्मक विश्लेषण ने आंकड़ों की व्याख्या को गहराई प्रदान की और आर्थिक-सामाजिक संबंधों को अधिक स्पष्ट रूप में सामने लाया। इस प्रकार, शोध पद्धति का यह समग्र ढाँचा अध्ययन को विश्वसनीय, संतुलित और वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करता है।

डाटा विश्लेषण एवं प्रस्तुति

तालिका 01
उत्तरदाताओं का सामाजिक वर्ग

सामाजिक वर्ग	संख्या	प्रतिशत
सामान्य	20	333
अनुसूचित जाति	20	33.3
अनुसूचित जनजाति	20	33.3
कुल	60	100

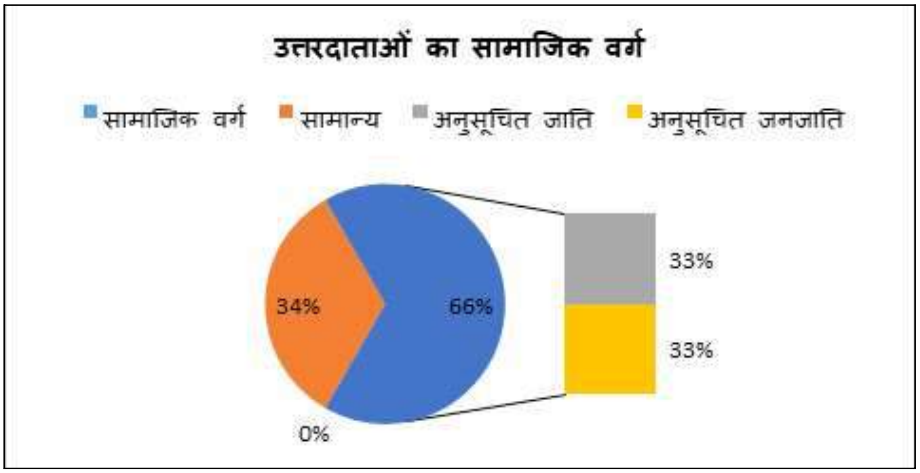

अध्ययन के प्रारंभिक चरण में उत्तरदाताओं के सामाजिक वर्ग का विश्लेषण यह संकेत करता है कि शोध प्रक्रिया को संतुलित और प्रतिनिधिक बनाने के लिए तीनों सामाजिक वर्गों–सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति–से समान संख्या में 20–20 प्रतिभागियों का चयन किया गया। कुल 60 उत्तरदाताओं में प्रत्येक वर्ग की 33.3 प्रतिशत भागीदारी न केवल सामाजिक विविधता को दर्शाती है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करती है कि शोध किसी एक विशेष समूह की ओर झुकाव के बिना समग्र और निष्पक्ष ढंग से संचालित हो।

इस संतुलित चयन के पीछे स्पष्ट कारण यह है कि रीवा जिले का फुटकर व्यवसाय सामाजिक रूप से विविध समूहों की भागीदारी से संचालित होता है, जहाँ सामान्य वर्ग के साथ-साथ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय भी व्यापक रूप से व्यापार एवं रोजगार गतिविधियों में संलग्न हैं। इसलिए समान प्रतिनिधित्व अध्ययन को उन अंतर-वर्गीय तुलनाओं की सुविधा देता है, जिनके माध्यम से यह समझा जा सकता है कि रोजगार के अवसर, व्यापार विस्तार, आय स्तर या चुनौतियाँ किस सामाजिक समूह को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।

इस संतुलन का एक और महत्वपूर्ण कारण यह है कि नीति, विकास कार्यक्रम और सरकारी योजनाओं का प्रभाव अक्सर सामाजिक वर्गों के अनुसार भिन्न होता है। ऐसे में यदि सभी वर्ग समान रूप से शामिल हों तो विश्लेषण के दौरान यह आसानी से समझा जा सकता है कि कौन-सा वर्ग किस हद तक इन योजनाओं से लाभान्वित हो रहा है या वंचित रह जाता है। इस प्रकार, तालिका 1 संकेत करती है कि अध्ययन का डेटा सामाजिक रूप से संतुलित, तुलनात्मक और व्यापक निष्कर्षों के लिए उपयुक्त आधार प्रदान करता है।

तालिका 02
फुटकर व्यवसाय शुरू करने का वर्ष

	फुटकर व्यवसाय शुरू करने का वर्ष	
समयावधि	उत्तरदाता	प्रतिशत
0-2 वर्ष 18	30	33.3
2-5 वर्ष 22	22	36.6
5 वर्ष से अधिक	20	33.3

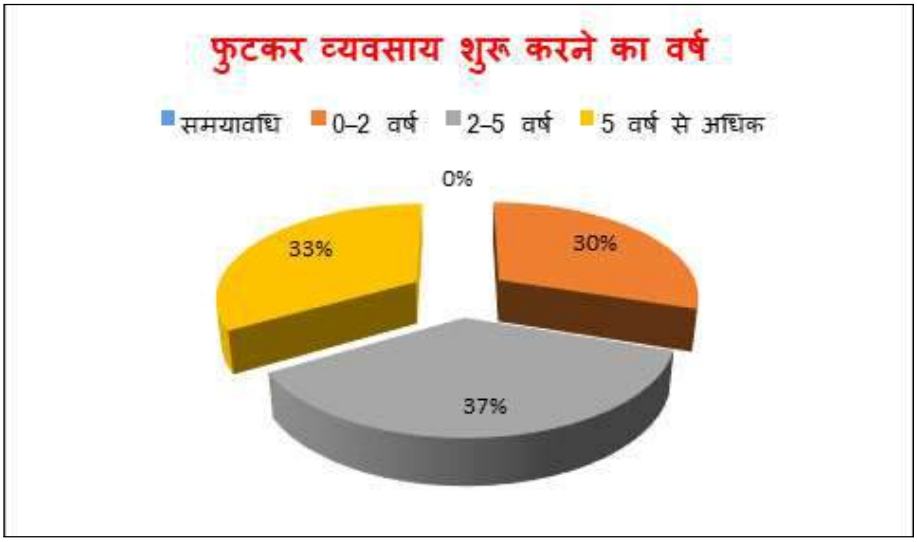

फुटकर व्यवसाय शुरू करने की समयावधि से स्पष्ट होता है कि रीवा जिले में बीते कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में उल्लेखनीय विस्तार हुआ है। सर्वेक्षण के अनुसार 0-2 वर्ष की अवधि में 18 उत्तरदाताओं (30 प्रतिशत) ने अपना व्यवसाय प्रारंभ किया है, जो दर्शाता है कि हाल के समय में नए उद्यमियों की संख्या तेजी से बढ़ी है। यह वृद्धि मुख्यत: डिजिटल भुगतान प्रणाली के प्रसार, मोबाइल आधारित खरीद-बिक्री, बदलते उपभोक्ता व्यवहार और बाजार में बढ़ते अवसरों से प्रेरित है। दूसरी ओर, 2-5 वर्ष की अवधि में व्यवसाय शुरू करने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत सबसे अधिक 36.6 प्रतिशत है, जो यह संकेत करता है कि यह समयावधि फुटकर क्षेत्र के लिए विस्तार और स्थिरता का

महत्वपूर्ण चरण रहा है। यह वह दौर है जब नोटबंदी, जीएसटी और डिजिटल लेन-देन जैसी नीतिगत परिवर्तनों ने छोटे व्यापारियों को पुनर्गठित होने और नए अवसर तलाशने के लिए प्रेरित किया।

इसके अतिरिक्त, 5 वर्ष से अधिक समय से व्यवसाय कर रहे 20 उत्तरदाता (33.3 प्रतिशत) इस बात का प्रमाण हैं कि फुटकर व्यापार लंबे समय से रीवा जिले की आर्थिक संरचना का मजबूत स्तंभ रहा है। यह पुराना वर्ग न केवल अनुभव और स्थिर आय को दर्शाता है, बल्कि यह भी बताता है कि यह व्यापार आर्थिक उतार-चढ़ाव और बाजार प्रतिस्पर्धा के बीच भी खुद को टिकाए रखने की क्षमता रखता है। लंबे समय से संचालित व्यापारों की उपस्थिति यह स्पष्ट करती है कि फुटकर बाजार का स्थानीय उपभोक्ता आधार स्थिर है और मांग निरंतर बनी रहती है।

समग्र रूप से यह तालिका बताती है कि बीते 5 वर्षों में फुटकर व्यवसाय में सबसे अधिक वृद्धि हुई है, जिसका मुख्य कारण शहरीकरण, सड़क एवं परिवहन सुविधाओं में सुधार, उपभोक्ता बाजार का विस्तार तथा डिजिटल भुगतान की आसान उपलब्धता है। बदलती आर्थिक परिस्थितियों और आधुनिक तकनीकी साधनों ने नए उद्यमियों के लिए व्यवसाय शुरू करना पहले की तुलना में अधिक सुलभ बना दिया है। इसलिए यह तालिका इस बात का स्पष्ट संकेत है कि रीवा जिले का फुटकर क्षेत्र न केवल पारंपरिक आधार पर खड़ा है, बल्कि आधुनिक आर्थिक परिवर्तनों के साथ तेज़ी से विकसित भी हो रहा है।

तालिका 3
व्यवसाय शुरू करने का मुख्य कारण

कारण	व्यवसाय शुरू करने का मुख्य कारण	
कारण	उत्तरदाता	प्रतिशत
बेरोजगारी	27	45
अतिरिक्त आय	14	23.3
पारिवारिक परंपरा	11	18.3
अन्य	8	13.3

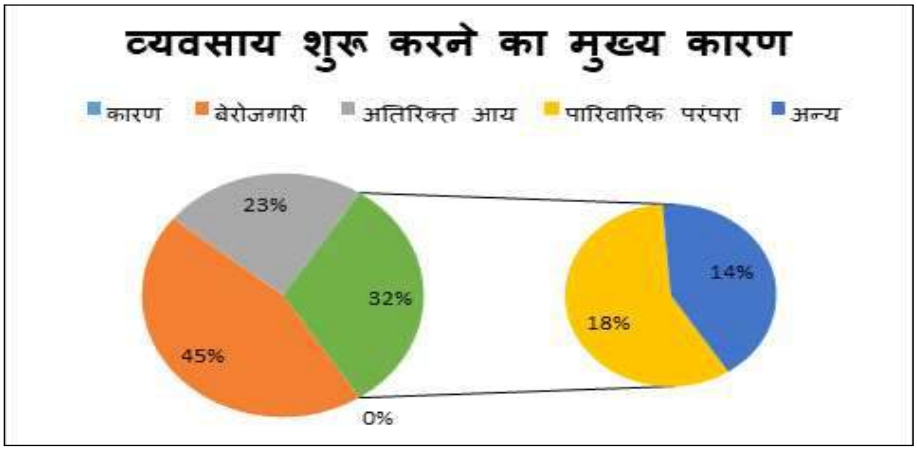

तालिका के अनुसार, उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 45 प्रतिशत लोगों ने फुटकर व्यवसाय की शुरुआत बेरोज़गारी के कारण की, जो इस क्षेत्र की वास्तविक सामाजिक-आर्थिक स्थिति को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। यह संकेत देता है कि रीवा जिले में औपचारिक रोजगार के अवसरों की कमी के बीच फुटकर व्यापार एक व्यवहारिक विकल्प के रूप में उभर रहा है। बेरोज़गार युवाओं और वयस्कों के लिए यह क्षेत्र न केवल त्वरित आय का स्रोत बनता है, बल्कि कम पूंजी और न्यूनतम तकनीकी कौशल के बावजूद आजीविका का स्थायी आधार प्रदान करता है। इसके बाद 23.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अतिरिक्त आय की आवश्यकता को व्यवसाय शुरू करने का कारण बताया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि फुटकर व्यापार परिवारों की आर्थिक पूरकता को मजबूत कर रहा है। वहीं, 18-3 प्रतिशत लोगों ने पारिवारिक परंपरा में चलते हुए यह व्यवसाय अपनाया, जो स्थानीय व्यापार संस्कृति, सामाजिक नेटवर्क और अनुभवजन्य ज्ञान की निरंतरता को दर्शाता है। शेष 13.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अन्य कारणों का उल्लेख किया, जिनमें अवसर उपलब्ध होना, कम जोखिम वाला रोजगार, स्वयं का काम करने की इच्छा और महामारी के बाद आर्थिक पुनर्संरचना जैसे कारण सम्मिलित हो सकते हैं। समग्र रूप से, तालिका बताती है कि फुटकर व्यापार रीवा जिले में रोजगार सृजन, आय-वृद्धि और सामाजिक-आर्थिक स्थिरता प्रदान करने वाला प्रमुख क्षेत्र बन चुका है, जो बेरोज़गारी के दबाव को संतुलित करते हुए एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक आजीविका माडल के रूप में उभरा है।

तालिका 4
मासिक औसत आय

	मासिक औसत आय	
आय (रु)	उत्तरदाता	प्रतिशत
5000-10000	16	26.60
10000-20000	27	45.00
20000 से अधिक	17	28.30

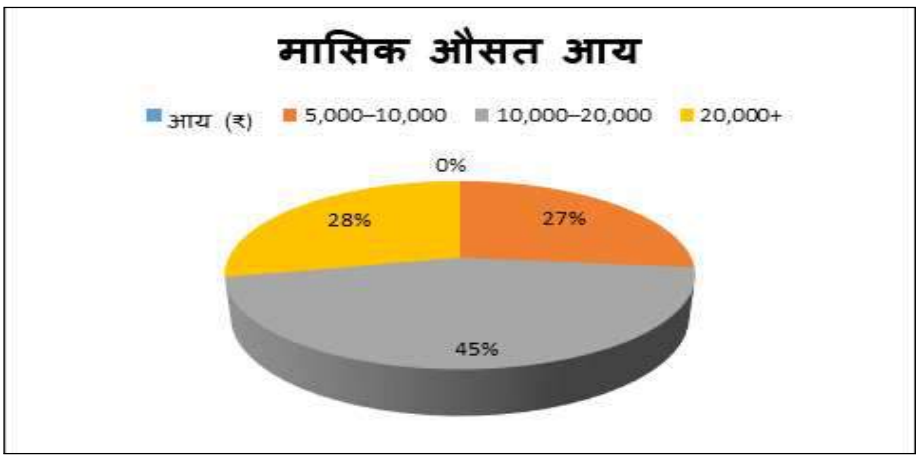

तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि रीवा जिले के फुटकर व्यापारियों की आय मुख्यत: निम्न और मध्यम आय वर्ग के दायरे में केंद्रित है। लगभग 45 प्रतिशत उत्तरदाता प्रति माह 10,000 से 20,000 रुपये की आय अर्जित करते हैं, जो इस क्षेत्र की आर्थिक सु-ढ़ता और स्थिरता का संकेत देता है। यह आय श्रेणी बताती है कि फुटकर व्यापार स्थानीय स्तर पर मध्यम वर्ग की आर्थिक रीढ़ के रूप में कार्य कर रहा है, क्योंकि सीमित पूंजी निवेश के बावजूद व्यापारी नियमित और संरक्षित आय हासिल कर पा रहे हैं। इसके साथ ही 26.6 प्रतिशत उत्तरदाता 5,000-10,000 रुपये की आय श्रेणी में आते हैं, जो उन व्यवसायों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो या तो प्रारंभिक अवस्था में हैं या कम ग्राहक-आधार वाले क्षेत्रों में संचालित होते हैं। यह श्रेणी फुटकर व्यापार की विविधताओं को दर्शाती है-जहां कुछ व्यापार कम पूंजी, कम बिक्री और मौसमी मांग पर आधारित होते हैं। दूसरी ओर, 28.3 प्रतिशत उत्तरदाता 20,000 रुपये से अधिक मासिक आय अर्जित करते हैं, जो फुटकर व्यापार की विकास क्षमता और प्रतिस्पर्धी बाज़ार में सफलता प्राप्त करने की संभावना को उजागर करता है। यह संकेत देता है कि सही स्थान, ग्राहकों की निरंतरता, उत्पाद विविधता और डिजिटल भुगतान जैसे आधुनिक साधनों के उपयोग से फुटकर व्यापार उच्च आय का स्रोत भी बन सकता है। कुल मिलाकर, यह तालिका दर्शाती है कि रीवा जिले का फुटकर व्यापार न केवल निम्न आय वर्ग को आजीविका उपलब्ध करा रहा है, बल्कि मध्यम वर्ग की आर्थिक मजबूती और उन्नयन में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

तालिका 5
व्यवसाय में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या

	व्यवसाय में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या	
संख्या	उत्तरदाता	प्रतिशत
1. केवल स्व. रोजगार	22	36.6
2. 2-3 परिवार + कर्मचारी	28	46.6
4 कर्मचारी	10	16.6

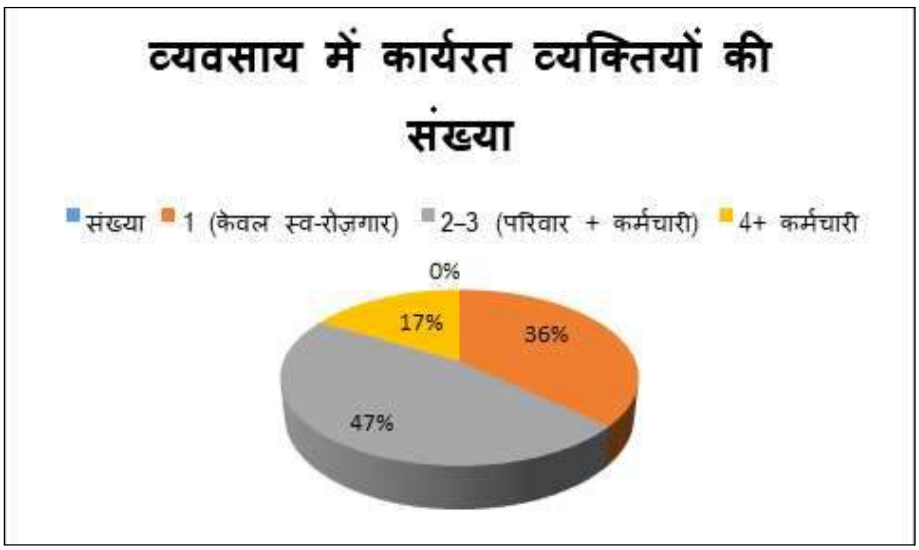

तालिका से यह स्पष्ट होता है कि रीवा जिले का फुटकर व्यापार केवल व्यक्तिगत आजीविका तक सीमित नहीं है, बल्कि यह स्थानीय स्तर पर छोटे पैमाने पर रोजगार सृजन का महत्त्वपूर्ण स्रोत भी है। 36.6 प्रतिशत व्यवसाय ऐसे हैं जिन्हें अकेले व्यापारी स्वयं संचालित करते हैं, जो दर्शाता है कि फुटकर व्यापार सीमित पूंजी और कम संसाधनों के साथ भी स्व-रोज़गार के रूप में आसानी से स्थापित हो सकता है। वहीं 46.6 प्रतिशत व्यवसायों में 2-3 व्यक्ति कार्यरत हैं, जिसमें परिवार के सदस्य या एक-दो कर्मचारी शामिल होते हैं। यह आँकड़ा बताता है कि अधिकांश फुटकर व्यापार धीरे-धीरे विस्तार की ओर अग्रसर हैं और एक छोटे पारिवारिक उद्यम का रूप ले रहे हैं। यह स्थिति आर्थिक गतिविधियों की स्थिरता, ग्राहक-आधारित वृद्धि और श्रम की स्थानीय उपलब्धता को भी दर्शाती है।

इसके अतिरिक्त 16.6 प्रतिशत व्यापार 4 या उससे अधिक व्यक्तियों को रोजगार दे रहे हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि कुछ फुटकर उद्यम स्थानीय मांग, उत्पाद विविधता और बेहतर बाज़ार स्थिति के कारण छोटे परंतु संगठित व्यापारिक इकाई के रूप में विकसित हो चुके हैं। यह समूह फुटकर क्षेत्र में रोजगार क्षमता की मजबूती का संकेत देता है। समग्र रूप से देखा जाए, तो यह तालिका प्रमाणित करती है कि फुटकर व्यापार न केवल स्व-रोजगार को बढ़ावा देता है, बल्कि परिवार के सदस्यों और स्थानीय युवाओं के लिए भी रोजगार का सतत माध्यम बनकर उभर रहा है, जिससे क्षेत्रीय आर्थिक गतिविधियों में सकारात्मक गति देखी जा सकती है।

निष्कर्ष- रीवा जिले के फुटकर व्यवसाय पर आधारित इस अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से उजागर हुआ कि फुटकर व्यापार स्थानीय अर्थव्यवस्था का एक जीवंत, गतिशील और अत्यंत महत्त्वपूर्ण आधार है। सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों ने सिद्ध किया कि फुटकर क्षेत्र प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जिले के बड़े हिस्से को रोजगार उपलब्ध करा रहा है तथा आर्थिक गतिविधियों को निरंतर गति प्रदान कर रहा है। फुटकर व्यवसाय की व्यापकता, इसकी सामाजिक पहुँच, रोजगार सृजन की क्षमता, महिलाओं एवं कमजोर वर्गों की भागीदारी, तथा स्थानीय बाजार संस्कृति की मजबूती-ये सभी पहलू इसे रीवा जिले के विकास का केंद्रीय स्तंभ बनाते हैं। अध्ययन में यह पाया गया कि अधिकांश लोगों ने बेरोज़गारी के कारण फुटकर व्यापार अपनाया, जो इसे एक सहज, सुगम और त्वरित रोजगार विकल्प के रूप में स्थापित करता है। आय के स्तर से यह भी स्पष्ट हुआ कि यह क्षेत्र निम्न व मध्यम आय वर्ग की आर्थिक स्थिरता में प्रभावी भूमिका निभाता है। इसके अलावा 2-3 व्यक्तियों को रोजगार देने वाले व्यापारों की उच्च संख्या यह दर्शाती है कि यह क्षेत्र छोटे स्तर पर भी सामुदायिक व पारिवारिक रोजगार को बढ़ावा देता है।

हालाँकि, फुटकर व्यवसाय के विस्तार के साथ-साथ चुनौतियाँ भी समान रूप से मौजूद हैं-पूंजी की कमी, प्रतिस्पर्धा में वृद्धि, बाजार व्यवस्थापन की अव्यवस्थित संरचना, आधुनिक तकनीकों में प्रशिक्षण का अभाव तथा नीतिगत जानकारी का सीमित प्रसार। सामाजिक वर्गों के बीच रोजगार अवसरों में अंतर भी एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष के रूप में सामने आया, जो बताता है कि समावेशी आर्थिक विकास हेतु लक्षित हस्तक्षेपों की आवश्यकता है।

समग्र रूप से यह अध्ययन दर्शाता है कि फुटकर व्यवसाय रीवा जिले के आर्थिक विकास में निर्णायक योगदान देता है तथा रोजगार सृजन, सामाजिक गतिशीलता और स्थानीय आर्थिक स्थिरता का मजबूत आधार निर्मित करता है।

सुझाव- अध्ययन के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्नलिखित हैं-

1- वित्तीय सहायता एवं पूंजी उपलब्धता का विस्तार- फुटकर व्यापारियों को बैंकिंग प्रणाली, माइक्रो-फाइनेंस, पीएम-स्वनिधि, मुद्रा लोन जैसी योजनाओं की आसान उपलब्धता सुनिश्चित की जाए। बिना जमानत ऋण की सीमा बढ़ाई जाए, तथा स्थानीय स्तर पर वित्तीय साक्षरता कार्यक्रम चलाए जाएँ।

2- प्रशिक्षण एवं कौशल विकास- डिजिटल भुगतान, ई-कामर्स, ग्राहक प्रबंधन, मार्केटिंग तथा अकाउंटिंग से संबंधित प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए जाएँ। स्थानीय उद्योग केंद्र एवं नगर निगम मिलकर छोटे व्यापारियों के लिए क्षमता-विकास कार्यक्रम चलाएँ।

3- बाजार व्यवस्थापन एवं आधारभूत संरचना सुधार- स्थानीय बाजारों में पार्किंग, स्वच्छता, प्रकाश, सुरक्षा और व्यवस्थित दुकान स्थान जैसी सुविधाओं का विकास किया जाए। अनियोजित बाजारों को पुनर्गठित कर उन्हें नियोजित कम्प्लेक्स या स्टाल संरचना में बदला जाए।

4- महिला उद्यमिता को बढ़ावा- महिलाओं के लिए विशेष रियायती ऋण, प्रशिक्षण शिविर, स्वसहायता समूह आधारित व्यापार माडल को प्रोत्साहित किया जाए।
महिलाओं के लिए सुरक्षित बाजार स्थान एवं विशेष कियोस्क विकसित किए जाएँ।

5- सामाजिक वर्गों में समान अवसर- व्यापारियों को विशेष अनुदान, लोन सब्सिडी और व्यापार विस्तार योजनाओं का प्राथमिकता आधारित लाभ दिया जाए। जातीय विविधता वाले बाजारों में समावेशी व्यापारिक वातावरण विकसित किया जाए।

6- ई-कामर्स और डिजिटल तकनीक का विस्तार- छोटे व्यापारियों को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर लाने के लिए 'लोकल टू ग्लोबल' माडल पर कार्य किया जाए।

7- नीतिगत हस्तक्षेप एवं प्रशासनिक सहयोग- फुटकर व्यापारियों का एक एकी-त डेटा बेस तैयार किया जाए, जिससे योजनाओं का लाभ सही लोगों तक पहुँच सके। नगर निगम और जिला प्रशासन फुटकर बाजारों के लिए दीर्घकालिक विकास नीति बनाए।

8- सामाजिक सुरक्षा एवं बीमा योजनाएँ- छोटे व्यापारियों को प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा, दुर्घटना बीमा, पेंशन योजनाओं से जोड़ने के लिए अभियान चलाया जाए। यदि इन सुझावों को प्रभावी रूप से लागू किया जाए, तो रीवा जिले का फुटकर क्षेत्र न केवल स्थानीय आर्थिक विकास को नई ऊँचाइयों तक पहुँचा सकता है, बल्कि रोजगार सृजन के क्षेत्र में भी एक मजबूत, समावेशी और टिकाऊ माडल के रूप में उभर सकता है।

संदर्भ सूची

1- मध्यप्रदेश शासन- (2022)- जिला आर्थिक एवं सांख्यिकी बुलेटिन, रीवा जिला- आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, भोपाल

2- भारत सरकार, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय- (2021)- एम-एस-एम-ई- वार्षिक रिपोर्ट 2020-21- नई दिल्ली, भारत सरकार प्रकाशन विभाग-

3- नीति आयोग- (2020)- भारत का स्थानीय आर्थिक विकास ढाँचा- नई दिल्ली।

4- Sharma, R& (2021) Urban Retail Sector and Employment Generation in India& Journal of Urban Economics and Development] 12¼3½] 44&57&

4- Chowdhary] P& ¼2020½& Role of Micro&businesses in Local Economic Structure& Indian Journal of Regional Studies] 18¼2½] 66&79&

5- Singh] A& (2019)& Social Dimensions of Retail Trade in Small Cities of Madhya Pradesh& Journal of Social and Economic Research] 7(1)] 22&35&

6- Khan] S& & Verma] R& (2020)& Impact of Digital Payments on Small Retailers& International Review of Commerce and Management] 9¼4½] 101&112&

7- Mishra] D& (2018)& Retail Sector Transformation in Semi&Urban India& Economic Development Review] 6(2)] 48&61&

8- कुमार, वी- (2018)- भारतीय खुदरा व्यापार का आर्थिक विश्लेषण- नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन।

9- गुप्ता, एस- के- (2017)- ग्रामीण एवं शहरी बाजार तंत्र- अर्णव पब्लिकेशन, दिल्ली।

10- Srivastava P (2016)& Small Enterprises and Regional Growth& Oxford University Press

11- राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO)- (2021)- अनौपचारिक क्षेत्र और स्व-रोज़गार रिपोर्ट- https:@www&mospi&gov&in

12- मध्यप्रदेश उद्योग केंद्र, रीवा- (2023)- रीवा जिला औद्योगिक प्रोफ़ाइल& https:@@msme&gov.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

कृषि क्षेत्र में क्रमागत उन्नतिः हाथ के औजार से एग्रीटेक तक

• अर्चना सिन्हा

सारांश- कृषि प्राचीन काल से ही भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्थान बनाए हुए है। भारतीयों के लिए यह मात्र एक व्यवसाय नहीं बल्कि उनके जीवन का आधार है। भारतीय कृषि आज विकास के जिस मोड़ पर खड़ी है वह अकस्मात नहीं हुआ है बल्कि शुरुआती दौर में यह बिल्कुल अविकसित अवस्था में थी यानी यूं कहें यह अपनी शैशवावस्था से गुजरते हुए आज परिपक्वता की इस स्थिति में पहुंची है। इस शोध आलेख में भारतीय कृषि के क्रमिक विकास के विभिन्न अवस्थाओं का विश्लेषण किया गया है जिसमें मानव सभ्यता के विकास के प्रारंभ से (अर्थात जब से मनुष्य का परिचय कृषि एवं उत्पादन कार्य से हुआ) लेकर वर्तमान एग्रीटेक युग तक कृषि की विकास यात्रा को स्पष्ट किया गया है। इस अध्ययन में कृषि विकास के चार महत्वपूर्ण चरणों- कृषि 1.0(कृषि मुख्यतः हाथ के बने औजारों से), कृषि 2.0(कृषि में मशीनों का प्रयोग आरंभ), कृषि 3.0 (हरित क्रांति के साथ खाद्यान्न आत्मनिर्भरता) तथा कृषि 4.0(डिजिटल एवं स्मार्ट कृषि का पदार्पण) के क्रमिक विकास ,उनके प्रभाव , उपलब्धियों चुनौतियों आदि को सम्मिलित किया गया है। यह शोध स्पष्ट करता है कि भारतीय कृषि ने समय के साथ-साथ न केवल उत्पादन तकनीक में परिवर्तन किया है बल्कि सामाजिक-आर्थिक ढांचे में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। प्रारंभिक कृषि क्रांति के दौरान इंसान का परिचय कृषि से हुआ और मनुष्य स्थाई रूप से निवास करने लगा। दूसरी क्रांति में कृषि में मशीनों का प्रयोग प्रारंभ हुआ एवं औद्योगीकरण के फल स्वरुप उत्पादन बढ़ा। क्रांति के तीसरे चरण में कृषि आगतों में परिवर्तन के फलस्वरुप कृषि उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई जिसने हरित क्रांति लाई एवं खाद्यान्न आत्मनिर्भरता दिलाई और आज कृषि क्रांति का चौथा चरण जिसे डिजिटल कृषि कहा जा सकता है सतत विकास एवं तकनीकी नवाचार के द्वारा कृषकों को नित्य नए अवसर प्रदान कर रही है। हालांकि सीमित डिजिटल अवसंरचना,तकनीकी प्रशिक्षण का अभाव ,सीमित संसाधन एवं वितरण असमानता, उच्च लागत जैसी कुछ प्रमुख चुनौतियां इस विकास के मार्ग में बाधक है लेकिन सरकारी नीतियों, डिजिटल इंडिया कार्यक्रमों और किसानों

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, जयप्रकाश महिला कॉलेज छपरा, बिहार

की बढ़ती तकनीकी भागीदारी से यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि भारत आने वाले समय में वैश्विक पटल पर कृषि नवाचार का केंद्र बन सकेगा।

मुख्य शब्द- भारतीय कृषि, क्रमिक विकास, कृषि क्रांति, डिजिटल कृषि, मशीनीकरण, हरित क्रांति, एग्रीटेक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता।

परिचय- भारत में कृषि आज भी लगभग आधी आबादी के लिए आजीविका का मुख्य स्रोत है। यह भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। चाहे रोजगार की दृष्टि से देखा जाए या राष्ट्रीय आय में योगदान के रूप में। कुल जनसंख्या का लगभग 46 प्रतिशत हिस्सा कृषि एवं सहायक गतिविधियों में संलग्न है। देश के कुल जीडीपी में इसका योगदान लगभग 16 प्रतिशत है (FY 2024 के अनुसार)[1]

प्राचीन काल से ही कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती आई है। इसलिए इसे भारतीय अर्थव्यवस्था का रीढ़ भी कहा जाता है। यद्यपि यह क्षेत्र हमेशा अनेकानेक चुनौतियों एवं समस्याओं से जूझता रहा है तदयपि आज भी यह भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार स्तंभ बना हुआ है। भारतीय अर्थव्यवस्था में इसकी महत्ता को स्पष्ट करने के लिए कृषि क्षेत्र में क्रमागत उन्नति का विश्लेषण आवश्यक हो जाता है। इसका विश्लेषण समय, विशेषता,प्रभाव, साधन उपलब्धता, तकनीकी आदि के आधार पर किया जा सकता है जो भारतीय अर्थव्यवस्था में इसकी मजबूत पकड़ को प्रदर्शित करता है। साथ ही यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन कृषि प्रणाली आज की डाटा संचालित प्रणाली में कैसे परिवर्तित हुई है?

कृषि क्षेत्र में क्रमागत उन्नति के विभिन्न चरण-

1. कृषि विकास का प्रथम चरण (कृषि 1.0)- कृषि विकास की यह अवस्था लगभग 10,000 ईसा पूर्व से शुरू हुआ एवं 18वीं शताब्दी तक माना गया है। यह वह दौर था जब मनुष्य शिकार या आखेट करने वाले से स्थाई कृषि की ओर अग्रसर हुआ। अर्थात खानाबदोश जीवन को त्याग कर स्थाई बस्तियों में रहना प्रारंभ किया। इसे प्रथम कृषि क्रांति 1.0 की संज्ञा दी गई। इस अवधि में मनुष्य स्थाई रूप से कृषि कार्य करने की ओर अग्रसर हुआ। उनका परिचय कुछ प्रमुख फसलों जैसे गेहूं, जौ, चना, मसूर आदि से हुआ। साथ ही कुछ प्रमुख पशुओं जैसे गाय,भेड़, बकरी आदि को पालतू बनाया जाने लगा। इस दौरान मनुष्य कृषि कार्य के लिए पत्थर से बने औजार जैसे लकड़ी के हल, हसिया, लाठी जैसे अविकसित उपकरणों का प्रयोग करना प्रारंभ किया एवं इस काल में शारीरिक श्रम की प्रधानता रही। सिंचाई के लिए नदियों के पानी का इस्तेमाल हुआ एवं कृषि कार्य नदियों के किनारे ही प्रारंभ हुआ। धीरे–धीरे कृषि से अतिरेक, जनसंख्या वृद्धि एवं अधिक स्थाई रूप से समाज का विकास प्रारंभ हुआ। इस निर्णायक स्थिति ने कृषि क्षेत्र में प्रारंभिक क्रांति लाई एवं मनुष्य द्वारा भूमि को उत्पादन के लिए प्रयोग करने की क्षमता को रेखांकित किया। इसने आधुनिक कृषि प्रणालियों के लिए एक आधार तैयार किया।

2. कृषि विकास का द्वितीय चरण (कृषि 2.0)- कृषि विकास का द्वितीय चरण 18वीं शताब्दी के बाद प्रारंभ हुआ एवं 20वीं शताब्दी के मध्य तक माना जा सकता है। इस दौरान कृषि के क्षेत्र में आई क्रांति को कृषि 2.0 की संज्ञा दी जाती है। इस अवधि में कृषि में मशीनरी का प्रयोग प्रारंभ हुआ। कृषि विस्तारित होकर हाथ के औजार से निकलकर विभिन्न प्रकार के मशीनरी के प्रयोग पर जा पहुंचा जिससे कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई। इसने औद्योगिक क्रांति को बढ़ावा देने का भी कार्य किया। ट्रैक्टर, थ्रेसर, पंप सेट आदि नई तकनीक का प्रयोग कृषि कार्य में किया जाने लगा। इसके फलस्वरूप श्रम- बल और समय दोनों की बचत हुई एवं कृषि की उन्नत तकनीकी ने कृषि उत्पादन में वृद्धि की। सिंचाई के लिए पूर्णत: मानसून पर आश्रित ना रहकर पंपसेट, कुएं, तालाब, नहरो आदि का प्रयोग सिंचाई के लिए किया जाने लगा। पारंपरिक हल बैल का स्थान ट्रैक्टर ने ले लिया। इससे किसानों का जीवन काफी हद तक सुगम हुआ। उनकी आय में पहले से अधिक वृद्धि हुई लेकिन मशीन पर निर्भरता बढ़ने के कारण उनकी लागत में भी वृद्धि हुई जिसने उनकी आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया। फिर भी यह कहा जा सकता है कि कृषि 2.0 ने कृषि जगत को मशीनों से जोड़ा एवं रासायनिक उर्वरकों ,कीटनाशको, आदि के प्रयोग के साथ ही उन्नत फसल चक्र पद्धति को चिन्हित किया गया जिससे अनाज अतिरेक का उत्पादन प्रारंभ हुआ। फलस्वरुप खाद्यानो का भंडारण आरंभ हुआ, अनाज मंडियों की शुरुआत की गई, कृषि ज्ञान में वृद्धि हुई और कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था का विकास हुआ।

3. कृषि क्रांति का तीसरा चरण (कृषि 3.0)- कृषि क्रांति का तीसरा चरण 20वीं शताब्दी के मध्य में प्रारंभ हुआ। 1960-61 में कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए पहला संगठित प्रयास पायलट परियोजना के रूप में 'गहन कृषि जिला कार्यक्रम' के लिए चुने गए 7 जिलों में किया गया। इसमें मिली सफलता ने सरकार को इसे अन्य जिलों में लागू करने हेतु प्रोत्साहित किया। फलत: अक्टूबर 1965 में इस नीति को 'गहन कृषि कार्यक्रम' के अंतर्गत चुने गए 114 जिलों में लागू किया गया।[2]

इसी समय भारतीय कृषि अनुसंधान केंद्रों द्वारा कुछ प्रमुख फसलों जैसे गेहूं, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि के शंकर (HYV) बीजों का आविष्कार किया गया जिसके फलस्वरुप इन फसलों का प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन संभव हुआ। नई कृषि नीति की सफलता के लिए आवश्यक था कि शंकर बीजों के साथ-साथ सिंचाई की पर्याप्त एवं नियमित व्यवस्था, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशक दवाओं का प्रयोग आवश्यकता अनुसार किया जाए। इसलिए नई कृषि युक्ति को 1966 में एक पैकेज कार्यक्रम के रूप में शुरू किया गया और इसे अधिक उपज देने वाली किस्मो का कार्यक्रम की संज्ञा दी गई। इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में अप्रत्याशित वृद्धि हुई और इसे हरित क्रांति का नाम दिया गया। भारत में इस क्रांति का नेतृत्व डॉक्टर एम. एस. स्वामीनाथन ने किया इसलिए उन्हें हरित क्रांति का जनक भी कहा जाता है।

प्रभाव-

सकारात्मक प्रभाव-

1. इस अवधि में खाद्यान्न मुख्यत: गेहूं के उत्पादन में बहुत तीव्र वृद्धि हुई।
2. भारत खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया।
3. किसानों के आय में वृद्धि हुई।
4. कृषि का आधुनिकीकरण हुआ। फलत: कृषि एवं उद्योग का न सिर्फ अग्रगामी संबंध बल्कि प्रतिगामी संबंध भी मजबूत हुआ।
5. भारतीय कृषि का बड़े पैमाने पर मशीनीकरण (ट्रैक्टर, पंप-सेट, थ्रेसर मशीन इत्यादि का व्यापक प्रयोग) किया गया।

नकारात्मक प्रभाव-

1. यह युक्ति सिर्फ पांच फसलों गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा एवं मक्का के लिए अपनाया गया था, इसलिए अन्य खाद्य जैसे दलहन एवं तिलहन एवं अखाद्य फसल इससे बाहर रह गए।
2. इस क्रांति का प्रभाव कुछ साधन संपन्न क्षेत्र जैसे पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक ही सीमित रहा। अन्य क्षेत्र उपेक्षित रहे इससे क्षेत्रीय असमानता में वृद्धि हुई।
3. रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के अधिक प्रयोग से मृदा और जल प्रदूषण जैसे संकट उत्पन्न हुए।
4. देश में छोटे किसानों को इस क्रांति से विशेष लाभ नहीं हुआ क्योंकि इस युक्ति में अधिक उत्पादन हेतु उर्वरकों एवं सिंचाई पर ज्यादा निवेश करना पड़ता था जो छोटे किसानों की क्षमता से बाहर था। अतएव भारतीय कृषि में पूंजीवादी कृषि का विकास हुआ।
5. आय की असमानता में वृद्धि हुई।

क्योंकि हरित क्रांति के शुरुआती दौर में गेहूं के उत्पादन एवं उत्पादकता में तेजी से वृद्धि हुई इसलिए इस अवधि में हरित क्रांति को गेहूं क्रांति की संज्ञा भी दी गई। परंतु 1980 के दशक में अन्य फसलों का उत्पादन भी पूर्व की तुलना में बेहतर रहा। साथ ही दलहन एवं तिलहन का उत्पादन भी बढ़ा। इसलिए प्रोफेसर सी.एच. हनुमान राव ने 1992 में प्रकाशित अपने लेख में दावा किया कि "हरित क्रांति के आरंभिक वर्षो में विभिन्न फसलों की संवृद्धि में जो असंतुलन पैदा हो गया था वह पिछले कुछ समय में कम हुआ है"।[3] साथ ही 1980 के दशक में नई प्रौद्योगिकी का अन्य फसलों में तथा देश के अन्य हिस्सों में भी विस्तार हुआ इसलिए इस अवधि को प्रोफेसर जी. एस. भल्ला ने "हरित क्रांति की परिपक्वता" की संज्ञा दी है।[4] 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के दस्तावेज में इस अवधि को "व्यापक प्रसार अवधि" कहा गया है।[5] आर्थिक सुधार (1990- 91) की अवधि में कृषि संवृद्धि दर में गिरावट आई। सी.एच.हनुमान राव के अनुसार, 1990-91 के बाद की अवधि में कृषि संवृद्धि दर में गिरावट के मुख्य कारण सार्वजनिक निवेश में गिरावट, अपर्याप्त सिंचाई तथा सिंचाई व्यवस्था में गुणात्मक गिरावट, आगतों का असंतुलित प्रयोग, कमजोर साख प्रणाली आदि रहा। इस प्रकार 1991 के बाद की अवधि

को एक तरह का विभाजक काल माना जा सकता है जिसके दौरान भारतीय कृषि में संवृद्धि जो 1960 के दशक के मध्य से लगातार बढ़ रही थी, अवरुद्ध हो गई।[6]

इस प्रकार कृषि क्रांति का तीसरा चरण हरित क्रांति के रूप में जाना जाता है जिसे हरित क्रांति की आरंभिक अवधि (1962-65 से 1980-83) एवं हरित क्रांति की परिपक्वता अवधि (1980-83 से 1990-93), उदारीकरण के बाद की अवधि (1990-93 से 2003-06) आदि भागों में बांटकर कृषि विकास का अध्ययन किया जाता है। कृषि 3.0 के दौरान उच्च उपज वाली फसल किस्में, विस्तृत सिंचाई तथा खाद्य उत्पाद में वृद्धि हेतु उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ता गया। इस चरण के दौरान बुवाई, कटाई और सिंचाई आदि कार्यों के मशीनीकरण ने रोबोटिक्स के उपयोग सहित कृषि स्वचालन में भविष्य की प्रगति के लिए आधार का निर्माण किया।

4. कृषि क्रांति का चौथा चरण (कृषि 4.0)- कृषि क्रांति का चौथा चरण 21वीं सदी में प्रारंभ हुआ जिसे कृषि 4.0 की संज्ञा दी जा रही है। वर्तमान में तकनीकी प्रगति ने लगभग हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। आज कृषि क्षेत्र भी इस तकनीकी प्रगति से अछूता नहीं है। भारत की कृषि आज एक महत्वपूर्ण निर्णायक मोड़ पर खड़ी है। कृषि में आज तकनीकी का बढ़ता प्रयोग इसे एक नई कृषि क्रांति की ओर ले जा रहा है। पारंपरिक कृषि पद्धतियों में उत्तरोत्तर विकास के साथ आज हम कृषि 4.0 के युग में आ चुके हैं। इस आधुनिक कृषि व्यवस्था में कृषि उत्पादकता बढ़ाने और कृषि में स्थिरता लाने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के डिजिटल तकनीक जैसे-ड्रोन, रिमोट सेंसर, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IOT), ब्लाकचेन, स्मार्ट मशीनरी आदि तकनीक का समावेश किया जा रहा है। इससे किसानों को जलवायु अनुकूल कृषि प्रविधियां अपनाने में सहायता मिल रही है और सतत् कृषि विकास की ओर भारतीय कृषि अग्रसर हो रही है।

कृषि 4.0 के लाभ-

वास्तविक और सुदृढ़ कृषि में मदद- आज विभिन्न तकनीकों जैसे इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी), जीपीएस आदि की मदद से यह जानकारी हासिल कर सकते हैं कि कृषि क्षेत्र में कितनी मात्रा में खाद, उर्वरक, पानी, कीटनाशक आदि की आवश्यकता है और इसकी सहायता से समय पर सही निर्णय ले सकते हैं जिससे उत्पादकता में वृद्धि होगी।

खेतों पर निगरानी- कृषि क्रांति के इस चरण में खेतों पर निगरानी रखने के लिए ड्रोन, सैटेलाइट आदि का प्रयोग किया जा रहा है जिससे फसलों की स्थिति आदि पर यथोचित नजर रखना आसान हुआ है। साथ ही ऑटोमेशन के कारण मानव श्रम पर निर्भरता कम हो रही है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग का प्रयोग- कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग आधारित सॉफ्टवेयर फसलों में होने वाले विभिन्न रोगों की पहचान, बाजार मूल्य का आकलन, फसल चक्र योजना आदि में सहायक हो रहे हैं। साथ ही डिजिटल प्लेटफॉर्म के जरिए कृषक सीधे बाजार से जुड़कर अपने उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि में स्मार्ट उपकरणों और रोबोटिक्स का इस्तेमाल- कृषि क्रांति के इस चौथे चरण में कृषि में स्मार्ट उपकरणों जैसे ऑटोमेटेड ट्रैक्टर, रोबोटिक हार्वेस्टर, स्मार्ट

सिंचाई विधियां आदि के सहयोग से कृषि कार्य में तीव्रता लाने में मदद मिल रही है।

कृषि 4.0 की चुनौतियां- भारत में आज कृषि के डिजिटलीकरण के अपार संभावनाओं के बावजूद कृषि 4.0 की ओर अग्रसर होने के मार्ग में कुछ चुनौतियां एवं समस्याएं हैं–

ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित डिजिटल अवसंरचना- सबसे प्रमुख चुनौती यह है कि आज भी लगभग ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल अवसंरचना सीमित है। ग्रामीण क्षेत्रों में तीव्र इंटरनेट कनेक्टिविटी, पर्याप्त विद्युत आपूर्ति, स्मार्टफोन का अभाव आदि प्रमुख समस्याएं हैं। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी शिक्षा का अभाव होने के कारण इस नवीन तकनीक के प्रयोग में कठिनाइयां आ रही है।

प्रशिक्षण का अभाव- कई संस्थाएं जैसे सहकारी संस्थाएं, स्वयं सहायता समूह आदि डिजिटल तकनीक अपनाने की प्रारंभिक अवस्था में ही है। साथ ही समाज के सभी वर्गों में प्रशिक्षण का अभाव है जिससे नई डिजिटल तकनीक को अपनाना संभव नहीं हो रहा। अत: आवश्यक है कि विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन कर सभी वर्गों जैसे महिला किसान, जनजातीय समुदाय, भूमिहीन, लघु एवं सीमांत किसानों आदि को शामिल किया जाए।

महंगे उपकरण और तकनीक की अपर्याप्तता- आज बाजार में जो स्मार्ट कृषि उपकरण उपलब्ध है वह काफी महंगे हैं और सामान्य किसानों के पहुंच के बाहर हैं। साथ ही इन उपकरणों एवं तकनीक की उपलब्धता भी अपर्याप्त है। ड्रोन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आदि जैसी नई तकनीक अभी भी विकास के दौर में है। अत: क्षेत्रीय एवं ग्रामीण स्तर पर प्रसार सेवाओं को सशक्त बनाना होगा ताकि डिजिटल कृषि को प्रभावी ढंग से बढ़ावा मिले। कृषि 4.0 के समक्ष उपयुक्त चुनौतियों के बावजूद इसे भारत में सफल बनाने हेतु सरकार द्वारा कई कदम उठाए गए हैं। जैसे पीएम किसान, डिजिटल इंडिया, किसान क्रेडिट कार्ड, मृदा स्वास्थ्य कार्ड, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना आदि। डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के तहत ढाई लाख से अधिक गांवों तक हाई स्पीड ब्रॉडबैंड पहुंचाया गया है जो सटीक खेती के लिए आधारशिला प्रदान करता है।[7] इन पहलुओं से डिजिटल कृषि को बढ़ावा मिला है परंतु अभी भी डिजिटल नवाचारों को अपनाने में लंबा रास्ता तय करना बाकी है। इसके लिए कृषकों के मध्य जागरूकता बढ़ाना, डिजिटल क्षमता विकसित करना, वित्तीय संस्थानों तक पहुंच, ग्रामीण अवसंरचना को उन्नत करना और स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप तकनीकी विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय कृषि का 4.0 की ओर अग्रसर होना मात्र एक तकनीकी परिवर्तन नहीं है बल्कि यह संपूर्ण ग्रामीण समुदाय को सुदृढ़ करने, कृषि पद्धतियों को पुनर्परिभाषित करने एवं पूरी मूल्य श्रृंखला में लचीलापन लाने की दिशा में एक समग्र परिवर्तन है। यदि हम प्रतिबद्ध हो जाएं तो भारतीय कृषि नवाचार के क्षेत्र में वैश्विक पटल पर प्रमुख नेतृत्वकर्ता बन सकता है।[8]

निष्कर्ष- स्पष्ट है कि किसी भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए हमेशा अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। भारतीय कृषि ने प्राचीन काल से वर्तमान तक निरंतर प्रगति की है, चाहे वह प्रारंभिक कृषि हो जब इंसान ने हाथ के बने औजारों से कृषि कार्य प्रारंभ किया एवं स्थाई रूप से निवास करना सीखा या वर्तमान कृत्रिम बुद्धिमत्ता और ड्रोन आधारित स्मार्ट कृषि। कृषि क्रांति के प्रारंभिक चरण ने मनुष्य में स्थाई रूप से बस्तियां बनाकर रहने की प्रवृत्ति लाई

जिससे मानव सभ्यता का विकास प्रारंभ हुआ। धीरे–धीरे यह विकसित होते हुए आज डिजिटल कृषि तक पहुंच गई एवं किसानों को भी स्मार्ट किसान के रूप में चित्रित किया। स्पष्ट है कि भारतीय कृषि ने मानव सभ्यता के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई अत: यदि इसे मानव सभ्यता के विकास का आईना कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। कृषि क्रांति के प्रत्येक चरण यानी कृषि 1.0 से लेकर कृषि 4.0 ने उत्पादन पद्धतियों को तो परिवर्तित किया ही साथ ही समाज, अर्थव्यवस्था एवं पर्यावरण पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा। जहां प्रारंभिक कृषि ने स्थायित्व और आजीविका का आधार प्रदान किया वहीं हरित क्रांति (कृषि 3.0) ने खाद्यान्न आज निर्भरता के क्षेत्र में उपलब्धि हासिल की। वर्तमान में डिजिटल तकनीक, आईओटी, सेंसर, ए.आइ आधारित कृषि 4.0 सतत् विकास और पर्यावरणीय संवेदनशील कृषि की ओर अग्रसर है। हालांकि कुछ चुनौतियां जैसे सीमित डिजिटल अवसंरचना, प्रशिक्षण का अभाव, बढ़ती तकनीकी लागत अभी भी विद्यमान है लेकिन सरकारी नीतियों एवं स्वयं किसने की बढ़ती जागरूकता ने भारतीय कृषि को नवाचार के एक नए युग मे लाकर खड़ा कर दिया है। यदि तकनीकी प्रगति को सामाजिक समावेशन एवं पर्यावरणीय संतुलन के साथ जोड़ दिया जाए तो कृषि 4.0 न केवल उत्पादकता में वृद्धि करेगी बल्कि भारत के ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त एवं समृद्ध बनाकर आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना को भी साकार करेगी।

संदर्भ सूची-

1- Ministry of statistics and program implementation [(MOSPI)]https: @@pib-gov-in@press release.
2- भारतीय अर्थव्यवस्था– मिश्रा एवं पूरी, पृष्ठ संख्या– 312.
3- सी.एच हनुमान राव– एग्रीकल्चर पॉलिसी एंड परफॉर्मेंस इन विमल जालान (ed) द इंडियन इकोनामी प्रॉब्लम्स एंड प्रोस्पेक्ट्स (न्यू दिल्ली 1992) पेज 121.
4- जीएस भला और गुरमेल सिंह– "इकोनामिक लिबरलाइजेशन एंड इंडियन एग्रीकल्चर"
5- इकोनामिक एंड पॉलीटिकल वीकली दिसंबर 26 ,2009.
6- गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, 11जी फाइव ईयर प्लान 2007–12 (दिल्ली 2008) टेबल 1.1 पेज 4.
7- भारतीय अर्थव्यवस्था– मिश्रा एवं पूरी (24 वां संस्करण 2012)–पृष्ठ संख्या 316
8- डॉ. नीलम पटेल एवं परिमल बनाफर– "एग्रीटेक क्रांति की ओर" कुरुक्षेत्र, अगस्त 2025

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

महामना मालवीय तथा राष्ट्रीय चेतना की अन्तर्दृष्टि

• शशिकांत पांडेय

सारांश- मदन मोहन मालवीय पक्के राष्ट्रवादी तथा देशभक्त थे। उन्होंने जीवन भर यही प्रयास किया कि राष्ट्र का सम्मान तथा गौरव बढ़े। वे स्वतंत्र भारत के पक्षधर थे। आधुनिक शिक्षा तथा आधुनिक विचारों के माध्यम से भारत की आजादी प्राप्त करना चाहते थे। उनके विचार में भारत जब तक पुरातन की स्थिति से नहीं निकलेगा तब तक वह प्रगति की तरफ नहीं बढ़ सकेगा।

मुख्य शब्द- स्वतंत्रता, समाजसेवा, पत्रकारिता, शिक्षा, धर्म।

मदन मोहन मालवीय भारत के ऐसे अग्रणी नेताओं में थे जिनका जनजीवन में योगदान असाधारण था। उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। उन्होंने एक राजनीतिक, समाज सुधारक, शिक्षाविद्, पत्रकार, धर्मपरायण व्यक्ति तथा स्वतंत्रता सेनानी के रूप में भारतीय समाज तथा राष्ट्र को अपनी अमूल्य सेवायें दी।[1]

मदन मोहन मालवीय का जीवन एक सतत् कर्मशील का जीवन था। उन्होंने ब्राह्मण परिवार की परम्परा के विचार एवं आदर्श अध्यापक के रूप में अपना व्यावसायिक जीवन प्रारंभ किया परन्तु शीघ्र ही एक वकील के रूप में प्रतिष्ठित हो गये और ख्याति प्राप्त की।[2] वे प्रारम्भ से ही सच्चाई के पक्षधर थे और राष्ट्रप्रेम से अभिभूत थे। मदन मोहन मालवीय जी ने अपने चिंतन से समाज के विविध पक्षों का ध्यान आकृष्ट कर एक नया पक्ष प्रस्तुत किया जो आज भी महत्व रखता है।

मदन मोहन मालवीय जी राजनीतिक दशा की ओर हमेशा सोचते रहते थे। भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद को कई बार सुशोभित किया। राजधानी दिल्ली के साथ उनका गहरा संबंध था अपितु वर्तमान दिल्ली का उन्हें निर्माता भी कहा जाता है।[3]

स्वतंत्रता आंदोलन के अग्रणी नेता के रूप में मालवीय जी का प्रमुख स्थान था। उनका सम्पूर्ण जीवन एक सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता का जीवन था। मालवीय जी का जन्म 25 दिसम्बर, 1861 ईरु को इलाहाबाद में हुआ था। उस समय भारत में अंग्रेजों का विरोध करने का सिलसिला अपने शिखर पर नहीं पहुँचा था किन्तु मालवीय जी ने अपने विचारों द्वारा भारतीय आंदोलनों को एक नयी दिशा दी जिस पर ही आगे बढ़कर भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति करता है।[4]

• सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, गुरू घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़

समाज सेवा के विषय में मदन मोहन मालवीय का विचार था कि अपनी इच्छा से बिना किसी प्रकार के बंधन का स्वार्थ के, दीन दुखियों की सेवा करना, उससे परे क्या यज्ञ है, क्या तप है, क्या दान है, क्या सुख है। मेरे विचार में परोपकार का सुख प्रत्येक प्राणी को अपने अनुभव से ही प्राप्त हो सकता है।5 वस्तुत: सेवा धर्म के सुख की व्याख्या अवर्णनीय है। मालवीय जी जीवन भर देश और समाज के लिए त्याग करते हुए भारत के नव-निर्माण में महती भूमिका अदा की।[6]

मालवीय जी के विषय में अपने मौलिक चिंतन तथा दर्शन के अनुरूप धार्मिक विचारों का समर्थन किया तथा अनेक रूढ़िगत मान्यताओं का खंडन किया। धर्म की बातों से हटकर कुछ भी करना उनकी नजर में धर्म के मामले में दखल देना था।[7] इस दृष्टि से उनका प्रत्येक कार्य प्रत्येक विचार सभी धर्म के ही उपादान हैं, जिस व्यक्ति के लिए धर्म का स्वरूप इतना व्यापक हो कि उसके सम्पूर्ण जीवन को आच्छादित कर दे, उसके धर्म से संबंधित विचार नि:संदेह अत्यंत व्यापक और गहन चिंतन से परिपूर्ण होंगे। वर्तमान समय में जबकि धर्म ने व्यक्ति के जीवन, राजनीति, समाज सभी को प्रभावित किया है, मालवीय जी के विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्रासंगिक होते हैं।[8]

आर्थिक शोषण और असंतोष के कारण ही सर्व प्रथम अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध आवाज उठायी गयी। मदन मोहन मालवीय उन स्वतंत्रता संग्राम के आरंभिक उपेक्षापूर्ण नीति की निन्दा की और स्वराज्य की दिशा में कदम बढ़ाया।[9] मालवीय जी ने निर्धन किसान वर्ग की आर्थिक दयनीय स्थिति की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करते हुये 25-30 प्रतिशत तक मालगुजारी घटाने की माँग की और सिंचाई व्यवस्था में विस्तार करने की दिशा में सरकार को अधिक प्रयास करने के लिए प्रेरित किया।[10] उन्होंने किसानों के हितों की रक्षा के लिए ऋण की व्यवस्था तथा न्यूनतम ब्याज दर निर्धारण एवं नियंत्रण पर भी बल दिया क्योंकि उन्हें यह बहुत पहले अनुभव हो गया था कि हमारी मातृभूमि भारत में कोई कमी नहीं है।[11]

मालवीय जी का मानना था कि हमारी निर्धनता ही हमारे जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है और इस निर्धनता का उत्तरदायित्व हम पर ही है। शिक्षा जगत् में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय मालवीय जी के प्रयास का ही फल है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के स्थापना के लिए मालवीय जी भिखारी तक भी बन गये।[12] एक आदर्श अध्यापक होने के नाते शिक्षा क्षेत्र की समस्याओं से वे परिचित थे। इन कमियों तथा समस्याओं को दूर करने हेतु उन्होंने अथक प्रयास भी किया। शिक्षा के क्षेत्र में मालवीय जी ने पराधीन भारत में जो कार्य किया वह विश्व के इतिहास में एक अद्‌भुत घटना है। उनका यह विश्वास था कि राष्ट्रीय चरित्र के लिए आने वाली पीढ़ी को शिक्षा की उत्मोत्तम व्यवस्था प्रदान की जानी चाहिये और राष्ट्र के विविध धर्मावलम्बियों में राष्ट्रीयता तथा देशभक्ति की भावना शिक्षा व्यवस्था द्वारा विकसित की जानी चाहिए। मालवीय जी का शैक्षिक दृष्टिकोण बहुत ही विस्तृत था।[13]

कर्तव्यनिष्ठा मालवीय जी के जीवन दर्शन का दूसरा सूत्र था। वे अपने कर्त्तव्य का पालन पूर्ण नियमितता के साथ करते थे। वह कर्त्तव्य चाहे परिवार के प्रति देश के प्रति, धर्म के प्रति, शिक्षा के प्रति, समाज के प्रति हो। उन्होंने अपने सम्पूर्ण कर्त्तव्यों का श्रेष्ठता

से संपादन किया। आत्मविश्वास भी उनके जीवन दर्शन का एक रूप था। मालवीय जी का सम्पूर्ण जीवन दर्शन उनके श्रेष्ठ विचारों को कार्य रूप में परिणत करने का सतत् प्रयास है। उन्होंने जो भी विचार व्यक्त किया उनका दृढ़ता से पालन किया।[14]

मालवीय जी केवल समाज सुधारक, देशभक्त, सफल वकील तथा धर्म सुधारक ही नहीं थे बल्कि वह एक सफल पत्रकार और संपादक भी थे। उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में उतनी ही प्रसिद्धि अर्जित की जितनी अन्य कार्यों में। उनका चिंतन बहुमुखी प्रतिभा वाला था। उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। कांग्रेस के मंच से मालवीय जी का पहला भाषण शुरू हुआ। मंच पर कालाकांकर (प्रतापगढ़) के राजा रामपाल सिंह भी उपस्थित थे जो इनके भाषण से अत्यंत प्रभावित हुये और राजा साहब ने अपने पत्र 'हिन्दुस्तान' नामक दैनिक समाचार पत्र का संपादन इनको दे दिया। मालवीय जी लगभग ढाई वर्ष तक हिन्दी के 'हिन्दुस्तान' पत्र का कुशलता से संपादन किया। मालवीय जी के दिशा निर्देश से तथा उनकी कुशल लेखनी से 'हिन्दुस्तान' पत्र चमक उठा।[15]

यद्यपि हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं पर मालवीय जी की असाधारण पकड़ थी, किन्तु उन्होंने महता हमेशा हिन्दी को ही दिया। मालवीय जी ने न केवल हिन्दी पत्रकारिता पर अपनी अमिट छाप छोड़ी बल्कि भारतीय पत्रकारिता उनके योगदान की हमेशा ऋणी रहेगी।

निष्कर्ष- काँग्रेस के निर्माताओं में विख्यात मालवीय जी ने उसके द्वितीय अधिवेशन (कलकत्ता, 1886) से स्वराज्य के लिए कठोर तप किया। एनी बेसेंट ने कहा था कि मालवीय जी भारतीय एकता की मूर्त्ति हैं। वह चार बार कांग्रेस के सभापति निर्वाचित हुए–लाहौर 1909, दिल्ली 1918 और 1931 में तथा कलकत्ता 1933 में, फैजपुर काँग्रेस 1936 में उन्होंने भारत की पराधीनता की व्यथा को व्यक्त किया। असहयोग आंदोलन के चतुर्सूत्री कार्यक्रम में शिक्षा संस्थाओं के बहिष्कार का मालवीय जी ने विरोध किया। पेशावर से डिब्रूगढ़ तक भ्रमण कर उन्होंने राष्ट्रीय चेतना को जागृत किया और कुख्यात धारा 144 का उल्लंघन भी किया।

1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन में उनकी गिरफ्तारी राष्ट्रीय यज्ञ की पूर्णाहुति मानी गई। सैद्धांतिक मतभेद के कारण हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रिंस ऑफ वेल्स का स्वागत और कांग्रेस स्वराज पार्टी के समकक्ष कांग्रेस स्वतंत्र दल व रैमजे मैकडॉनल्ड ने साम्प्रदायिक निर्णय पर, जिसकी स्वीकृति को मालवीय जी ने राष्ट्रीय आत्महत्या मानी। इस प्रकार कांग्रेस की अस्वीकार नीति के कारण निर्णय विरोधी सम्मेलन और राष्ट्रीय कांग्रेस दल का पुनः संगठन करने जैसे उनके कांग्रेस विरोध के उदाहरण भी इतिहास में उल्लेखनीय हैं। 'सत्यमेव जयते' को भारतीय उद्घोष वाक्य स्वीकार कराया जो उनकी राष्ट्रवाद की बड़ी विरासत बनी। सत्य, राष्ट्रवाद का आधार बना और ऐसे विचारवान व्यक्ति भारत रत्न से सम्मानित हुए जिन्होंने मूल्यपरक राजनीति में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया चूँकि उनका राष्ट्रवाद सत्य, मूल्यपरक शिक्षा और आत्म चेतना के आधार पर दिया गया राष्ट्रीय आह्वान था।

संदर्भ सूची-

1. सुनीत व्यास-मदन मोहन मालवीय, प्रगति प्रेस, इलाहाबाद, 1964, पृ. 37
2. ईश्वर प्रसाद वर्मा-महामना मालवीय, साहित्य केन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, 1978, पृ. 21
3. वही, पृ. 22
4. डॉ. राधाकृष्ण-हिन्दू धर्म और समाज, संपादक ईश्वर प्रसाद वर्मा, किताब घर, दिल्ली, 1987, पृ. 54
5. वही, पृ. 55
6. ईश्वर प्रसाद वर्मा-मालवीय जी के सपनों का भारत, प्रमोद साहित्य सदन, दिल्ली, 1980, पृ. 23
7. वही, पृ. 24
8. वही, पृ. 25
9. रामगोपाल-भारतीय राजनीति, विक्टोरिया से नेहरू तक, ज्ञान मंडल, काशी, 2011, पृ. 118
10. वही, पृ. 120
11. वही, पृ. 121
12. फतहचन्द शर्मा आराधक-युग पुरुष मालवीय, सस्ता साहित्य भंडार, दिल्ली, 1973, पृ. 84
13. वही, पृ. 85
14. ब्रज मोहन व्यास-महामना मालवीय, साधना सदन, इलाहाबाद, 1964, पृ. 73
15. वही, पृ. 79

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

प्राथमिक स्तर के छात्रों के अधिगम स्तर पर NEP–2020 अंतर्गत बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान (FLN) कार्यक्रम का एक अध्ययन

• धीरज कुमार नामदेव
•• पंकज नाथ मिश्रा

सारांश- शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। प्राथमिक शिक्षा को सुदृढ़ करने हेतु राष्ट्रीय नीति 2020 अंतर्गत FLN कार्यक्रम (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान) एक महत्वाकांक्षी योजना है। बुनियादी साक्षरता के महत्वपूर्ण लक्ष्यों में से एक है 'समक्ष के साथ पढ़ना एवं लेख'। बच्चा जब किसी पाठ को पढ़कर उसका अर्थ समझने लगे तब माना जाता है कि यह समझ के साथ पढ़ रहा है। निपुण भारत अभियान अंतर्गत कक्षा 1, 2, 3 एवं 4 के बच्चों के अधिगम प्रतिफलों को प्राप्त करने के लिए राज्य में FLN कार्यक्रम मिशन अंकुर के नाम से संचालित किया जा रहा है। बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान कार्यक्रम अंतर्गत लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु शिक्षकों को समय-समय पर प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। ताकि उनकी अकादमिक क्षमता में वृद्धि हो सके। क्योंकि शिक्षकों की अकादमिक क्षमता में वृद्धि करके ही वृहत्तर लक्ष्य की प्राप्ति संभव है। वर्तमान परिदृश्य में FLN कार्यक्रम छात्रों के अधिगम स्तर एवं शिक्षकों के

मुख्य शब्द- निपुण भारत अभियान, FLN, वृहत्तर लक्ष्य, अधिगम प्रतिफल

प्रस्तावना- किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी शिक्षा की दिशा एवं दशा के द्वारा निर्धारित होती है। देश की शिक्षा द्वारा उच्च बौद्धिक स्तर के मानव संसाधन तैयार हो सकते है। उसके लिए आवश्यक है कि प्राथमिक शिक्षा से उच्च शिक्षा तक का शैक्षणिक स्तर उच्च कोटि का हो जो बालक की सार्वभौमिक पहुंच को सुनिश्चित करता हो। बुनियादी शिक्षा को सशक्त करने हेतु समय–समय पर शासन स्तर से बेहतर प्रयास किया जा रहा है।

प्रारंभिक कक्षा में छात्रों की शैक्षिक कमजोरी सार्वभौमिक चिन्ता का कारण रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में निपुण भारत अभियान अंतर्गत बच्चों की प्राथमिक शिक्षा

• शोध छात्र, शिक्षाशास्त्र, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
•• प्राध्यापक (शिक्षाशास्त्र), शासकीय शिक्षक, शिक्षा महाविद्यालय रीवा

की नींव मजबूत करने की बात की गई है जिसके अंतर्गत 2025 तक प्राथमिक स्तर की कक्षा में बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान (FLN- Foundation Literacy and Numeracy) पर सार्वभौमिक पहुंच का निर्धारण करना है। 2025 तक प्राथमिक स्तर के सभी बच्चों को पढ़ने, लिखने और संख्या ज्ञान में दक्षता प्रदान करना है। गतिविधि आधारित शिक्षण, गुणवत्तापूर्ण शिक्षण अधिगम सामग्री की उपलब्धता, कक्षावार और विशयवार पाठ्यक्रम के साथ तालमेल, शिक्षकों और प्राधानाध्यापकों के अकादमिक क्षमता का निर्माण, शिक्षक–अभिभावक और समुदाय की सहभगिता आदि को FLN के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शमिल किया है।

FLN कार्यक्रम भारत के समस्त राज्यों में 2021 से संचालित है। म.प्र. में मिशन अंकुर के नाम से (FLN) कार्यक्रम का संचालन किया जा रहा है। (FLN)के वृहत्तर लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु समय–समय पर शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित हो रहे है। ताकि शिक्षकों को कक्षा–शिक्षण प्रक्रिया में सहजता एवं सुगमता हो सके और प्रभावी शिक्षण प्रक्रिया से अधिगम प्रतिफल प्राप्त हो सके। विगत 4 वर्षो से कक्षा–1 से 4 तक छात्रों को इस कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।

चूँकि FLN कार्यक्रम निपुण भारत अभियान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और वर्तमान में संचालित है तो यह एक रोचक विषय बन जाता है। इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन की स्थिति को जानने एवं प्रशिक्षण उपरांत शिक्षकों की अकादमिक क्षमता की स्थिति को जानने हेतु शोधकर्ता को इस विषय में शोध की आवश्यकता महसूस हुई। इस शोध के माध्यम से यह जानना भी की (FLN) कार्यक्रम अधिगम प्रतिफल हेतु कितना फलीभूत हुआ।

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण- FLN & Foundation Literacy and Numeracy (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान)अधिगम स्तर– सीखने की प्रक्रिया में छात्र किस स्तर पर है।

शोध की आवश्यकता- शैक्षिक जगत में शिक्षकों की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। शिक्षक ही किसी भी शैक्षिक योजना को फलीभूत करने में महत्वपूर्ण घटक के रूप में कार्य करते है। FLN जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम को कक्षा तक कुशल पूर्वक संप्रेषित करने हेतु शिक्षकों का प्रशिक्षित होना अति आवश्यक है। जिसके द्वारा शिक्षण कार्य को सहज एवं बोधगम्य बनाने हेतु शिक्षकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना आवश्यक है।

FLN प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरांत विद्यालयीन छात्रों के अधिगम स्तर में अपेक्षानुरूप परिवर्तन शिक्षकों के द्वारा किया जा रहा है या नहीं यह जानना नितांत आवश्यक है। छात्रों में बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान में उचित वृद्धि हो रही है या नहीं। इसके लिए शोधार्थी द्वारा इस समस्या का चयन किया गया है।

शोध का महत्व- प्रत्येक शोध कार्य का अपना महत्व होता है। FLN प्रशिक्षण कार्यक्रम में अधिकांश शिक्षक सतत् प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है। इसलिये शोध कार्य का महत्व बढ़ जाता है और निम्नलिखित जानकारी प्राप्त हो सकेगी–

1. शिक्षकों के शिक्षण कौशल एवं अकादमिक क्षमता में वृद्धि की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

2. छात्रों के अधिगम स्तर की जानकारी हो सकेगी।
3. पाठ्यक्रम संबंधी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
4. शिक्षक छात्र एवं समुदाय की सहभागिता की स्थिति की जानकारी हो सकेगी।
5. इस शोध कार्य में निम्नलिखित प्रमुख अकादमिक क्षमता में वृद्धि का अध्ययन करना।

शोध उद्देश्य- अनुसंधान में पूर्व से ही उद्देश्य निहित होते है, परंतु उद्देश्यों की व्यापकता को अध्ययन की दृष्टि से बिन्दुवार पूर्व निर्धारित करना आवश्यक होता है। इस शोध कार्य में निम्न लिखित प्रमुख उद्देश्य निर्धारित है- शिक्षकों में FLN (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान) की जानकारी का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना- "परिकल्पना किसी सिद्धांत का वह रूप है जिसे एक परीक्षण योग्य तर्क साध्य के रूप में लिखते है और जिसकी स्पष्ट रूप में प्रदत्तों के आधार पर या प्रयोगात्मक निरीक्षणों के आधार पर पुष्टि की जा सकती है।" प्रस्तुत शोध कार्य में शोधकर्ता ने अपने अनुभव, अध्ययन एवं पूर्ववर्ती शोध कार्य के अध्ययन उपरांत चयनित विषय को दृष्टिगत रखते हुए निम्नांकित परिकल्पनाओं को निरूपित किया है- शिक्षकों में FLN (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान)की जानकारी का स्तर उच्च है।

शोध का परिसीमन-

भौगोलिक परिसीमन- प्रस्तुत शोध कार्य हेतु शोधार्थी ने रीवा जिले के रीवा विकास खंड की परिसीमा तक शोध क्षेत्र को परिसीमित किया गया है। तथा इसी परिसीमा के अंदर शासकीय प्राथमिक विद्यालयों को लिया गया है।

विषय वस्तु का परिसीमन- प्रस्तुत शोध कार्य निष्पादन के लिए अनुसंधानकर्ता ने शासकीय प्राथमिक विद्यालय के कक्षा- 3 एवं 4 के छात्रों, शिक्षकों (FLN प्रशिक्षण प्राप्त) संस्था प्रमुखों FLN प्रशिक्षण प्रदान करने वाले मास्टर ट्रेनर एवं छात्रों के अभिभावकों को विषय-वस्तु परिसीमन के अंतर्गत चयनित किया है।

शोध विधि- प्रस्तुत शोध समस्या "प्राथमिक स्तर के छात्रों के अधिगम स्तर पर बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान FLN के प्रभाव का अध्ययन" में चरों की प्रकृति के सापेक्ष सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

शोध उपकरण- शोध उपकरण के द्वारा आंकड़ों का संकलन, विश्लेषण एवं तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है। शोध उपकरण समस्या एवं चरों की प्रकृति के अनुरूप निर्धारित हेाते है। प्रस्तुत शोध समस्या में तथ्यों की सटीकता एवं शुद्धता हेतु निम्नलिखित उपकरणों का चयन किया गया है-

- संस्था प्रमुख प्रश्नावली-
- शिक्षक प्रश्नावली
- मास्टर ट्रेनर हेतु प्रश्नावली
- अभिभावकों हेतु प्रश्नावली
- छात्रों हेतु अधिगत उपलब्धि-पत्रक।

न्यादर्श- यह शैक्षिक अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण अंग होता है। एक बड़े समूह से छोटे समूह के चयन की प्रक्रिया न्यादर्श कहलाती है। बड़े समूह को 'समग्र' एवं छोटे समूह को

'न्यादर्श' कहते है प्रस्तुत शोध कार्य हेतु अनुसंधानकर्ता ने यादृछिक न्यादर्श विधि (Random Sampling) के द्वारा निम्नलिखित न्यादर्श का चयन किया है–

कुल विद्यालय	संस्था प्रमुख	FLN पढ़ाने वाले शिक्षक	मास्टर ट्रेनर	छात्रों की संख्या	अभिभावक
60	60	60	30	300	100

पूर्ववर्ती शोध कार्यो का संक्षिप्त वर्णन-

शोध समस्या से संबंधित साहित्य से तात्पर्य उन सभी पुस्तकों, पत्र पत्रिकाओं एवं अभिलेखों आदि से है जिनके अध्ययन से शोधकर्ता को शोधकार्य का क्षेत्र समझने में तथा उससे संबंधित समस्या का चयन करने, परिकल्पना निर्माण एवं शोध की रूपरेखा तैयार करने में सहायता मिलती है इस संबंध में शोधार्थी द्वारा शोध समस्या से संबंधित पूर्ववर्ती शोध कार्यो का अध्ययन किया गया, जिनका संक्षिप्त विवरण अग्रलिखित है–

शोध शीर्षक-

"सीधी जिले के रामपुर नैकिन विकासखण्ड में माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों में नई शिक्षा नीति 2020 की जागरूकता का अध्ययन।"

शोधार्थी का नाम- सिंह, अवधशरण एम.एड. प्रशिक्षणार्थी शा. शिक्षा महाविद्यालय रीवा म.प्र.।

शोध उद्देश्य-

शोध क्षेत्र के शिक्षकों में नई शिक्षा नीति 2020 की जानकारी का अध्ययन करना।

शोध क्षेत्र के शिक्षकों में नई शिक्षा नीति 2020 की जागरूकता से साक्षरता एवं संख्यात्मकता के ज्ञान को बच्चों के अंतर्गत विकसित ज्ञान का अध्ययन करना।

निष्कर्ष- शोध क्षेत्र के शिक्षकों में नई शिक्षा नीति 2020 की जानकारी है।

शोध क्षेत्र के शिक्षकों में नई शिक्षा नीति 2020 की जागरूकता से साक्षरता एवं संख्यात्मकता के ज्ञान को बच्चों के अंतर्गत विकसित किया जा रहा है।

आंकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या-

सारणी क्र.-01

क्र0	जानकारी संकलन के स्त्रोत	न्यादर्श की संख्या	शिक्षकों में FLN (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या) के लक्ष्य एवं उद्देश्य के संबंध में, जानकारी के संबंध में प्रतिक्रियाओं का अध्ययन					
			पर्याप्त		आंशिक		निम्न	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	शिक्षक	60	55	91.7	5	8.3	–	–
2	मास्टर ट्रेनर	30	25	83.3	5	16.7	–	–

विश्लेषण एवं व्याख्या-

उपरोक्त तालिका क्र.01 के अनुसार शिक्षकों में FLN के लक्ष्य एवं उद्देश्य के संबंध में जानकारी हेतु शिक्षकों की प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया गया, जिसमें तथ्यों

की जानकारी शोधार्थी द्वारा संदर्भित न्यादर्श के शिक्षकों द्वारा प्राप्त कर उससे विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषित तथ्यों के आधार पर 91.7 प्रतिशत शिक्षकों में FLN के लक्ष्य एवं उद्देश्य के संबंध में जानकारी पर्याप्त है जबकि 8.3 प्रतिशत शिक्षकों को आंशिक जानकारी है। तथा 83.3 प्रतिशत मास्टर ट्रेनर्स के मतानुसार शिक्षकों में FLN के लक्ष्य एवं उद्देश्य के संबंध में जानकारी पर्याप्त है जबकि 16.7 प्रतिशत मास्टर ट्रेनर्स के मतानुसार शिक्षकों को आंशिक जानकारी है।

उपरोक्त विश्लेषित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि शोध क्षेत्र के न्यादर्श में चयनित शिक्षकों में FLN के लक्ष्य एवं उद्देश्य की जानकारी पर्याप्त है तथा उच्च स्तर की है।

रेखा चित्र क्रमांक- 01

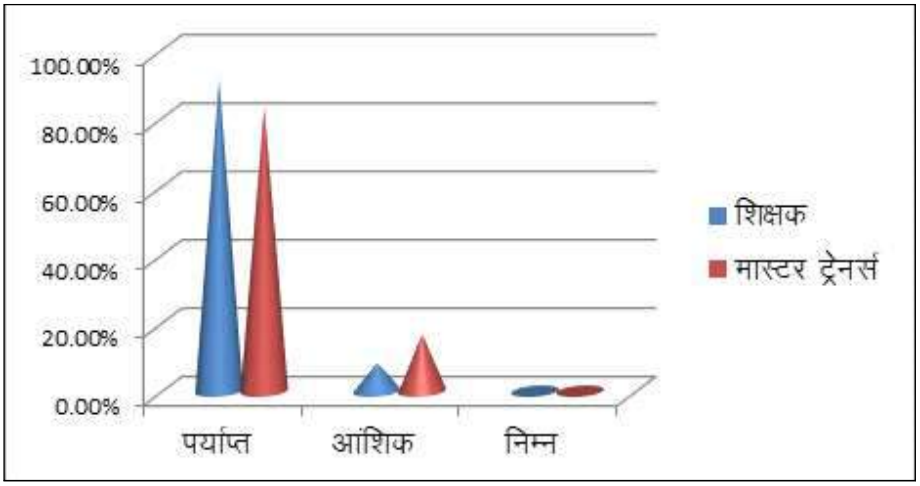

सारणी क्र0-2

क्र0	जानकारी संकलन के स्त्रोत	न्यादर्श की संख्या	शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी की स्थिति का अध्ययन					
			उच्च		सामान्य		निम्न	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	शिक्षक	60	49	81.7	6	10	5	8.3
2	मास्टर ट्रेनर	30	22	73.3	8	26.7	–	–

विश्लेषण एवं व्याख्या-

उपरोक्त तालिका क्र.2 के अनुसार शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी हेतु शिक्षकों की प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया गया जिसमें 81.7 प्रतिशत शिक्षकों में जानकारी का स्तर उच्च है तथा 10 प्रतिशत शिक्षकों में जानकारी का स्तर सामान्य एवं 8.3 प्रतिशत शिक्षकों में जानकारी का स्तर निम्न है। जबकि 73.3 प्रतिशत मास्टर ट्रेनर्स के मतानुसार शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी का स्तर उच्च है। तथा 26.7 प्रतिशत के मतानुसार शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी सामान्य है।

उपरोक्त विश्लेषित तथ्यों से स्पष्ट है कि शोध क्षेत्र के न्यादर्श में चयनित शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी उच्च स्तरीय है।

रेखा चित्र क्रमांक- 02

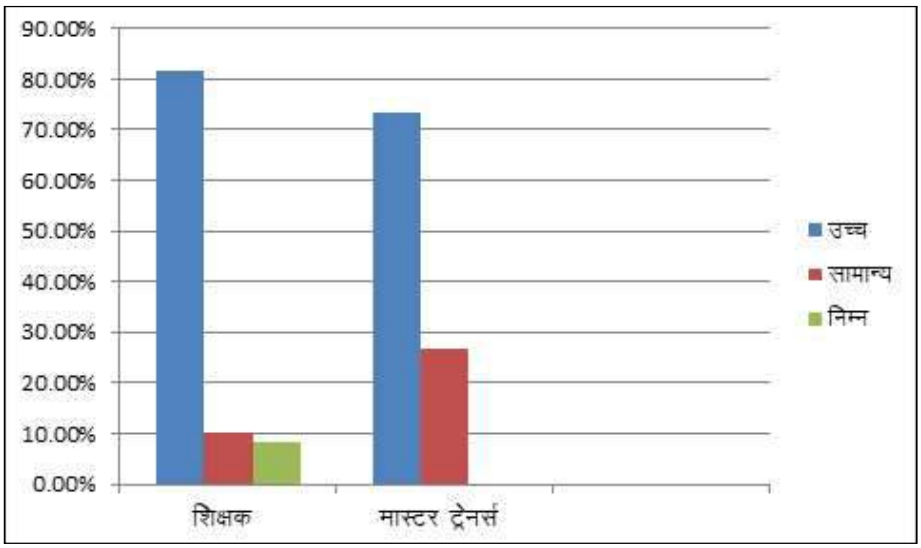

सारणी क्र0-3

क्र0	जानकारी संकलन के स्त्रोत	न्यादर्श की संख्या	शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस एवं उनके घटक संबंधी जानकारी का अध्ययन					
			उच्च		सामान्य		निम्न	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	शिक्षक	60	51	85	5	8.3	4	6.7
2	मास्टर ट्रेनर	30	24	80	6	20	-	-

विश्लेषण एवं व्याख्या- उपरोक्त तालिका क्र.3 के अनुसार शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस एवं उनके घटक संबंधी जानकारी हेतु शिक्षकों की प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया गया जिसमें 85 प्रतिशत शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस एवं उनके घटक की जानकारी का स्तर उच्च है तथा 8.3 प्रतिशत शिक्षकों में जानकारी का स्तर सामान्य है जबकि 6.7 प्रतिशत शिक्षकों में जानकारी का स्तर निम्न है। जबकि 80 प्रतिशत मास्टर ट्रेनर्स का मत है कि शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस की जानकारी का स्तर उच्च है तथा 20 प्रतिशत मास्टर ट्रेनर्स के मतानुसार शिक्षकों में जानकारी का स्तर सामान्य है।

उपरोक्त विश्लेषित तथ्यानुसार शोध क्षेत्र के न्यादर्श में चयनित शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस एवं उनके घटक संबंधी जानकारी का स्तर उच्च है।

रेखा चित्र क्रमांक- 03

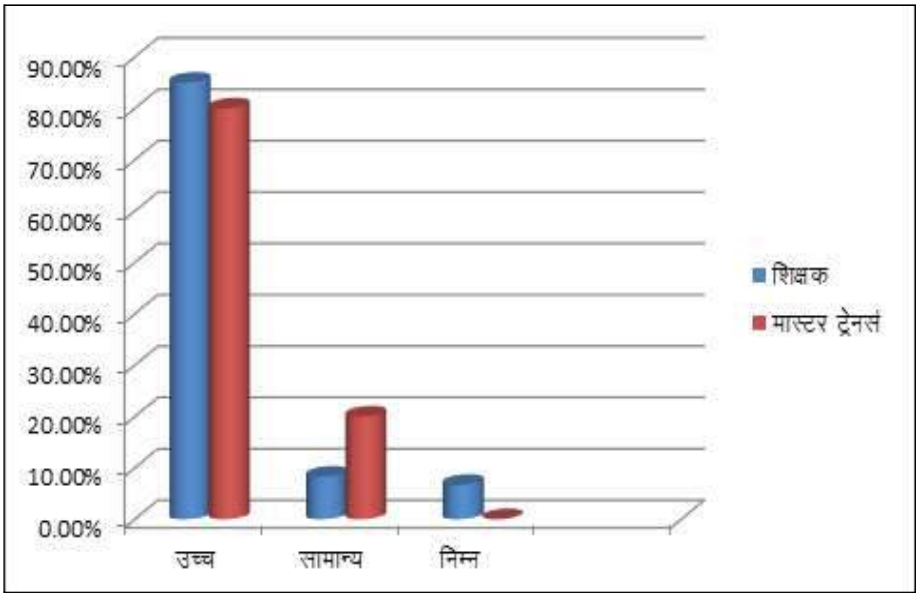

परिकल्पना का सत्यापन- "शिक्षकों में FLN(बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान) की जानकारी का स्तर उच्च है।" उक्त परिकल्पना के संदर्भ में तालिका क्र.1, 2 एवं 3 के संगत तथ्यों के विश्लेषण उपरांत की गई व्याख्या से स्पष्ट है कि शिक्षकों में FLN (बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान) की जानकारी उच्च स्तरीय है। अत: शोधार्थी की उक्त परिकल्पना सत्यापित होती है।

निष्कर्ष-

प्राथमिक स्तर के शिक्षकों में FLN के लक्ष्य एवं उद्देश्य की जानकारी पर्याप्त है।

शिक्षकों में स्कैफोल्डिंग की जानकारी उच्च स्तरीय है।

शिक्षकों में स्कूल रेडीनेस एवं उसके घटक संबंधी जानकारी का स्तर उच्च है।

सुझाव- बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान FLN की गुणवत्ता हेतु विद्यालयों में संसाधनों की वृद्धि करनी चाहिए। शैक्षणिक गुणवत्ता हेतु प्रशिक्षित शिक्षकों की पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए।,

संदर्भ ग्रंथ सूची-

(Bibliography in standard format)

1. गुप्ता, एस.पी. (2005) : भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास, इलाहाबाद शारदा पुस्तक भवन।
2. पाण्डेय, रामशकल (2005) शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
3. कौल, लौकेश (2009) : शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, तृतीय पुनर्मुद्रण, नई दिल्ली , विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.।
4. मंगल एस.के. 2016 संस्करण 'शिक्षा मनोविज्ञान' पृष्ठ संख्या 281 प्रकाशक अशोक के. घोष पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड रिमझिम हाउस 111 प्रतापगंज दिल्ली।

5. शर्मा आर.ए. 2008 संस्करण शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, पृष्ठ संख्या 174 प्रकाशक विनय रखेजा आर. लाल बुक डिपो बेगम बृजरोड मेरठ।
6. मध्य प्रदेश राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल द्वारा प्रकाशित बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान शिक्षक संदर्शिका।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

साहित्य में राजधर्मपरक मूल्यों की प्रासंगिकता

• प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी

सारांश-संस्कृत वाङ्मय सम्पूर्ण विश्व में अतिशय महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह वाङ्मय अतिशय पूर्ण परिष्कृत और हृदयहारी है। भारतीय साहित्य में राजधर्म की अतिशय प्रतिष्ठा रही है। राजधर्म मानव के राष्ट्रीय जीवन में विशेष महत्त्व रखता है। मानव मात्र के कल्याण और अभ्युदय के लिये धर्म का असाधारण महत्त्व है। कुछ लोग धर्म को संकीर्ण क्षेत्र में समेट लेते हैं, जो कि उचित नही है। राजधर्म को जिन राज्यों में समुचित महत्त्व दिया जाता है वहाँ व्यष्टि जीवन सुखमय होता है। भारतीय साहित्य में राजधर्म के मूल्यों में मुख्यत: महाकाव्यों, पुराणों, नीतिग्रंथों और ऐतिहासिक आख्यानों में राजधर्म को आदर्शो और नीति का मूल आधार माना गया है। साहित्य में राजधर्म केवल राजा के कर्त्तव्यों और लोककल्याण पर आधारित प्रस्तुतिकरण है।

मुख्य शब्द- संरक्षण, कर्मसमुच्चय, विखण्डित, निमज्जित, विटप, अखरा, सत्यसन्ध।

धर्मयोग: पर: सेव्यते यो नरै:
व्यापकं तस्य क्षेत्रं दरीदृ''यते।
उन्नतिर्जायते चैव नि:श्रेयसं
धर्ममार्ग: परो नन्द्यते कोविदै:।।।

प्रस्तावना- भारतीय संस्कृत-साहित्य का वैभव अपनी सनातन संस्कृति एवं सभ्यता का उदात्त संवाहक होने के कारण निरातिशयेन आदरणीय है। कलागत विभिन्न दृष्टियों से समन्वित यह साहित्य सामाजिक प्रतिबिम्ब के रूप में आज भी अपनी सार्थकता सिद्ध करता है। साहित्य शब्द का प्रयोग निखिल वाङ्मय के अर्थ को अभिहित करता है। यथा-''साहित्ये सुकुमार वस्तुनि'', ''नमोऽस्तु साहित्यरसायतस्मै', येषां न चेतो ललनासुमग्नं लग्नं न साहित्य सुधासमुद्रे।'' संगीत-साहित्य के व्यापक एवं गम्भीर स्वरूप को द्योतित करते हैं। साहित्य के ही अपर पर्याय के रूप में काव्य को हम प्रतिष्ठित पाते हैं। यथा-''सहितं रसेनयुक्तं विशिष्टं तस्य भाव: साहित्यम्''इति। अर्थात् साहित्य या काव्य की पृष्ठभूमि में रस दृष्टि या लोकोत्तर, चमत्कारपूर्ण, सहृदयावर्जक उत्सेक सहजतया अभिनिविष्ट माना गया है। इस अपूर्व रस दृष्टि के निवर्तक, नामरूपात्मक कलेवर के रूप में अभिव्यंजक मनीनिशयों को कवि के रूप में अभिहित किया गया है। इसी कवित्व की त्रिकालातीत भूमाभाव की प्रतिष्ठा से परिनिनिष्ठत काव्य प्रणेताओं को

• एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, डी. बी. एस. कॉलेज, कानपुर

महाकवि के रूप में अधिष्ठित पाते हैं। प्राचीन भारतीय राजधर्म विशेष महत्त्व रखता हैं इस राजधर्म का व्यापक क्षेत्र रहा है। राजधर्म का अर्थ राजाओं का धर्म है। इसके अन्तर्गत राजाओं से सम्बन्धित प्रत्येक विषय का अनुशीलन है। इसके अन्तर्गत राजाओं के विविध कर्म, आचार-विचार, व्यवहार एवं जीवन दर्शन आदि आते हैं। राजधर्म के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए राजधर्मसंहिता में इस प्रकार कहा गया है-

राजधर्मः प्रशस्तः परो भारते
राजते यत्र राज्ञां सुधर्मः परः।
यः प्रजानां हिते सर्वथा तत्परः
कथ्यते राजधर्मः स लोके सदा।।[2]

भारत में राजधर्म के सम्बन्ध में वैदिक काल से ही चिन्तन होता चला आया है। ऋग्वेद में स्वराज्य और राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में बहुधा चिन्तन हुआ है। भारतीय चिंतन की यह मौलिक अवधारणा है कि सम्यक् शासन व्यवस्था से राजधर्म का निर्वाह न हुआ तो अराजकता बढ़ सकती है। अराजकता प्रत्येक राष्ट्र के लिए द्योतक है। अराजकता के बढ़ने से शासन तन्त्र अस्त-व्यस्त हो जाता है और इस स्थिति में शान्तिभंग हो जाने पर राष्ट्र की सुरक्षा, सामाजिक संस्कृति और समष्टि, तथा व्यक्तिगत अभ्युदय और कल्याण की सम्भावनायें क्षीण हो जाती हैं। इस स्थिति में राज्य का प्रत्येक तन्त्र प्रभावित हो जाता है। अतएव किसी भी राष्ट्र के लिए राजधर्म की महती आवश्यकता है। जैसा कि तत्त्व पारिजात में कहा गया है।

राजधर्म विना लोके राष्ट्रं महीयते।
माति यत्र राजधर्मः प्रजाकल्याणकारकः।।
सर्वं शुभं च तत्रैव प्रजा तत्र प्रसीदति।
विपरीते राजधर्मे न सौख्यं न च निर्वृतिः।।
अतः राष्ट्रेशु सर्वत्र राजधर्मः प्रशस्यते।।[3]

मानव जीवन में मूल्यों का अतिशय महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संस्कृति, दर्शन और चिन्तन में मानवीय मूल्यों को अतिशय महत्त्व दिया गया। मानवीय मूल्यों का संरक्षण और सम्वर्द्धन भारतीय संस्कृति का मुख्य लक्ष्य है जैसा कि संस्कृति-पारिजात में कहा गया है-

संस्कृतं वाङ्मयं विष्टपे विश्रुतं
कोविदैर्यस्य गीतं मुदा गीयते।
मानवीयं सुमूल्यं यया रक्ष्यते
विश्ववन्द्यास्ति सा संस्कृतिर्भूतले।।[4]

वस्तुतः मात्र प्राणों को धारण करना जीवन नही है। जीवन कर्मसमुच्चय का गंगाप्रवाह है। जो गंगाप्रवाह विषम चट्टानों को विखण्डित करता हुआ प्राणिमात्र को आत्मीय भाव से जीवन धन देता हुआ जीवन कर्म की समाप्ति पर सागर से गले लग जाता है। इसीलिए वह भावन और पावन है और सभी के द्वारा परिपूज्य है। जैसा कि गंगाशतक में कहा गया है-

मातृवत् पूजिता चात्र देवापगा
सापि पुष्णाति पुत्रं यथा भारतम्।
प्राप्य शुद्धं जलं तद् मनोमोदते
शस्यश्यामा धरा तज्जलैः शोभते।।[5]

साहित्यकार शून्य में रचना नहीं करता, उसके ऊपर विभिन्न परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। कुछ ऐसी परिस्थितियाँ होती हैं जो उससे रचना करवा देती हैं। वस्तुतः साहित्यकार तो वह भावुक हृदय है जो सामान्य से दुःख पर भी कराह उठता है, किसी भी पीड़ा को देखकर कवि हृदय प्रभावित हो जाता है और वह द्रवित हृदय भाव में डूबकर काव्य के रूप में प्रस्फुटित हो जाता है। क्रौञ्ची की पीड़ा वाल्मीकि को करुणासागर में निमज्जित कर आदि लौकिक छन्द की रचना करा देती है और वे सहसा ही कह उठते हैं-

मानिषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।[6]

अर्थात् निशाद! तुझे नित्य-निरन्तर कभी भी शान्ति न मिले क्योंकि तूने इस क्रौञ्च के जोड़े में से एक की, जो काम से मोहित हो रहा था, बिना किसी अपराध के ही हत्या कर डाली। फिर भला समाज का दर्द उसके शब्दों में कैसे न बँधे। इसी व्याप को लेकर, साहित्य कसा जाने लगा। साहित्य की उत्कृष्टता की कसौटी व्यापकता ही मानी गयी।[7]

सृजन की दृष्टि से व्यक्तिगत होने पर भी साहित्य अपने रचनाकार के अनुरंजन मात्र तक सीमित नहीं रहता, समाज को वह व्यक्त करता है और समाज को संस्कारित भी करता है। जीवन की समग्रता साहित्य में व्यक्त होती है। साहित्य के शब्द अनचाहे अपने में, समाज की गन्ध समेटे रहते हैं।

तुलसी जब लिखते हैं- ''ऐसी मूढ़ता पा मन की'' तो केवल तुलसी नहीं समाज का जन-मन अपनी व्यथा व्यक्त करता है, समझता है संवेदना के स्तर पर, तुलसी और सामान्य जन, यहाँ एक हो जाते हैं। यही समाज की सच्ची अभिव्यक्ति है।

साहित्य की सम्पूर्ण प्रक्रिया, जीवन सागर में उमड़ती तरंग प्रक्रिया है, जो सागर से अलग नहीं जाती। साहित्य जीवन से भिन्न नही है, अपितु वह उसका ही मुखरित रूप है। आत्मकथा, साहित्य के रूप में प्रसारित होती है। साहित्य जीवन विटप का मधुमय सुमन है। वह जीवन का चरम विकास है, किन्तु जीवन के बाहर उसका अस्तित्व नहीं है।[8]

जीवन की यात्रा साहित्य की यात्रा है। साहित्य जीवन के चरण पर चरण धरता चलता है। उसे सम्हालता है, सजाता है, पर उससे भागता नही। जीवन काम का प्रतिफल है और साहित्य भी कामना का प्राकट्य। काम से कामनाओं का जन्म होता है।[9]

जब परमात्मा को अकेलापन अखरा तो दूसरे की इच्छा की। उन्होंने पति का रूप धारण किया। सृष्टि प्रारम्भ हो गयी। काम ही सृजन के मूल में है।

लोक भारतीय जीवन में, आराध्य रहा, उसी प्रकार साहित्य में भी 'लोक' साहित्य का साध्य रहा।

कीरति भनिति भूति भली सोई। सुरसरि सम सबकहँ हित होई।।[10]

भारतीय साहित्य का परम उद्देश्य आनन्द की प्राप्ति है। कविराज विश्वनाथ का अभिमत

है सत् साहित्य के सेवन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में विदग्धता, कलाओं में दक्षता, कीर्ति और प्रीति होती है–

धर्मार्थकाममोक्षेशु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधु काव्यनिशेवणात्।।[11]

साहित्य पर समाज और राजनीति का प्रभाव अवश्य पड़ता है। कवि अपनी लेखनी के द्वारा तत्कालीन समाज और राजधर्मपरक मूल्यों पर प्रकाश अवश्य डालता है। राजनीति सम्पूर्ण वातावरण को प्रभावित करती है। परिवार, समाज और सम्पूर्ण राष्ट्र उसके दायरे में आ जाते हैं। महर्षि वाल्मीक ने वाल्मीकिरामायण में राज्यधर्मपरक मूल्यों का विधिवत् चित्रण किया है। वे एक आदर्श राष्ट्र के लिए एक श्रेष्ठ राजा की सम्भावना करते हैं। आदर्श राज्य अयोध्या में महाराज दशरथ, श्रीरामचन्द्र और भरत एक आदर्श राजा के रूप में प्रतिष्ठित हैं। महाराज दशरथ धार्मिक और सत्यसन्ध राजा हैं। उनके लिए सत्य और धर्म से बढ़कर कुछ भी नहीं है। वे सत्य और धर्म के परिपालन के लिए अपने प्राणों का भी उत्सर्ग कर देते हैं। इससे बढ़कर राजधर्म क्या हो सकता है। कि सांसारिक सुखों के परित्याग की तो बात ही क्या है, सत्य और धर्म की रक्षा के लिए महाराज दशरथ अपने प्राणों को भी न्यौछावर कर देते हैं। इससे बढ़कर राजधर्मपरक मूल्य क्या हो सकता है? भगवान् श्रीरामचन्द्र सत्य और धर्म के पालन के व्रत को लेकर राज्य का परित्याग कर अपने पूज्य पिता की आज्ञा को ध्यान में रखते हुए अनेक कष्टों को सहन करते हुए पत्नी सीता और भ्राता लक्ष्मण के साथ वन में निवास करते हैं। लक्ष्मण भी राजकीय सुख और वैभव को त्यागकर राम के साथ वनगमन करते हैं। राम के द्वारा बहुधा समझाने पर भी सीता राम का अनुगमन करती हैं। माता कैकेयी और पिता दशरथ के द्वारा प्रदत्त राज्य को भरत स्वीकार नहीं करते हैं। वे राजधर्म के अनुसार भ्राता लक्ष्मण को ही राज्यसिंहासन पर बैठाना चाहते हैं। परन्तु राम उन्हें अपनी चरणपादुकाएँ प्रदान करते हैं। अयोध्या के राज्यसिंहासन पर राम की चरणापादुकाएँ संस्थापित की जाती हैं। और उनसे आदेश लेकर भरत राज्य का कार्य देखते हैं। श्रेष्ठ साहित्य में पुरूषार्थचतुष्ट्य सिद्ध होता है। उसमें लोकदृष्टि और लोककल्याण का भाव रहना सर्वथा स्वाभाविक है। यह भाव उदात्तकोटि के राजधर्म का परिपोषाक है। अतएव उसमें राजधर्मपरक श्रेष्ठ मूल्यों का प्रसाद सर्वत्र अभिव्याप्त रहता है। एक आदर्श साहित्यकार राजधर्मपरक मूल्यों के आलोक में लोककल्याण के लिए सत्य, शिव और सुन्दर की समाराधना करता है, जिससे उसका साहित्य लोकमंगलकारी बनकर सभी के अभ्युदय और कल्याण का कारण बन जाता है। जैसा कि राजधर्मतन्त्र में कहा गया है–

पूर्णता या समाजस्य संराजते
या तु सिद्धिर्विधानस्य वै वर्तते।
या च सौभाग्य शोभा धरायाः परा
राजधर्मः प्रशस्तोऽस्ति तत्कारणम्।।[12]

सन्दर्भ सूची-

1. धर्मसंहिता, 5/25
2. राजधर्मसंहिता, 1/21
3. तत्त्वपारिजात - 3/66, 67
4. संस्कृतिपारिजात, 7/25
5. संस्कृतिपारिजात, 9/35
6. गंगाशतक, 86
7. वाल्मीकिरामायण, बालकाण्ड द्वितीय सर्ग, श्लोक-15
8. स्वाधीनतोत्तर हिन्दी नाटकों में लोकतांत्रिक मूल्य, डॉ. ब्रह्मदत्त अवस्थी, पृ0-142-144
9. स्वाधीनतोत्तर हिन्दी नाटकों में लोकतांत्रिक मूल्य, डॉ. ब्रह्मदत्त अवस्थी, पृ0-11
10. श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड
11. साहित्यदर्पण, प्रथम परिच्छेद
12. राजधर्मतन्त्र, 5/25

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

कबीर के साहित्य में सामाजिक चेतना

• बाल किशोर राम भगत

सारांश-कबीर भारतीय संत परंपरा के ऐसे कवि हैं जिनके काव्य में समाज की विसंगतियेां, रूढ़ियों और अंधवि'वासों के प्रति गहरी सामाजिक चेतना झलकती है। उन्होंने जाति-पांति, उॅच-नीच, पाखण्ड और धार्मिक कट्टरता के विरूद्ध आवाज उठाई। कबीर का साहित्य केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक सुधार का माध्यम भी है। उनकी वाणी मानवतावाद, समानता और प्रेम की शिक्षा देती है। यह शोध पत्र कबीर के साहित्य में निहित सामाजिक चेतना, उनके समाज सुधारक दृष्टिकोण तथा आधुनिक संदर्भो में उनकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

मुख्य शब्द- कबीर, समाज, सामाजिक चेतना, समानता भक्ति आंदोलन, मानवतावाद, सुधार, प्रेम, जातिवाद, पाखंड।

प्रस्तावना- भारतीय साहित्य में संत काव्य परंपरा का एक प्रमुख स्थान है और इस परंपरा के सबसे प्रखर कवि हैं-संत कबीर। 15वीं शताब्दी में जन्मे कबीर का जीवन समाज के गहरे विरोधाभासों के बीच बीता। उस समय भारतीय समाज जातिगत भेदभाव, अंधविश्वास, धार्मिक आडंबर और पाखंड से ग्रस्त था। कबीर ने इन विकृतियों के विरूद्ध अपनी निर्भक आवाज उठाई। उनका साहित्य केवल ईश्वर भक्ति तक सीमित नहीं, बल्कि एक सामाजिक क्रांति का उद्घोष है। उन्होंने 'मानव' को ही ईश्वर का प्रतीक मानकर, धर्म के नाम पर किये जा रहे भेदभावों को चुनौती दी।

कबीर कहते हैं-

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान,
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान।'

यह दोहा कबीर की सामाजिक चेतना का परिचायक है।

कबीर का युगीन परिप्रेक्ष्य- कबीर का समय भारतीय समाज के लिए संक्रमणकाल था। एक ओर भक्ति आंदोलन का उद्य हो रहा था, तो दूसरी ओर समाज में छुआछूत, उॅच-नीच और धर्मधता का बोलबाला था। हिन्दू-मुस्लिम दोनों ही समाजों में धार्मिक पाखंड और कर्मकांड का वर्चस्व था। कबीर ने इसी परिवेश में जन्म लेकर सत्य, प्रेम और मानवता के संदेश से समाज को झकझोरा।

• सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, के.एम.टी.शासकीय कन्या महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.)

उन्होंने कहा–

" पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पडित भया न कोय,
ढाई आखर प्रेम का , पढ़े सो पंडित होय।"

यह दोहा धार्मिक ज्ञान के नाम पर फैले अज्ञान और पाखंड पर करारा प्रहार है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- कबीर का जीवनकाल लगभग 15वीं शताब्दी का माना जाता है। एक ऐसा समय जब भारत राजनीतिक,सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से गहन परिवर्तन से गुजर रहा था। दिल्ली सल्तनत का पतन और मुगल सामाज्य के उदय का काल था। विदेशी आक्रमणों, आर्थिक असमानता और धर्मान्धता के कारण समाज अस्थिर था।

धार्मिक स्थिति- धर्म के नाम पर समाज दो भागों में बॅट चुका था। हिन्दू और मुस्लिम में हिन्दू समाज कर्मकांड, मूर्तिपूजा, जातिवाद और ब्राहमणवादी रूढ़ियों में जकड़ा था। मुस्लिम समाज में भी बाहय आडंबर, कट्टरता और सूफी विचारधारा के बीच संघर्ष था। इस धार्मिक अंधकार में कबीर ने सच्चे आध्यात्मिक अनुभव और मानवता के धर्म की बात की। "माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर।" यह पंक्ति उनके युग में धर्म के बाहय रूप की आलोचना करती है।

सामाजिक स्थिति- कबीर का समय सामाजिक दृष्टि से अत्यंत जटिल था। जाति प्रथा ने मनुष्यता को बाँट रखा था। अस्पृश्यता और उॅच–नीच की भावना चरम पर थी। स्त्रियों की स्थिति भी दोयम दर्जे की थी। कबीर ने इन बुराइयों के विरूद्ध अपनी वाणी से क्रांति की। "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।" उनकी दृष्टि में मनुष्य का मूल्य कर्म और ज्ञान से है, न कि जाति से।

आर्थिक स्थिति- कबीर स्वयं बुनकर थे। श्रमिक वर्ग से जुड़े हुए थे। उनके समय में शिल्पकार वर्ग आर्थिक दृष्टि से कमजोर थे, परन्तु उनके श्रम पर ही समाज टिका था। कबीर ने श्रम की प्रतिष्ठा की बात की ओर कहा कि सच्चा धर्म कर्मयोग है।

सांस्कृतिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि- 15वीं शताब्दी भक्ति आंदोलन का उत्कर्ष काल था। तुलसी, सूर, मीरा जैसे संत कवि इसी धारा से जुड़े। कबीर इस आंदोलन के निर्गुण भक्ति पक्ष के प्रवर्तक थे। उनकी भाषा सधुक्कड़ी थी। लोकजीवन से जुड़ी ,सरल और व्यंग्यपूर्ण थी।

दार्शनिक दृष्टि- कबीर ने ईश्वर को निराकार, सर्वव्यापक और मानवीय अनुभूति का केन्द्र माना। उन्होंने ज्ञान, प्रेम और अनुभव को मुक्ति का मार्ग बताया। उनकी वाणी उस युग की आध्यात्मिक खोज का सार है– जहाँ ईश्वर और मनुष्य के बीच कोई मध्यस्थ नहीं।

युगीन प्रभाव और परिवर्तन- कबीर ने अपने समय की सामाजिक चेतना को झकझोरा। उनकी वाणी ने भक्ति आंदोलन को लोकधारा से जोड़ा। उन्होंने वर्ग, जाति और धर्म से उपर उठकर मानव धर्म की स्थापना की। उन्होंने धार्मिक एकता को बल दिया। समानता और श्रम की गरिमा को प्रतिष्ठित किया और समाज में आत्मा की स्वतंत्रता का संदेश फैलाया।

कबीर की सामाजिक चेतना- कबीर की सामाजिक चेतना कई स्तरों पर व्यक्त होती है। जाति–पांति और उॅच–नीच के विरोध में चेतना कबीर ने जातिवाद को समाज की

सबसे बड़ी बीमारी बताया। उन्होंने कहा कि मनुष्य का मूल्य उसकी जाति से नहीं, बल्कि उसके कर्म और व्यवहर से आंका जाना चाहिए।

" एक बूंद, एक मलमूत्र, एक चाम, एक गूदा,
कह कबीर ते नर काहे भये, जाति–पांति का झूला।"

उनका यह दृष्टिकोण मानव समानता के सिद्धांत को स्थापित करता है।

धार्मिक कट्टरता और पाखंड के विरोध में चेतना- कबीर ने हिन्दू–मुस्लिम दोनों समाजों की कुरीतियों पर खुलकर प्रहार किया। उन्होंने मन्दिर–मस्जिद दोनों को असत्य आचरण के प्रतीक बताया और कहा कि सच्चा ईश्वर मनुष्य के हृदय में है, न कि बाहरी कर्मकाण्डों में।

" माला फेरत जुग गया, फिरा न मन का फेर,
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।"

यह दोहा धार्मिक कर्मकाण्ड की निष्प्रभाविता को उजागर करता है।

मानवतावाद और प्रेम की चेतना- कबीर की वाणी का सबसे बड़ा संदेश है मानवता और प्रेम। उन्होंने कहा कि सभी धर्मो का मूल सार प्रेम है, और यही ईश्वर प्राप्ति का मार्ग है।

"प्रेम न बाड़ी उपजै, प्रेम न हाट विकाय,
राजा परजा जेही रूचै, शीश दे ले जाय।"

कबीर का यह भाव सम्पूर्ण मानव जाति को जोड़ने वाला है। वे न हिन्दू हैं, न मुसलमान वे केवल इंसान है।

श्रम और स्वावलंबन की चेतना- कबीर स्वयं जुलाहा थे और उन्होंने श्रम को ईश्वर की पूजा कहा। उनके अनुसार मेहनत करने वाला व्यक्ति समाज का आधार है।

"कबिरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ,
जे घर फूंके आपना, चल हमारे साथ।"

यह प्रतीकात्मक दोहा उस व्यक्ति की चेतना का प्रतिनिधित्व करना है जो अपने भीतर की बुराइयों को जलाकर समाज में प्रकाश फैलाना चाहता है।

नारी के प्रति दृष्टिकोण- कबीर का नारी संबंधी दृष्टिकोण कुछ दोहों में आलोचनात्मक प्रतीत होता है, किन्तु वास्तविक रूप में उन्होंने नारी को सामाजिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग माना। उन्होंने नारी को साधना की सहयोगी और सृजन की जननी कहा।

" नारी नर का रूप है, नर नारी का मान,
दोनों मिल जग उपजै, ताते करै बखान।"

यह दृष्टिकोण समाज में लैंगिक समानता की भावना जगाता है।

सामाजिक समानता और भाईचारा- कबीर की सामाजिक चेतना का मूल आधार भाईचारा और एकता है। उन्होंने कहा कि धर्म, जाति, भाषा, वर्ण–सभी भेद कृत्रिम है, मनुष्य का असली धर्म है 'मानवता'।

"हिन्दू कहे मोहि राम पियारा, तुर्क कहे रहमाना,
आपस में दोउ नरि मरिहैं, मरम न कोउ जाना।।"

इस दोहे में कबीर धार्मिक संघर्षो पर गहरी चोट करते है और मानवता को सर्वोच्च धर्म बताते हैं।

अंधविश्वास और कर्मकांड पर प्रहार- कबीर ने समाज में फैले अंधविश्वासों को मूर्खता बताया। उन्होंने कहा कि ईश्वर को पाने के लिए किसी बाहरी माध्यम की आवश्यकता नहीं, बल्कि सच्चे मन और आचरण की जरूरत है।

" कंकर पाथर जोड़ि के, मस्जिद लई चुनाय,
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, बहरा हुआ खुदाय?"

यह दोहा धार्मिक आडंबर के खिलाफ सीधा सवाल उठाता है।

आर्थिक और श्रमिक वर्ग के प्रति सहानुभूति- कबीर समाज के गरीब और श्रमिक वर्ग के पक्षधर थे। वे स्वयं उस वर्ग से आते थे और उनकी कविताओं में उस वर्ग की पीड़ा, संघर्ष और आत्मसम्मान झलकता है। उनकी वाणी में 'श्रम की गरिमा' और 'मानव परिश्रम का आदर' स्पष्ट दिखता है।

कबीर की भाषा और शैली में सामाजिकता- कबीर ने साधारण जन की भाषा–साधु हिन्दी या सधुक्कड़ी में अपनी बातें कही। उनकी भाषा को सधुक्कड़ी कहा गया जिसमें अवधी, भोजपुरी, ब्रज खड़ीबोली और पंजाबी के शब्दों का समावेश मिलता है। इससे उनकी वाणी सीधे जनता के हृदय में उतर गई। उनकी भाषा में देशज शब्द, लोकोक्तियाँ, व्यंग्य और प्रतीक का प्रयोग समाज की वास्तविकता को उजागर करता है।

उदाहरण के लिए–

" माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय,
एक दिन ऐसा जाएगा, मैं रोंदूंगी तोय।।"

यह दोहा सामाजिक और दार्शनिक दोनों दृष्टियों से गहराई लिए हुए हैं।

भाषा में सामाजिक चेतना- कबीर की भाषा में सामाजिक अन्याय और विसंगतियों के विरूद्ध तीखा व्यंग्य है। उन्होंने पंड़ित, मुल्ला, राजा, साधु सभी को समान रूप से प्रश्नों के घेरे में रखा।

" पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पंड़ित भया न कोय,
ढाई आखर प्रेम का , पढ़े सो पंड़ित होय।।"

यहाँ भाषा सीधे समाज के हृदय पर चोट करती है किसी दार्शनिक या शास्त्रीय ढंग से नहीं, बल्कि जनभाषा में ।

कबीर की शैली में सामाजिकता- कबीर की शैली अनेक रूपों में प्रकट होती है, व्यंग्य, संवाद, प्रतीकात्मक, रहस्यवादी और लोक धर्मी। इन सभी में समाज के प्रति उनकी गहरी दृष्टि विद्यमान है।

व्यंग्यात्मक शैली- कबीर दास समाज के दोषों पर व्यंग्य करते हैं, पर उनका उद्देश्य निंदा नहीं बल्कि सुधार है।

"माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर,
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।।"

यह व्यंग्य समाज के पाखंड़ी धामिक आचरण पर प्रहार है।

प्रतीकात्मक शैली- कबीर ने समाज की सच्चाइयों को प्रतीकों में व्यक्त किया, घट शरीर, जल–आत्मा, जाल–माया, आदि। ये प्रतीक जनजीवन से लिए गये हैं, जिससे उनके विचार जनसुलभ बन गए।

"घट-घट में पहुँचे साहिब, घट ही के भीतर देख।"

संवादात्मक शैली- कबीर की वाणी में प्रश्नोत्तर का रूप मिलता है जो विचार-विमर्श को जन्म देता है। यह शैली समाज में तक शीलता और आत्मचिन्तन को प्रेरित करती है।

लोकधर्मी शैली- उनकी शैली में लोकोक्तियाँ, मुहावरे, कहावतें और लोकलय का सहज प्रयोग हुआ है। यही उनकी वाणी को सामाजिक आधार देता है।

"कबीरा खड़ा बाजार में, सबकी मांगे खैर।"

यह वाक्य लोकवृति और सामाजिक करूणा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

कबीर की सामाजिक चेतना की आधुनिक प्रासंगिकता- कबीर की वाणी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी 15 वीं शताब्दी में थी। आज भी समाज में जातिवाद, धार्मिक कट्टरता, अंधविश्वास, और असमानता विद्यमान है। कबीर का संदेश हमें मानवता, समानता और सहिष्णुता की राह दिखाता है। उनकी वाणी हमें सिखाती है कि-

" सच्चा धर्म मंदिरों में नहीं,
बल्कि मनुष्य के आचरण में है।"

आज जब समाज वर्ग, जाति और धर्म के नाम पर बंटा हुआ है, कबीर की सामाजिक चेतना समरसता और एकता का आधार प्रदान करती है।

जातिवाद के संदर्भ में- आज भी भारतीय समाज में जातिगत भेदभाव मौजूद है। शिक्षा, रोजगार और सामाजिक जीवन में उँच-नीच की भावना बरकरार है। कबीर दास जी कहते हैं-"सब मनुष्य एक देह का, सबका एक रक्त।" हमें समानता और सामाजिक समरसता की दिशा में आगे बढ़ने को प्रेरित करता है।

धार्मिक असहिष्णुता के संदर्भ में- कबीर ने हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाजों में व्याप्त कट्टरता पर प्रहार किया। आज के समय में जब धार्मिक कट्टरता बढ़ रही है, तब कबीर की यह वाणी विशेष रूप से उपयोगी है-

"हिन्दू कहे मोहि राम पियारा, तुर्क कहे रहमाना,
आपस में दोउ लरि मरिहैं, मरम न कोउ जाना।।"

यह दोहा हमें धर्म से उपर उठकर मानवता के धर्म को स्वीकार ने का आवहान करता है।

स्त्री की स्थिति के संदर्भ में- कबीर ने नारी को जीवन का सहचर और सृजन का मूल माना। उन्होंने कहा-

" नारी नर का रूप है, नर नारी का मान,
दोनों मिल जग उपजै, ताते करै बखान।।"

आज जब लैंगिक समानता का प्रश्न समाज में उठ रहा है, कबीर की दृष्टि हमें संतुलन और सम्मान की शिक्षा देती है।

पर्यावरण और प्रकृति के प्रति दृष्टि- कबीर की वाणी में प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान है, वे जल, मिट्टी, वायु जैसे तत्वों को जीवन का आधार मानते हैं।

" जल में कुम्भ, कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।"

आज जब पर्यावरण संकट बढ़ रहा है, कबीर का यह भाव प्रकृति और जीवन की एकता का बोध कराता है।

उपभोक्तावाद और नैतिक पतन के संदर्भ में- आज का समाज भौतिक सुख-सुविधाओं के पीछे भाग रहा है और नैतिकता पीछे छूटती जा रही है। कबीर की सादगी, संतोष और आत्मनिष्ठा का आदर्श इस स्थिति में अत्यंत प्रेरणादायक है।

कबीर के विचार और आधुनिक मानवाधिकार- कबीर ने बिना किसी औपचारिक संविधान या आंदोलन के मानवाधिकारों की नींव रखी थी -

जीवन का अधिकार- हर मनुष्य को जीने का समान अधिकार है।

विचार की स्वतंत्रता- उन्होंने तर्क, आत्मज्ञान और स्वतंत्र चिंतन को महत्व दिया।

धर्म की स्वतंत्रता- उन्होंने किसी एक धर्म की श्रेष्ठता नहीं मानी।

आधुनिक भारत के संदर्भ में- आज भारत जिस दौर से गुजर रहा है, जहाँ धर्म और राजनीति का संबंध जटिल होता जा रहा है, सामाजिक तनाव बढ़ रहे हैं, और नैतिक मूल्य घट रहे हैं- ऐसे में कबीर की वाणी फिर से "मार्गदर्शक दीप" बन जाती है। उनकी चेतना "समानता, सत्य और प्रेम" पर आधारित एक मानवीय समाज के निर्माण की प्रेरणा देती है।

निष्कर्ष- कबीर भारतीय समाज के ऐसे युगद्रष्टा कवि थे जिन्होंने अपने समय की सामाजिक बुराइयों को पहचाना और उनसे संघर्ष किया। उनकी वाणी में धार्मिक, नैतिक और सामाजिक चेतना का अद्भूत संगम है। कबीर का साहित्य केवल भक्ति नहीं, बल्कि मानवता का घोषणा पत्र है। उन्होंने समाज में जब समाज फिर से विभाजन और असहिष्णुता की ओर बढ़ रहा है, कबीर की सामाजिक चेतना हमें पुनः सत्य, प्रेम और करूणा की ओर लौटने की प्रेरणा देती है।

कबीर का संदेश हमें यह सिखाता है कि सच्चा धर्म मंदिरों-मस्जिदों में नहीं, बल्कि मनुष्य के व्यवहार और प्रेम में है। कबीर का संदेश है "सबका मालिक एक", प्रेम ही सच्चा धर्म", "मानवता सर्वोपरि"। कबीर अपने युग के अंधकार में मानवता का दीपक जलाया, जो आज भी हमारे लिए मार्गदर्शक है।

संदर्भ सूची-

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी - कबीर
2. रामचन्द्र शुक्ल- हिंदी साहित्य का इतिहास
3. डॉ. नामवर सिंह- कविता के नए प्रतिमान
4. विश्वनाथ त्रिपाठी - लोक और साहित्य
5. कबीर ग्रंथावली - सम्पादक, आचार्य परमहंस यादव
6. डॉ. रामविलास शर्मा- भक्ति आंदोलन और समाज परिवर्तन

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

भारतीय संगीत शिक्षा पर कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रभाव: एक अध्ययन

• खुशबू

सारांश- भारतीय संगीत शिक्षा, जो गुरु-शिष्य परंपरा की अंत:प्रेरित, श्रवण-आधारित और भावप्रधान प्रणाली पर विकसित हुई, आज डिजिटल युग में कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा पुनर्परिभाषित हो रही है। ए.आई. तकनीकें जैसे मशीन लर्निंग, डीप लर्निंग, पिच-डिटेक्शन, राग पहचान, लय-विश्लेषण, वर्चुअल गुरु प्रणाली और व्यक्तिगत शिक्षण ने भारतीय संगीत शिक्षा को अधिक सुलभ, वैज्ञानिक और डेटा-आधारित बनाया है। ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों के विद्यार्थियों तक पहुंच, अभ्यास की निरंतरता, सटीक विश्लेषण तथा प्रेरक सीखने के तरीकों ने शिक्षा-पद्धति को नई दिशा दी है। विश्वविद्यालयों और संगीत संस्थानों में AI आधारित पाठ्यक्रम, अनुसंधान और मूल्यांकन प्रणाली तेजी से अपनाई जा रही है। फिर भी ए.आई. की सीमाएँ स्पष्ट हैं क्योंकि भारतीय संगीत की आत्मा भाव, रस, सांस्कृतिक विरासत और शैलीगत विविधता में निहित है। रागों की आंतरिक अनुभूति, घरानों की विशिष्टता, कलाकार की व्यक्तिगत व्याख्या और गुरु के सौन्दर्यबोध जैसे तत्व ए.आई. नहीं समझ सकता। भारतीय संगीत में सांस्कृतिक पहचान और आध्यात्मिकता महत्वपूर्ण है, जो पूर्णत: मानवीय और अनुभूतिक प्रक्रिया है। शोधपत्र का निष्कर्ष यह है कि ए.आई. भारतीय संगीत शिक्षा का सहायक और पूरक उपकरण है, प्रतिस्थापन नहीं। भविष्य में भाव-आधारित विश्लेषण, VR शिक्षण, स्वचालित संगतकार और उन्नत राग सुझाव प्रणाली जैसी तकनीकें संगीत शिक्षा को और विस्तृत कर सकती हैं। परंतु भारतीय संगीत का केन्द्रीय तत्व सदैव मानव-केन्द्रित रहेगा। ए.आई. और परंपरागत शिक्षण के संतुलन से संगीत शिक्षा अधिक सक्षम, आधुनिक और गुणवत्तापूर्ण बनेगी।

मुख्य शब्द- कृत्रिम बुद्धिमत्ता, भारतीय संगीत, तकनीक, संगीत शिक्षा, गुरु शिष्य परंपरा

भारतीय संगीत शिक्षा जो सदियों से गुरु–शिष्य परंपरा, सांस्कृतिक हस्तांतरण और अनुवर्तन आधारित पद्धतियों पर विकसित हुई। "संगीत से बालक में ऐसे गुण आ जाते हैं, जिनसे वह भौतिक लाभ और आध्यात्मिक मूल्यों को समझ पाने में समर्थ हो जाता है।"[1] आज डिजिटल युग में एक नए परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। कृत्रिम

• असिस्टेंट प्रोफेसर (तबला), संगीत विभाग, जुहारी देवी गर्ल्स पी.जी.कॉलेज,कानपुर

बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) केवल वैज्ञानिक गणना का क्षेत्र नहीं रहा, बल्कि संगीत की संरचना, विश्लेषण, शिक्षण-पद्धति और अभ्यास प्रणाली तक गहराई से प्रवेश कर गया है। "वैज्ञानिक आविष्कारों ने मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष एवं क्रिया को प्रभावित किया है। इससे हमारी शिक्षा भी अछूती नहीं रह सकी।शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षण मशीनों रेडियो, टेलीविजन, टेपरिक,र्डर, ग्रामोफोन, कम्प्यूटर तथा भाषा प्रयोगशाला आदि का प्रयोग किया जाने लगा है। इस प्रकार शिक्षण में मशीनों के प्रयोग से शिक्षा प्रक्रिया का यंत्रीकरण किया जा रहा है।"[2] ए.आई. आधारित राग-पहचान, पिच-डिटेक्शन, लय-विश्लेषण, वर्चुअल गुरु प्रणाली, स्वचालित स्वर-संशोधन, डिजिटल संगीत रचना और व्यक्तिगत शिक्षण (Adaptive Learning) जैसी तकनीकें भारतीय संगीत शिक्षा को अत्यंत आधुनिक, सुलभ और सटीक बना रही हैं। दूसरी ओर परंपरा, भाव-प्रधानता, शैलीगत विविधता और सांस्कृतिक संवेदनशीलता जैसे क्षेत्रों में ए.आई. की सीमाएँ भी स्पष्ट हैं।

यह शोधपत्र संगीत शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रमुख दृष्टिकोणों की समीक्षा करता है। शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई-ईडी) के लिए संगीत एक चुनौतीपूर्ण क्षेत्र है क्योंकि संगीत, सामान्यतः, एक खुला क्षेत्र है जो शिक्षार्थियों और शिक्षकों की ओर से रचनात्मकता और समस्या-खोज की माँग करता है। इसके अतिरिक्त, संगीत के कृत्रिम बुद्धिमत्ता सिद्धांत अभी भी अपूर्ण हैं, और संगीत शिक्षा आमतौर पर छात्रों को 'ज्ञान' के संचार के अलावा अन्य कारकों पर भी जोर देती है।

1. प्रस्तावना (Introduction)- भारतीय संगीत चाहे वह हिंदुस्तानी परंपरा हो या कर्नाटक परंपरा अपने भीतर सौन्दर्य, भाव, सांस्कृतिक विरासत और आध्यात्मिक उद्देश्य का समन्वय समेटे हुए है। संगीत की यह परंपरा हजारों वर्षों से मौखिक रूप में, प्रत्यक्ष शिक्षण के माध्यम से और गुरु-शिष्य संबंध की पवित्रता पर आधारित होकर विकसित हुई है। तकनीकी युग के आगमन के बाद संगीत शिक्षा में अनेक प्रकार के परिवर्तन दिखाई दिए, जिनमें डिजिटल रिकॉर्डिंग, ऑनलाइन लेक्चर, वीडियो ट्यूटोरियल और स्वरलिपि सॉफ्टवेयर आदि शामिल रहे। "यहां हम बात कर रहे हैं 21वीं शताब्दी की टैक्नोल, जी की।की तरह के शास्त्रीय संगीत गायन, वादन एवं नृत्य पर आधारित वीडियो इंटरनेट पर यूं ट्यूब पर उपलब्ध हैं जो कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली से संबंधित हैं।"[3] "संगीत की प्रमुख जानकारियां,संस्था में, पाठ्यक्रम, कलाकारों संबंधी जानकारी वीडियो,ऑडियो एवं सी डी सूची, पुस्तकें, संगीत सम्मेलन, रिकॉर्डिंग स्टूडियो, वाद्य विक्रेता सूची आदि इंटरनेट पर उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त विषय संबंधी अन्य जानकारी को भी प्राप्त किया जा सकता है।"[4]

लेकिन 21वीं सदी के दूसरे दशक में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रवेश एक निर्णायक मोड़ की तरह सामने आया है। ए.आई. अब केवल गणनाओं का उपकरण नहीं बल्कि संगीत-शिक्षण का सक्रिय सहायक बन गया है। ए.आई.द्वारा संगीत की समझ, विश्लेषण और मूल्यांकन को एक वैज्ञानिक तथा वस्तुनिष्ठ प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया जाना भारतीय संगीत-शिक्षा के लिए एक नया आयाम है। इस शोध का उद्देश्य केवल तकनीकी विश्लेषण करना नहीं बल्कि यह समझना है कि ए.आई.भारतीय संगीत शिक्षा की

पारंपरिक और आधुनिक संरचनाओं को किस तरह बदल रहा है।

भारतीय संगीत परंपरा गुरु-शिष्य परंपरा पर आधारित रही है। यद्यपि यह पद्धति आज भी महत्वपूर्ण है, परंतु तकनीकी विकास ने शिक्षा के नए आयाम खोले हैं। ए.आई. तकनीकें जैसे-मशीन लर्निंग (ML),डीप लर्निंग,स्पीच रिकग्निशन,साउंड एनालिसिस,जनरेटिव ए.आई. इन सभी ने संगीत शिक्षण को अधिक इंटरैक्टिव बनाया है। इस शोध का उद्देश्य यह समझना है कि ए.आई.भारतीय संगीत शिक्षा को कैसे प्रभावित कर रहा है तथा यह किन अवसरों और चुनौतियों को जन्म देता है।

संगीत शिक्षा के स्तर- गुरु-शिष्य परंपरा, संगीत-महाविद्यालय, विश्वविद्यालय शिक्षा, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, तथा स्वयं- अभ्यास सभी पर AI का प्रभाव अलग-अलग रूपों में दिखाई देता है। यह शोध-पत्र इसी परिवर्तन की प्रकृति, उपयोगिता, सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ और भविष्य की दिशा को स्पष्ट करता है।

2. भारतीय संगीत शिक्षा: ऐतिहासिक और आधुनिक रूप

2.1 गुरु-शिष्य परंपरा- भारतीय संगीत शिक्षा का आधार गुरु-शिष्य परंपरा रही है, जिसमें-

- मौखिक परंपरा
- स्वरों का श्रवण-आधारित शिक्षण
- अभ्यास (रियाज) की निरंतरता
- गुरु का निजी अनुभव और शैलीगत ज्ञान

इत्यादि सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। यह प्रणाली व्यक्तिगत संबंध, श्रवण-अनुकरण और राग-भावना की अनुभूति पर आधारित थी।

2.2 आधुनिक संस्थागत शिक्षा- 20वीं सदी के मध्य से भारत में विश्वविद्यालयों में संगीत विभाग स्थापित हुए। यहाँ अध्ययन का स्वरूप अधिक औपचारिक हो गया है यथा-

- पाठ्यक्रम आधारित शिक्षा
- लिखित परीक्षाएँ
- स्वरलिपि
- संगीत इतिहास और सिद्धांत
- व्यवहारिक मूल्यांकन

2.3 डिजिटल युग का आगमन 2000 के बाद—

- ऑनलाइन वीडियो
- डिजिटल रिकॉर्डिंग
- मोबाइल एप्लिकेशन
- वर्चुअल कक्षाएँ

इत्यादि संगीत शिक्षा में प्रवेश कर चुकी थीं। ए.आई. इन सबका विस्तार और वैज्ञानिक रूप है।

3. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए.आई.)और संगीत: मूलभूत अवधारणा- ए.आई. वह तकनीक है जिसमें कंप्यूटर मानव-मस्तिष्क जैसी क्षमताओं-सीखना, पहचानना, विश्लेषण करना, त्रुटि सुधारना इत्यादि का अनुकरण करते हैं।संगीत में । ए.आई.

मुख्यत: निम्न क्षेत्रों में कार्य करता है—

1- Pattern Recognition – राग, लय, स्वर के पैटर्न पहचानना।
2- Audio Analysis – ध्वनि संकेतों का विश्लेषण।
3- Machine Learning – अभ्यास डेटा से सीखना।
4- Deep Learning – संगीत के जटिल भाव-पहलुओं को मॉडल करना।
5- Predictive Systems – अभ्यास के सुझाव देना।

ए.आई. का संगीत में प्रवेश विशेष रूप से भारतीय संगीत के लिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि भारतीय संगीत अत्यंत सूक्ष्म स्वरांतरों और भाव-प्रधान संरचनाओं पर आधारित है।

4. भारतीय संगीत शिक्षा में ए.आई. की तकनीकी भूमिका-

4.1 स्वर-विश्लेषण (Pitch Analysis)- ए.आई. आधारित पिच-डिटेक्शन सॉफ्टवेयर कम्पन, मींड,स्वर-शुद्धता, श्रुति इत्यादि का अत्यंत सटीक विश्लेषण करते हैं। हिंदुस्तानी संगीत के 22 श्रुतियों जैसे जटिल तत्व भी अब ए.आई. मॉडल से पहचाने जाने लगे हैं।

4.2 राग पहचान (Raga Recognition)

- ए.आई.मॉडल अब आरोह-अवरोह, वादी-संवादी
- पकड़,चलन जैसे तत्वों के आधार पर रागों को पहचानने में सक्षम हो रहे हैं।

4.3 ताल और लय विश्लेषण

- तबला, पखावज, मृदंगम की तालों का विश्लेषण,लय स्थिरता,गति, बोल की स्पष्टता ठेका ए.आई. अत्यंत वैज्ञानिक तरीकों से करता है।
- यह पारंपरिक अभ्यास की तुलना में अधिक सटीक और तुरंत प्रतिक्रिया देने वाला है।

4.4 वर्चुअल गुरु प्रणाली- ए.आई. आधारित वर्चुअल प्रशिक्षक गलत स्वर पर तुरंत चेतावनी,सही तान का सुझाव, अभ्यास की समयावधि,सुर-लय में प्रगति इत्यादि की स्वचालित रिपोर्ट तैयार करते हैं।

4.5 व्यक्तिगत शिक्षण (Adaptive Learning)- ए.आई. प्रत्येक विद्यार्थी के प्रदर्शन डेटा,सीखने की गति,त्रुटि पैटर्न के आधार पर अलग-अलग अभ्यास सुझाता है।

5. भारतीय विश्वविद्यालयों और संगीत संस्थानों में ए.आई. का प्रवेश

5.1 पाठ्यक्रम में बदलाव- कई विश्वविद्यालय अब ए.आई. आधारित संगीत विश्लेषण,ध्वनि-प्रसंस्करण,संगीत सूचना पुनरुद्धार को पाठ्यक्रम का हिस्सा बना रहे हैं।

5.2 मूल्यांकन प्रणाली- पहले संगीत का मूल्यांकन मानवीय श्रवण पर निर्भर था। ए.आई. अब स्वरलिपि तुलनाएँ,माइक्रो-पिच डिफरेंस,लय-स्थिरता आदि का वैज्ञानिक मूल्यांकन कर सकता है।

5.3 अनुसंधान में ए.आई.- ए.आई. शोधार्थियों के लिए विशाल ऑडियो डाटा का विश्लेषण,राग-विकास अध्ययन,घरानों की शैलीगत तुलना सुलभ बनाता है।

6. भारतीय संगीत शिक्षा में ए.आई. के लाभ-

6.1 सीखने की उपलब्धता में वृद्धि- ए.आई. आधारित एप्लिकेशन और ऑनलाइन संसाधनों ने ग्रामीण क्षेत्रों,आर्थिक सीमाओं वाले विद्यार्थियों,समयाभाव के कारण नियमित कक्षाएँ न ले पाने वाले शिक्षार्थियों सभी के लिए संगीत सीखना सुलभ बना दिया है।

6.2 निरंतर अभ्यास की सुविधा- ए.आई. निरंतर उपलब्ध शिक्षक जैसा कार्य करता है।ये विभिन्न ऐप्स के माध्यम से इच्छित समय व स्थान पर अभ्यास की सुविधा प्रदान करता है।

6.3 वैज्ञानिक सटीकता

- ए.आई. सूक्ष्म सुरभ्रंश,गलत मींड,ताल में दोलन
- इन सबको मिलीसेकंड तक की सटीकता से पहचान लेता है।

6.4 संगीत सीखने में आनंद और प्रेरणा- ए.आई. आधारित गेमिफिकेशन विद्यार्थियों को निरंतर अभ्यास के लिए प्रेरित करता है।

7. भारतीय संगीत शिक्षण में ए.आई. की सीमाएँ और चुनौतियाँ

7.1 भाव का अभाव- ए.आई. राग के भाव, रस, और अंतरंग अनुभूति को नहीं समझ सकता। यह भारतीय संगीत का मूल तत्व है।

7.2 शैलीगत विविधता की चुनौती-

भारतीय संगीत में घराने गायकी की शैलियाँ,व्यक्तिगत विशेषताएँ, बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, ए. आई. इन्हें सामान्यीकृत कर देता है।

7.3 डेटा-संकट- भारतीय संगीत का उच्च गुणवत्ता वाला डेटा बहुत सीमित है।विभिन्न रागों, घरानों और वाद्यों की पर्याप्त मात्रा अभी उपलब्ध नहीं।

7.4 मानव गुरु की भूमिका कम नहीं हो सकती- गुरु का अनुभव,सौन्दर्य-बोध,सांस्कृतिक समझ,भावनात्मक निर्देश ए.आई. नहीं दे सकता।

8. केस स्टडी: भारतीय संगीत शिक्षा में ए.आई. का व्यवहारिक उपयोग

8.1 Riyaz App-यह ऐप राग आधारित अभ्यास,पिच मॉनिटरिंग,तान विश्लेषण करता है। यह कई किशोर कलाकारों को प्रारंभिक संगीत शिक्षा देने में सहायक सिद्ध हुआ है।

8.2 NaadSadhana (Apple Design Award Winner)- ए.आई. आधारित यह ऐप पिच,ताल, साउंड म, डच्यूलेशन के आधार पर स्वत: संगत तैयार कर सकता है।

8.3 ए.आई. ताल विश्लेषण प्रणाली- तबला अभ्यर्थियों के लिए यह दोलन,लय स्थिरता,बोल डिटेक्शन जैसी क्षमताएँ प्रदान करता है।

9. भारतीय संगीत की सांस्कृतिक पहचान और ए.आई.- ए.आई. जितना तकनीकी रूप से सक्षम है, उतना ही सांस्कृतिक रूप से सीमित भी।भारतीय संगीत अध्यात्म,परंपरा,भाव,सांस्कृतिक प्रतीक का संगीत है।ए.आई. इसमें सहायता कर सकता है, पर इन तत्वों को जन्म नहीं दे सकता।

10. भविष्य की संभावनाएँ

10.1 भाव आधारित राग विश्लेषण– भविष्य में ए.आई. रागों की भावनात्मक ध्वनियों को भी मॉडल कर सकेगा।

10.2 VR आधारित संगीत शिक्षा– वर्चुअल गुरु, 3D कॉन्सर्ट, इमर्सिव अनुभव संगीत सीखने को बिल्कुल नया रूप देंगे।

10.3 स्वचालित राग–सुझाव प्रणाली– विद्यार्थी की आवाज और क्षमता के अनुसार रागों का चयन करना संभव होगा।

10.4 ए.आई. –संगतकार (ए.आई. Accompanist)– तबला, हारमोनियम, तानपुरा की स्वत: संगत अब अधिक उन्नत रूप लेगी।

11. निष्कर्ष - कृत्रिम बुद्धिमत्ता भारतीय संगीत शिक्षा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन ला रही है। यह शिक्षा को वैज्ञानिक, सुलभ और व्यवस्थित बनाती है। परंतु ए.आई.पर पूर्ण निर्भरता संगीत की भाव–प्रधानता को कम कर सकती है। ए.आई. और मानव गुरु के संयोजन से संगीत शिक्षा का भविष्य अधिक समर्थ और समृद्ध होगा। भारतीय संगीत के मूल तत्व अनुभूति, भाव, सांस्कृतिक गहराई हमेशा मानव–केन्द्रित रहेंगे। ए.आई. इनका स्थान नहीं ले सकता, परंतु यह संगीत सीखने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी एवं प्रगतिशील बना सकता है।

संदर्भ सूची-

1– संगीत शिक्षा, अंक जनवरी–फरवरी 1988 पृष्ठ संख्या–1

2– भारतीय संगीत (शिक्षा और उद्देश्य), डॉ. पूनम दत्ता, पृष्ठ संख्या –72

3– उत्कर्ष लोकेश, इनसाइट (टैक्नोलॉजी एंड इट्स रोल इन ट्वन्टि फर्स्ट सेंचुरी एजुकेशन),ऑन इंटरनेट

4– संगीत कला विहार, डॉ. नीलू शर्मा (लेख), पृष्ठ संख्या –25–26

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

मण्डला-डिण्डौरी पठार में फसल संरचना स्थानिक वितरण प्रतिरूप

• शिव कुमार दुबे
•• नवबालक मरकाम

सारांश-मध्य प्रदेश और छत्तीसगण की मध्य सीमा पर स्थित होने के कारण मण्डला-डिण्डौरी जिले में कृषि की आधुनिक पद्धतियाँ और तकनीकें प्रचलित हैं। यह वह क्षेत्र है जहां आधुनिक कृषि मशीनरी का उपयोग बहुत सीमित मात्रा में किया जाता है। क्योंकि यहां का लगभग आधा क्षेत्र पहाड़ी और पठारी इलाकों से घिरा हुआ है। जिसके कारण बड़े आधुनिक उपकरणों का उपयोग बहुत कठिन है। इसके साथ ही कृषकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर में असमानता के कारण भी आधुनिक कृषि का स्तर निम्न पाया जाता है। इस क्षेत्र की भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, संस्थागत और राजनीतिक नीतियों में महत्वपूर्ण भूमिका आधुनिक कृषि द्वारा निम्नलिखित मुद्दों, अंतिम, निम्नलिखित में निभाई जा सकती है। अत: कृषि का यह आधुनिक विकास अति आवश्यक है, जिससे कृषकों को आधुनिक कृषि पद्धतियों एवं तकनीकी पद्धतियों का लाभ मिल सके।

मुख्य शब्द- फसल संरचना में परिवर्तन,फसल प्रतिरूप

प्रस्तावना- किसी क्षेत्र में कृषि के भौगोलिक अध्ययन में फसलो के प्रकार उनका महत्व ऋतुवत व क्षेत्रवार विवरण आदि के प्रस्तुतीकरण का प्रमुख स्थान है (दुबे 1998 पृ. 119)। फसल प्रतिरूप विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में समान नही होते, कुछ क्षेत्रो मे वे उत्कृष्ट होते है, तो अन्य क्षेत्रों मे निकृष्ट। इसके अतिरिक्त कोई भी 'ास्य प्रतिरूप सर्वदा एक समान नही रहता है। यह फार्म प्रविधियों तथा आर्थिक कारको में सुधार के साथ बदलता है। (कृष्णन एवं सिंह 1972) के अनुसार, "किसी देश के फसल प्रतिरूप के अध्ययन में जलवायु तथा मिट्टी की दशाएं आधारभूत होती है, क्योंकि ये फसलो के प्रादेशिक तथा भूमिगत पर्यावरण का निर्माण करती है। फसलों पशुओं तथा कृषीय उद्यमों सहित के प्रतिरूपों से यह निश्चित होता है कि किसी खेतिहार भूमि विविध कृषि कार्यों के लिए प्रयुक्त की जा रही है। ये सब सामाजिक-आर्थिक प्रभावों पर निर्भर करते है, जिससे कृषक की उद्यम के चयन तथा कृषि में निवेश की गहनता निर्धारित होती है। (कोपॉक,

• **प्राध्यापक भूगोल,ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय (स्वशासी),रीवा,म.प्र.**
शोधार्थी, भूगोल विभाग पंडित शम्भू नाथ शुक्ला विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.)

1968) का मत कि ग्रामीण भूमि के प्रति अभिवृत्ति, समृद्धि एवं प्रविधिकी के स्तरों में भिन्नता ने महत्व में परिवर्तन उत्पन्न किये है जिससे भूदृश्य तथा भूमि उपयोग के अध्ययनो पर दूरगामी प्रभाव होगे। संभवतः सबसे क्रांतिकारी परिवर्तन सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार तथा खेतो में आधुनिक सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार तथा खेतो में आधुनिक कृषि प्राविधिकी का प्रयोग है।[1] वास्तव में भौतिक पर्यावरण की स्थानिक भिन्नता पर्यावरण के सीमाकारी प्रभाव को कम करने की तत्परता पर निर्भर करता है परिणामतः फसलो के चयन है तथा उनके अन्तर्गत क्षेत्र के प्रतिशत मे स्थान-स्थान पर काफी अंतर दृष्टिगोचर होता है (मार्गन एवं मुंटन, 1971)। वरन समय के साथ उर्वरक बीज, सिंचाई सुविधाओं के विकास तथा मानव की आवश्यकताओं के परिवर्तन के साथ भी शस्य प्ररिरूप परिवर्तित होता है। क्षेत्र की जलवायु दशाएं, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और ऐतिहासिक दशाओ का फसली प्रारूप से निकट का संबंध है। मनुष्य का योग भी फसल उत्पादन की दृष्टि से प्रदेश में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

फसली प्रारूप प्रदेश में भिन्न-भिन्न स्वरूपों का होता है क्योंकि ये धरातल की प्रकृति, मिट्टी, वर्षा की मात्रा, भूमि का ढाल, तापक्रम व सिंचाई के साधन तथा जल की उपलब्धता का फसलो के प्रारूप निर्धारण में प्रमुख योगदान है। उदाहरण के लिए जिन क्षेत्रों में कृषकों के पास भूमि सीमित होती है, तो वह केवल उन्ही फसलो का उत्पादन करते है जिनमें उनकी उदरपूर्ति हो सके। कई बार मृदा भी फसलो के प्रारूप का निर्धारण करती है, जैसे काली मृदा वाले क्षेत्रो में कपास की कृषि प्रथम फसल के रूप में की जाती है जबकि बलुई मृदा क्षेत्रो में मोटे अनाजो का उत्पादन किया जाता है। इसी प्रकार दोमट मृदा में गेहूँ, चावल व गन्ने की कृषि की जाती है।[3] मानव जनसंख्या की वृद्धि ने भी फसल प्रारूप परिवर्तन हेतु अहम योगदान दिया है जिन क्षेत्रो में भूमि कम, जनसंख्या अधिक है, वहाँ केवल खाद्यान्न फसलो का उत्पादन अधिक होता है तथा जहां जनसंख्या कम लेकिन भूमि अधिक है ऐसे क्षेत्रो मे व्यापारिक फसलो का उत्पादन बढ़ता जा रहा है।[4] भौगोलिक दशाओ में वर्षा एवं तापमान का भी योगदान सर्वाधिक है। वर्षा यदि ज्यादा होती है तो फसलो में बडी विविधता पाई जाती है लेकिन कम वर्षा वाले क्षेत्रो में केवल मोटे अनाजो का उत्पादन होता है।

अध्ययन क्षेत्र- मण्डला, डिण्डौरी पठार सतपुडा पर्वत श्रेणी के मैकाल पठारी क्षेत्र में स्थित मण्डला एवं डिण्डौरी जिला (मैकाल क्षेत्र) नर्मदा बेसिन के मध्य 22°12' से 23° 12' उ^{Y}री अक्षांश एवं 80°01' से 81°41' पूर्वी देशांतर तक लगभग 13269 वर्ग कि. मी. क्षेत्र को आबद्ध किये हुये हैं। प्रशासनिक दृष्टिकोण से 16 विकासखण्डों में विभक्त यह प्रदेश मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ राज्य के दक्षिण पूर्व में स्थित है। भौगोलिक दृष्टिकोण से प्रदेश असमतल है, जिसकी समुद्र सतह से सर्वाधिक ऊँचाई 1100 एवं न्युनतम ऊँचाई 443 मीटर है। कुल क्षेत्रफल के लगभग 33.00 प्रतिशत भू-भाग पर निरा फसल क्षेत्र एवं कुल कृषि भूमि के लगभग 26.00 प्रतिशत भू-भाग द्विफसली क्षेत्र का विस्तार अध्ययन क्षेत्र के कृषि पर्यावरण को पूर्णतः स्पष्ट करते हैं। सम्पूर्ण कृषि भूमि के लगभग 9.00 प्रतिशत भूमि पर सिंचाई सुविधाओं के विस्तार वाले अध्ययन क्षेत्र में आज भी कृषि

प्रथम हरित क्राँति के लक्ष्यों को पाने की जद्दोजेहद में है। वर्तमान समय में अध्ययन क्षेत्र में कुल कृषि भूमि में से एक बार से अधिक सिंचित भूमि का अनुपात लगभग 42.00 प्रतिशत पाया गया है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के स्रोतों के रूप में नहरें, कुऐं एवं तालाब के द्वारा क्रमशः 55.67, 12.36 एवं 011 कृषि भूमि में सिंचाई हो रही है, शेष 31.86 प्रतिशत सिंचाई अन्य साधनों द्वारा होती है। उक्त तथ्य अध्ययन क्षेत्र के जल संसाधनों एवं सिंचाई परियोजनाओं के कुप्रबंधन को स्पष्ट करते हैं। अध्ययन क्षेत्र में लगभग 1003 के आसपास तालाब एवं पोखर पाये जाते हैं, जिनसे मात्र 23 हेक्टेयर कृषि भूमि में सिंचाई सुविधा प्राप्त हो रही है। प्रस्तावित अध्ययन में इन्हीं तथ्यों को समग्रता के साथ स्पष्ट

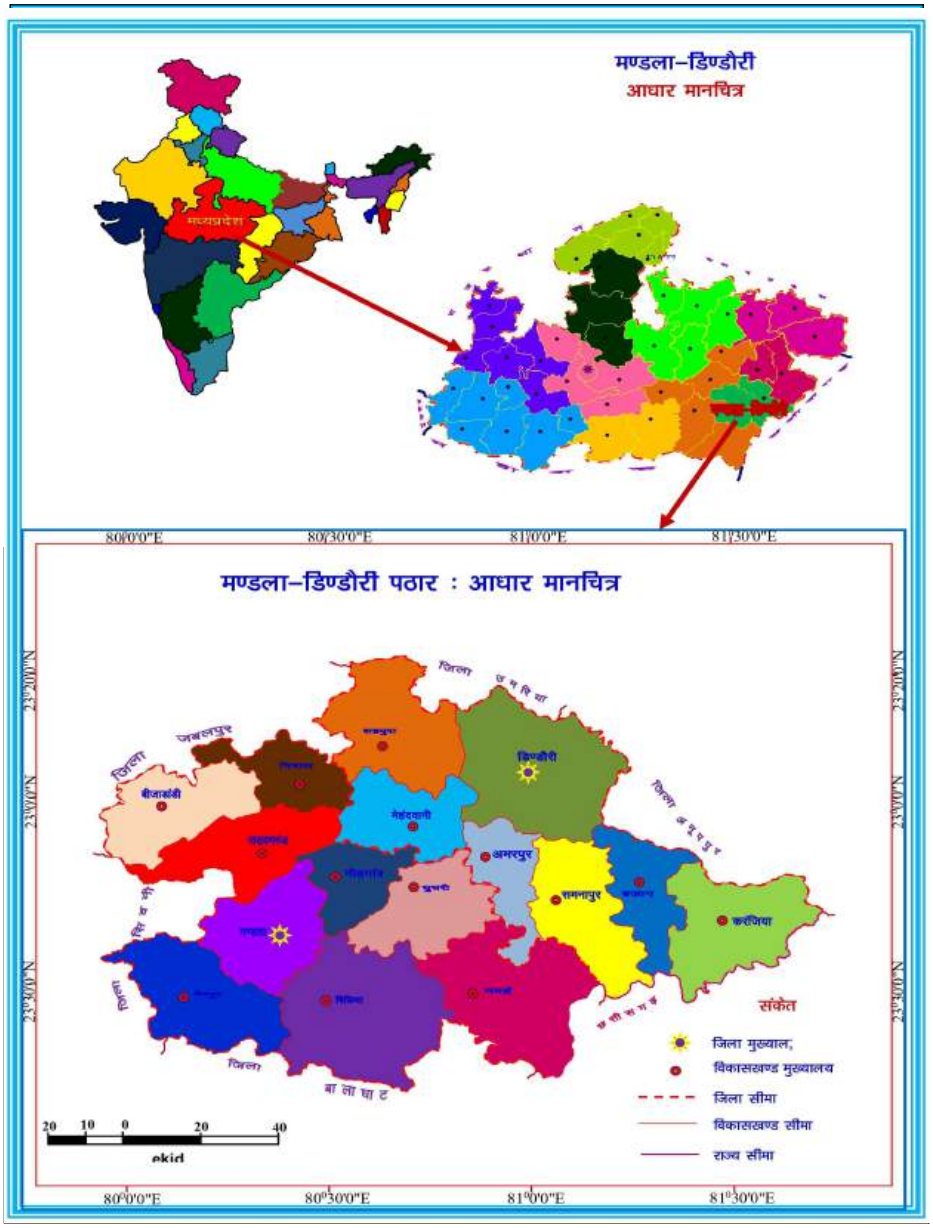

करने का प्रयास किया जावेगा। इस मण्डला–डिण्डौरी जिले में खेती के लिए कुल फसली क्षेत्र का लगभग 75 प्रतिशत कृषि पृष्ठभूमि का उपयोग किया जाता है। कुल फसली क्षेत्र का लगभग 35 प्रतिशत मप्र में सबसे अधिक खेती की जाती है और इसके अलावा कुल फसली क्षेत्र का 45 प्रतिशत इस खेती के लिए उपयोग किया जाता है और साथ ही भारत में खेती के लिए क्रमशः प्रस्तावित से केवल 15 प्रतिशत अधिक उपयोग किया जाता है।

भोजन मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है जो उसे जीवित रखता है। उसका शारीरिक और मानसिक विकास तथा उसकी क्षमताएँ इस बात पर निर्भर करती हैं कि वह क्या खाता है। इसी कारण, सभी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, लोगों को गरीबी से बाहर निकालने और एक सम्मानजनक, आरामदायक जीवन सुनिश्चित करने की चिंता वैश्विक स्तर पर व्यक्त की जा रही है। इसे मानव विकास के अनेक पहलुओं में से एक माना जाता है। यह एक कठिन कार्य है, क्योंकि दुनिया में नौ में से एक व्यक्ति भूख से पीड़ित है (सुचिरादिप्ता और सरवनन, 2017:107)। एशियाई देशों में जनसंख्या के उच्च संकेंद्रण के साथ यह समस्या और जटिल हो जाती है, जहाँ सबसे अधिक कुपोषित आबादी रहती है (FAO, 2015)। मानव विकास सुनिश्चित करने के लिए, सबसे बड़ा मिशन, सहस्राब्दी विकास लक्ष्य, 2000 में संयुक्त राष्ट्र के मिलेनियम शिखर सम्मेलन में शुरू किया गया था, जहाँ बड़ी संख्या में देशों ने वैश्विक साझेदारी का वादा किया था और 2015 की समय–सीमा के साथ समयबद्ध मात्रात्मक लक्ष्य निर्धारित किए थे।

भारत और अध्ययन क्षेत्र का अधिकतम भाग दो मुख्य फसल मौसमों, खरीफ और रबी, के आसपास घूम रहा है। खरीफ सीजन की बुआई अवधि जून के मध्य से शुरू होती है और अक्टूबर के महीने में समाप्त होती है, जबकि रबी सीजन की शुरुआत अक्टूबर से होती है और कटाई मार्च या मध्य अप्रैल में होती है। अध्ययन क्षेत्र में खरीफ मौसम में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलें चावल, मक्का, ज्वार, अरहर और गन्ना हैं जिनकी आवश्यकता होती है।

उच्च तापमान और उच्च मात्रा में वर्षा। रबी मौसम की फसलें गेहूं, जौ, मसूर, चना, मटर, तोरिया और सरसों और अलसी हैं जिनके लिए कम तापमान और मध्यम मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है।

सारणी क्र 1
मण्डला-डिण्डौरी पठार में फसलो का वितरण
(सन् 1999-2000 से 2015-16)

फसल का नाम	1999–2000		2015–16		प्रतिशत परिवर्तन में	क्षेत्र में परिवर्तन	अंतर प्रतिशत में
	हेक्टेयर	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत			
धान	121.4	23.36	213.4	35.45	75.78	92.0	12.10
गेहूँ	72.1	13.87	75.3	12.51	4.44	3.2	-1.36
मक्का	26.0	5.00	36.2	6.01	39.23	10.2	1.01
ज्वार	138.2	26.59	62.8	10.43	-120.06	-75.4	-16.15
अन्य अनाज	7.6	1.46	5.4	0.89	-41.79	-2.2	-0.57
योग अनाज	**365.3**	**70.28**	**393.1**	**65.30**	**7.60**	**27.8**	**-4.97**
चना	25.4	4.89	18.4	3.05	-38.19	-7.0	-1.83
मसूर	17.6	3.39	57.0	9.47	223.86	39.4	6.08
मटर	12.3	2.37	31.9	5.30	159.27	19.6	2.93
उडद	9.7	1.87	6.6	1.10	-46.30	-3.1	-0.76
अन्य दलहन	5.9	1.14	15.4	2.56	161.02	9.5	1.42
योग दलहन	**70.9**	**13.64**	**129.3**	**21.48**	**82.37**	**58.4**	**7.84**
कुल खाद्यान्न	**436.2**	**83.92**	**522.4**	**86.79**	**19.75**	**86.2**	**2.87**
कुल तिलहन	**82.8**	**15.93**	**77.6**	**12.89**	**-6.74**	**-5.2**	**-3.04**
गन्ना	0.8	0.15	2.0	0.33	149.07	1.2	0.18
कुल फसली क्षेत्र	**519.8**	**100**	**601.9**	**100**	**15.80**	**82.1**	**519.8**

Source: Land Records and Settlement Office, Mandla-Dindori, Madhya Pradesh, 1975-76 and 2015-16

2015–16 में अध्ययन क्षेत्र का कुल खेती योग्य क्षेत्र 601.9 हजार हेक्टेयर है, जिसमें से 65.30 प्रतिशत अनाज और बाजरा, 21.48 प्रतिशत दालें और केवल 13.22 प्रतिशत अन्य फसलें जैसे रेपसीड सरसों, गन्ना, सब्जियां आदि के लिए समर्पित है। अध्ययन क्षेत्र के अनाज और बाजरा में चावल (कुल फसल क्षेत्र का 35.45 प्रतिशत), गेहूं (14.17 प्रतिशत), मक्का (7.40 प्रतिशत) और कोडोन–कुटकी 5.83 प्रतिशत हैं। जबकि दालों में, कुल फसल क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण फसलें मसूर (9.47 प्रतिशत), मटर (5.30 प्रतिशत), चना (3.05 प्रतिशत), और उड़द (1.10 प्रतिशत) हैं।

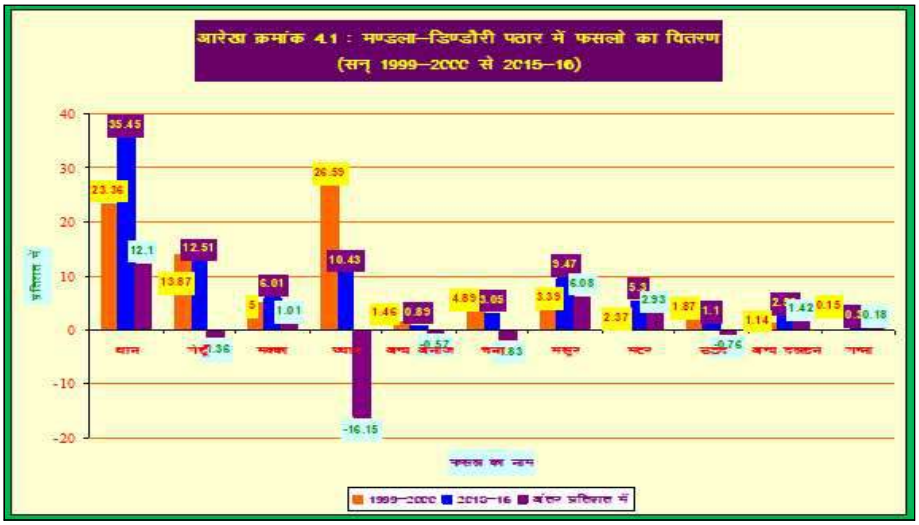

दालें- अध्ययन क्षेत्र में दालें भी महत्वपूर्ण फसलें हैं और कुल फसल क्षेत्र का लगभग 21.48 प्रतिशत विभिन्न प्रकार की दालों के अंतर्गत आता है। अध्ययन क्षेत्र में मसूर (9. 47 प्रतिशत), मटर (5.30 प्रतिशत), चना (3.05 प्रतिशत), उर्द (1.10 प्रतिशत) और कुछ अन्य दालें (2.56 प्रतिशत) कुल फसल में शामिल हैं। क्षेत्र। कुल फसल क्षेत्र में मसूर की खेती मोहगांव ब्लॉक में सबसे अधिक (16.82 प्रतिशत) जबकि नैनपुर ब्लॉक में सबसे कम (5.08 प्रतिशत) की जाती है। चित्र 3.2 में विभिन्न दालों का ब्लॉक–वार डेटा उपलब्ध नहीं होने के कारण, स्थानिक वितरण पैटर्न नहीं दिखाया जा सकता है। अत: दालों के कुल क्षेत्रफल के आधार पर चित्र 3.3 (D) में दर्शाया गया है। दलहन के तहत क्षेत्र के ब्लॉक–वार स्थानिक वितरण से पता चला है कि मोहगांव ब्लॉक कुल फसल क्षेत्र का उच्चतम प्रतिशत (33.27 प्रतिशत) साझा करता है जबकि नैनपुर ब्लॉक (15.08) कुल फसल क्षेत्र का सबसे कम प्रतिशत साझा करता है। दलहन के तहत क्षेत्र का सबसे अधिक प्रतिशत हिस्सा 3 ब्लॉकों का है, ये हैं बीजाडांडी, नारायणगंज और मोहगांव, जो कुल फसल क्षेत्र का क्रमश: 30.25 प्रतिशत, 31.54 प्रतिशत और 33.27 प्रतिशत है। दूसरी ओर, 9 ब्लॉक ऐसे हैं जहां कुल फसल क्षेत्र के 21.14 प्रतिशत से भी कम क्षेत्र में दालें उगाई जाती हैं।

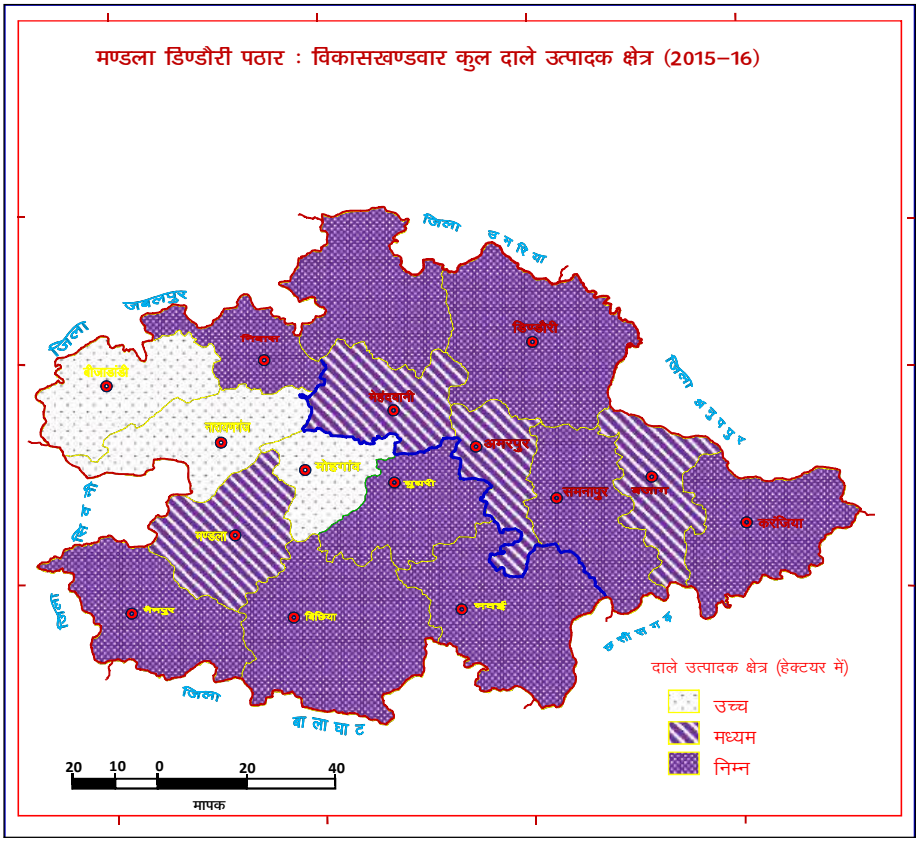

Source: Calculated and Prepared on the basis of District Land Record Office, Mandla and Dindori,

यहां कुछ मात्रा में तिलहन की भी पैदावार होती है लेकिन फसल क्षेत्र में उनका प्रतिशत चावल, गेहूं और मक्का की तुलना में कम है। हालाँकि, तिलहन के लिए सबसे महत्वपूर्ण फसल रेपसीड सरसों है जो छोटे हिस्से को छोड़कर पूरे क्षेत्र में उगाई जाती है। कुल फसली क्षेत्र का केवल 0.31 प्रतिशत भाग गन्ने, सब्जियों और फलों आदि के रूप में नकदी फसल की खेती के अंतर्गत है।

फसल संरचना में परिवर्तन- अध्ययन क्षेत्र में फसल पैटर्न में बदलाव से यह देखा गया है कि कृषि भूमि उपयोग में 1999-2000 से 2015-16 तक भारी बदलाव देखा गया है (तालिका 3.2)। इस अवधि के दौरान 1999-2000 में कुल फसल क्षेत्र 519.8 हजार हेक्टेयर था जो 2015-16 में बढ़कर 601.9 हजार हेक्टेयर हो गया है। इसका मतलब है कि कुल फसली क्षेत्र में लगभग 15.80 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस अवधि के दौरान कोदोन-कुटकी, चना, उर्द और तिलहन की खेती के क्षेत्र में गिरावट दर्ज की गई है। इसमें से 86.2 हजार हेक्टेयर में खाद्य फसलें शामिल हैं और जबकि 4 हजार हेक्टेयर में गैर-खाद्य फसलों में गिरावट आई है। दलहनी फसलों की बढ़ोतरी में बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है और दालों की बढ़ोतरी दर 82.37 फीसदी है जबकि अनाज वाली फसलों की बढ़ोतरी दर 7.60 फीसदी है.

अनाज और बाजरा में, सबसे अधिक परिवर्तन कोडोन-कुटकी की फसल में देखा गया है, जो कि वर्ष 1999-2000 से 2015-16 के दौरान 120.06 प्रतिशत कम है। 1975-76 में कोडोन-कुटकी का कुल फसली क्षेत्र 138.2 हजार हेक्टेयर था और 2015-16 में इसमें कमी आई और यह 62.8 हजार हेक्टेयर हो गया। सबसे अधिक वृद्धि चावल (92 हजार हेक्टेयर) के क्षेत्र में हुई, इसके बाद मसूर (39.4 हजार हेक्टेयर) और मक्का (10.2 हजार हेक्टेयर) का स्थान रहा।

दालों के रकबे में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है। इस अवधि में दलहन की विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल 58.4 हजार हेक्टेयर तक बढ़ गया, जो आधार वर्ष (1999-2000) से लगभग 82 प्रतिशत अधिक है। मसूर (223.86 प्रतिशत) पहले स्थान पर है, उसके बाद अन्य दालें (161.02 प्रतिशत) और मटर (159.27 प्रतिशत) हैं। उर्द के कृषि क्षेत्र में 46.30 प्रतिशत की कमी आयी है। 1099-2000 से 2015-16 की अवधि के दौरान तिलहन का क्षेत्रफल 5.2 हजार हेक्टेयर (6.74 प्रतिशत) कम हो गया। वहीं गन्ने का रकबा सिर्फ 1.2 हजार हेक्टेयर ही बढ़ा है।

4.2 रबी एवं खरीफ का स्थनीय वितरण-

मण्डला-डिण्डोरी जिले में रबी एवं खरीफ फसले उत्पन्न की जाती है, उनमें खाद्य फसलों का प्रमुख स्थान है। संभाग के कुल बोया गया क्षेत्र 1528082 का 766433 हे. में खरीफ की फसल जो कुल क्षेत्रफल का 49.50 प्रतिशत है तथा 7716049 हे0 में रबी फसलो का उत्पादन किया जाता है, जो कुल क्षेत्रफल का 50.50 प्रतिशत है (सारणी क्र. 4.2 से)। खाद्य एवं अखाद्य फसलों को मिलाकर संभाग में फसलो के उगने की अवधि के अनुसार पैदा की जाने वाली फसलो को दो भागो में बांटा गया है-

1 खरीफ फसल 2 रबी फसल

खरीफ फसले- खरीफ फसलो को बोने का कार्य जून एवं जुलाई में शुरू होता है तथा

अक्टूबर नवम्बर तक इनकी कटाई हो जाती है। खरीफ फसलो के अन्तर्गत मुख्य रूप से सोयाबीन, ज्वार, मक्का, मूंग, तिल, सांमा, कोदो, कुटकी एवं धान है।6 धान का उत्पादन संभाग में द्वितीय कोटि की फसल के रूप में होता है, जो कुल क्षेत्रफल के एक चौथाई भाग में पैदा की जाती है। मण्डला–डिण्डौरी के कुल क्षेत्रफल के 49.50 प्रतिशत क्षेत्र खरीफ फसलो का उत्पादन किया जाता है। खाद्य एवं अखाद्य को मिलाकर संभाग के देवसर (69.76 प्रतिशत), कुसमी (67.68 प्रतिशत), बैढन (65.99 प्रतिशत) में सर्वाधिक खरीफ फसलें उत्पादित होती है जो क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान रखते है जबकि न्यूनतम गंगेव (39.77 प्रतिशत) विकासखण्ड में भाग पर खरीफ फसले उत्पादित होती है (मानचित्र क्र 4.2 से))।

रबी फसले- रबी फसलो की बुवाई अक्टूबर नवम्बर से शुरू होती है तथा मार्च अप्रैल में इसकी कटाई शुरू हो जाती है। कुछ फसले जैसे तुअर इनकी बुवाई जुलाई मे होती है तथा कटाई मार्च महीने में की जाती है। सारणी क्र. 4.2 एवं मानचित्र से 4.2 से स्पष्ट है कि संभाग के कुल क्षेत्रफल का 50.50 प्रतिशत क्षेत्र रबी फसलो के अन्तर्गत है। संभाग के गंगेव (60.23 प्रतिशत), नागौद (58.60 प्रतिशत), सोहावल (56.80 प्रतिशत) विकासखण्ड में है, जो क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान रखते है जो खाद्य एवं अखाद्य को मिलाकर उत्पादित की जाती है जो सर्वाधिक है, जबकि न्यूनतम कुसमी (32.32 प्रतिशत) विकासखण्ड में रबी की फसले उत्पादित की जाती है। रबी की फसलो में गेंहू का प्रथम स्थान है, जो संभाग के लगभग एक तिहाई भाग पर की जाती है दूसरे स्थान पर चना है जो संभाग के दसवें भाग पर उत्पादित किया जाता है (सारणी क्र. 2)।

सारणी क्रमांक - 2

मण्डला-डिण्डौरी पठार : विकासखण्ड वार

खरीफ एवं रबी फसलों का प्रतिशत (सन् 2011-2020)

क्रं. सं.	विकासखण्ड	खरीफ		रबी		रबी और खरीफ का योग
		बोयी गई भूमि का क्षेत्रफल (हे0में0)	प्रतिषत	बोयी गई भूमि का क्षेत्रफल (हे0में0)	प्रतिषत	
1	नैनपुर	30570	44.23	27654	40.01	58224
2	मण्डला	24924	45.97	18634	34.37	43558
3	मोहगाँव	15464	47.18	19161	58.45	34625
4	घुघरी	26432	40.37	10728	16.38	37160
5	बिछिया	28560	42.16	14086	20.80	42646
6	मवई	22766	42.87	8495	16.00	31261
7	निवास	13684	34.17	10757	26.86	24441
8	बीजाडांडी	11512	25.68	9217	20.56	20729
9	नारायणगंज	13459	33.77	10887	27.32	24346
10	डिण्डौरी	31314	39.83	13516	17.19	44830
11	अमरपुर	16553	45.83	6138	16.99	22691
12	समनापुर	18317	54.64	7879	23.50	26196
13	बजाग	16391	47.47	10389	30.09	26780
14	करंजिया	18000	54.27	15153	45.69	33153
15	शहपुरा	28566	35.87	12243	15.37	40809
16	मेहंदवानी	19388	42.53	3374	7.40	22762
मण्डला–डिण्डौरी योग		**335900**	**41.55**	**198311**	**24.53**	**534211**

स्रोत : जिला सांख्यिकीय पत्रिका, मण्डला-डिण्डोरी (2020)

Source: Calculated and Prepared on the basis of District Land Record Office, Mandla and Dindori,

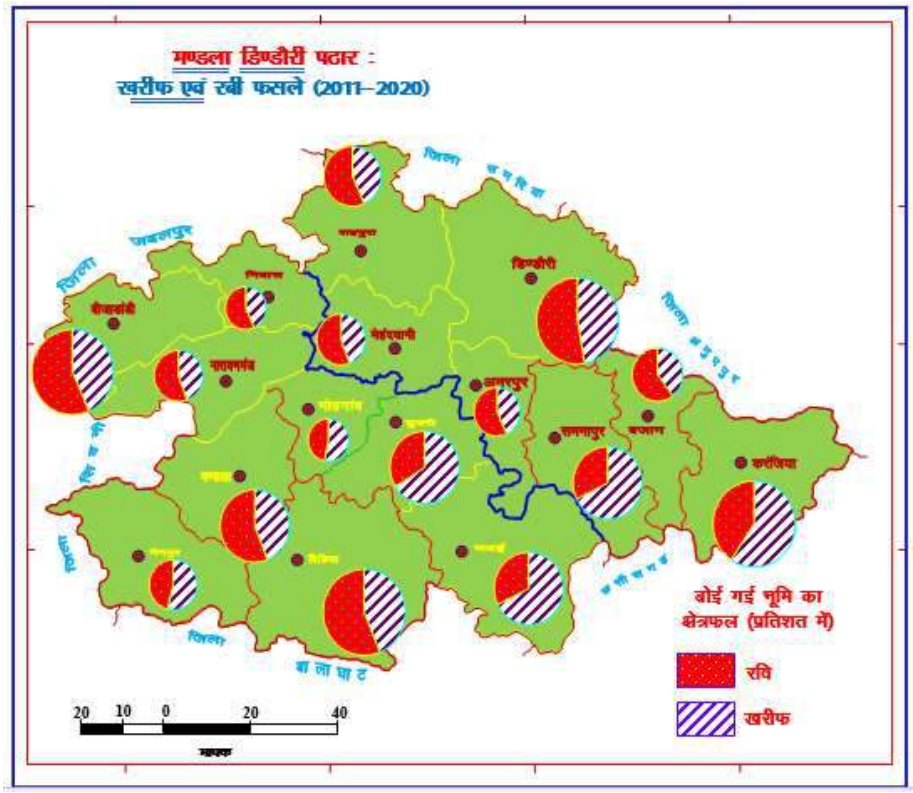

3 फसल प्रतिरूप– खाद्यान्न फसलो को तीन भागो में विभाजित किया जा सकता है –
(1) खाद्यान /अनाज (2) दलहन (3) तिलहन

खाद्य फसलो का वितरण– मण्डला–डिण्डोरी जिले में सन् 1999–2000 में कुल फसली क्षेत्र के 63.98 प्रतिशत भाग में खाद्यान्न का उत्पादन हुआ जिसमें धान 35.47 गेहूँ, 12.51 प्रतिशत, ज्यार 6.02 प्रतिशत, मक्का 3.05 अन्य अनाज 6.93 प्रतिशत, मक्का 2.64 प्रतिशत तथा ज्वार 2.59 प्रतिशत हुआ। (मानचित्र क्रमांक 4.5)

अध्ययन क्षेत्र में सन् 2010–11 में खाद्यान्न क्षेत्र में परिवर्तन हुआ जिससे कुल फसली क्षेत्र के 63.44 प्रतिशत भाग में घटकर अब खाद्यान्न फसलों का उत्पादन होने लगा। जिसमें गेहूँ 29.87 प्रतिशत, धान 25.31 प्रतिशत, अन्य अनाज 4.34 प्रतिशत, मक्का 2.24 प्रतिशत, ज्वार 1.68 प्रतिशत होने लगा है।(मानचित्र क्रमांक 4.6) इस प्रकार मण्डला–डिण्डोरी जिले में खाद्यान्न फसलों में सन् 2011–2020 में उत्पादन घटा है इनके स्थान पर दलहन एवं तिलहन फसलों का क्षेत्रफल बड़ा है।

सारणी क्र. 4.3
मण्डला-डिण्डोरी जिले में विकासखण्ड
वार खाद्यान्न फसलों का शस्य प्रतिरूप (सन् 1999-2010)

क्रं. सं.	विकासखण्ड	कुल कृषित क्षेत्रफल हे0	कुल कृषित क्षेत्रफल का प्रतिषत					
			गेहूँ	धान	ज्वार	मक्का	अन्य अनाज	योग अनाज
1	नैनपुर	69115	43.02	27.79	2.17	2.63	5.3	80.91
2	मण्डला	54218	48.28	17.1	2.72	3.21	9.31	80.62
3	मोहगाँव	32780	47.23	4.22	7.36	3.45	9.98	72.24
4	घुघरी	65477	38.7	3.94	9.1	1.55	6.33	59.62
5	बिछिया	67735	52.81	9.24	4.02	1.74	7.43	75.24
6	मवई	53104	46.91	2.78	7.63	1.75	4.9	63.97
7	निवास	40052	27.59	19.37	7.71	3.34	4.17	62.18
8	बीजाडांडी	44821	25.58	17.57	7.73	6.42	6.86	64.16
9	नारायणगंज	39854	29.78	13.91	8.79	3.95	9.22	65.65
10	डिण्डौरी	78616	28.4	12.6	7.87	2.52	5.13	56.52
11	अमरपुर	36122	31.83	9.39	6.37	2.64	5.5	55.73
12	समनापुर	33526	40.26	12.08	4.77	3.29	10.32	70.72
13	बजाग	34526	29.4	12.34	4.6	5.24	12.07	63.65
14	करंजिया	33168	30.62	6.44	3.16	4.5	9.2	53.92
15	शहपुरा	79638	29.61	19.49	10.71	4.31	5.88	70
16	मेहंदवानी	45583	18.42	6.55	7.53	1.6	3.53	37.63
	मण्डला–डिण्डौरी पठार योग	**808335**	**35.47**	**12.51**	**6.02**	**3.05**	**6.93**	**63.98**

स्रोत : अधीक्षक भू अभिलेख विभाग, जिला मण्डला-डिण्डौरी (2010)

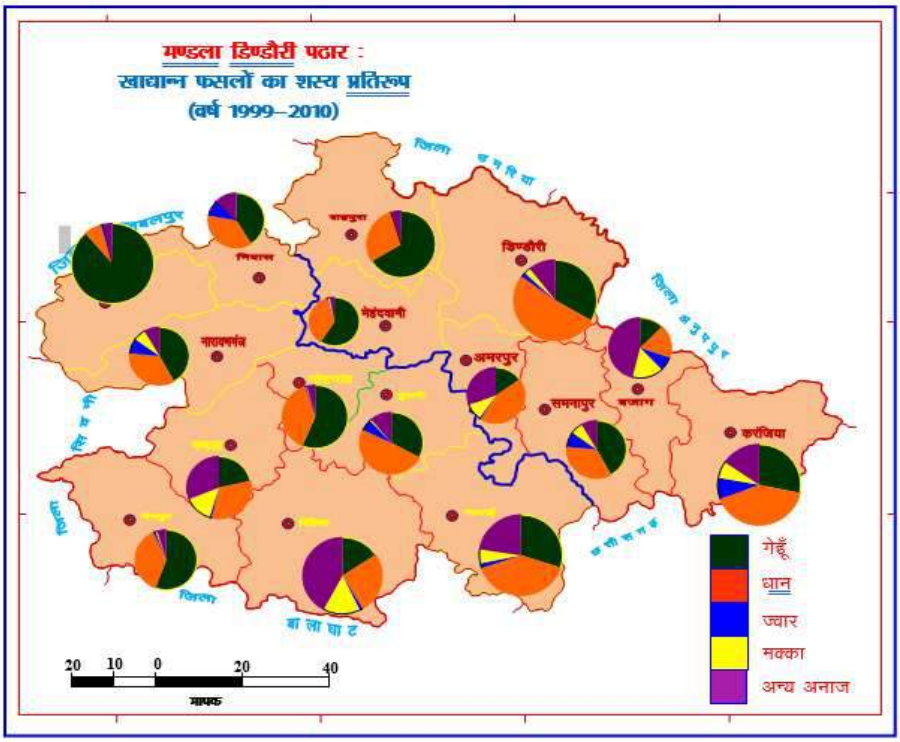

सारणी क्र. 4.4
मण्डला-डिण्डोरी जिले में विकासखण्ड वार
खाद्यान्न फसलों का शस्य प्रतिरूप (सन् 2011-2020)

क्रं. सं.	विकासखण्ड	कुल कृषित क्षेत्रफल हे0	कुल कृषित क्षेत्रफल का प्रतिषत					
			गेंहू	धान	ज्वार	मक्का	अन्य अनाज	योग अनाज
1	नैनपुर	69115	26.66	18.91	3.60	0.03	2.25	51.45
2	मण्डला	54218	36.01	12.12	0.01	0.02	1.79	49.95
3	मोहगाँव	32780	35.32	21.68	0.01	0.04	1.52	58.52
4	घुघरी	65477	30.36	17.85	0.02	0.05	1.77	50.05
5	बिछिया	67735	34.08	20.51	0.03	0.25	3.08	57.95
6	मवई	53104	28.74	24.66	0.08	0.02	1.37	54.87
7	निवास	40052	32.89	36.18	0.05	0.14	1.52	70.78
8	बीजाडांडी	44821	32.88	24.56	0.11	0.20	1.66	59.41
9	नारायणगंज	39854	28.75	26.54	5.50	3.14	2.83	65.41
10	डिण्डौरी	78616	32.65	30.24	2.57	0.67	4.31	70.40
11	अमरपुर	36122	32.49	31.79	1.54	3.09	5.63	74.54
12	समनापुर	33526	23.46	35.09	0.72	5.70	14.11	79.07
13	बजाग	34526	28.99	30.60	6.01	4.33	2.22	72.14
14	करंजिया	33168	14.39	23.67	1.47	11.44	20.03	71.01
15	शहपुरा	79638	11.75	15.71	5.81	11.48	16.04	60.78
16	मेहंदवानी	45583	19.94	25.89	0.78	10.51	12.70	69.81
	मण्डला–डिण्डौरी पठार योग	**808335**	38.49	22.63	0.12	2.31	3.27	62.13

स्रोत : अधीक्षक भू अभिलेख विभाग, मण्डला-डिण्डोरी (2020)

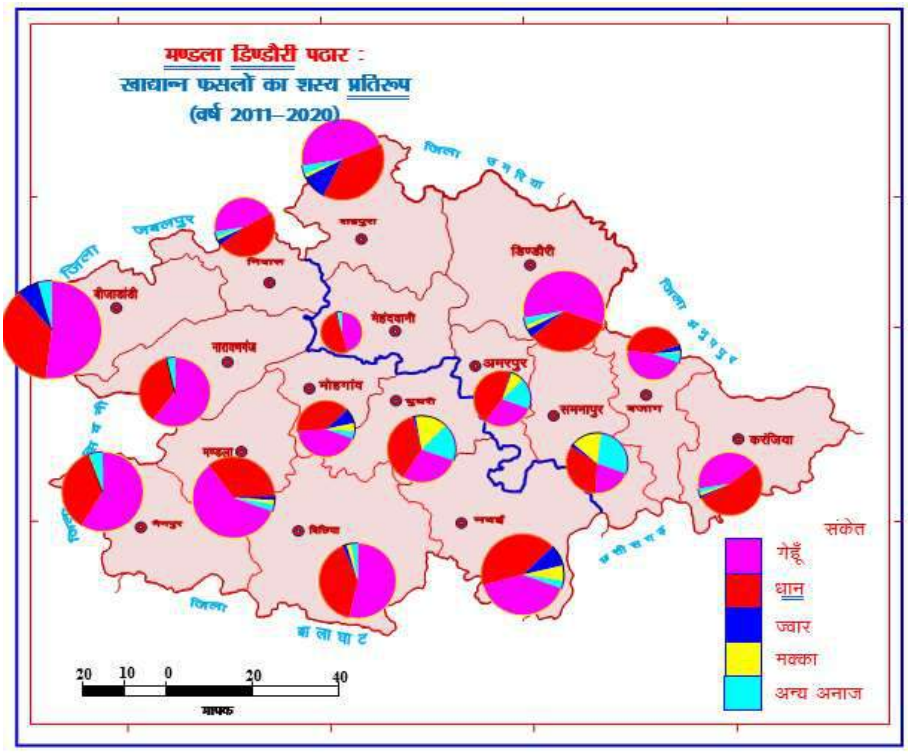

अध्ययन क्षेत्र में सन् 2011–2020 में कुल बोये गये क्षेत्र का 71.05 प्रतिशत भाग अनाज 22.88 प्रतिशत भाग में दलहन तथा 6 प्रतिशत भाग पर तिलहन का उत्पादन किया जाता है।

अनाजों का उत्पादन तथा वितरण- मण्डला–डिण्डोरी जिले के पांच अनाजो को वर्तमान अध्ययन में सम्मिलित किया गया है जिनमें गेहू, चावल (धान), मक्का, ज्वार तथा अन्य अनाज जिसमें कोदो, कुटकी, सम्मिलित है, इन सभी फसलो के अन्तर्गत मण्डला–डिण्डोरी जिले का 71.05 प्रतिशत भाग सम्मिलित है। खाद्यान्न फसलों में गेहू प्रथम एवं चावल (धान) की कृषि द्वितीय फसल के रूप में की जाती है।

निष्कर्ष- मण्डला–डिण्डौरी पठार की कृषि भूमि उपयोग अभिलक्षणों का अध्ययन करने पर स्पष्ट है कि यहाँ शस्य संयोजन में अन्य जिलों की तुलना में कम फसलें सम्मिलित हुई हैं क्योंकि संभाग में खरीफ एवं रबी की फसलों के अन्तर्गत राई सरसों दलहनों में चना और खाद्यान्नों में गेहूँ शस्य संयोजन में क्रमशः प्रथम, द्वितीय और तृतीय कोटि की फसलें हैं। अन्य फसलों का कुल क्षेत्र में प्रतिशत कम होने के कारण सम्मिलित नहीं की गई। अध्ययन क्षेत्र में शस्य तीव्रता सूचकांक अधिकांश तहसीलों में 120 से 140 के बीच है जो कृषि विकास की दृष्टि से अनुकूल है। शस्य विविधता की दृष्टि से मण्डला–डिण्डौरी पठार के उन भागों में विविधता कम है जहाँ वर्ष में एक ही फसल उत्पन्न की जा सकती है और भौगोलिक परिस्थितियाँ किसी फसल विशेष के विकास में सहायक हैं। भूमि उपयोग क्षमता का आंकलन कोटि गुणांक विधि से करने पर स्पष्ट है कि उच्चतम भूमि उपयोग क्षमता के अन्तर्गत मात्र 06 तहसीलें इसी प्रकार न्यून भूमि उपयोग क्षमता के अन्तर्गत मात्र 06 तहसीलें सम्मिलित हैं। शेष 10 तहसीलें सामान्य से उच्च भूमि उपयोग क्षमता पाई जाती है।

संदर्भ सूची-

- कुमार, प्रमीला एवं श्री कमल शर्मा (1985) : कृषि भूगोल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल.
- कुण्डु, अनिल कुमार एवं सूर्यमणि मिश्र (1988) :भूमि उपयोग मूल्यांकन एवं मानचित्रण, राष्ट्रीय एटलस एण्ड थिमैटिक मैपिंग आर्गनाइजेशन, कलकत्ता.
- Laut, P. (1968) : Agriculture Geography, T.Nelson Ltd., Austrelia.
- Mandal, R.B. (1982) : Land Utilization, Theory and Practice, Concept Publication Co. New Delhi.
- Mishra, P (1984) : Soil Productivity and Crop Potential, New, Delhi.
- Mishra, R.C. and Mathur P.C. (1955) : Pre-Bundelkhand Granitic Rocks in Mahoba and Kabri Area (Hamirpur) Prec 22nd, National Academy of Sciences, Vol. 22.
- Mishra, R.P. (1968) : Diffusion of Agricultural Innovations: A Theoritical and Empirical Study, Prasaranga, Mysore.
- Mishra, R.P. (1978) : Regional Development Planning in India, A New Strategy, New Delhi.
- पाण्डेय जे.एन.एवं एस.आर.कमलेश (1999) : कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर (उ.प्र.).
- पाण्डेय, जगत नाराण (1969) : पूर्वी उत्तरप्रदेश के शस्य संयोजन क्षेत्र, उत्तर भारत भूगोल

पत्रिका, गोरखपुर, अंक–5.

- Pandey, M.P. (1979): The Impact of Irrigation on Rural Development, Concept Publishing Co. New Delhi.
- Pandit, A.D. (1965): Application of Productivity, Concept to Indian Agiricultre Productivity, Special Issue on Agricultural Productivity.
- Powers, W.L. (1954): Soil and Land Use Capabilities in Iraq, Geographical Review, Vol. XIIV, No.3.
- Raj K.N. (1975): Agricultural Develpment and Distribution of Land Holdings, Indian Journal of Agricultural Economics, Vol. 30 No.1.
- Rajgopalan, C. and Singh, J. (1971) : Adoption of Agricultural Innovations, National Publishing House, New Delhi.
- Ramchandran R (1963) : Crop. Regions of India. The Indian Geographical Journal, Vol. 38.
- Randhawa, M.S. (1958) : Agricultural and Animal Husbandry in India, New Delhi.
- राव, बी.पी. (1983): चकबन्दी एवं भूमि सुधार : एक पुनरावलोकन, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, अंक–193 संख्या–1.
- Rao,V.L.S. (1956): Land Use Survey in India, its Scope and Problems, Proceedings of the International Geography, India.
- Ray, Chaudari, S.P. (1966) : Land and Soil, NBT, New Delhi.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत-बांग्लादेश संबंध

• नवीन सिंह राजपूत
•• कमलेश चेलक

सारांश-वर्तमान शोध पत्र भारत और बांग्लादेश के द्विपक्षीय संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, संरचनात्मक विकास, आर्थिक सहभागिता, सुरक्षा सहयोग तथा समकालीन चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। 1971 के मुक्ति संग्राम के समय से भारत और बांग्लादेश के संबंधों की नींव अत्यंत मजबूत रही है, जिसने दोनों देशों को सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से जोड़ा है। भूमि सीमा समझौते, परिवहन एवं ऊर्जा कनेक्टिविटी, क्षेत्रीय सहयोग तथा व्यापारिक वृद्धि ने दोनों देशों के रिश्तों को नई दिशा प्रदान की है। पिछले एक दशक में द्विपक्षीय व्यापार, अवसंरचना विकास, विद्युत सहयोग और रक्षा अभ्यासों ने संबंधों को और सुदृढ़ किया है। इसके साथ ही शोध पत्र में तीस्ता जल विवाद, अवैध प्रवासन, मादक पदार्थ एवं मानव तस्करी, तथा बांग्लादेश में चीन के बढ़ते प्रभाव जैसे विवादास्पद मुद्दों को भी आलोचनात्मक रूप से विवेचित किया गया है। हाल के राजनीतिक परिवर्तनों विशेषकर बांग्लादेश में शेख हसीना सरकार के बाद उत्पन्न अस्थिरता, अंतरिम नेतृत्व की नीतियों, हिंदू अल्पसंख्यकों पर हमलों तथा भारत-विरोधी माहौल ने द्विपक्षीय संबंधों में तनाव उत्पन्न किया है। शोध पत्र इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि भारत-बांग्लादेश संबंध ऐतिहासिक रूप से मजबूत होने के बावजूद राजनीतिक अस्थिरता, सुरक्षा चुनौतियाँ और बाहरी शक्तियों के दबाव के कारण कई जटिलताओं का सामना कर रहे हैं। इन चुनौतियों के समाधान के लिए संयुक्त कार्यबल, स्मार्ट सीमा प्रबंधन, डिजिटल कनेक्टिविटी कॉरिडोर और परस्पर विश्वास की नीति अत्यंत आवश्यक है। सतत संवाद, आर्थिक सहयोग और सुरक्षा समन्वय ही आने वाले समय में इन संबंधों को स्थिर और सकारात्मक दिशा प्रदान कर सकते हैं।

मुख्य शब्द- द्विपक्षीय सहयोग, आर्थिक साझेदारी, अवैध प्रवासन, सीमा प्रबंधन, चीन का प्रभाव

प्रस्तावना- भारत के पडोस में स्थित होने के नाते भारत एवं बांग्लादेश संबंध बहुत महत्वपूर्ण हो जाते है, क्योंकि यदि भारत का संबंध बांग्लादेश के साथ अच्छे होते है, तो ये

• सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, नवीन शासकीय महाविद्यालय, जालबांधा, खैरागढ-छुईखदान-गंडई, (छ.ग.)
•• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय डॉ.वा.वा.पाटनकर कन्या स्नातकोत्तर महा. दुर्ग, छ.ग.

ना केवल भारत के आंतरिक सुरक्षा के लिए बेहतर है, बल्कि चीन के बढते हुए प्रभाव को रोकने में भी मददगार साबित होगा। जैसा कि बांग्लादेश भारत की पूर्वी सीमा पर स्थित एक राज्य है। यह चारों तरफ से भारत से घीरा हुआ है। जब भारत का विभाजन होता है तब भारत और पाकिस्तान दो स्वतंत्र राज्यों का निर्माण हुआ। जब 1947 में भारत का विभाजन हुआ तब पाकिस्तान दो हिस्सों में बटा हुआ था। जिसमें पश्चिमी पाकिस्तान एवं पूर्वी पाकिस्तान का उदय हुआ था। जिसमें जो पूर्वी पाकिस्तान को हम बांग्लादेश के नाम से जानते है। पूर्वी पाकिस्तान तीन ओर से भारत के उत्तरीय राज्यो से घिरा हुआ था। पूर्वी एवं पश्चिमी पाकिस्तान के बीच भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक वि'ामता विद्यमान थी। भौगोलिक दृष्टिकोण की दृष्टि से इन दोनों के मध्य में भारत देश स्थित है। पूर्वी पाकिस्तान में बांग्ला भाषी लोगों का निवास था एवं पश्चिमी पाकिस्तान में उर्दु भाषी लोग थे। इसी बीच मे पश्चिमी पाकिस्तान ने पूर्वी पाकिस्तान अर्थात बांग्लादेश में अपनी भाषा को थोपना चाहा, और उर्दु भाषा को राज्य भाषा घोषित कर दिया गया। जिससे इन दोनों के मध्य भाषायी युद्ध का संकट उत्पन्न हो गया। पूर्वी पाकिस्तान की जनसंख्या पश्चिमी पाकिस्तान से अधिक होने के बावजूद भी बांग्लादेश आर्थिक, सांस्कृतिक रूप से कमजोर भी होता गया एवं तत्कालिन समय में बांग्ला भाषी लोगों ने अलगाव की माँग की, एवं तत्पश्चात् दोनों राज्यों के बीच विद्रोह होना प्रारंभ हो गया। विद्रोह के साथ ही युध्द का आगाज होता है, जिसमें भारत द्वारा बांग्लादेश की सहायता की जाती है व पाकिस्तान दुश्मन देश के रूप में भारत के साथ संबंध निभाता है, तत्पश्चात् बांग्लादेश एक अलग राज्य के रूप में 1971 में स्थापित होता है।

पृष्ठभूमि- भारत वह पहला देश था जो बांग्लादेश को राष्ट्र का दर्जा दिया, व उससे राजनयिक संबंध भी रखे। भौगोलिक दृष्टि से विश्व की सबसे ज्यादा उलझी हुई व लम्बी सीमाएँ भी भारत एवं बांग्लादेश के बीच थी। भारत और बांग्लादेश के मध्य साझी भूमि और समुद्री सीमाएँ तथा नृजातीय संबंध विद्यमान है। भाषा, संस्कृति और विकास-पथ में समानताएँ दोनों देशों के मध्य विद्यमान संबंधों को विशिष्ट बनाती है।

भौगोलिक स्थितियाँ एक दुसरे की पूरक है। 1972 में भारत बांग्लादेश शांति एवं मैत्री संधि ने दोनों देशों के मध्य अच्छे संबंधो की नींव रखी। वर्तमान में यदि देखा जाए तो बांग्लादेश एक ऐसा देश उभर कर सामने आया है जो कुछ मामलों में पाकिस्तान एवं भारत दोनों से आगे है। हाल ही में बांग्लादेश की आवामी लीग की प्रधानमंत्री शेख हसीना ने निरंतर चौथे ऐतिहासिक कार्यकाल के लिये बांग्लादेश की सत्ता पुन: ग्रहण की। अन्य देशों सहित भारत ने भी बांग्लादेश को बधाई दी जो दोनों देशों के बीच घनिष्ठ द्विपक्षीय संबंधों को दर्शाता है।

भारत-बांग्लादेश के बीच संबंध कैसे विकसित हुए हैं?

ऐतिहासिक संबंध- बांग्लादेश के साथ भारत के संबंधों की नींव वर्ष 1971 के बांग्लादेश मुक्ति युद्ध से स्थापित हुई थी। भारत ने पाकिस्तान से आजादी के युद्ध में बांग्लादेश की सहायता के लिये महत्त्वपूर्ण सैन्य तथा सामग्री सहायता प्रदान की। इसके बावजूद बांग्लादेश पर सैन्य शासन का नियंत्रण होने से कुछ ही वर्षों में दोनों देशों के संबंध प्रभावित हुए। 1970 के दशक के मध्य में सीमा विवाद एवं विद्रोह सहित जल बँटवारे के

मुद्दों के परिणामस्वरूप बांग्लादेश की भारत विरोधी भावना में वृद्धि हुई। वर्ष 1996 में शेख हसीना के सत्ता में आने तथा गंगा जल बँटवारे पर एक संधि के साथ द्विपक्षीय संबंधों की प्रगति में एक नई दिशा मिली। वर्तमान में भारत और बांग्लादेश ने व्यापार, ऊर्जा, आधारभूत अवसंरचना, कनेक्टिविटी तथा रक्षा क्षेत्र में सहयोग की दिशा में मिलकर प्रगति की है।

आर्थिक सहयोग– विगत दशक में भारत और बांग्लादेश के बीच हुए द्विपक्षीय व्यापार में निरंतर वृद्धि हुई है। बांग्लादेश दक्षिण एशिया में भारत के सबसे बड़े व्यापार भागीदार के रूप में उभरा है। दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार वर्ष 2020–21 में 10.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर वर्ष 2021–2022 में 18 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच गया हालाँकि वर्ष 2022–23 में कोविड–19 महामारी एवं रूस–यूक्रेन युद्ध के व्यापार में गिरावट आई। भारत भी बांग्लादेश का दूसरा सबसे बड़ा व्यापार भागीदार है जिसका भारतीय बाजारों में निर्यात 2 बिलियन अमेरिकी डॉलर है।

वर्ष 2022 में दोनों देशों ने व्यापक आर्थिक साझेदारी समझौते (CEPA) पर एक संयुक्त व्यवहार्यता अध्ययन संपन्न किया। CEPA को अतिरिक्त महत्त्व मिलता है क्योंकि बांग्लादेश वर्ष 2026 के बाद अपना अल्प विकसित देश (LDC) का दर्जा खोने के लिये तैयार है, जिससे भारत में उसकी शुल्क–मुक्त और कोटा–मुक्त बाजार पहुँच खो जाएगी। बांग्लादेश भारत के साथ मुक्त व्यापार समझौते (FTA) को अंतिम रूप देने और चीन समर्थित क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (RCEP) को आगे बढ़ाने हेतु उत्सुक होगा। यह दोहरा रवैया भारत के लिये चिंताएँ बढ़ाता है।

अवसंरचना- वर्ष 2010 के बाद से भारत ने बांग्लादेश को 7 बिलियन अमेरिकी ड, लर से अधिक की ऋण सहायता प्रदान की है। भारत और बांग्लादेश ने वर्ष 2015 में भूमि सीमा समझौते लैंड बाउंड्री एग्रीमेंट (LBA) तथा क्षेत्रीय जल पर समुद्री विवाद जैसे लंबे समय से लंबित मुद्दों को सफलतापूर्वक हल किया है। भारत और बांग्लादेश ने वर्ष 2023 में अखौरा–अगरतला रेल लिंक का उद्घाटन किया जो बांग्लादेश तथा पूर्वोत्तर को त्रिपुरा के माध्यम से जोड़ता है। इस लिंक ने भारत को माल की आवाजाही के लिये बांग्लादेश में चट्टोग्राम और मोंगला बंदरगाहों तक पहुँच प्रदान की है। इससे असम और त्रिपुरा में लघु उद्योगों तथा विकास को बढ़ावा मिलने की संभावना है। परिवहन कनेक्टिविटी के लिये बिम्सटेक (BIMSTEC) मास्टर प्लान भारत, बांग्लादेश, म्याँमार और थाईलैंड में प्रमुख परिवहन परियोजनाओं को जोड़ने पर केंद्रित है, जिससे एक शिपिंग नेटवर्क स्थापित किया जा सके। भारत का ध्यान त्रिपुरा से 100 किमी. दूर बांग्लादेश द्वारा बनाए जा रहे मटरबारी बंदरगाह पर रहेगा। यह बंदरगाह ढाका और पूर्वोत्तर भारत को जोड़ने वाला एक महत्त्वपूर्ण औद्योगिक गलियारा बनाएगा।

ऊर्जा- ऊर्जा क्षेत्र में, बांग्लादेश भारत से लगभग 2,000 मेगावाट (मेगावाट) बिजली आयात करता है। वर्ष 2018 में रूस, बांग्लादेश और भारत ने बांग्लादेश के पहले परमाणु ऊर्जा रिएक्टर, रूपपुर परमाणु ऊर्जा संयंत्र परियोजना के कार्यान्वयन में सहयोग पर एक ज्ञापन पर हस्ताक्षर किये।

रक्षा सहयोग- भारत और बांग्लादेश 4096.7 किमी. लंबी सीमा साझा करते हैं, यह

भारत द्वारा अपने किसी भी पड़ोसी देश के साथ साझा की जाने वाली सबसे लंबी भूमि सीमा है। असम, पश्चिम बंगाल, मिजोरम, मेघालय और त्रिपुरा की सीमा बांग्लादेश से लगती है। दोनों संयुक्त अभ्यास भी आयोजित करते हैं- सेना (अभ्यास संप्रीति) और नौसेना (अभ्यास बोंगो सागर)।

बहुपक्षीय सहयोग- भारत और बांग्लादेश SAARC (दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ), बिम्सटेक (बंगाल की खाड़ी बहु-क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग) तथा हिंद महासागर रिम एसोसिएशन (IORA) जैसे बहुपक्षीय मंचों के माध्यम से क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं।

भारत और बांग्लादेश के बीच तनाव के प्रमुख मुद्दे क्या हैं?

सीमा पार नदी जल का बँटवारा- भारत और बांग्लादेश 54 नदियाँ साझा करते हैं, लेकिन अब तक केवल दो संधियों (गंगा जल संधि और कुशियारा नदी संधि) पर हस्ताक्षर किये गए हैं। अन्य प्रमुख नदियाँ, जैसे- तीस्ता और फेनी मुद्दे पर अभी भी समझौता वार्ता चल रही है।

अवैध प्रवास- बांग्लादेश से भारत में अवैध प्रवास, जिसमें शरणार्थी और प्रवासी शामिल हैं, एक गंभीर मुद्दा बना हुआ है। यह अंतर्वाह भारतीय सीमावर्ती राज्यों पर दबाव डालता है, जिससे संसाधनों एवं सुरक्षा पर असर पड़ता है। रोहिंग्या शरणार्थियों के बांग्लादेश के रास्ते भारत में प्रवेश करने से समस्या और बढ़ गई है। इस तरह के प्रवासन को रोकने के उद्देश्य से बने राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (National Register of Citizens & NRC) ने बांग्लादेश की चिंता बढ़ा दी है। बांग्लादेश म्याँमार को उन रोहिंग्याओं को वापस लेने के लिये मनाने में भारत का समर्थन चाहता है जिन्हें बांग्लादेश में शरण लेने के लिये मजबूर किया गया था।

मादक पदार्थों की तस्करी- सीमा पार से मादक पदार्थों की तस्करी की कई घटनाएँ हुई हैं। इन सीमाओं के माध्यम से मानव (विशेषकर बच्चों एवं महिलाओं) तस्करी की जाती है तथा विभिन्न जानवरों और पक्षियों की प्रजातियों का अवैध शिकार किया जाता है।

बांग्लादेश में बढ़ता चीनी प्रभाव- वर्तमान में बांग्लादेश बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (Belt and Road Initiative& BRI) में एक सक्रिय भागीदार है (भारत BRI का हिस्सा नहीं है)। बांग्लादेश के साथ चीन की बढ़ती भागीदारी संभावित रूप से भारत की क्षेत्रीय स्थिति को कमजोर कर सकती है तथा इसकी रणनीतिक आकांक्षाओं में बाधा डाल सकती है।

आगे की राह- सीमा पार से मादक पदार्थों की तस्करी और मानव तस्करी से प्रभावी ढंग से निपटने हेतु दोनों देशों की कानून प्रवर्तन एजेंसियों को शामिल करते हुए संयुक्त कार्य बल स्थापित करने की आवश्यकता है। साझा खुफिया जानकारी तथा समन्वित संचालन से अवैध नेटवर्क बाधित हो सकते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डेटा विश्लेषण का उपयोग करने वाले स्मार्ट सीमा प्रबंधन समाधानों को लागू करना सुरक्षा एवं दक्षता सुनिश्चित करते हुए सीमा पार आंदोलनों को सुव्यवस्थित कर सकता है।

डिजिटल कनेक्टिविटी कॉरिडोर- दोनों देशों के बीच हाई-स्पीड इंटरनेट कनेक्टिविटी, डिजिटल सेवाओं और ई-कॉमर्स पर ध्यान केंद्रित करते हुए एक डिजिटल

कनेक्टिविटी कॉरिडोर स्थापित करने की आवश्यकता है। इससे व्यापार, सहयोग एवं तकनीकी आदान–प्रदान के नए मार्ग का निर्माण होगा।

भारत बांग्लादेश शिखर सम्मेलन- 2020 में भारत और बांग्लादेश ने द्विपक्षीय संबंधों के कुछ मुद्दों पर संक्षेप में चर्चा की और क्षेत्रीय और अंतराष्ट्रीय समस्याओं पर एक दुसरे के दृष्टिकोण को व्यक्त किया। भारत के प्रधानमंत्री को बांग्लादेश की स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगांठ समारोह और राजनयिक भारत और बांग्लादेष संबंधों के जन्म के लिए भी आमंत्रित किया गया था। शिखर सम्मेलन ने भारत और बांग्लादेश के मध्य कुछ समझौतों और सहयोगों को स्वीकार किया, जिसमें द्विपक्षीय दस्तावेजों पर हस्ताक्षर और परियोजनाओं की शुरूआत किया गया, स्वास्थ्य के क्षेत्रों में सहयोग, सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग, सीमाओं की सुरक्षा और प्रबंधन में सहयोग, प्रगति के लिए व्यापार में साझेदारी।

दोनों देशों के मध्य समझौते/सहमति/ज्ञापन हस्ताक्षरित- हाईड्रोकार्बन क्षेत्र में सहयोग को समझने की रूपरेखा। भूमि सीमा से संबंधि तमामले और सीमांकन के समझौते के लिए प्रोटोकाल। कृषि में सहअयोग के लिए समझौता ज्ञापन। अपव्यय में सहयोग और सुधार के लिए समझौता ज्ञापन। वर्तमान में जब बांग्लादेश में शेख हसीना का तख्तापलट हुआ तो इसे भारत के लिए झटका बताया गया था लेकिन अब उसके 4 महीने बाद भारत और बांग्लादेश के संबंध टूटने के कगार पर हैं राजनीतिक मिशनों को निशाना बनाया जा रहा है राज नायकों को तलब किया जा रहा है राष्ट्रीय ध्वज का अपमान किया जा रहा है हिंदू उपासकों पर कार्यवाही की जा रही है और भारत से व्यापार में रोकटो किया उसके बहिष्कार की बात की जा रही है यह सब कैसे हुआ इसका उत्तर है मोहम्मद जुलूस और उनकी राजनीति वे चुने गए नेता नहीं है और कार्यवाहक रूप में कमान संभाले हुए हैं उनका काम व्यवस्था बहाल करना और चुनाव करना था लेकिन वें सुधारो की बात कर रहे हैं जिसके लिए उनके पास कोई लोकप्रिय जनादेश नहीं है वे वर्तमान अराजकता को ठीक करने की वजह अतीत की कथित गलतियों से ग्रस्त हैं जुलूस और उनके समर्थक बांग्लादेश के संस्थापकों की विरासत को खत्म करने में व्यस्त हैं और इस प्रक्रिया में वह हिंदू अल्पसंख्यकों को निशाना बना रहे हैं।

हाल ही में एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा कि उनकी अंतिम सरकार को चुनाव कराने में चार शतक का समय लग सकता है इस बीच सड़कों पर इस्लामी कट्टर पंक्तियों का बोलबाला है शेख हसीना की पार्टी अवामी लीग तस्वीर से बाहर है दो अन्य पार्टियों ढाका की सत्ता पर नजर बनाए हैं खालिदा जिया की बीएनपी और जमात ए इस्लामीकभी यह सहयोगी हुआ करते थे लेकिन अब सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं चीन जमतियों और बीएचपी की मेजबानी कर रहा है जमात का इतिहास दागदार है और उसकी राजनीति चरम पंछी है लेकिन चीन को परवाह नहीं बीएनपी उसकी पुरानी दोस्त है जब बीएनपी ने बांग्लादेश पर शासन किया चीन को फायदा हुआ उन्हें सैन्य सौदे और निवेश के अवसर मिले और ढाका ने भारत को दूर रखा भारत ने भी बीएमपी से संपर्क किया है लेकिन जमात से बात करना मुश्किल होगा या एक कांटरपंथी और भारत युद्ध संगठन है नई दिल्ली के पास सीमित विकल्प है और वह बहुत आसान तक नहीं है दूसरी तरफ यूनुस्कर भैया स्थिति को बाद से बढ़कर कर रहा है समस्या कुछ स्वीकार करने की बजाय वह

भारतीय मीडिया को दूसरी तरह रहे हैं बांग्लादेश की सर्वोच्च न्यायालय में दया एक याचिका में भारतीय समाचार चरणों पर प्रतिबंध लगाने की मांग की गई है और कहा गया है कि उनका कवरेज भड़काऊ है बुधवार को यूनिवर्सिटी बुलाई इसमें शेख हसीना की अवामी लीग को छोड़कर सभी दल थे उन्होंने बांग्लादेश पर सांस्कृतिक आधिपत्यस्थापित करने के भारत के प्रयासों और उसके आर्थिक उत्पादन की निंदा की साथी बांग्लादेश के आंतरिक मामलों में सेव करने की वजह के भारत के प्रयासों की भी निंदा की यह बहुत कठोर और बी बुनियाद आरोप है वह किसी हादसे की बात कर रहे हैं भारत में अंतिम सरकार के गठन की कभी आलोचना नहीं कि भले ही आवश्यक संविधान था नहीं भारत में शेख हसीना और उनके सहयोगियों पर कानूनी हमले पर सवार उठाया भारत में केवल तभी टिप्पणी की जब हिंदू अल्पसंख्यकों पर हमला हुआ समस्या यह है कि अंतरिम सरकार अपनी स्थिति को लेकर असुरक्षित है इसलिए उसे भारतीय हस्तक्षेप का डर सता रहा है जुलूस के मंत्रियों का कहना है कि भारत को अगस्त में हुए बदलाव को स्वीकार करना चाहिए या अजीब है क्योंकि प्रधानमंत्री मोदी ने व्यक्तिगत रूप से यूनेस्को बधाई दी थी भारत बांग्लादेश की आंतरिक राजनीति का सम्मान करता रहा है लेकिन बांग्लादेश की तरफ से ऐसा सम्मान हमारे लिए नहीं दिखा इसलिए भारतीय जनमत बदल गया जब हिंदुओं पर भीड़ द्वारा हमला किया गया मंदिरों में तोड़फोड़ की गई और भारतीय ध्वज का अपमान किया गया तभी भारत मुखर हुआ।

निष्कर्ष- भारत और बांग्लादेश के बीच वर्तमान संबंध मजबूत और बहुआयामी है, जिसमें व्यापक एतिहासिक संबंध, आर्थिक सहयोग और रणनीतिक संपर्क शामिल है। हालांकि, हाल के राजनीतिक परिवर्तनों और क्षेत्रीय गठबंधनों में बदलाव के कारण कुछ चुनौतियों का भी सामना करना पड रहा है। जो व्यापार और सुरक्षागत क्षेत्रों को भी प्रभावित करती है।

संदर्भ सूची-

1. India Bangladesh Relations by Ly. Gen Y M Bammi, Publisher VIJ Books.
2. भारत बांग्लादेश, समस्याएँ एवं चुनौतियाँ, डॉ. प्रवीण कुमार सिंह, इंडियन बुक एवं पेरियोडिकल।
3. मिलन्द ठाकुर, (2018), भारत-बांग्लादेश संबंध: कमजोर संबंधो की पहेली,सुमिल गांगुली द्वारा संपादित पुस्तक भारत की विदेश नीति, नई दिल्ली।
4. दैनिक समाचार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्राप्त जानकारियाँ।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

अशोक का धम्म: सार्वभौमिक धर्म की संकल्पना

• महावीर सिंह

सारांश-अशोक के अभिलेखों में धर्म के स्थान पर 'धम्म' शब्द का उल्लेख हुआ है। जो संस्कृत भाषा के 'धर्म' का ही 'धम्म' प्राकृत रूप है। जो समकालीन दक्षिणी बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश की जनसाधारण की आम बोलचाल की भाषा थी। अशोक का 'धम्म' ब्राह्मण, बौद्ध, जैन एवं आजीवक धर्मों की भांति एक संस्थागत धर्म या सम्प्रदाय नहीं था, बल्कि नैतिक सदाचार, लोकाचार एवं स्वकर्त्तव्यों का एक संहिताबद्ध, प्रलेख है। जिसका उद्देश्य समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान करने के साथ-साथ सम्पूर्ण मानव जाति का भौतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक कल्याण करना था। उसके 'धम्म' में विहित सिद्धान्त किसी धर्म विशेष, काल, समय एवं परिस्थितियों से आबद्ध या बंधे हुये नहीं हैं, बल्कि वह सार्वभौमिक, सार्वदेशिक, सर्वकालिक, नित्य, सत्य एवं शाश्वत सिद्धान्त हैं, जिनकी समस्त मानव जाति एवं समग्र सृष्टि को आवश्यकता है, जो सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों में विद्यमान है। इसीलिये राधाकुमुद मुकर्जी ने इसे सभी धर्मों की साझी सम्पत्ति कहा है। वी. स्मिथ ने कहा है कि अशोक के धम्म में सभी धर्मों का सार विद्यमान है।

मुख्य शब्द- धम्म, सार्वभौमिक, संकल्पना, नित्य-शाश्वत एवं सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों की साझी सम्पत्ति।

अशोक के धम्म में निहित सार्वभौमिकता की संकल्पना को समझने के लिये धर्म के अर्थ के सम्बन्ध में भारतीय मनीषियों के मत का उल्लेख कर देना वांछनीय एवं समीचीन है। भारतीय वांड़मय में 'धर्म' शब्द का प्रयोग इसके प्रचलित सामान्य अर्थ से भिन्न और बहुत व्यापक अर्थ में किया गया है। वेदों, उपनिषदों, भगवत्गीता, महाभारत तथा भारतीय दर्शन में विशद व्याख्या की गयी है और इसके भिन्न-भिन्न अर्थ बताये गये हैं। ऋग्वेद में कहा गया है कि धर्म ही विश्व का मूल तत्व या आधार है।[1] वेदों के पश्चात् उपनिषदों में धर्म को सत्य और कर्त्तव्य से जोड़कर उसे अनिवार्यत: नैतिकता के साथ सम्बद्ध कर दिया गया है। वृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार सत्य तथा धर्म मूलत: एक ही है।[2] इसी प्रकार तैत्तरीय उपनिषद् में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने वर्ण तथा

• एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा

आश्रम के अनुरूप समस्त कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिये।[3] धर्म शास्त्रों एवं भगवत्गीता में भी धर्म का यही अर्थ स्वीकार किया गया है। भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को इसी अर्थ में स्वधर्म पालन की शिक्षा दी है। बौद्ध दर्शन में भी शील और आष्टांगिक मार्ग को धर्म के अन्तर्गत मानकर उसके नैतिक एवं कर्त्तव्य पक्ष को विशेष महत्व दिया गया है। वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत में राजधर्म, मित्रधर्म, प्रजाधर्म, देशधर्म, आश्रम धर्म, वर्ण धर्म, जाति धर्म, आदि का उल्लेख मिलता है।[4] कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र और मनु ने अपनी मनुस्मृति में धर्म के स्वकर्त्तव्य पालन एवं सदाचार सम्बन्धी इसी पक्ष को विशेष महत्त्व दिया है।[5] इस अर्थ में स्वकर्त्तव्य पालन एवं सदाचार सम्बन्धी जीवन पद्धति का नाम ही धर्म है।[6] महाभारत में कहा गया है कि जो समाज को धारण करे वह ही धर्म है। सम्भवत: इसका वास्तविक निहितार्थ यह है कि धर्म मनुष्य का वह स्वभाव है जो सम्पूर्ण मानव को परस्पर संगठित रखता हैं। इस अर्थ में धर्म को सामाजिक एकता की शक्ति के रूप में देखा जा सकता है। महर्षि कणाद द्वारा रचित "वैशेषिक दर्शन" में दी गयी धर्म की परिभाषा भी इसी अर्थ की पुष्टि करती है। इसमें कहा गया है कि धर्म वह है जो मनुष्य के सर्वांगीण विकास तथा उसके कल्याण में सहायक हो। सही अर्थों में विभिन्न धर्म धार्मिक सम्प्रदायों में मत-मतान्तर की विभिन्नतायें एवं विभेदीकरण धर्म के मौलिक सार्वभौमिक तत्वों को लेकर नहीं, बल्कि बाह्य या थोपे गये कर्मकाण्डों को लेकर होती है। इन विभिन्नताओं के होते हुए भी सभी धर्मों में कुछ न कुछ समान मूल तत्व भी पाये जाते हैं जिनका सम्बन्ध मूल्य सत्यों से होता है। जिन्हें किसी न किसी रूप में सभी धर्म स्वीकार करते हैं। इसे स्पष्ट करते हुए डॉ. भगवान दास ने लिखा है, सत्य सार्वभौमिक होता है उस पर किसी एक जाति या एक गुरू का अधिकार नहीं होता है और जो तत्व आवश्यक नहीं होते है, उनमें समय, स्थान एवं परिस्थितियों के अनुसार भेद पाया जाता है।[7] अशोक अपने स्तम्भ लेख द्वितीय में कहता है-किम चु धम्मे ? धम्म क्या है? इसके उत्तर में स्तम्भ लेख द्वितीय तथा शिलालेख सप्तम में धम्म की व्याख्या करता हुआ कहता है कि 'धर्म में अधर्मता नहीं होनी चाहिए। श्रेष्ठ कर्म, संवेदना, सहानुभूति, सत्यता, उदारता, पवित्रता मृदुता एवं साधुवादिता ही वास्तविक धम्म है।[8] इस आधार पर प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता रोमिला थापर का मत है कि अशोक का धम्म नैतिक संहिताओं का एक प्रलेख मात्र है।[9] यदि रोमिला थापर के अनुसार इसे मात्र नैतिक संहिताओं का प्रलेख भी मान लिया जाये तो भी इसे धर्म से पृथक नहीं माना जा सकता, क्योंकि नैतिकता ही धर्म का मूल प्राण है। अत: नैतिकता एवं धर्म में अभीष्ट सम्बन्ध है तथा नैतिकता के बिना धर्म का अस्तित्व सम्भव ही नहीं। इन नैतिक मूल्यों की प्रस्थापना ब्राह्मण धर्म, जैन, बौद्ध, ईसाई, पारसी एवं हिन्दू, सभी धर्मों में की गयी है और इन नैतिक मूल्यों को अशोक की भाँति सभी धर्मों ने अनुकरणीय माना है। अशोक के धम्म में सद् (सत्य) के अनुकरण बल दिया गया है जो कि धर्म का सार्वभौमिक तत्व है, जिसे सभी विचारधाराओं, धर्मों एवं सम्प्रदायों में मान्यता प्राप्त है। प्रसिद्ध ग्रीक दार्शनिक सुकरात ने 'सद्' को ज्ञान के रूप में स्वीकार करते हुए कहा है कि "सद्गुण ही ज्ञान है।"[10] अत: जब तक मनुष्य को सद्गुण की शिक्षा नहीं मिलती, तब तक वह सद्गुण का आचरण नहीं कर सकता। हम पाप इसलिये करते है, क्योंकि हमें पुण्य का ज्ञान नहीं है। यदि हम पाप के

दुष्परिणामों से परिचित हो जायें तो सम्भवत: हम पाप का आचरण नहीं करेंगे। बौद्ध धर्म के अष्टांग मार्ग में 'सम्यक् वाक्' का उल्लेख हुआ है, जो अशोक के धम्म में उल्लिखित सत्य एवं मृदुता (मधुर वचन) का ही पर्याय रूप है। बौद्ध दर्शन में सम्यक् वाक् का आशय है कि एक व्यक्ति सम्यक् वाक् का तभी पालन कर सकता है, जब वह निरन्तर सत्य एवं प्रियवचन बोलता हो। सिर्फ सत्य वचनों का पालन ही सम्यक् वाक् नहीं, बल्कि जिस वचन से दूसरों को कष्ट होता, उसका परित्याग भी वांछनीय है। जैन दर्शन ने भी अपने पंचमहाव्रत में सत्य, अहिंसा, अचौर्य, अपरिग्रह एवं ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों को स्वीकार किया है। जैन के अनुसार सत्य का अर्थ है–असत्य का परित्याग। सत्य का आदर्श सुनृत है और सुनृत का अर्थ है वह सत्य जो सबके लिए प्रिय और हितकारी हो। एक व्यक्ति को सिर्फ मिथ्या वचन का ही परित्याग नहीं करना चाहिये। बल्कि मधुर वचनों का भी प्रयोग करना चाहिए। सत्य व्रत का पालन करने के लिए लोभ, मोह, भय, मद तथा परनिन्दा का त्याग आवश्यक है। इस व्रत का पालन भी मन, वचन एवं कर्म से करना चाहिये। अशोक की मान्यता थी कि सद् के अनुकरण से मनुष्य अपने लोक एवं परलोक दोनों को ही नहीं सुधारता, बल्कि सम्पूर्ण मानवता का हित ही साधता हैं। अशोक के धम्म में अहिंसा के परिपालन पर भी बल दिया गया है। वह अपने स्तम्भ लेख द्वितीय में कहता है 'केवल पृथ्वी पर ही नहीं, अपितु जल एवं आकाश में विचरण करने वाले प्राणियों के प्रति भी हिंसा न की जाये। वह 13वें शिलालेख में युद्ध विजय के स्थान पर धम्म विजय की घोषणा करता है। इसमें भी हिंसा का प्रतिषेध है। अत: एक व्यक्ति को अहिंसा का पालन मन, वचन एवं कर्म से करना चाहिए। चूँकि सभी जीव समान हैं, अत: किसी भी जीव की हिंसा करना अधर्म है। इसी धारणा से अभिप्रेरित होकर अशोक प्राणी मात्र के लिये ही नहीं, बल्कि नभ, जल, आकाश में सर्वत्र विचरण करने वाले सभी जीवों के प्रति हिंसा में प्रतिषेध का सिद्धान्त लागू करता है। अशोक के धम्म में अल्पभोग, संयम एवं भाव शुद्धि का उल्लेख हिन्दू धर्म एवं अन्य धर्मों में उल्लिखित इन्द्रिय निग्रह के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। अपने कर्मेन्द्रियों को पूर्ण रूपेण वश में करना ही इन्द्रिय निग्रह है। वैदिक धर्म ही नहीं, अपितु बौद्ध एवं जैन धर्म भी अल्प भोग, संयम, भावशुद्धि एवं इन्द्रिय निग्रह की बात करते हैं। अशोक अपने धम्म में क्षमादान का भी उल्लेख करता है। ईसाई एवं हिन्दू धर्म में प्रमुख रूप से क्षमा की भावना का प्रबल समर्थन किया गया है। व्यक्ति में क्षमा की भावना हो तो वह महान है, विशेषकर वीर पुरुष में क्षमा का होना श्लाघनीय एवं प्रशंसनीय यश कहा गया है। इसी भावना से अभिप्रेरित होकर अशोक ने कलिंग युद्ध में बन्दी बनाये गये डेढ़–लाख युद्ध बन्दियों को भूमि दान देकर छोड़ दिया था तथा कैदियों को भी रिहाई का प्रावधान रखा था। वास्तव में मनुष्य का क्षमा धर्म उसके आकर्षक व्यक्तित्व, विनम्रता एवं महानता का द्योतक है। अपशब्दों का प्रयोग एवं दुर्व्यवहार करने वालों के प्रति भी क्षमायुक्त होना चाहिए। यही मानवीय धर्म है। अशोक का 'धम्म' ब्राह्मण, बौद्ध, जैन एवं आजीवक धर्मों की भांति एक संस्थागत धर्म या सम्प्रदाय नहीं था, बल्कि नैतिक सदाचार, लोकाचार एवं स्वकर्त्तव्यों का एक संहिताबद्ध, प्रलेख है। जिसका उद्देश्य समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान करने के साथ–साथ सम्पूर्ण मानव जाति का भौतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक

कल्याण करना था। उसके 'धम्म' में विहित सिद्धान्त किसी धर्म विशेष, काल, समय एवं परिस्थितियों से आबद्ध या बंधे हुये नहीं हैं, बल्कि वह सार्वभौमिक, सार्वदेशिक, सर्वकालिक, नित्य, सत्य एवं शाश्वत सिद्धान्त हैं, जिनकी समस्त मानव जाति एवं समग्र सृष्टि को आवश्यकता है, जो सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों में विद्यमान है। इसीलिये राधाकुमुद मुखर्जी ने इसे सभी धर्मों की साझी सम्पत्ति कहा है।[11] वी. स्मिथ के अनुसार अशोक के धम्म में सभी धर्मों का सार विद्यमान है।[12]

संदर्भ सूची-

1. ऋग्वेद 1, 187
2. वृहदारण्यक, 1, 4, 14
3. तैतरीय उपनिषद 1, 11
4. महाभारत-अनुशासन एवं उद्योग पर्व
5. मनुस्मृति - 2, 6, 12
6. वर्मा, वेदप्रकाश 'धर्म दर्शन की मूल समस्यायें पृ0-8, संस्करण 1991
7. डॉ0 भगवानदास-दि ऐसंश्यल युनिटी ऑफ रिलिजन्स-पंचम संस्करण पृ0 82
8. अशोक का स्तम्भ लेख द्वितीय
9. थापर रोमिला-भारत का इतिहास पृ0 55
10. .T. Stace – A critical history of Greek Philosophy P. 163
11. मुखर्जी, राधाकुमुद अशोक पृ0 75-76
12 वी, स्मिथ-अशोक पृ0 8

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

भारत में आर्थिक विकास एवं असमानता का विश्लेषण

• कमलेश चेलक
••नवीन सिंह राजपूत

सारांश-आर्थिक विकास से समाज का धनी वर्ग ही लाभान्वित होता है निर्धन वर्ग की उपेक्षा होती है जिसके फलस्वरूप आर्थिक असमानताओं एवं बेरोजगारी में वृद्धि होती है। भारत ने आर्थिक विकास के लिए नियोजित आर्थिक विकास का मार्ग चुना है। नियोजित आर्थिक विकास के अनेक उद्देश्य होते है जैसे राष्ट्रीय आय में वृद्धि, तीव्र औद्योगिक विकास, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, आय व धन की असमानताओं में कमी करना। नियोजित आर्थिक विकास में एक ओर केन्द्रित नियोजन होता है जिसके अन्तर्गत उत्पादन तथा वितरण सम्बंधी निर्णय योजना आयोग द्वारा लिए जाते है जबकि दूसरी ओर मिश्रित अर्थव्यवस्था जिसमें सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र साथ साथ विकसित होते है। भारत में नियोजित आर्थिक विकास से आर्थिक सत्ता का केन्द्रियकरण हुआ है और आय एवं धन की असमानताओं में वृद्धि हुई है। हमारी सभी नीतियों का उद्देश्य समता और सामाजिक न्याय सहित तीव्र विकास और संतुलित आर्थिक विकास रहा है।

मुख्य शब्द- असमानता, निरपेक्ष निर्धनता, सापेक्ष निर्धनता, उपभोग, आर्थिक विषमता, पूँजी प्रधान तकनीक, श्रम प्रधान तकनीकी

प्रस्तावना- औद्योगीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से आर्थिक विकास होता है। यह सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की संरचना को प्रभावित करता है। आर्थिक परिवर्तन के साथ साथ सामाजिक परिवर्तन भी होते है। औद्योगीकरण के विभिन्न लाभ होने के परिणामस्वरूप यह अर्थव्यवस्था में आर्थिक असमानताओं में वृद्धि करता है। आर्थिक विकास से समाज का धनी वर्ग ही लाभान्वित होता है, निर्धन वर्ग की उपेक्षा होती है जिसके फलस्वरूप आर्थिक असमानताओं एवं बेरोजगारी में वृद्धि होती है। भारत ने आर्थिक विकास के लिए नियोजित आर्थिक विकास का मार्ग चुना है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश का आर्थिक विकास किया जा रहा है। नियोजित आर्थिक विकास के अनेक उद्देश्य होते है जैसे राष्ट्रीय आय में वृद्धि, तीव्र औद्योगिक विकास, रोजगार के अवसरो में वृद्धि आय व धन की असमानताओं में कमी करना आदि। नियोजित आर्थिक विकास में एक ओर केन्द्रित नियोजन होता है जिसके अन्तर्गत उत्पादन तथा वितरण सम्बंधी निर्णय

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय डॉ.वा.वा.पाटनकर कन्या स्नातकोत्तर महा. दुर्ग, छ.ग.
•• सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, नवीन शासकीय महाविद्यालय, जालबांधा, खैरागढ-छुईखदान-गंडई, (छ.ग.)

सर्वोच्च प्राधिकरण योजना आयोग द्वारा लिए जाते है जबकि दूसरी ओर मिश्रित अर्थव्यवस्था में अपनाए जाने वाला नियोजन है, जिसके अन्तर्गत सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र साथ साथ विकसित होते है। भारत में नियोजित आर्थिक विकास से आर्थिक सत्ता का केन्द्रियकरण हुआ है और आय एवं धन की असमानताओं में निरन्तर वृद्धि हुई है।

पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत संवृद्धि निष्पादन

पंचवर्षीय योजना	लक्ष्य वार्षिक (प्रतिशत)	उपलब्धि वार्षिक (प्रतिशत)
पहली योजना	2.1	4.2
दूसरी योजना	4.5	4.2
तीसरी योजना	5.6	2.6
चौथी योजना	5.7	4.9
पांचवी योजना	4.4	5.4
छठी योजना	5.2	5.5
सातवी योजना	5.0	6.7
आठवी योजना	5.6	6.7
नौवी योजना	6.5	5.5
दसवी योजना	8.0	7.5
ग्यारवी योजना	9.0	7.7

Sources:- Govt- of India, the Planning Commission

जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में भारत का स्थान दूसरा है। भारत में रहने वाली जनसंख्या समस्त विश्व की जनसंख्या की 17.5 प्रतिशत है। 1951 की जनगणना के अनुसार 36.11 करोड़ थी वह 2001 में 102.87 करोड़ और 2011 में बढ़कर 121.02 करोड़ हो गई है।

भारत की जनसँख्या

जनसंख्या वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशक में वृद्धि
1951	36.11	–
1961	43.92	+21.64
1971	54.82	+24.80
1981	68.33	+24.66
1991	102.87	+23.87
2001	102.87	+21.54
2011	121.01	+17.7

Sources:-Government of India, Census of India-2011

तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 1951 से 2011 तक भारत की जनसंख्या में वृद्धि में धनात्मक वृद्धि हुई है।

भारत में साक्षरता का प्रतिशत

वर्ष	पुरुष साक्षरता (प्रतिशत)	महिला साक्षरता (प्रतिशत)	कुल साक्षरता (प्रतिशत)
1951	27.16	8.86	18.33
1961	40.40	15.35	28.30
1971	45.96	21.97	34.45
1981	56.38	29.76	43.57
1991	64.13	39.29	52.21
2001	75.26	53.67	64.84
2011	80.90	64.60	73.00

Sources:-Government of India, Census of India-2011

तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 1951 से 2011 तक भारत की जनसंख्या में महिला साक्षरता प्रतिशत दशकीय वृद्धि में धनात्मक वृद्धि हुई है

भारत में कृषि जोत

क्र.	प्रकार	जोतो का आकार(हेक्टेयर)	भारत में (प्रतिशत)	आर्थिक /अनार्थिक जोत
1	सीमान्त	0–1.0	64.8	अनार्थिक
2	छोटे	1.0–2.0	18.5	आर्थिक
3	अर्ध–मध्यम	2.0–4.0	10.9	आर्थिक
4	मध्यम	4.0–10.0	4.5	आर्थिक
5	बड़े	10.0 या अधिक	0.8	आर्थिक

Sources:-Govt. of India, Ministry of Agriculture, Agriculture Statistics-2011

तालिका से स्पष्ट है कि भारत में आर्थिक जोतो की तुलना में अनार्थिक जोतो का प्रतिशत अधिक है। देश में कृषि जोतों का छोटा आकार एवं भूमिहीन श्रनिकों के अनुपात में वृद्धि होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता में वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज असमानताओं का मुख्य कारण भूमि एवं अन्य परिसम्पत्तियों को केन्द्रीकृत स्वामित्व है। हरित क्रान्ति से भी बड़े किसानों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त हुआ है क्योंकि उनकी निवेश करने की क्षमता अधिक है। इसके साथ–साथ ही वित्तीय संस्थाओं से भी इन्हीं किसानों को ज्यादा ऋण सुविधाएँ प्राप्त हुई है।

निर्धनता को निरपेक्ष एवं सापेक्ष निर्धनता के रुप में परिभाषित किया गया है। निरपेक्ष निर्धनता से तात्पर्य मानव द्वारा आधारभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़ा, आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की पूर्ति हेतु पर्याप्त वस्तुओं एवं सेवाओं को जुटा पाने की असमर्थता से है। सापेक्ष निर्धनता का अर्थ आय की असमानताओं से है। निर्धनता का सापेक्षिक दृष्टिकोण आय, संपत्ति तथा उपभोग के वितरण में व्याप्त विषमता को दर्शाता है।

योजना आयोग द्वारा निर्धनता रेखा से नीचे जनसंख्या का आंकलन

वर्ष	निर्धनता अनुपात(प्रतिशत में)			निरपेक्ष संख्या(करोड़ में)		
	ग्रामीण	नगरीय	अखिल भारत	ग्रामीण	नगरीय	अखिल भारत
1973–74	56.4	49.0	54.9	26.13	6.0	32.13
1977–78	53.1	45.2	51.3	26.43	6.46	32.89
1983–84	45.7	40.8	44.5	25.20	7.09	32.29
1987–88	39.1	38.2	38.9	23.19	7.52	30.71
1993–94	37.3	32.4	36.0	24.40	7.63	32.03
1999–00	27.1	23.6	26.1	19.32	6.71	26.03

Sources:-Govt. of India, Ministry of Agriculture, Agriculture Statistics-2011

तालिका से स्पष्ट है कि भारत में आर्थिक जोतो की तुलना में अनार्थिक जोतो का प्रतिशत अधिक है। देश में कृषि जोतों का छोटा आकार एवं भूमिहीन श्रनिकों के अनुपात में वृद्धि होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता में वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज असमानताओं का मुख्य कारण भूमि एवं अन्य परिसम्पत्तियों को केन्द्रीकृत स्वामित्व है। हरित क्रान्ति से भी बड़े किसानों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त हुआ है क्योंकि उनकी निवेश करने की क्षमता अधिक है। इसके साथ–साथ ही वित्तीय संस्थाओं

से भी इन्हीं किसानों को ज्यादा ऋण सुविधाएँ प्राप्त हुई है। निर्धनता को निरपेक्ष एवं सापेक्ष निर्धनता के रुप में परिभाषित किया गया है। निरपेक्ष निर्धनता से तात्पर्य मानव द्वारा आधारभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़ा, आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की पूर्ति हेतु पर्याप्त वस्तुओं एवं सेवाओं को जुटा पाने की असमर्थता से है। सापेक्ष निर्धनता का अर्थ आय की असमानताओं से है। निर्धनता का सापेक्षिक दृष्टिकोण आय. संपत्ति तथा उपभोग के वितरण में व्याप्त विषमता को दर्शाता है।

गरीबी उन्मूलन के अनेक प्रयासों के बाबजूद भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त निर्धनता के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों की स्थिति निरन्तर चिन्तनीय है। अधिकांशतः ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी अनिवार्य सुविधाएं जैसे- शिक्षा, चिकित्सा, पेयजल, परिवहन, आवास एवं विद्युत आदि का अभाव है।

असमानता के कारण-

1. जनसंख्या वृद्धि असमानता का सबसे बड़ा कारण रहा है। जनसंख्या वृद्धि से व्यक्तियों के उपभोग स्तर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. साथ ही परोक्ष रुप से बचत एवं निवेश में भी बाधा उत्पन्न होती है।
2. जिन व्यक्तियों को अच्छे अवसर मिल जाते है वे अपनी आय एवं धन वृद्धि करने में सफल हो जाते है। जबकि अवसर न मिलने पर दूसरे लोग निर्धन रह जाते है।
3. सम्पन्न परिवारों में जन्म लेने वालों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। जबकि निर्धन व्यक्ति मेहनती एवं होशियार होने पर भी अवसर के आभाव में पिछड़ जाते है।
4. अर्थव्यवस्था चाहे नियोजित हो या अनियोजित, विकसित या विकासशील या अर्धविकसित हो. में कीमतों का पर्याप्त प्रभाव होता है। कीमतें न केवल उत्पादन की मात्रा को प्रभावित करती है बल्कि यह आय को भी और आय में परिवर्तन के द्वारा उपभोग स्तर भी प्रभावित होता है। कीमतें ही बचत और विनियोग की मात्रा को निर्धारित करती है।
5. मुद्रा प्रसार के द्वारा आर्थिक विषमताओं तथा असमानताओं में वृद्धि के साथ-साथ आर्थिक एवं सामाजिक न्याय की अवहेलना होती है। भारतीय अर्थव्यवस्था एक समाजवादी अर्थव्यवस्था है। जिसमें वर्ग संघर्ष की समाप्ति, आर्थिक समानता, आर्थिक शोषण का अन्त, बेरोजगारी का अन्त आदि पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
6. निजी निगम क्षेत्रों में परिसंपत्तियों का सकेन्द्रण उद्योगपतियों के हाथों में आर्थिक संपदा व आर्थिक शक्ति का सकेन्द्रण है। बैंकों व अन्य वित्तीय संस्थाओं से आसान शर्तों पर ऋण प्राप्त होने की सुविधा से तथा पूँजी बाजार के साधन एकत्रण की सुविधा से उन्हें परिसम्पत्तियों पर कब्जा करने में और अधिक सहायता मिली।
7. व्यवसायिक संगठनों में काम कर रहें उच्च अधिकारियों की आय बहुत अधिक है पर भारतीय अर्थव्यवस्था में व्यवसायिक प्रशिक्षण की सुविधाएं सभी को उपलब्ध नहीं है। केवल धनी वर्ग के बच्चे ही उच्च शिक्षा व व्यवसायिक

प्रशिक्षण प्राप्त कर पाते हैं। कृषि श्रमिकों, औद्योगिक श्रमिकों तथा दलितों व आदिवासियों के बच्चे इस प्रकार की शिक्षा की उम्मीद नहीं कर सकते।

8. भारत में व्यापक रूप से बेरोजगारी रही है क्योंकि ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के बेरोजगारी और अल्प रोजगार लोग अकसर सबसे निर्धन वर्ग में से होते है। इसलिए उनकी बढ़ती संख्या से आय असमानताओं में ओर अधिक वृद्धि हुई है। भारत देश में श्रमिकों की संख्या में वृद्धि के अनुपात में रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हुई है।
9. निजी निवेशक में शहरी क्षेत्र में अधिक ध्यान दिया जाता है। देश की लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा शहरी क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों में जाता है। 1990 के दशक में शुरू की गई उदारीकरण और निजीकरण की प्रक्रिया में जहाँ कमजोर वर्गों को नुकसान पहुँचाया है वहा इन नीतियों से उद्योगपतियों और कम्पनी प्रबंधकों की आय में तेजी के साथ वृद्धि हुई है। अत: क्षेत्र में आय की असमानतायें बढ़ी है।
10. भारतीय संविधान का मुख्य लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना में सन्निहित है. कोई भी आर्थिक सुधार तब प्रारंभ होता है, जब आम जनता की आवश्यकताएं, समाधान की प्रक्रिया की खोज के लिए प्रभावशाली बन जाती हैं. किन्तु यह सुधार आगे लगातार सम्पन्न होगा या नहीं, यह इस पर निर्भर करता है कि सामाजिक यथार्थता को कहां तक योजनाबद्ध विकास में स्थान दिया गया है. क्योंकि भावी सुधार और विद्यमान यथार्थता का घनिष्ठ संबंध होता है।

आर्थिक विकास एवं असमानता बीच संबंध स्थापित करने के लिये उपाय-

1. लोगों को लाभकारी रोजगार उपलब्ध कराना चाहिऐ क्योंकि जब लोगों को उत्पादक व अच्छे वेतन वाला रोजगार मिलता है तो उन्हें आर्थिक वृद्धि से प्रत्यक्ष लाभ प्राप्त होता है। इसके लिये उत्पादन के ढाँचे पूँजी प्रधान तकनीक की अपेक्षा श्रम प्रधान तकनीकी का अधिक उपयोग किया जाना चाहिए।
2. आय एवं आर्थिक अवसरों का बेहतर व न्यायाचित वितरण होना चाहिये क्योंकि इससे एक ओर तो सामान्य जीवन स्तर में सुधार होता है तो दूसरी ओर आर्थिक वृद्धि एवं मानव विकास में प्रत्यक्ष संबंध स्थापित होता है।
3. उत्पादक परिसम्पत्तियों (भूमि, भौतिक आधारिक संरचना तथा वित्तीय संसाधन) प्रदान किया जाना चाहिए क्योंकि इनके न होंने पर कई लोगों के (निर्धन जनता के) आर्थिक अवसर अवरुद्ध हो जाते है।
4. शिक्षा, स्वास्थ्य में निवेश करना चाहिए तथा सभी को मूलभूत सामाजिक सेवाएं उपलब्ध करना चाहिए। विकसित देशों के अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि इन क्षेत्रों में सरकार द्वारा बड़ी मात्रा में निवेश करने से मानव विकास में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है।
5. पुरुषों तथा महिलाओं को बराबर विकास के अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। स्त्रियों को बेहतर सुविधाएँ प्रदान करने से तथा उन्हें बेहतर शिक्षा, ऋण सुविधाएं, रोजगार के अवसर प्रदान करने से उनके मानव विकास में सहायता

मिलती है। Human Dev. Report 1996 के अनुसार स्त्रियों के सामर्थ में तथा उनकी योग्यताओं में निवेश करने से तथा उनके शक्तिकरण से आर्थिक समृद्धि के साथ–साथ कुल विकास में भी सहायता मिलती है।

6. आज जरुरत इस बात की है कि तमाम खादद्य सामग्री और जीवनोपयोगी सामान को कम से कम मानव श्रम के जरिये हासिल किया जाए। इससे हमारा मानव संसाधन दूसरे ऐसे नए कामों के लिए उपलब्ध हो जाएगा।
7. राजनैतिक स्तर पर 'बेहतर प्रशासन प्रबंधन किया जाये। जो लोग सत्ता के है वे संपूर्ण जनसंख्या की आवश्यकताओं को उच्च प्राथमिकता दे।
8. मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार वेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य तथा पोषण व्यवस्था से आर्थिक समृद्धि की पूरी संभावना को ही बदला जा सकता है। विशेष तौर पर कम मानव विकास तथा कम आय वाले देशों को, वर्ल्ड बैंक के अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर आर्थिक समृद्धि में भौतिक पूँजी का केवल 16 प्रतिशत तथा प्राकृतिक पूँजी का केवल 20 हिस्सा है। शेष 64 प्रतिशत मानव व सामाजिक पूँजी का परिणाम है।

निष्कर्ष- निर्धनता, बेरोजगारी एवं आर्थिक विषमता का मूल कारण है। भारत में निर्धनता, निरपेक्ष निर्धनता एवं सापेक्ष दोनों रूपों में पायी जाती है। सन 1947 में स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में सन् 1951 में आर्थिक नियोजन के माध्यम से तीव्र आर्थिक विकास करने का निर्णय लिया गया। हमारी सभी नीतियों का उद्देश्य समता और सामाजिक न्याय सहित तीव्र विकास और संतुलित आर्थिक विकास रहा है। फिर भी समाज का बहुत बड़ा समुदाय जो अभी भी निर्धनता के कुचक्र से मुक्ति नहीं पा सका है। डॉ. अम्बेडकर के त्रयी सिद्धांत में स्वतंत्रता–समानता भ्रातृत्व का विशेष महत्व है। तीनों एक दूसरे से भिन्न, किन्तु परस्पर संबंधित है प्रत्येक एक दूसरे पर आश्रित है और मानवीय संदर्भ में तीनों की प्रासंगिता सार्वभौम है। अम्बेडकर जी ने "स्वतंत्रता, समानता, भ्रातृत्व" को एक राष्ट्रीय आदर्श माना था। जिनका परिपालन जन साधारण, देश और समस्त मानव प्राणियों के हित में है। जब समाज में भ्रातृत्व मजबूत होगा तभी स्वतंत्रता व समानता भी मजबूत होगी और लोकतंत्र भी सशक्त होगा।

संदर्भ सूची-

1. डॉ. रामरतन शर्मा, विकास का अर्थशास्त्र एवं नियोजन, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
2. सी. एम. चौधरी, भारत में आर्थिक पर्यावरण, मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर
3. अनुपम अग्रवाल, अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
4. भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद
5. एस.के. मिश्र, वी. के. पुरी, भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई
6. रूद्र दत्त, के.पी. एम. सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि. रामनगर, नई दिल्ली।
7. गोयल, अनुपम, भारतीय आर्थिक समस्यायें एवं नीतियाँ, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, खजूरी बाजार, इन्दौर
8. सिंह, रामगोपाल, विकल्प की तलाश, बुद्ध से अम्बेडकर तक, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस,

जयपुर

9. जाटव, डी.आर. डॉ. अम्बेडकर के त्रेयी सिद्धांत, समता साहित्य सदन्, जयपुर राजस्थान
10. बिजनेस स्टैंडर्ड, भोपाल

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

सुरौधा-सोन नदी का सबसे बड़ा नदीय द्वीपः एक भौगोलिक अध्ययन

• निर्मल कुमार
•• मो. नज़ीर अख्तर

सारांश- नदियॉं मैदानी भागों में विभिन्न स्थलाकृतियों का निर्माण करती है, उनमें से एक है-नदीय द्वीप। प्रायः नदी मार्ग में कठोर शैलों के मिलने तथा पार्श्ववर्ती भाग में अपेक्षाकृत मुलायम मिट्टी के मिलने के कारण नदियॉं दोनों ओर बहने लगती है बीच वाला भाग नदीय द्वीप में बदल जाता है। सुरौधा सोन का सबसे बड़ा नदीय द्वीप है जो कोईलवर शहर से 3 कि.मी. उ.पू. की ओर स्थित है। यह $25^{0}33'10''$ से $25^{0}36'10''$ उत्तरी अक्षांश तथा $84^{0}47'0''$ से $84^{0}50'0''$ पूर्वी देशांतर पर अवस्थित है। शोध का मुख्य उद्देश्य सामान्य जन को सुरौधा नदी द्वीप से अवगत कराना तथा जनप्रतिनिधियों एवं स्थानीय प्रशासकों को वहॉं की समस्याओं से परिचित कराना है। प्रस्तुत शोध में मुख्यतः प्राथमिक एवं द्वितीयक ऑकड़ों का उपयोग किया गया है। ये ऑकड़ें भारतीय सर्वेक्षण शीट 1:50000 का उपयोग कर द्वीप की अवस्थिति एवं विस्तार निकालने तथा क्षेत्रीय भ्रमण, प्रश्नावली, अनुसूची से प्राप्त किये गये है। यहॉं मुलायम बालुका युक्त मिट्टी पाई जाती है। शोध क्षेत्र में उष्ण कटिबंधीय पतझड़ वन के वृक्ष (जामुन, आंवला, आम, साल, शीशम एवं बांस आदि) पाये जाते है। यहॉं की कुल जनसंख्या 1105 है। अधिकांशतः यादव जाति के लोग रहा करते हैं। कृषि यहॉं के लोगों का मुख्य पेशा है। इसके अलावा पशु पालन, बालू खनन तथा मत्स्य पालन में भी यहॉं के लोग संलग्न है। गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, संड़कों के अभाव, बिजली तथा स्कूल जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव है। बुनियादी के विकास, कृषि प्रविधि तथा शिक्षा के प्रसार द्वारा लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक विकास लाया जा सकता है।

मुख्य शब्द- अद्यःस्थल, खनन, स्थलाकृति, नदीय द्वीप, बालुका

परिचय- नदीय द्वीप एक ठोस संरचना है जो दो सामानांनतर नदियों या एक बड़ी नदी में भी बन सकता है यदि नदी दो धाराओं में बंट जाए तो उनकी बीच की भूमि द्वीप का आकार ले लेती है या नदी की तीव्र धारा मुख्य भूमि को काट कर द्वीप का निर्माण करती है। दुनिया

• शोधार्थी, भूगोल विभाग, एच. डी. जैन कॉलेज, आरा
•• प्राध्यापक, भूगोल विभाग, एच. डी. जैन कॉलेज, आरा

में हजारों नदी द्वीप है। ये ऐसी जगहें हैं जो चारों तरफ पानी से घिरी होती है और इन जगहों से खूबसूरत और अद्भूत नजारे दिखते हैं। इनमें से ज्यादातर द्वीप प्राकृतिक रूप से या विवर्तनिक रूप से बने होते है। दो सामानांनतर नदियों के बीच या एक बड़ी नदी के बीच में स्थित द्वीप/जगह को रिवराइन आइलैंड (नदीय द्वीप) कहा जाता है, लेकिन नदी के बीच की जमीन ठोस होनी चाहिए और पानी के स्तर से नीचे नहीं होनी चाहिए। नदी कुछ द्वीप इतने बड़े है कि वहॉ लाखों लोग रहते हैं। नदी द्वीपों का निर्माण और प्रवास बाढ़ नियंत्रण, नौपरिवहन (जलमार्ग) और नदी पारिस्थितिकी तंत्र के लिए अत्यधिक सुसंगत है।[1] सोन नदी, गंगा नदी की प्रमुख दक्षिणी सहायक नदी है जो मध्य भारत के मध्य प्रदेश के अमरकंटक पहाड़ी से निकलकर कैमूर पहाड़ी से गुजरती हुई 784 कि.मी. दूर मनेर (पटना) के हल्दी छपरा के पास गंगा नदी से अपना संगम बनाती है। सोन नदी घाटी भूगर्भीय रूप से दक्षिण-पश्चिम में नर्मदा नदी की निरंतरता है। यह घाटी के उत्तर में कैमूर पहाड़ी और दक्षिण में छोटानागपुर पठार से घिरी हुई है। सोन नदी कोईलवर से 3 कि.मी. उत्तर-पूर्व की ओर अपने मार्ग के बीच में सबसे बड़े नदीय द्वीप सुरौधा का निर्माण करती है। यह $25^{0}33'10''$ से $25^{0}36'10''$ उत्तरी अक्षांश तथा $84^{0}47'0''$ से $84^{0}50'0''$ पूर्वी देशांतर पर अवस्थित है। जलोढ़ नदियों में अलग-अलग आकार वाले नदी द्वीप आमतौर पर नदी मार्ग के बीच में स्थित होते है। कुछ द्वीप नदी के किनारों से तब जुड़े होते है जब द्वितीय मार्ग पूरी तरह से अवसाद से भर जाए।[2] नदी के तटों के कटाव के कारण प्रवाह केन्द्रों में तलछट की उपलब्धता बढ़ जाती है जो स्थानीय प्रवाह की तलछट वहन क्षमता से अधिक हो जाती है और एक प्रगतिशील जमाव का कारण बनती है।[3] जब उपयुक्त विकास की स्थितियॉ स्थापित हो जाती है तो वनस्पतियॉ उभरती संचनाओं पर अपना उपनिवेश बना लेती है और विकसित हो जाती है। इसके अलावा स्थानीय जलवायु और मानवीय गतिविधियों के प्रभाव के कारण जलोढ़ नदियों में प्रवाह-तलछट प्रक्रियाएॅ अक्सर अस्थिर होती है। इसलिए नदी द्वीप की स्थिरता भी जलीय प्रणाली (जैसे बाढ़ प्रसार प्रक्रियाएॅ), तलछट वहन क्षमता और तलछट कण संरचना से जुड़ी होती है।[4] नदी द्वीपों की मुख्य विशेषता कटाव और निक्षेपण की एक निश्चित चक्रीय अवधि से भी होती है। कुछ शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नदी के तट से जुड़ने वाले प्रारंभिक मध्य मार्ग वाले पट्टियों का पूरा चक्र लगभग 5.15 वर्ष का होता है।[5] वनस्पति नदी द्वीप के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। घनी वनस्पति वाले क्षेत्रों में मिट्टी कटाव दर कम हो जाती है, जो बाढ़ के दौरान नदीय द्वीप को स्थिरता प्रदान करता और प्रवाह वेग भी कम हो जाता है जिससे द्वीप का विस्तार होता है। नदीय द्वीप विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के हो सकते है- मौसमी द्वीप अस्थायी प्रकार के हैं जो मुख्य रूप से बरसात के मौसम में निर्मित होते है। गर्मियों के आने पर ये द्वीप नही रहते क्योंकि इन नदियों का पानी आमतौर पर सूख जाता है। हम जानते है कि कुछ नदियॉ बारहमासी होती है या सभी मौसमों में सदाबहार रहती हैं। इस प्रकार की नदियों के द्वीप स्थायी होते हैं और उनमें से कुछ रहने योग्य होते हैं। कई छोटे द्वीपों पर मानव अपना अधिवास स्थापित कर चुके हैं और हर संभव काम करते हैं, जैसे-मछली पकड़ना, खेती करना और कई अन्य काम। एकल नदी द्वीप नदी के बीच में एक ठोस आधार बनाते हैं। द्वीपों के चारों ओर पानी बहता हैं। इस

प्रकार के नदीय द्वीप तीखे मोड़ पर बनते हैं। जब दो समानांतर नदियॉ एक साथ बहती हैं और इन नदियों के बीच प्राकृतिक रूप से ठोस जगह बन जाती है तो उन्हे समानांतर नदी द्वीप कहा जाता है। बहुत कम प्राकृतिक रूप से बने समानांतर नदी द्वीप उपलब्ध हैं। अधिकतम उपलब्ध नदी द्वीप एकल नदी द्वीप हैं। अधिकांश नदियॉ समुद्री तट पर समाप्त होती हैं। नदी के द्वीप जो स्वाभाविक रूप से दूसरी तरफ तटरेखा बनाते हैं, उन्हे तटीय नदी द्वीप कहा जाता है। रहने योग्य नदी द्वीप आरामदायक निवासियों वाले द्वीप हैं। हजारों द्वीप उपलब्ध हैं जहॉ लोग बुनियादी जरूरतों के साथ रह सकते हैं, लेकिन यहॉ रहने वाले लोगों का जीवन बहुत कठिन है। इस तरह नदी के बीच में छोटे द्वीपों पर रहना वाकई मुश्किल है। उदाहरण के लिए जब हम किसी नदी द्वीप पर जाते है तो वहॉ एक भी प्राथमिक विद्यालय नहीं देखते है वहॉ के बच्चे नाव के द्वारा मुख्य भूमि पर बने विद्यालय में जाते है। बाढ़ के समय नाव से विद्यालय जाना जोखिम भरा काम होता है जिससे उन बच्चों की शिक्षा भी बाधित होती है। नदी के कुछ द्वीप केवल बाढ़ आने पर ही निर्मित होते हैं। जब बाढ़ का पानी का स्तर गिर जाता है तो ये द्वीप नही रह जाते है।

शोध क्षेत्र- प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्र भोजपुर जिले के कोईलवर प्रखण्ड़ के अंतर्गत आता है। सुरौधा सोन नदी का सबसे बड़ा नदीय द्वीप है जो कोईलवर नगर से 3 कि.मी. उत्तर पूर्व की ओर की ओर स्थित है। यह $25^{0}33'10''$ से $25^{0}36'10''$ उत्तरी अक्षांश तथा $84^{0}47'0''$ से $84^{0}50'0''$ पूर्वी देशांतर पर अवस्थित है। इस द्वीप के पूर्व में मउदही बांध के उस पार लेखन टोला सबसे नजदीकी गॉव के रूप में स्थित है, पश्चिम में टी. बी. सेन्टर हॉस्पीटल मुख्य भूमि पर, उत्तर में अमनाबाद गॉव और दक्षिण में 4 लेन पुल है जो एन. एच–922 पर स्थित है। अध्ययन क्षेत्र स्थायी नदीय द्वीप के श्रेणी में आता है और यह रहने योग्य भी है, जिस पर मानव अपना अधिवास स्थापित कर चुके है। इस द्वीप की आकृति चापाकार है जो उत्तर की ओर चौड़ा और दक्षिण की ओर पतला है जिसका कुल क्षेत्रफल वर्तमान में 489.66 एकड़ है।

मानचित्र-1

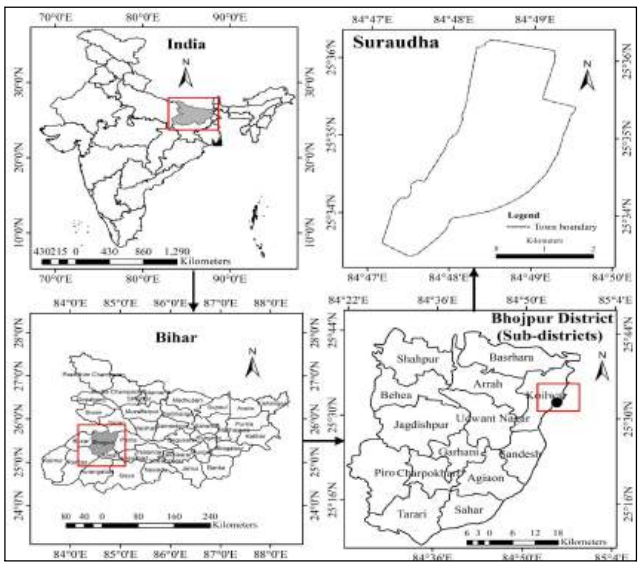

सुरौधा-अवस्थिति एवं विस्तार- इस नदीय द्वीप का निर्माण पुरानी जलोढ़ मृदा से हुआ है जिसमें अधिकतर मृदा सोन नदी द्वारा लाए गए तलछट है। यहाँ उष्ण कटिबंधीय जलवायु की विशेषता पायी जाती है। इस जलवायु की सबसे प्रमुख विशेषता ऋतुओं के अनुसार परिवर्तन है जिसके कारण यहाँ की जलवायु उष्ण कटिबंधीय मानसूनी प्रकार की है। मानसूनी प्रकार की जलवायु यहाँ की कृषि का मुख्य आधार है। कृषि यहाँ के लोगों का मुख्य पेशा है जिसमें मुख्य रूप से साग-सब्जी, सरसों आदि की अच्छी उपज होती है। गेहूँ की एक फसल चैत माह में होती है जो मुख्य फसल के रूप में उपजाया जाता है। यहाँ की कुल जनसंख्या 1105 है जिसमें 60% जनसंख्या कृषि कार्य से जुड़ी हुई है, जबकि 20% जनसंख्या बालू उत्खन्न में मजदूरी का कार्य करती है। 10% जनसंख्या अप्रवासी है तथा 10% जनसंख्या अन्य कार्यो में संलग्न है। 10% जनसंख्या जो अन्य कार्यो में संलग्न उनमें से अधिकांश लोग हाथ से बुने या बनाये वस्तुओं जैसे-बॉस के बुने हुए पंखे, चटाई, डलियाँ आदि को बना कर नजदीकी बाजार में बेचकर अपनी जीविका चलाते हैं। यदि जातिगत जनगणना पर नजर डाले तो यादव और पासवान जाति की संख्या अधिक है जो खेती-बाड़ी और पशुपालन का कार्य करते हैं। इसके अलावे और भी जातियाँ जैसे- मलाह, मुस्लिम आदि निवास करते है।

मानचित्र-2

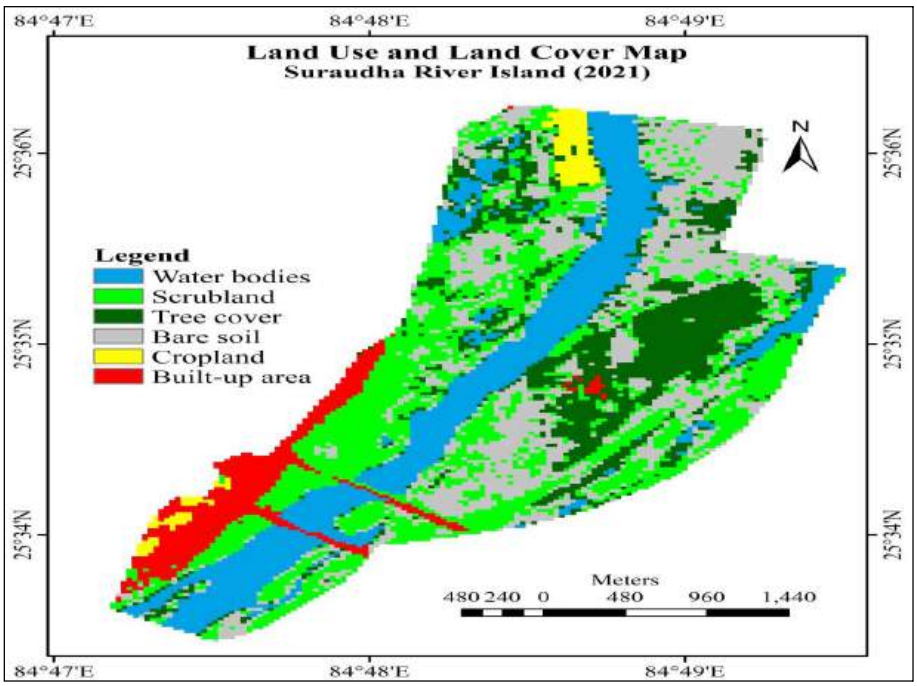

भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण

शोध का उद्देश्य- इस शोध का मुख्य उद्देश्य नदीय द्वीप की जीवनशैली से लोगों को अवगत कराना तथा सामाजिक- आर्थिक विकास, अधोस्थल के विकास की स्थिति का विश्लेषण करना है। बाढ़ से होने वाले कटाव के कारणों का पता लगाना तथा इससे हो रही विभिन्न समस्याओं को उजागर करना है।

शोध प्रविधियॉ- प्रस्तुत शोध में मुख्यत: प्राथमिक एवं द्वितीयक ऑकड़ों का उपयोग किया गया है। ये ऑकड़ें भारतीय सर्वेक्षण शीट 1:50000 का उपयोग कर द्वीप की अवस्थिति एवं विस्तार निकालने तथा क्षेत्रीय भ्रमण, प्रश्नावली, अनुसूची से प्राप्त किये गये है। लैंडसैट उपग्रह डेटा का उपयोग कर भूमि उपयोग एवं आवरण का सटीक चित्र प्रस्तुत किया गया है।

समस्याएँ- अध्ययन क्षेत्र में कई समस्याओं को चिन्हित किया गया है जो निम्नलिखित प्रकार है-

बुनियादी सुविधाओं का अभाव- भारत जैसे विकासशील देश में आधी से अधिक आबादी गॉवों में निवास करती है, इसलिए भारत में ग्रामीण शिक्षा का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है। जिस क्षेत्र में स्कूल ही नही हो वहॉ शिक्षा का स्तर क्या होगा, हम सोच सकते है। अनेक नदीय द्वीप भारत में स्थित है जहॉ स्कूल तक नही है जिसका मतलब है कि छात्रों का शिक्षा प्राप्त करने के लिए दूसरे गॉवों में जाना पड़ता है। इस वजह से माता-पिता अपने बेटियों को स्कूल नहीं भेजते, जिससे वे ग्रामीण शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रह जाती है। इस द्वीप पर भी कोई सरकारी स्कूल नहीं है, बच्चों को 2 कि.मी. दूर परेव जाना पड़ता है। बाढ़ के समय यह क्षेत्र पूरी तरह से पानी से घिर जाता है जिसके कारण बच्चों को डेंगी (छोटी नाव) में बैठकर जाना पड़ता है जो बहुत ही जोखिम भरा होता है। बाढ़ के समय जब पानी का बहाव ज्यादा होता है तो माता-पिता अपने बच्चों को स्कूल नही भेजते। साल के 03 से 04 महीने ये स्थिति बनी रहती है, जिससे बच्चों की पढ़ाई बाधित होती है। प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्र में बिजली की समस्या सबसे बड़ी है। इस क्षेत्र को कभी भी बिजली से जोड़ने का प्रयास नही किया गया है, जबकि 200-300 फीट की दूरी पर लेखन टोला तक बिजली उपलब्ध है। बिजली की समस्या से निजात पाने के लिए आज से 7-8 साल पहले सौर ऊर्जा प्लांट लगाया गया था लेकिन उचित रख-रखाव के कारण जल्द ही खराब हो गया। इस सौर प्लांट से शाम 6:00 बजे से रात 10:00 बजे तक बिजली उपलब्ध हो पाती थी। अस्पताल एक ऐसा संस्था है जहॉ घायलों का उपचार, रोगों का निदान और उपचार किया जाता है। समुदाय की व्यापक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा करने के लिए, आधुनिक अस्पताल में बाहरी रोगियों के सुविधाओं के साथ-साथ आपातकालीन, मनोरोग और पुनर्वास सुविधाएं भी उपलब्ध होती है। जिन क्षेत्रों में अस्पताल की सुविधा नहीं होती वहॉ लोगों को मीलों सफर करके अस्पताल जाना होता है जिसके कारण कई रोगियों की मौत उचित इलाज नही मिलने के कारण रास्ते में ही हो जाती है। आरजीआई (रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया) के अनुसार वर्ष 2020 में हुई कुल 45 प्रतिशत मौतें इसलिए हुई क्योंकि लोगों को वक्त पर उचित ईलाज नहीं मिल पाया। भारत में वर्ष 2020 में 82 लाख लोगों की मृत्यु हुई थी जिनमें से 45 प्रतिशत लोगों को मृत्यु के समय तक कोई चिकित्सा सुविधा नहीं मिली और इस दौरान मरने वालों में से महज 1.3 फीसदी को चिकित्सा क्षेत्र के योग्य पेशेवरों की मदद मिल सकी थी। सुरौधा एक ऐसा नदीय द्वीप है जहॉ कोई भी अस्पताल की सुविधा उपलब्ध नही है जिससे वहॉ के लोगों को आपातकाल के दौरान सोन नदी पार कर के 5 कि.मी. दूर कोईलवर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र ले जाना पड़ता है। रात के समय या बाढ़ के दौरान वहॉ अस्पताल की

सुविधा नही होने के कारण रोगी की मृत्यु भी हो जाती है। सड़के दैनिक जीवन, आर्थिक कार्यो और सामाजिक कार्यो के अति महत्वपूर्ण साधन है। सड़के खेतों, बाजारों, अस्पतालों और स्कूलों को जोड़ने का कार्य करती है, जिससे यात्रियों को आने जाने और सामग्रियों की कुशल आवाजाही संभव होती है। अच्छी सड़कों वाले क्षेत्रों में अक्सर भूमि और संपति के मूल्यों में वृद्धि देखी जाती है। सुरौधा नदीय द्वीप का विकास के मुख्य धारा से कटे रहने का एक मुख्य कारण है सड़क का विकास नही होना। यहॉ के किसानों को सामग्रियों को बाजार ले जाने या लाने में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है जिससे किसानों की कच्ची सामाग्रियॉ खराब हो जाती है। परेव बाजार नदी पार यहॉ का सबसे नजदीकी बाजार है अगर सड़क माध्यम से दोनों को जोड़ा जाय तो आवगमन सुगम हो सकता है साथ ही साथ भोजपुर जिले में इसे एक पर्यटक केन्द्र के रूप में विकसित किया जा सकता है यदि सरकार पर्यटक विकास के क्षेत्र में कोई प्रयास करना चाहे तो। भोजपुर जिले महज कुछ मंदिरों और मस्जिदों को छोड़कर कोई भी प्राकृतिक पर्यटन स्थल नही है सुरौधा नदी द्वीप इस कमी को पूरा कर सकता है।

कटाव- नदी के किनारे का कटाव एक प्राकृतिक घटना है जिसमें नदियॉ अपने मार्ग की नजदीकी चट्टानों को घिसकर तथा काट कर अपने साथ परिवहन करने में प्रयत्नशील रहती हैं। नदियॉ भूतल पर समतल स्थापन का कार्य करती है, ये प्रक्रिया तीन रूपों में सम्पन्न होती है जिसे प्राय: अपरदन, परिवहन तथा निक्षेपण के नाम से जाना जाता है। नदियों का बहता हुआ जल घाटी के पार्श्व भाग तथा तली को घिसता तथा खरोंचता हुआ चलता है, जिस कारण चट्टान चूर्ण को नदी की घाटी से अलग करके अपने साथ ले लेता है। नदी के इस कार्य को अपरदन या कटाव कहा जाता है। कटाव से प्राप्त मलवा को नदियों का जल अपने साथ ढोता हुआ चलता है। नदी के इस कार्य को परिवहन कहते हैं। नदी अपने मार्ग या तली में कहीं कहीं इन पदार्थो का जमाव भी करती है जिसे निक्षेपण कहते है। कटाव की प्रक्रिया को तीव्र बनाने में अवसाद मुख्य भूमिका निभाता है। नदी के अवसाद में कंकड़, पत्थर, रेत आदि पदार्थ सम्मिलित किये जाते है जो नदी के तटों तथा तली को काटने का काम करते है। नदियॉ अपना आकार और मार्ग बदलती रहती हैं। अवसादन और कटाव जैसे प्रक्रिया से ये बदलाव संभव होते है, जिनका बाढ़ के खतरे, नववहन और स्थलरूप में बदलाव पर गहरा प्रभाव पड़ता है।[6] कटाव प्रक्रिया किनारे की बनावट, नदी के बहाव, तापमान और मिट्टी की नमी पर निर्भर करते है, जो सभी अलग-अलग और मिलकर किनारे के कटाव दर पर असर डालते हैं। इसके अलावे पेड़-पौधे भी किनारों के कटाव पर असर डालते है, आमतौर पर उनकी जड़े मिट्टी को मजबूत करती है, जिससे कटाव कम होता है।[7] अध्ययन क्षेत्र सुरौधा में कटाव की स्थिति विकराल रूप धारण कर चुकी है। प्राप्त ऑकड़ों और स्थायी निवासियों के अनुसार 1950 में यह क्षेत्र 1430 एकड़ में फैला था जो कटाव के कारण 1970 में 1249 एकड़ में सिमट गया। इस दो दशकों में कुल मिट्टी कटाव 180 एकड़ हुआ जिसका प्रतिशत 12.58 था। 1970 से 1990 तक यह क्षेत्र 1249 एकड़ से घटकर 699 एकड़ रह गयी। इन दशकों में कुल कटाव 549 एकड़ हुआ जिसका कुल प्रतिशत 44 प्रतिशत था। यह वही साल जब 1972 का प्रलयंकारी बाढ़ आया था जिससे सोन

नदी में रिकॉर्ड बाढ़ दर्ज की गयी थी। द्वीप पूरी तरह से जलमग्न हो चुका था, सैकड़ों निवासी इस द्वीप को छोड़कर भाग चुके थे। 1990 में यहाँ का क्षेत्रफल 699 एकड़ था जो 2010 तक घटकर 593 एकड़ रह गया। इस दशक में कुल 106 एकड़ मिट्टी कटाव हुआ जिसका कुल प्रतिशत 15.17 था। 2010 से 2025 के बीच इस द्वीप का क्षेत्रफल घटकर 593 से 468 एकड़ रह गया। इन 15 वर्षों में कुल 124 एकड़ कटाव हुआ जिसका कुल प्रतिशत 21.00 है जो वर्तमान में कुल इस द्वीप का कुल क्षेत्रफल है। इस कटाव का मुख्य कारण बाढ़ से होने वाले कटाव के साथ मानवजनित क्रियाएँ भी सम्मिलित है। किसान अपने खेत को बढ़ाने के लालच में ऊचे भू-भाग को काटकर समतल कर देते है जिससे कटाव की दर और तेजी से बढ़ जाती है साथ ही साथ पेड़-पौधों की तेजी से हो रही कटाव के कारण भी कटाव तीव्र गति से हो रहा है।

तालिका-1

अध्ययन क्षेत्र में कटाव का विवरण				
क्रम	वर्ष	क्षेत्रफल (एकड़ में)	दशकीय कटाव (एकड़ में)	गिरावट (:)
1	1950	1430	–	–
2	1970	1249	180	12.58
3	1990	699	549	44.00
4	2010	593	106	15.17
5	2015	468	124	21.00

स्त्रोत-व्यक्तिगत सर्वेक्षण (अगस्त 2025)

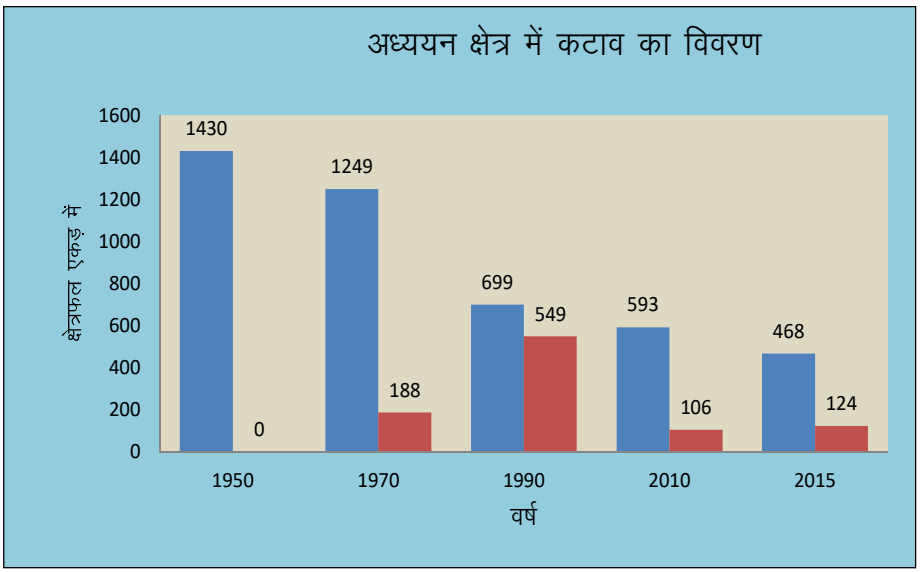

ग्रॉफ चित्र
अध्ययन क्षेत्र में कटाव

चित्र-1
अध्ययन क्षेत्र में कटाव की स्थिति

चित्र-2

विपणन का अभाव- अध्ययन क्षेत्र में विपणन का अभाव वहॉ के विकास में प्रमुख बाधा उत्पन्न कर रही है। विपणन ग्रामीण इलाके के विकास के लिए जरूरी है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 83.31 करोड़ (68.21%) लोग ग्रामीण इलाके में रहते है।[8] ग्रामीण बाजार का आकार ही इसकी क्षमता को बताता है। ये लोग खेती और उससे जुड़े कामों में संलग्न है। भारत में ग्रामीण बाजार देश को ज्यादा राजस्व प्रदान करते है। भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण बाजार आधी से ज्यादा आय पैदा करते है।[9] विपणन के अभाव के कारण यहॉ के किसान साग-सब्जीयों और कच्चे माल को लेकर सोन नदी पार कर नजदीकी परेव बाजार में बेचने के लिए जाते है। नदी पार करने में माल ढुलाई भी अधिक देना पड़ता है तथा इन्हे स:समय अपना सामान बेच कर घर जाना होता है जिससे उनके कच्चे माल की उचित कीमत नही मिल पाती। इन सभी कारणों से यहॉ के किसानों की आर्थिक स्थिति दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही है और वे कर्ज के बोक्ष से निकल नही पाते।

कृषि से संबंधित समस्याएँ- अध्ययन क्षेत्र मुख्य तौर पर कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहॉ की 65 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। यहॉ किसानों को अप्रत्याशित मानसून पर निर्भरता, छोटे और खंड़ित भू-स्वामियों और पारंपरिक कृषि प्रणालियों के कारण कम उत्पादकता जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इसके अलावे आधुनिक तकनीक तक सीमित पहुॅच, सिंचाई और भंडारण जैसी खराब बुनियादी संरचना, ऋण और बाजार तक पहुॅच का अभाव और मृदा क्षरण जैसी समस्याएँ शामिल है। कृषि प्रधान देश होते हुए भी कृषि का एक महत्वपूर्ण हिस्सा वर्षा पर निर्भर है जिससे यहॉ की कृषि को जुए की संज्ञा दी जाती है। अनियमित वर्षा के कारण बाढ़ या सूखे की स्थिति पैदा होती जिससे किसानों की फसल बर्बाद होती है। उतराधिकार कानूनों और संपति के विभाजन के कारण भूमि अक्सर छोटे भूखंड़ो में विभाजित हो गयी है जिससे बड़े पैमाने पर खेती के बजाय किसान सिर्फ जीवन निर्वाह कृषि तक ही सीमित होते जा रहे है। पांपरिक कृषि प्रणालियॉ, खराब सिंचाई तथा आधुनिक पौद्योगिकी तक पहुॅच न होने से कृषि सीमित होती जा रही है। जानकारी के अभाव में किसान रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग कर रहे है जिससे मृदा की उर्वरता में गिरावट हो रही है। अप्रयाप्त सड़के, परिवहन सुविधाएं और भंड़ारण विकल्प उच्च लागत और फसल के बाद के नुकसान का कारण बनते है, जिससे किसानों को कम कीमत पर उपज बेचने के लिए मजबूर होना पड़ता है। छोटे और सीमांत किसानों को बीज, उर्वरक और मशीनरी के लिए ऋण प्राप्त करने में संघर्ष करना पड़ता है, जिससे उनकी असुरक्षा बड़ जाती है। किसानों को अक्सर बिचौलियों द्वारा शोषण का सामना करना पड़ता है, सूचना तक उनकी पहुंच नही होने के कारण मूल्य उतार-चढ़ाव का सामना करना पड़ता है, जिससे उनकी आय कम और अस्थिर हो जाती है। इन सभी समस्याओं के कारण किसान कृषि से दूर होते जा रहे है।

अन्य समस्याएँ- अध्ययन क्षेत्र में बाढ़ के समय तैराकी संबंधी प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। उस क्षेत्र से प्रशिक्षित कुछ युवाओं बाढ़ के समय लाइफ जैकेट उपलब्ध कराना चाहिए जिससे बाढ़ के समय बचाव कार्य सम्पन्न हो सके। थ्रो लाइन, थ्रो बैग में एक रस्सी होती है जिसे एक त्वरित-रिलीज बैग के अंदर रखा जाता है। इसका उपयोग बहते पानी में घायलों या पानी गिरे किसी व्यक्ति को बचाने के लिए किया जाता हो उपलब्ध हो क्योकि सोन नदी आगे कुछ दूरी पर हल्दी छपरा गॉव के पश्चिम और बबुरा गॉव के पूर्व गंगा में संगम करती है यहॉ के बाद बाढ़ में डूबते या पानी में बहते हुए व्यक्ति को बचाना नामूकिन है। बाढ़ के समय स्वचालित मोटर बोट उपलब्ध हो ताकि आपातकाल में किसी व्यक्ति को अस्पताल पहुचाया जा सके। ऊचे शरण स्थल या सामूदायिक भवन का निर्माण हो ताकि बाढ़ के समय जिनका घर डूब जाय उन्हे आश्रय दिया जा सकें।

समाधान-

बुनियादी सुविधाओं का विकास- बुनियादी सुविधाओं के विकास के लिए बिहार सरकार और केन्द्र सरकार द्वारा कई सरकारी योजनओं की शुरूआत की गयी है। माननीय मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार द्वारा चलायी गयी महत्वाकांक्षी योजनाओं में से एक हर घर नल-जल योजना जो हर ग्रामीण घरों में नल जल उपलब्ध करा रही है। केन्द्र सरकार द्वारा चलायी गयी प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना जिससे ग्रामीण ईलाकों में पक्के घर का निर्माण हो रहा है। स्वच्छता के लिए स्वच्छ भारत मिशन योजना, श्रम रोजगार के लिए मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना) जिसमें ग्रामीण परिवार को एक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिनों का अकुशल श्रम रोजगार गारंटी प्रदान की गयी है। योजनाएं हमारे लिए सही दिशा और दशा प्रदान करती है। अध्ययन क्षेत्र में इन योजनाओं की अति आवश्यकता पर इसे सूचारू रूप से दूर दराज के ईलाकों के लागू की जाय। इस क्षेत्र में आज भी स्वच्छ जल, सुलभ शौचालय, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएँ, सड़क, बेरोजगारी, का अभाव है। योजनाएँ लागू होने से कुछ नही होता, उसे सही हाथों में और धरातल पर लागू होना भी आवश्यक है। सरकार को बुनियादी सुविधाओं को मौलिक अधिकारों की श्रेणी में लाना चाहिए, और उस क्षेत्र के विधायकों एवं सांसदो को यह जिम्मेदारी देनी चाहिए की वे अपने क्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं के विकास को सुनिश्चित करे, जिससे उनके क्षेत्र का विकास होगा और लोगों की समस्याओं का समाधान भी होगा।

विपणन की सुविधा- अध्ययन क्षेत्र का विपणन केन्द्र एक साकारात्मक एवं विकासात्मक पहल कर सकता है। यदि यहॉ कोई विपणन केन्द्र होता तो किसानों को परिवहन, भंड़ारण में लगा खर्च भी बच जाता और किसानों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार होता। नदी द्वीप पर विपणन केन्द्र का होना काफी आर्कषक भी होता है साथ ही साथ पर्यटन को भी बढ़ावा मिलता है। ऐसे क्षेत्रों में विपणन केन्द्र की संकल्पना भारतीय अर्थव्यवस्था में हमेशा असरदार भूमिका निभा सकता है।

सौर ऊर्जा का विकास- अध्ययन क्षेत्र में सौर ऊर्जा का विकास इस क्षेत्र की रूपरेखा बदल सकती है। यहॉ सौर ऊर्जा के विकास की अपार संभावनाएँ भी है क्योंकि बहुत

सी जमीनों पर जहॉ खेती नहीं होती वो सालों भर खाली पड़ी रहती है। वहॉ सौर ऊर्जा पार्क का निर्माण किया जा सकता है उस क्षेत्र बिजली बहुत बड़ी समस्या भी खतम होगी साथ ही साथ आस पास के क्षेत्रों को सौर ऊर्जा से बिजली की समस्या से निजात मिलेगा। चीन अपने दूर-दराज के क्षेत्रों में तेजी से सौर ऊर्जा का विकास कर रहा है साथ ही साथ अपने रेगिस्तान, झील और तालाब में भी सौर प्लांट लगा रहा है। चीन विश्व का अग्रणी सौर ऊर्जा उत्पादक देश बन गया है। चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत विश्व के तीन अग्रणी सौर ऊर्जा उत्पादक राष्ट्र है।[10] भारत इस क्षेत्र में तीसरा स्थान रखता है तथा सरकारी पहल और घरेलू विनिर्माण में तीव्र वृद्धि दर्शा रहा है। देश ने 100 गीगावाट से अधिक स्थापित सौर क्षमता हासिल कर ली है, जिसमें सौर ऊर्जा इसकी कुल नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता का 48% है और 2030 तक नवीकरणीय ऊर्जा लक्ष्यों को पूरा करने की दिशा में अग्रसर है। सरकार ने इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कई सरकारी योजनाएँ चला रखी है जिसमें घरों के लिए पीएम सूर्य घर मुफ्त बिजली योजना और किसानों के लिए पीएम-कुसुम योजना शमिल है। पीएम सूर्य घर योजना मे तहत एक करोड़ परिवारों को मुफ्त बिजली उपलब्ध कराना तथा छतों पर सौर ऊर्जा लगाने को बढ़ावा दिया जा रहा है। सरकार 2 किलोवाट प्रणाली के लिए 60% और 2 से 3 किलोवाट के बीच की प्रणाली के लिए 40% की केन्द्रीय वित्तीय सहायता प्रदान करती है। पीएम-कुसुम योजना के तहत किसानों की आय बढ़ाने और सिंचाई में सुधार के लिए उन्हे सौर पंप और बिजली संयंत्र स्थापित करने में सहायता करना। इन सभी योजनाओं के होते हुए भी सुरौधा के लोग अंधेरे में रहने के लिए विवश है क्योंकि योजनाओं का हमारे देश में क्या स्थिति है हम सब जानते है। इन योजनओं में से एक भी योजना इन दूर-दराज इलाकों में पहुॅच पाए तो इनका जीवन आसान हो सकता है।

संदर्भ सूची-

1. एम. हेबेल (2018)-निचली विस्तुला नदी पर सैंडबार पक्षी घोंसले की उपलब्धता पर प्रवाह विनियमन और नदी मार्गो के प्रभाव, पारिस्थितिक प्रश्न 29, खंड-4, पृष्ठ सं. 43-53।
2. हुक, जे. एम. एवं यॉर्क, एल. (2011)-एक सक्रिय घुमावदार नदी में बहु-दशकीय समय-सीमा पर चैनल बार गतिशीलता, पृथ्वी सतह प्रक्रियाएँ और भू-आकृतियॉ, खंड-36, अंक-14, पृष्ठ 1910-1928।
3. एशमोर, पी. ई. (1991)-कंकड तल वाली नदियॉ कैसे मुड़ती हैं, कनाडाई जर्नल ऑफ अर्थ साइंसेज, संस्करण-28, पृष्ठ सं. 273-289।
4. मेशकोवा, एल. वी., कार्लिंग पॉल ए. (2012)- उत्तरी कंबोड़िया में मेकांग नदी की भू-आकृति विज्ञान संबंधी विशेषताएँ एक मिश्रित आधार-जलोढ़ बहु-चैनल नेटवर्क, भू-आकृति विज्ञान, संस्करण 147-148, पृष्ठ सं. 2-17।
5. जे. एम. हुक (1986)-सक्रिय घुमावदार नदी में मध्य-चैनल बार का महत्व, तलछट विज्ञान, संस्करण-33, खण्ड-6, पृष्ठ सं. 839-850।
6. ए.जे. पार्लबर्ग, एम. गुएरेरो, एफ. हथॉफ, एम. रे (2015)-हाइड्रो-मॉर्फोडायनामिक मॉडल का इस्तेमाल करके नदी में चलने के लिए ड्रेज-एंड-डंप एक्टिविटी का सुधार करना, वाटर, संस्करण-7, पृष्ठ सं. 3943-3962।

7. जी. ईसन, एल. डी. यारब्रॉ (2002)-किनारे की स्थिरता पर नदी किनारे के पेड़-पौधों का असर, एनवायरमेंट इंजीनियरिंग जियोसाइंस, संस्करण-8, न.-4, पृष्ठ सं. 247-260।
8. भारतीय जनगणना 2011।
9. मिस्टर के. फणीद्र कुमार, मिस्टर एस. स्वामी- भारतीय ग्रामीण बाजार मौके और चुनौतियॉ।
10. आई.आर.ई.एन.ए. (2023)-अंतराष्ट्रीय नवीकरणीय उर्जा एजेन्सी।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

सृष्टि, आपदा एवं प्रलयः एक दार्शनिक अवलोकन

• कमलेश कुमार सिंह

सारांश-यह आलेख सृष्टि, आपदा एवं प्रलय की अवधारणाओं का भारतीय दर्शन के परिप्रेक्ष्य में दार्शनिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वैदिक ऋत-सिद्धान्त के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि विश्व की भौतिक एवं नैतिक व्यवस्था एक नियमबद्ध संतुलन पर आधारित है, जिसके उल्लंघन से आपदाएँ और संकट उत्पन्न होते हैं। लेख में आपदा को प्रकृतिजन्य एवं मानवजन्य दोनों रूपों में समझाया गया है तथा रोकथाम और निवारण के दार्शनिक उपायों पर बल दिया गया है। चार्वाक दर्शन की भौतिकवादी व्याख्या, सांख्य दर्शन का प्रकृति-पुरुष एवं गुण-क्षोभ सिद्धान्त, तथा अद्वैत और विशिष्टाद्वैत वेदान्त में ब्रह्म को सृष्टि-स्थिति-प्रलय का आधार मानने की अवधारणाएँ प्रस्तुत की गई हैं। निष्कर्षतः लेख यह प्रतिपादित करता है कि आपदा सीमित समय और क्षेत्र की घटना है, जबकि प्रलय सर्वव्यापी और समग्र विनाशकारी प्रक्रिया है, तथा नैतिक, आध्यात्मिक और पर्यावरण-संतुलित जीवन-यापन से आपदाओं को काफी हद तक रोका जा सकता है।

मुख्य शब्द- सृष्टि, प्रलय, आपदा, ऋत, भारतीय दर्शन, चार्वाक, सांख्य दर्शन, प्रकृति-पुरुष, गुण-क्षोभ

हम इस पृथ्वी पर जन्म लिए हैं तो विभिन्न क्रिया-कलापों को करते हैं, विभिन्न प्रकार के सुख एवं दुःख की अनुभूति करते हैं, विभिन्न धर्मों, भावनाओं और संबंधों को जीते हैं। फिर जरामरण को प्राप्त करते हुए इस स्थूल शरीर से मुक्त हो जाते हैं। इस क्रम में दर्शनशास्त्र के अध्ययन-अध्यापन के दौरान सृष्टि (Creation) एवं प्रलय (Destruction) सिद्धान्त पर विचार करना स्वाभाविक हो जाता है। वैसे भी भारतीय दर्शन का जीवन एवं जगत् के साथ अनिवार्य सम्बन्ध है। यहाँ इहलोक (दृश्य जगत्) एवं परलोक (अदृश्य जगत्) की व्यापक एवं विस्तृत चर्चा की गई है। वैदिक काल में भी कहा गया है कि विश्व के प्रत्येक पदार्थ में एक व्यवस्था पायी जाती है जिसे हम 'विश्व व्यवस्था' कहते हैं। यह विश्व व्यवस्था एवं नैतिक व्यवस्था 'ऋत' के कारण ही है। यह दृश्यमान जगत् उसी ऋत की छाया मात्र है जो सभी प्रकार की उथल-पुथल एवं सृष्टि-प्रलय की प्रक्रियाओं में अपरिवर्तित रहती है। यहाँ ऋतु की अवधारणा को कर्म

• सहायक प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र, बी.एम.डी. कॉलेज, दयालपुर, वैशाली

सिद्धान्त, सदाचार, अनुशासन एवं नैतिक व्यवस्था या नियमों के सन्दर्भ में लिया गया है।[1] भौतिक जगत् में मनुष्य इसी ऋत का उल्लंघन कर प्रकृति एवं नैतिकता के विरूद्ध कार्य एवं आचरण करने लगते हैं तो इसके फलस्वरूप अतिवृष्टि-अनावृष्टि, भूकंप, महामारी आदि आते हैं जिससे पृथ्वी एवं मनुष्य दोनों को बुरे परिणामों का सामना करना होता है। वैदिक काल में ऋतु के द्वारा ही संसार, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, प्रातः-सायं, दिन-रात की गति का नियमन माना जाता था। यह ऋतु ही सदाचार एवं नैतिकता के नियमों का द्योतक हो गया जिसका पालन सिर्फ मानव ही नहीं देवता भी करते थे। सूर्योदय एवं सूर्यास्त भी समय एवं नियम का अनुसरण करते हैं। सारा विश्व या ब्रह्मण्ड इस क्रम में सामूहिक सप्रयोजन के लिए इन्हीं नैतिक नियमों 'ऋतु' का पालन करते हुए गति करता है। ऋतु व्यवस्था के उल्लंघन से ही प्रलय होता है एवं पालन से सृष्टि का क्रम अनवरत गतिमान रहता है। योग, अध्यात्म, भक्ति एवं साधना के द्वारा भी हम आपदा को आने से रोक सकते हैं या उनमें कमी ला सकते हैं। यदि हम प्रकृति के सानिध्य में या उसके अनुकूल जीवन-यापन करते हैं तो हम संकट एवं आपदा को काफी हद तक रोक सकते हैं। इस प्रकार हम पाते हैं कि किसी भी आपदा एवं संकट से निराकरण के दो पहलू होते हैं- पहला रोकथाम (Prevention) एवं दूसरा निवारण (Redressal) प्रथम पहलू है- आसन्न एवं भावी आपदा से बचने के लिए घटना घटित होने के पूर्व में व्यवस्था, रख-रखाव, देखभाल एवं संधारण करते हैं। यह किसी भी घटना, आपदा एवं संकट आने के पूर्व का क्रिया कलाप है। दूसरा पहलू है - किसी भी आपदा एवं संकट के घटित हो जाने के बाद बचाव एवं राहत संबंधित संचालन। मेरा यह मानना है कि दर्शनशास्त्र इसमें से प्रथम पहलू को अपनाने की वकालत करता है। यदि हम दृष्टि डालें तो पाते हैं कि पर्यावरण एवं प्रकृति से अत्यधिक मात्रा में छेड़-छाड़, प्राकतिक संसाधनों का अनुचित तरीके से दोहन, अनैतिक जीवन-यापन ही आपदा एवं संकट के प्रमुख कारण हैं। भारतीय दर्शन की उत्पत्ति ही जीवन और जगत् की समस्याओं, दुःख एवं उसके कारणों को जानने एवं समाधान के लिए हुआ है। उनमें आपदा (Disaster) एवं संकट (Hazardous) ऐसे दुःख हैं जो कुछ अंश में प्रकृतिजन्य हैं तो कुछ अंश में मानवजन्य भी हैं जिनके निराकरण एवं समाधान के कुछ उपाय दर्शनशास्त्र के अध्ययन में निहित है। सृष्टि में आपदा आने के मुख्य कारक जल, अग्नि एवं वायु है। यह पंच महाभूतों पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश के अन्तर्गत ही आता है। मुख्य बात है कि ये तीनों तत्व जल, अग्नि एवं वायु अन्य दो तत्वों पृथ्वी एवं आकाश के बीच ही जब अपना विकराल रूप धारण करते हैं या अति (Extreme) रूप लेकर आते हैं तो वही आपदा और संकट कहलाता है। आपदा के मुख्य दो रूप होते हैं- प्रकृति जन्य आपदा एवं मानवजन्य आपदा। प्रकृतिजन्य आपदा के अन्तर्गत मुख्य रूप से भूभौतिकीय (Geophysical), जल विज्ञान (Hydrological),जलवायवीय (Climatological), मौसमसंबंधी(Meteorological)और जैविक (Biological) आपदाएँ आती हैं।[2] मानवजनित आपदा के अन्तर्गत वातावरणीय गिरावट (Environmental degradation), प्रदूषण (Pollution) एवं दुर्घटनाएँ (Accident) आती हैं। प्रकृतिजन्य आपदा पर सूक्ष्मता से विचार करें तो यह समझ में

आता है कि इस आपदा का प्रत्यक्ष कारण प्रकृति तो है ही लेकिन मनुष्य की गतिविधियाँ, जीवन शैली, प्रकृति के मूल रूप से छेड़-छाड़ एवं प्राकृतिक संसाधनों का अनियोजित विदोहन अप्रत्यक्ष कारण है। भूभौतिकीय आपदा में- भूकंप, सुनामी एवं भूस्खलन, जलीय आपदा में बाढ़, जलवायवीय आपदा में- अत्यधिक तापमान, सूखा, जंगल में आग, मौसम संबंधी आपदा में- चक्रवात, आँधी, तूफान एवं जैविक आपदा में- विभिन्न प्रकार की महामारी आती है। अभी हाल ही में कोरोना नामक जैविक महामारी ने मानव सभ्यता को काफी नुकसान पहुँचाया। उसी प्रकार मानवजनित क्रियाओं द्वारा भी कई आपदाओं एवं संकटों का सामना करना पड़ता है। जैसे- भोपाल गैस त्रासदी, रेल, सड़क, वायु एवं समुद्री वाहन संबंधित दुर्घटनाएँ, पराली जलाने, अत्यधिक कीटनाशक प्रयोग करने, अत्यधिक पुराने वाहनों के प्रयोग से वातावरण में कार्बन मोनोऑक्साइड, मिथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन जैसे हानिकारक गैसों से वायु प्रदूषण जैसे आपदा का आगमन हो रहा है। दर्शनशास्त्र के सभी सम्प्रदायों में आध्यात्मिक एवं नैतिक जीवन-यापन की शिक्षा दी गई है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को आदर्श माना गया है। वैश्विक तापन (Global Warming) के सन्दर्भ में यदि इसी वसुधैव कुटुम्बकम् का सही अर्थों में अनुकरण करते हुए सामूहिक प्रयास करें तो काफी हद तक इन समस्याओं का समाधना करते हुए हम वैश्विक तापन को कम कर सकते हैं।

चार्वाक तत्वमीमांसा की दृष्टि से भौतिकवादी या जड़वादी है क्योंकि वे जड़तत्व या भौतिक पदार्थ की ही सत्ता को स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार केवल उसी जड़ तत्व का प्रत्यक्ष होता है। इसी भौतिकवादी तत्वमीमांसा के आधार पर चार्वाक सृष्टि एवं प्रलय की व्याख्या करते हैं। 'पृथिव्यप्तेजोवायुरिति तत्त्वानि'[3] अर्थात् चार भूतों - पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु से ही सम्पूर्ण सृष्टि का उद्भव एवं विकास होता है, जबकि अन्य भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु के साथ आकाश को भी पाँचवें भूत तत्व के रूप में माना जाता है। चार्वाक सिर्फ चार तत्वों को ही मानता है क्योंकि ये स्थूल रूप हैं एवं इनका प्रत्यक्ष होता है। आकाश का प्रत्यक्ष नहीं होने के कारण चार्वाक आकाश की सत्ता को स्वीकार नहीं करता। आकाश की सत्ता का अनुमान के द्वारा ज्ञान होने के कारण भी वह इसे अस्वीकार करता है। चार्वाक के अनुसार जगत् की सृष्टि इन्हीं चार भूतों पृथ्वी, जल, अग्नि एवं वायु के द्वारा हुई है। ये चार भूत तत्व ही सृष्टि की उत्पत्ति का उपादान कारण हैं।

तत्समुदाये शरीरेन्द्रियविषयसंज्ञा ।
किण्वादिभ्यो मदशक्तिवद्विज्ञानम् ।।[4]

अर्थात् जैसे खमीर और अन्य पदार्थों में मदहोश करने की शक्ति का विज्ञान होता है वैसे ही इन्हीं चार भूतों के विभिन्न अनुपात में मिश्रण से बाह्य जगत, भौतिक शरीर, चेतना, बुद्धि और इन्द्रियाँ आदि विषय उत्पन्न होती हैं। इन चार भूतों के गुणों क्रमशः गन्ध, रस, रूप, स्पर्श की उत्पत्ति भी इन्हीं चार भूतों के समानुपातिक संयोग से होती है। प्रलय अवस्था में सम्पूर्ण सृष्टि पुनः इन्हीं चार भूतों में मिल जाती है। पुनः इन्हीं चार भूतों पृथ्वी, जल, अग्नि एवं वायु के संयोग से सृष्टि की रचना होती है। चार्वाक इसके लिए किसी निमित्त कारण को भी स्वीकार नहीं करता है। जड़ तत्व अपने स्वभाव के अनुसार ही

संयुक्त होते हैं और स्वत: सम्मिश्रण से सृष्टि की उत्पत्ति होती है। सांख्य दर्शन सत्कार्यवाद के सिद्धान्त को मानता है जिसके अनुसार कार्य उत्पति के पूर्व अपने उपादान कारण में अव्यक्त रूप में विद्यमान होता है। सांख्य के अनुसार सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति है। सृष्टि उत्पत्ति के पूर्व प्रकृति में विद्यमान थी। सांख्य दर्शन सृष्टि की उत्पत्ति के सन्दर्भ में विकासवाद का सिद्धान्त मानते हुए इसे प्रधानकारणवाद भी कहता है। यहाँ प्रकृति सामान्य अर्थ में प्रयुक्त प्रकृति (Nature) से बिल्कुल भिन्न है। सृष्टि कोई नई उत्पत्ति नहीं है और प्रलय भी सृष्टि का विनाश नहीं है। इसी सिद्धान्त को मानते हुए सांख्य दर्शन सृष्टि को उसके उपादान कारण प्रकृति (Prakriti) से ही व्यक्त, नि:सृत या प्रकट मानता है। प्रकृति में जो अव्यक्त है उसी का प्रकट होना सृष्टि है एवं सांसारिक पदार्थों का तिरोभाव (अदृश्य) हो जाना ही प्रलय है। यह सृष्टि प्रकृति का परिणाम या विकार है। इसे प्रकृति परिणामवाद कहते हैं। गुणों की साम्यावस्था में प्रलय की स्थिति हो जाती है अर्थात् तीनों गुण सत्व, रजस एवं तमस एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। प्रलय की स्थिति में सत्व–सत्व में, रजस–रजस में और तमस–तमस में मिल जाता है। अपने अपने रूप में मिलने की प्रक्रिया को सरूप परिणाम कहते हैं। इसी प्रकार गुणों की इस साम्यावस्था अर्थात् सरूप परिणाम के भंग होने पर सृष्टि का आविर्भाव होता है।[5] गुणों की साम्यावस्था का भंग होना रजस गुण के कारण संभव होता है, क्योंकि रजस स्वभाव से ही चंचल होता है। प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि प्रकृति की साम्यावस्था भंग कैसे होती है? प्रकृति एवं पुरुष के संयोग या सम्बन्ध से प्रकृति की साम्यावस्था भंग होती है एवं सृष्टि की उत्पत्ति होती है। सबसे पहले स्वभावत: गतिशील एवं क्रियात्मक रजोगुण सक्रिय होता है जिसके कारण सत्व एवं तमस में भी स्पन्दन उत्पन्न होता है लेकिन तमोगुण स्वभावत: अवरोधक होने के कारण रजोगुण की स्वाभाविक गति को रोकता है फलस्वरूप इन तीनों गुणों में भीषण आन्दोलन होता है। इसे 'गुण–क्षोभ' कहते हैं। गुण–क्षोभ से विरूप परिणाम प्रारंभ होता है और सांसारिक पदार्थों का आगमन होता है। हम जानते हैं कि पुरुष चेतन, निष्क्रिय, त्रिगुणातीत एवं अनेक है जबकि प्रकृति जड़, सक्रिय, त्रिगुणात्मिका और एक है। तब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इन दोनों विपरीत धर्म वाले तत्वों में संयोग किस प्रकार होता है ? सांख्य दर्शन का इस विषय पर मानना है कि पुरुष को प्रकृति की आवश्यकता होती है वैसे ही प्रकृति को पुरुष की आवश्यकता होती है। यद्यपि दोनों विरूद्ध धर्मों को धारण करते हैं फिर भी उद्देश्य एवं आवश्यकता की समानता के कारण दोनों में संयोग होता है। प्रकृति ज्ञेय है। वह ज्ञात होने के लिए पुरुष की अपेक्षा करती है उसी प्रकार पुरुष, त्रिविध दु:खों से मुक्ति एवं कैवल्य की प्राप्ति के लिए प्रकृति से अपेक्षा रखता है।

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य।
पंग्बन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृत: सर्ग:।।[6]

अर्थात् जिस प्रकार एक अन्धा एवं एक लंगड़ा व्यक्ति परस्पर सहयोग करके जंगल पार करते हुए अपने गंतव्य तक पहुँच जाते हैं उसी प्रकार पुरुष एवं प्रकृति का संयोग संभव होता है जिससे सृष्टि का उद्भव और विकास होता है। जिस प्रकार चुम्बक लोहे को अपनी ओर खींचता है उसी प्रकार पुरुष निष्क्रिय होते हुए भी प्रकृति को प्रभावित करते हुए अपनी ओर खींचता है।[7] पुन: यह प्रश्न आता है कि प्रकृति तो जड़ है

उससे सांसारिक विषय कैसे उत्पन्न होते हैं ? जिस प्रकार बुद्धिहीन वृक्षों से जीवों के कल्याण हेतु फल-फूल उत्पन्न होते हैं, गाय के थन से अचेतन दूध बछड़े के लिए अपने आप प्रवाहित होता है उसी प्रकार जड़ प्रकृति पुरुषों के भोग एवं कैवल्य के लिए सभी सांसारिक पदार्थों को उत्पन्न करती है। विकास की प्रक्रिया में प्रकृति से सबसे पहले महत् (बुद्धि) फिर अहंकार की उत्पत्ति होती है। अहंकार से ग्यारह इन्द्रियों (पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय और मन) एवं पाँच तन्मात्राओं की उत्पति होती है। पाँच तन्मात्राओं से पाँच महाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी) उत्पन्न होते हैं। प्रकृति से उत्पन्न तेइस तत्व कारण एवं कार्य रूप में हैं। प्रकृति एवं इन तेइस तत्वों से सृष्टि का निर्माण होता है। प्रकृति केवल कारण है। पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, मन और पाँच महाभूत केवल कार्य हैं। महत्, अहंकार और पाँच तन्मात्राएँ कारण-कार्य दोनों हैं। अद्वैत वेदान्त का मानना है कि हम सृष्टि में उत्पत्ति एवं विनाश दोनों देखते हैं जो इस बात का प्रमाण है कि यह प्रकृति का निजी गुण एवं स्वभाव नहीं है बल्कि कोई और ही सत्ता है जो इसको जगत् के रूप में लाती है और पुनः प्रलयावस्था में ले जाती है। प्रकृति का सूक्ष्म रूप से स्थूल रूप में आना यदि इसका निजी रूप हो तो स्थूल रूप से सूक्ष्म रूप में जाना इसका स्वभाव नहीं हो सकता, क्योंकि यह विरोधी गुण है जो एक जड़ पदार्थ में नहीं रह सकता। ऐसा कोई चेतन सत्ता ही कर सकता है जो ब्रह्म है।[8] जगत् की उत्पत्ति (सृष्टि) करना, धारण करना, प्रलय करना, जीवों को उसके कर्मानुसार फल देना ये सब ब्रह्म के ही कार्य हैं।[9] वेदान्त दर्शन के अन्तर्गत विशिष्टाद्वैत शाखा के आचार्य रामानुज भी सत्कार्यवाद के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए बताते हैं कि कार्य उत्पत्ति के पूर्व अपने कारण में विद्यमान रहता है। रामानुज इस संबंध में ब्रह्म-परिणामवाद का समर्थन करते हुए सम्पूर्ण सृष्टि को ब्रह्म (उसके अंश या विशेषण) का परिणाम मानते हैं। रामानुज के अनुसार ईश्वर विशेष्य है, चित्त एवं अचित्त उसका विशेषण है। रामानुज इसी ईश्वर, चित्त एवं अचित्त को तीन तत्व या द्रव्य मानते हैं। अचित्त तत्व तीन प्रकार का होता है- शुद्ध सत्व, मिश्र सत्व एवं सत्व शून्य। मिश्र सत्व में सत्व, रजस एवं तमस तीनों रहता है। इसे ही प्रकृति या माया कहते हैं। रामानुज सृष्टि का मूलभूत कारण प्रकृति को ही मानते हैं। सांख्य के अनुसार प्रकृति सत्व, रजस एवं तमस से बनी है जबकि रामानुज के अनुसार सत्व, रजस एवं तमस प्रकृति के गुण या विशेषण हैं। सांख्य की प्रकृति स्वतंत्र है जबकि रामानुज की प्रकृति ब्रह्म पर आश्रित है। रामानुज ब्रह्म को ही जगत् का निमित्त एवं उपादान कारण मानते हैं। जीव और प्रकृति सृष्टि का उपादान कारण है जो ईश्वर का ही तत्व है। ईश्वर के संकल्प से सृष्टि का प्रांरभ होने के कारण वह निमित्त कारण है। अर्थात् ईश्वर स्वयं के संकल्पों से जीवों को उनके किए हुए कर्मों का फल दिलाने के लिए चित्त (जीव) एवं अचित्त (प्रकृति) को कार्यान्वित करता है तभी सृष्टि उत्पन्न होती है। रामानुज इसे ब्रह्म की लीला कहते हैं। जिस प्रकार मकड़ी अपने अन्दर से जाला निकालती है उसी प्रकार ब्रह्म अपने अन्दर से सृष्टि की रचना करता है। सृष्टि ब्रह्म का ही यथार्थ रूपान्तरण है अर्थात् ब्रह्म के साथ जगत् भी पारमार्थिक रूप से सत् है जबकि शंकराचार्य जगत् की व्यावहारिक सत्ता मानते हैं। रामानुज सृष्टि के विकासक्रम की व्याख्या 'पंचीकरण सिद्धान्त' के आधार पर करते हैं।

इस प्रक्रिया के अनुसार प्रत्येक स्थूल महाभूत में आधा भाग इस महाभूत का अपना होता है और शेष आधे भाग में अन्य चार महाभूतों का बराबर-बराबर अर्थात् प्रत्येक का आठवाँ भाग होता है।[10] जैसे आकाश महाभूत में आधा भाग आकाश का और वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी का आठवाँ भाग होता है। इसी कारण सभी जीवों एवं सांसारिक वस्तुओं की सृष्टि में पाँच महाभूत होते हैं एवं प्रलय के दौरान ब्रह्म में विलीन हो जाते हैं।

निष्कर्ष- अत: हम देखते हैं कि विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं में सृष्टि एवं प्रलय की अलग-अलग व्याख्या की गई है। उसी क्रम में आपदा की चर्चा स्वाभाविक है। क्या आपदा ईश्वर की इच्छा है या मानवजन्य है? निष्कर्षत: हम यह पाते हैं कि कुछ आपदाएँ प्रकृतिजन्य हैं तो कुछ मानवजन्य भी हैं। प्रकृतिजन्य आपदा को हम कुछ हद तक ईश्वरीय भी कह सकते हैं। पर्यावरण से छेड़-छाड़ एवं प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन ही इसके मूल कारण हैं। कभी-कभी हम आपदा एवं प्रलय को एक ही अर्थ में लेने की भूल कर बैठते हैं। आपदा किसी भी प्रकार की प्राकृतिक या मानव निर्मित घटना हो सकती है जैसे बाढ़, भूकंप, सूखा, महामारी आदि जिसका प्रभाव सीमित समय और स्थान तक हो सकता है जबकि प्रलय अत्यंत बड़े पैमाने पर होने वाली घटना है जो सम्पूर्ण पृथ्वी या जीवन के लिए विनाशकारी होती है। आपदा के रोकथाम एवं निवारण में योग दर्शन, नीतिशास्त्र, एवं समाज दर्शन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

संदर्भ सूची-

1. राममूर्ति पाठक, भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा, अभिमन्यु प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ-10
2. राष्ट्रीय मौसम विज्ञान विभाग के वेबसाइट पर आधारित
3. चन्द्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन, मोती लाल बनारसी दास, 2010, पृष्ठ- 23 (वार्हस्पत्य सूत्र)
4. चन्द्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन, मोती लाल बनारसी दास, 2010, पृष्ठ - 23
5. राममूर्ति पाठक, भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा, अभिमन्यु प्रकाशन, इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ - 16
6. ईश्वरकृष्ण, सांख्यकारिका, लोक संख्या- 21
7. ईश्वरकृष्ण , सांख्यकारिका, लोक संख्या- 57
8. डॉ. विनय, वेदान्त दर्शन, डायमंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ- 62
9. डॉ. विनय, वेदान्त दर्शन, डायमंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ - 159
10. राममूर्ति पाठक, भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा, अभिमन्यु प्रकाशन इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ - 187

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

सारण जिले के दरियापुर प्रखंड में अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास

•सन्नी कुमार
•• शैलेश कुमार

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र सारण जिला के दरियापुर प्रखंड में अनुसूचित जातियों के मानव संसाधन विकास का एक सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण पर आधारित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15(4) व 15(5), 16(4) एवं 16(4), 17, 46, 330-334, 338, 23, 24 एवं 46 में समानता, शिक्षा और सांस्कृतिक, विशेष संस्थान, सामाजिक न्याय व कल्याण जैसे आरक्षण के लिए किये गए प्रावधान ने निःसंदेह अनुसूचित जातियों को मानव संसाधन विकास का नया आयाम प्रदान किया है किन्तु अनुभव आधारित ज्ञान यह है कि इनकी विशाल जनसंख्या अवसर का लाभ उठा पाने में आज तक असमर्थ है। क्षेत्र में अभी भी शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक कारकों का इन जातियों की जनसंख्या पर प्रभाव अछूता है। यद्यपि कि क्षेत्र में अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास में सूक्ष्म स्तरीय स्थानिक भिन्नताएँ यहाँ फिर भी विद्यमान है। वर्तमान शोध पत्र में यहाँ प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है। जिसका संग्रह प्रश्नावली विधि द्वारा सितम्बर (2025) में किया गया है। प्रतिदर्श अध्ययन हेतु गाँवों का चयन स्तरीकृत सउद्देशीय प्रतिदर्श विधि द्वारा किया गया है। तत्पश्चात मानव संसाधन विकास हेतु संकेतको का चयन (यू.एन.ओ. एवं यू.एन.डी.पी.) के परिप्रेक्ष्य में जी-स्कोर (Z-Score) विधि द्वारा अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास के स्तर का निर्धारण कर सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- अनुसूचित जातियाँ, मानव संसाधन विकास, सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार, सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारक

अवस्थिति एवं विस्तार- दरियापुर प्रखंड बिहार राज्य के सारण जिला (मुख्यालय छपरा) का एक प्रमुख प्रशासनिक प्रखंड है। जो जिले के दक्षिण-पूर्वी भाग में 25ह36‘ उत्तरी अक्षांश से 26° 13‘ उत्तरी अक्षांश तथा 84° 24‘ पूर्वी देशान्तर से 85° 15‘पूर्वी

• शोध छात्र, भूगोल विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा बिहार
•• सहायक प्रोफेसर, भूगोल विभाग, वाई.एन. कॉलेज, दिघवारा (सारण), जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा बिहार

देशान्तर से 85° 15' पूर्वी देशान्तर के बीच 225.90 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला है। इसमें राजस्व गाँव 196 है। पूर्व में लालगंज, हाजिपुर (वैशाली जिला) तथा पश्चिम में गरखा एवं अमनौर अंचल द्वारा चिन्हित है तथा उत्तर एवं दक्षिण में पारसा, अमनौर अंचल एवं दिघवारा, सोनपुर अंचल सीमा बनाती है।

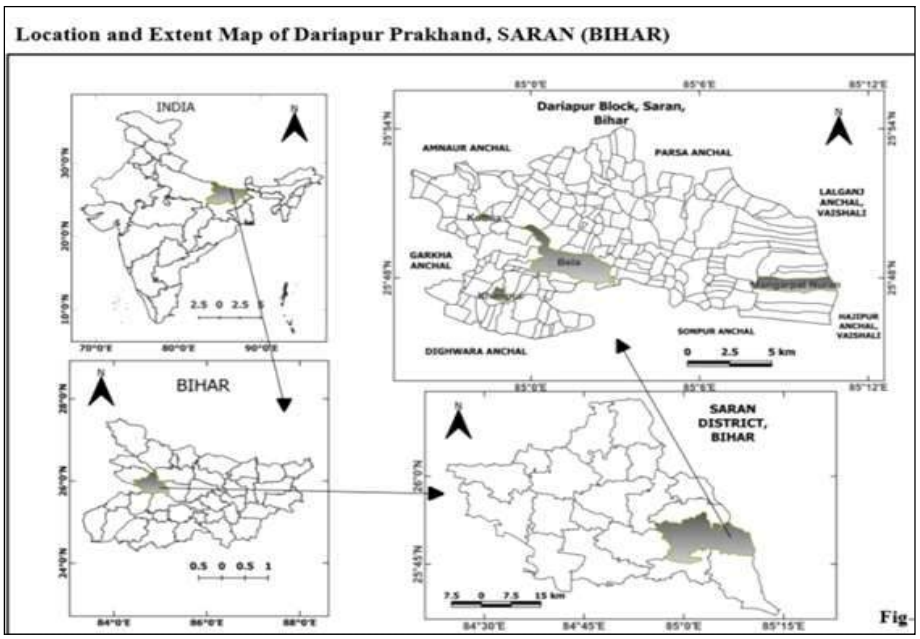

Fig-

संकल्पना- यद्यपि जनसंख्या में अभिवृद्धि के साथ ही मानव संसाधन की रचना प्रारंभ हो जाती है, उसका मानव संसाधन रूप में रूपान्तरण उसमें आयी गुणवत्ता से जुड़ा है। गुणवत्ता से तात्पर्य उसकी कार्य क्षमता में वृद्धि के साथ-साथ नैतिक मूल्यों की स्वीकार्यता आचरण के स्तर पर अपेक्षित है। समुदाय के हित में किसी संगठन में व्यक्ति को सर्वोच मानव संभाव्य संसाधन के रूप में प्रयुक्त किये जाने हेतु बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूप से समुन्नत बनाने की एक निरंतर प्रक्रिया तथा गतिविधि को मानव संसाधन विकास कहा जाता है (घोष, विश्वनाथ, 2005)[1] अर्थात मानव विकास का आशय जन कल्याण है। जन कल्याण व्यक्ति के समग्र विकास से संभव है। इसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक संस्थागत एवं नैतिक जैसे सभी पक्ष सम्मिलित है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (U.N.D.P.) ने अपने प्रथम प्रतिवेदन (1990)[2] में मानव संसाधन विकास से तात्पर्य लोगों का उन्नयन माना है। प्रतिवेदन के अनुसार "विकास लोगों की आय तथा पूँजी में मात्र वृद्धि ही नहीं अपितु यह लोगों की कार्य प्रणाली तथा क्षमताओं में वृद्धि करने का माध्यम है।" यह मनुष्य की आकांक्षाओं एवं उन्हें उपलब्ध जीवन-यापन की सुविधाओं के स्तर को विस्तृत करने की प्रक्रिया है। 10 जून 2010 के इसके प्रतिवेदन के अनुसार विकास के एक विस्तृत आयाम में निम्नांकित संकेतक प्रमुख हैं (योजना, 2010)[3] जन्म के समय जीवन प्रत्याशा-लम्बी आयु और स्वस्थ्य जीवन।

शिक्षा सूचकांक- जीवन स्तर, जिसे प्रति व्यक्ति सकल-घरेलु उत्पाद के रूप में आय (G.D.P.) द्वारा मापा जाता है तथा सकल घरेलू उत्पाद को अमेरिकी डॉलर की क्रय शक्ति (P.P.P.) के आधार पर आकलित किया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य- वर्तमान शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं-

- शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सामाजिक समानता का विश्लेषण।
- मानव संसाधन विकास के स्तर का निर्धारण एवं विश्लेषण।

विधि-तंत्र- सारण जिले के दरियापुर प्रखंड में अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास के अध्ययन हेतु, सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण में प्राथमिक आँकड़ों का प्रयोग सितम्बर (2025) किया गया है। प्रतिदर्श अध्ययन हेतु गाँवों का चयन स्तरीकृत सउद्देशीय प्रतिदर्श (Stratified Purposive Sampling) विधि द्वारा किया गया है। जिसका चयन अंचल मुख्यालय दरियापुर प्रखंड से प्रथम गाँव बेला (थाना नं0-345), द्वितीय खानपुर (थाना नं0-354) अंचल मुख्यालय एवं ग्रामीण सेवा केन्द्र से निकटस्थ, तृतीय गाँव कोठिया (थाना नं0-315) अंचल मुख्यालय एवं सेवा केन्द्र से निकटस्थ एवं चतुर्थ गाँव मगरपाल (थाना नं0-543) अचंल मुख्यालय ग्रामीण सेवा केन्द्र से दूरस्थ, परिवहन संचार, शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य आधारित सुविधाओं के परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण जनसंख्या युक्त निम्न स्तर के आधार पर किया गया है। द्रष्ट्व्य है कि प्रतिदर्श गाँव से 40% परिवारों का चयन किया गया है, तत्पश्चात चयनित चार प्रतिदर्श ग्रामों के सर्वेक्षित 120 परिवारों से मानव संसाधन विकास हेतु (यू.एन.ओ. एवं यू.एन.डी.पी.) के परिप्रेक्ष्य मे संकेतकों का चयन कर उनके भारित मूल्यों के द्वारा गणना किया गया है जो निम्न है-

मानव संसाधन विकास
संकेतकों का प्रतीक चिन्ह एवं भारित मूल्य

क्रम संख्या	संकेतक	प्रतीक चिन्ह	भारित मूल्य
1	2	3	4
I	शिक्षा	X_1	
a	5वीं पास		1
b	मिडिल पास		2
c	सेकेन्डरी और हायर सेकेन्डरी		3
d	स्नातक		4
e	स्नातकोत्तर		5
f	पी.एच.डी.		6
II	जीवन प्रत्याशा	X_2	
a	<60		1
b	60-65		2
c	65-70		3
d	>70		4
III	रोग	X_3	
a	हाँ		1
b	नहीं		2
IV	विकलांगता	X_4	
a	हाँ		1
b	नहीं		2
V	पेशा (वृति)	X_5	
a	मजदूरी		1

अनुसूचित जातियों का मानव संसाधन विकास के स्तर निर्धारण में यहाँ अपनायी गयी विधि तंत्र जी.-स्कोर है। परिकलन के प्रथम चरण में प्रत्येक सर्वेक्षित परिवारों के प्रत्येक संकेतकों के विरूद्ध भारित मूल्यों का योग (∑) प्राप्त किया गया है। तत्पश्चात उसे परिवारों की कुल संख्या से विभाजित कर माध्य व माध्य से मानक विचलन निकाला गया है जो निम्न सूत्र से प्रदर्शित होता है:-

प्रथम चरण :

$$X^{-} = \frac{\sum X}{N}$$

X^{-} = माध्य का प्रतिनिधत्व करता है

$\sum$ = योग

X = वास्तविक भारित मूल्यों का कुल योग

N = परिवारों की कुल संख्या

$$S.D. = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$$

.D. = मानक विचलन

$\sum$ = योग

d^2 = माध्य से विचलन वर्गों का योग

N = परिवारों की कुल संख्या

यद्यपि परिकलन के द्वितीय चरण में वास्तविक भारित मूल्यों से वास्तविक भारित मूल्यों का माध्य को घटा कर, मानक विचलन से विभाजित के पश्चात जी.-स्कोर निकाला गया है जो निम्न सूत्र द्वारा प्रदर्शित है।

जी.-स्कोर (Z-Score)

$$Z = \frac{Xi - \bar{X}}{S.D.}$$

= जी.-स्कोर (Z-Score)

Xi = वास्तविक भारित मूल्यों

$\bar{X}$ त्र वास्तविक भारित मूल्यों का माध्य

.D.= मानक विचलन

उपरोक्त विधि द्वारा दरियापुर प्रखंड के चार प्रतिदर्श ग्राम से कुल 120 सर्वेक्षित परिवार जिसमें बेला 26, खानपुर 28, कोठिया 34 एवं मगरपाल 32 के लिए जी-स्कोर विधि का आकलन किया गया है। परिकलन किए गये मूल्यों द्वारा अनुसूचित जातियों के मानव संसाधन विकास का चार संभागों में विभाजित किया गया है (तालिका-1)। संभागों पर टिप्पणियाँ निम्नांकित हैं-

1.विकसित संभाग- (>1.00) विकसित संभाग में प्रतिदर्श ग्राम के कुल परिवारों की संख्या 29 (24.17%) आकलित किया गया है जिसमें प्रतिदर्श ग्राम बेला 9 (34.61%), खानपुर 8(28.57%), कोठिया 7(20.59%) एवं मगरपाल 5(15.62%) परिगणित किया गया है। (तालिका-1) के देखने मात्र स्पष्ट होता है कि जिन परिवारों की मासिक आमदनी दो लाख रूपये से अधिक है तथा जिनकी शिक्षा का स्तर स्नातक से स्नातकोत्तर है और चयनित परिवारों में राजपत्रित पदों पर बैठें हैं, उनके परिजन जीवन के रहन-सहन के उच्च स्तर का प्रदर्शन करते हैं। इन परिवारों के जीवन की प्रत्याशा अपेक्षाकृत अधिक लंबी एवं स्वास्थ्य स्वस्थ्य है। हाल के दस वर्षों में इनमें मृत्यु का कोई भी प्रघटन प्रतिवेदित नहीं है।

तालिका–1

सर्वेक्षित प्रतिदर्श ग्राम में अनुसूचित जातियों के मानव संसाधन विकास का स्तर 2025

क्रम संख्या	संभाग	विचलन प्रसार	प्रतिदर्श ग्राम: बेला (थाना नं–345)		खानपुर (थाना नं–354)		कोठिया (थाना नं–315)		मगरपाल (थाना नं–543)		कुल परिवारों की संख्या	कुल परिवारों का प्रतिशत
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1.	विकसित	>1.00	9	34.61	8	28.57	7	20.59	5	15.62	29	24.17
2.	सामान्यतः विकसित	0.50–1.00	6	23.07	3	10.71	4	11.76	2	6.25	15	12.5
3.	अल्प विकसित	–1.00 – +50	7	26.92	10	35.71	23	67.65	18	56.25	58	48.33
4.	अविकसित	< – 1.00	4	15.38	7	25.00	00	00	7	21.87	18	15.00
सर्वेक्षित परिवारों की कुल संख्या			26	100	28	100	34	100	32	100	120	100

स्त्रोत : शोधार्थी द्वारा किया गया सर्वेक्षण, सितम्बर, 2025

2.सामान्यतः विकसित- (0.50–1.00) तालिका–1 निरीक्षण मात्र स्पष्ट होता है कि संभाग में विकास का द्वितीय स्तर प्रदर्शित होता है। विधिगत प्रक्रिया के अनुसार (0. 50–1.00) के प्रसार द्वारा यह संभाग सामान्यतः मानव संसाधन विकास का स्तर निर्धारण करता है। यह इस संभाग में कुल प्रतिदर्श ग्राम के सर्वेक्षित परिवारों की संख्या

15(12.5%) विद्यमान है जो कि प्रतिदर्श ग्राम आधार पर बेला 6(23.07%), खानपुर 3(10.71%), कोठिया 4(11.76%) एवं मगरपाल 2(6.25%) आकलित किया गया है। द्रस्टव्य है कि इस संभाग में सम्मिलित परिवार जिनकी आमदनी 1,50,000 से 2,00,000 रूपये प्रतिवेदित है। यद्यपि जीवन की प्रत्याशा की दृष्टि से उन्नत है। साथ ही संभाग में शिक्षा की दृष्टि से भी उत्तम है। इनमें परिवारों की आयु 90 वर्षीय परिजनों के लिए उल्लेखनीय है। मृत्यु जैसी अप्रिय घटना इन परिवारों में नहीं हुई है। यद्यपि इन सभी परिवारों में मनोरंजन संचार एवं परिवहन की उन्नत सुविधाएँ उपलब्ध है। गैर अराजपत्रित पदों से लेकर राजपत्रित पदों पर इनके परिजन नियोजित है।

3.अल्प विकसित संभाग- (-1.00 - +50) यहाँ इस संभाग के विचलन प्रसार (-1.00 - +50) से अल्प मानव संसाधन विकास संभाग का प्रतिनिधित्व होता है (तालिका-1) ज्ञातव्य है कि प्रतिदर्श ग्राम का अवलोकन किया जाए तो कुल संभाग के सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 58(48.33%) विद्यमान है। यद्यपि कि बेला 7(26.92%), खानपुर 10(35.71%), कोठिया 23(67.65%) तथा मगरपाल 18(56.25%) के रूप में आकलन किया गया है। विदित हो कि इस संभाग में सर्वेक्षित परिवारों के परिजनों की मासिक आमदनी 20,000 से 30,000 रूपये हैं। इसमें शिक्षा प्राथमिक, मिडिल तक सिमित है। जीवन की प्रत्याथा इनकी क्रमश: 50-60 वर्षों की है। इन परिवारों में मृत्य की घटना वर्ष के मध्य में हुई है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इनकी हालात विकसित व सामान्यत: विकसित संभाग की तुलना में दयनीय है। परिवहन के सुविधा की दृष्टि से साईकल एवं मोटर साइकील तक सीमित है। इन परिवारों में कोई भी परिजन किसी प्रकार की सरकारी सेवा में न नियोजित और न शैक्षिक योग्यता ही उल्लेख के योग्य है। किन्तु ताड़ी, बीड़ी, तम्बाकू एवं गुटका की बुरी आदतों से परिवारों के परिजन ग्रस्त हैं। महिलाएँ इनमें घरेलु कार्यों तक सीमित हैं।

4.अविकसित संभाग- (< - 1.00) विचलन प्रसार (< - 1.00) से मानव संसाधन विकास के अविकसित संभाग का प्रतिनिधित्व होता है। इसमें सम्मिलित कुल प्रतिदर्श परिवारों में यहाँ 18(15.00%) आकलन किया गया है। प्रतिदर्श ग्राम आधारित परिवारों की संख्या बेला 4(15.38%), खानपुर 7(25.00%) एवं मगरपाल 7(21.87%) परिगणित किया गया है। ज्ञातव्य है कि इनकी मासिक आमदनी 5000 से 10000 तक सीमित है। गृह की दशा अन्य संभागों की तुलना में निम्न स्तर का है। ये परिवार मांसाहारी और आल्प आयु वाले हैं। मृत्यु की घटनाएँ इन सभी परिवारों में प्रतिवेदित है। जीवन उपयोगी सुविधाओं के नाम पर इनमें साइकिल एवं मोटर साइकिल तक सीमित है किन्तु नशीली वस्तुओं के सेवन की दृष्टि से शराब , ताड़ी एवं तम्बाकु सेवन में महारथ हासिल है।

निष्कर्ष- अनुसूचित जातियों के मानव संसाधन विकास के स्तर की दृष्टि से दरियापुर प्रखंड में चार मानव संसाधन विकास संभागों (1) विकसित, (2) सामान्यत: विकसित, (3) अल्प विकसित एवं (4) अविकसित में विभक्त है। इनमें अंचल मुख्यालय तथा सेवा केन्द्रों से युक्त संभाग मानव संसाधन की दृष्टि से सर्वाधिक विकसित है। इसके विपरित संचार एवं परिवहन की दृष्टि से पछिड़ा तथा अचंल मुख्यालय एवं अनुमंडल

मुख्यालयों से दूर अवस्थित ग्रामीण जनसंख्या का संभाग अविकसित है। इनके बीच ग्रामीण सेवा केन्द्रों से युक्त उन्नत कृषि एवं कृषीय औद्योगिक गतिविधियों वाला दो संभाग सामान्यत: विकसित एवं अल्प विकसित है। विकसित संभाग से प्रतिदर्श रूप में चयनित बेला ग्राम में अनुसूचित जाति के सर्वेक्षित परिवारों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उच्च स्तरीय शिक्षा आधारित साक्षरता मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया के जीवंत बनाएँ रखने में एक निर्णायक कारक है। यद्यपि विकसित संभाग में कुल 29 परिवारों में बेला, खानपुर, कोठिया एवं मगरपाल प्रतिदर्श ग्राम के क्रमश: 9, 8, 7 एवं 5 परिवार है। सामान्यत: विकसित कुल 15 परिवारों में बेला 6, खानपुर 3, कोठिया 4 एवं मगरपाल 2 परिवार हैं। अल्प विकसित के कुल 58 परिवारों में 7 बेला, 10 खानपुर, 23 कोठिया एवं 18 मगरपाल ग्राम के हैं। अविकसित में कुल 18 परिवार हैं जिनमें बेला 4, खानपुर 7 एवं मगरपाल 7 हैं। अर्थात विकसित परिवारों का आपतन बेला, खानपुर एवं कोठिया है जो क्रमश: अंचल मुख्यालय, राजधानी पटना एवं जिला मुख्यालय से लाभान्वित है। विकास की दिशा में अग्रगामी होने के कारण यहाँ समग्र जनसंख्या के साथ-साथ अनुसूचित जाति जनसंख्या को भी प्राप्त हुए हैं। सामान्य रूप से क्षेत्रिय स्तर पर अनुसूचित जातियों के बीच भी मानव संसाधन विकास की दिशा में अग्रगामी वह समूह रहा है, जो विकास की दिशा में क्षेत्र का निवासी था। एक बार जिस किसी व्यक्ति या समूह का विकास की ओर उन्मूखीकरण हो गया वह उत्तरोत्तर विकसित होता गया। दरियापुर प्रखंड पटना राजधनी एवं छपरा शहर में अवस्थित बेला, खानपुर एवं कोठिया के लिए यही सत्य है। द्रष्टव्य है कि मगरपाल तो बल्कि अंचल मुख्यालय अनुमंडल मुख्यालय एवं जिला मुख्यालय एवं राजधानी से भी दूरस्थ है। विकास में इनके पिछड़ेपन का प्रभाव अनुसूचित जाति जनसंख्या के परिवारों पर भी प्रस्फूटित है। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि स्थल, स्थान, पेटी, पॉकेट एवं संभाग अपनी महत्वपूर्ण भौगोलिक अवस्थिति एवं प्रकृति प्रदत संसाधनों के सहारे ऐतिहासिक क्रम में जब एवं बार विकासोन्मुखी एवं पूर्वगामी बन जाता है। वह कालान्तर में भी विकास के अगुआ के रूप में वहाँ बसी जनसंख्या को रूपान्तरण की ऊर्जा प्रदान करता जाता है। दरियापुर प्रखंड में इस अध्ययन से प्रस्फूटित अंचल मुख्यालय पटना राजधानी एवं जिला मुख्यालय विकसित संभाग का इसका उदाहरण है, लेकिन विकसित एवं सामान्यत: विकसित संभाग में भी हर कोई व्यक्ति या समाज समान रूप से विकसित नहीं होता। विकास के लिए मुखर व्यक्ति और समाज का होता है। अनुसूचित जातियों के मानव संसाधन विकास का सत्य भी यहीं है। विकसित क्षेत्र में भी विकसित वही हो सका जो उच्च शिक्षा तथा संयमित जीवन से प्रतिफलित उन्नत स्वास्थ्य के साथ अग्रसर हुआ। नौकरियों में आरक्षण की सूविधा का लाभ भी उन्हें ही मिल सका जो उच्च स्तरीय शिक्षा आधारित साक्षरता से युक्त हुये। उनमें जिस किसी परिवार का कोई परिजन एक बार किसी उच्चस्थ पद पर नियुक्त हो गया तो कालान्तर में भी विकास की ओर परिवार और उसके परिजन अग्रसर होते चले गए। दूसरी ओर उन्मुखीकरण जहाँ कुंठित रहा (जैसे अविकसित संभाग के मगरपाल प्रतिदर्श में) मानव संसाधन विकास भी उसी स्तर का हुआ।

संदर्भ सूची-

1. घोष, विश्वनाथ 2005, ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेन्ट एण्ड मैनेजमेन्ट, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., न्यू देलही; पृष्ठ12
2. यू.एन.डी.पी. 1990 ह्यूमन डेवलपमेन्ट रिपोर्ट, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू देलही
3. योजना, जून 2010 पृ.27

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

शहरी श्रमजीवी महिलाओं की बहुआयामी समस्याएँ: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर जिले के विमानपुरी क्षेत्र के संदर्भ में)

• पूजा वर्मा
•• रचना श्रीवास्तव

सारांश- वर्तमान सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य में श्रमजीवी महिलाएँ केवल पारिवारिक आय में योगदान देने वाली इकाइयाँ नहीं हैं, बल्कि वे समाज और अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ आधारशिला भी हैं। तथापि, कार्यस्थल, परिवार और समाज तीनों स्तरों पर उन्हें अनेक संरचनात्मक, सांस्कृतिक और मानसिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रस्तुत शोध उत्तर प्रदेश के कानपुर नगर ज़िले के विमानपुरी क्षेत्र में निवास करने वाली 300 श्रमजीवी महिलाओं पर आधारित एक समाजशास्त्रीय अध्ययन है, जिसका उद्देश्य महिलाओं की सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, मानसिक एवं कार्यस्थल संबंधी समस्याओं का विश्लेषण करना तथा उनके समाधान हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि श्रमजीवी महिलाओं की समस्याएँ बहुआयामी हैं और इनके समाधान के लिए समन्वित सामाजिक, पारिवारिक, संस्थागत और नीतिगत प्रयास आवश्यक हैं।

मुख्य शब्द- श्रमजीवी महिलाएँ, सामाजिक समस्याएँ, पारिवारिक संघर्ष, लैंगिक असमानता, महिला सशक्तिकरण

1. भूमिका- भारत में श्रमजीवी महिलाएँ सदियों से पारिवारिक और सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग रही हैं। परंपरागत समाज में महिलाओं का श्रम प्रायः अदृश्य और अल्प-मूल्यांकित रहा है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा और वैश्वीकरण के बावजूद आज भी महिलाएँ पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना, आर्थिक असमानता और सामाजिक भेदभाव का सामना कर रही हैं। वर्तमान समय में महिलाएँ घरेलू दायित्वों के साथ-साथ कृषि, उद्योग, सेवा क्षेत्र, असंगठित क्षेत्र और स्वरोज़गार में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। इसके बावजूद उनके श्रम को अपेक्षित सामाजिक मान्यता, सम्मान और सुरक्षा प्राप्त नहीं हो पाती। विशेषकर शहरी निम्न एवं मध्यम वर्गीय क्षेत्रों में कार्यरत

• शोधार्थी, समाजशास्त्र, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (मध्य प्रदेश)
•• शोध निर्देशक, प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (मध्य प्रदेश)

श्रमजीवी महिलाएँ दोहरे दायित्व कार्यस्थल और परिवार के दबाव में निरंतर संघर्षरत रहती हैं। इसी पृष्ठभूमि में कानपुर नगर के विमानपुरी क्षेत्र को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित किया गया, जहाँ संगठित एवं असंगठित दोनों क्षेत्रों में कार्यरत श्रमजीवी महिलाओं की स्थिति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है।

2. अध्ययन के उद्देश्य- शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- श्रमजीवी महिलाओं की सामाजिक स्थिति एवं सामाजिक भेदभाव का विश्लेषण करना।
- पारिवारिक जिम्मेदारियों और संघर्षों की पहचान करना।
- आर्थिक समस्याओं एवं रोजगार संबंधी असुरक्षाओं का अध्ययन करना।
- मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन करना।
- कार्यस्थल पर सुरक्षा, अवसर और कार्य-जीवन संतुलन की स्थिति का आकलन करना।

3. शोध पद्धति- यह शोध श्रमजीवी महिलाओं की सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं को समझने का एक समग्र समाजशास्त्रीय प्रयास है। अध्ययन में गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों शोध विधियों का समन्वित प्रयोग किया गया है। डेटा संग्रह के लिए प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों को समान रूप से महत्व दिया गया। प्राथमिक स्रोतों में साक्षात्कार, प्रश्नावली, पर्यवेक्षण, समूह चर्चा एवं केस स्टडी सम्मिलित रहीं। इन माध्यमों से महिलाओं के वास्तविक अनुभव, संघर्ष और सामाजिक दबावों को प्रत्यक्ष रूप में समझा गया। द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत पुस्तकें, शोध पत्र, सरकारी रिपोर्ट, जनगणना आँकड़े एवं विश्वसनीय ऑनलाइन सामग्री का उपयोग किया गया। द्वितीयक स्रोतों ने अध्ययन को सैद्धांतिक आधार और तुलनात्मक दृष्टि प्रदान की। कुल 300 श्रमजीवी महिलाओं का चयन कानपुर नगर के विमानपुरी संघ क्षेत्र से किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकीय तथा गुणात्मक विधियों का प्रयोग किया गया। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों के संयुक्त उपयोग से यह शोध वैज्ञानिक, संतुलित और विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत हुआ।

4. श्रमजीवी महिलाओं की समस्याओं का विश्लेषण

4.1 सामाजिक समस्याएँ- अध्ययन से ज्ञात हुआ कि 42 प्रतिशत महिलाएँ सामाजिक असमानता और लैंगिक भेदभाव से प्रभावित हैं। जातिगत असमानता, पितृसत्तात्मक सोच और सामाजिक मान्यता की कमी महिलाओं की सामाजिक सहभागिता को सीमित करती है। लगभग 41 प्रतिशत महिलाओं ने समाज में सम्मान की कमी का अनुभव किया, जिससे उनके आत्म-सम्मान पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

4.2 पारिवारिक समस्याएँ- परिवार में महिलाओं से अपेक्षा की जाती है कि वे घरेलू कार्यों और रोजगार दोनों को समान रूप से निभाएँ। अध्ययन में 49 प्रतिशत महिलाओं ने बच्चों की देखभाल में कठिनाई, 42 प्रतिशत ने पारिवारिक सहयोग की कमी और 36 प्रतिशत ने वैवाहिक तनाव की समस्या बताई। पारिवारिक निर्णयों में 63 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी सीमित पाई गई।

4.3 आर्थिक समस्याएँ- आर्थिक स्तर पर वेतन असमानता, नौकरी की अस्थिरता और बचत की असमर्थता प्रमुख समस्याएँ हैं।

44 प्रतिशत महिलाएँ वेतन असमानता से प्रभावित हैं।

30 प्रतिशत महिलाएँ नौकरी की अस्थिरता का सामना कर रही हैं।

38 प्रतिशत महिलाएँ पारिवारिक खर्चों के कारण बचत नहीं कर पातीं।

4.4 मानसिक एवं स्वास्थ्य समस्याएँ- कार्य–जीवन असंतुलन का सीधा प्रभाव महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है।

46 प्रतिशत महिलाएँ तनाव एवं अवसाद से ग्रस्त पाई गईं।

42 प्रतिशत महिलाएँ थकान एवं अनिद्रा से प्रभावित हैं।

39 प्रतिशत महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं तक पर्याप्त पहुँच नहीं है।

4.5 कार्यस्थल संबंधी समस्याएँ- कार्यस्थल पर 37 प्रतिशत महिलाओं ने भेदभाव, 27 प्रतिशत ने यौन उत्पीड़न और 41 प्रतिशत ने सुरक्षा की कमी का अनुभव किया। 48 प्रतिशत महिलाओं ने कार्य–जीवन संतुलन की कमी को एक गंभीर समस्या बताया।

5. समस्याओं का समाज और परिवार पर प्रभाव

5.1 सामाजिक प्रभाव- महिलाओं की सामाजिक सहभागिता और निर्णय–निर्माण क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आत्म–सम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा में कमी देखी गई।

5.2 पारिवारिक प्रभाव- घरेलू तनाव, पारिवारिक संवाद की कमी और बच्चों की शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव स्पष्ट रूप से सामने आया।

5.3 मानसिक एवं आर्थिक प्रभाव- लगातार तनाव, आर्थिक असुरक्षा और भविष्य को लेकर अनिश्चितता महिलाओं के मानसिक संतुलन को प्रभावित करती है, जिसका प्रभाव पूरे परिवार पर पड़ता है।

श्रमजीवी महिलाओं की प्रमुख समस्याओं का विश्लेषण– भारतीय समाज में श्रमजीवी महिलाएँ आज भी अनेक सामाजिक, आर्थिक, मानसिक, पारिवारिक और कार्यस्थल से जुड़ी चुनौतियों का सामना कर रही हैं। शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध में 300 श्रमजीवी महिलाओं के अध्ययन के आधार पर इन समस्याओं का विश्लेषण निम्नलिखित तालिकाओं द्वारा प्रस्तुत किया गया हैं।

तथ्यों का विश्लेषण

तालिका 01
वेतन असमानता

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	132	44
अप्रभावित	168	56
कुल	300	100

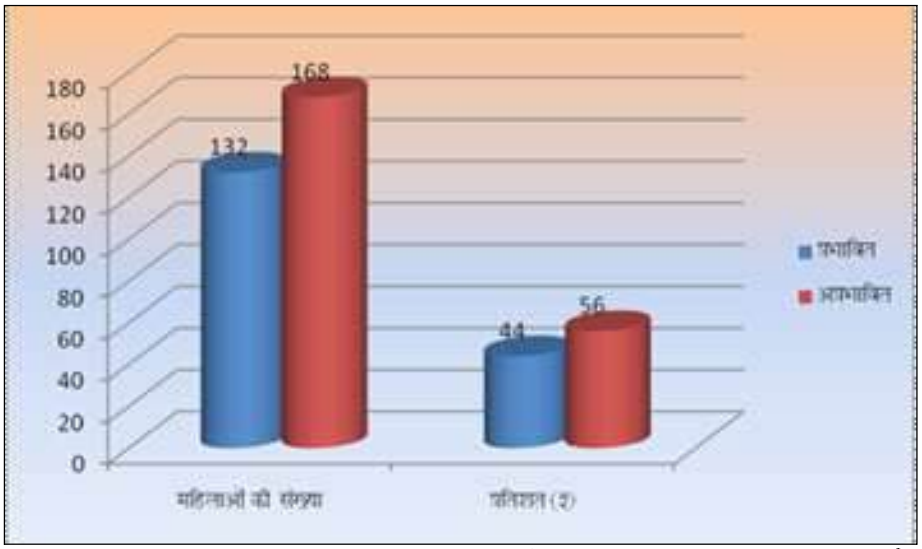

विश्लेषण लगभग 44 प्रतिशत महिलाएँ वेतन असमानता से प्रभावित हैं। असंगठित क्षेत्र की महिलाओं को समान कार्य के लिए कम वेतन मिलना एक प्रमुख समस्या है।

तालिका 02
नौकरी की अस्थिरता

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	90	30
अप्रभावित	210	70
कुल	300	100

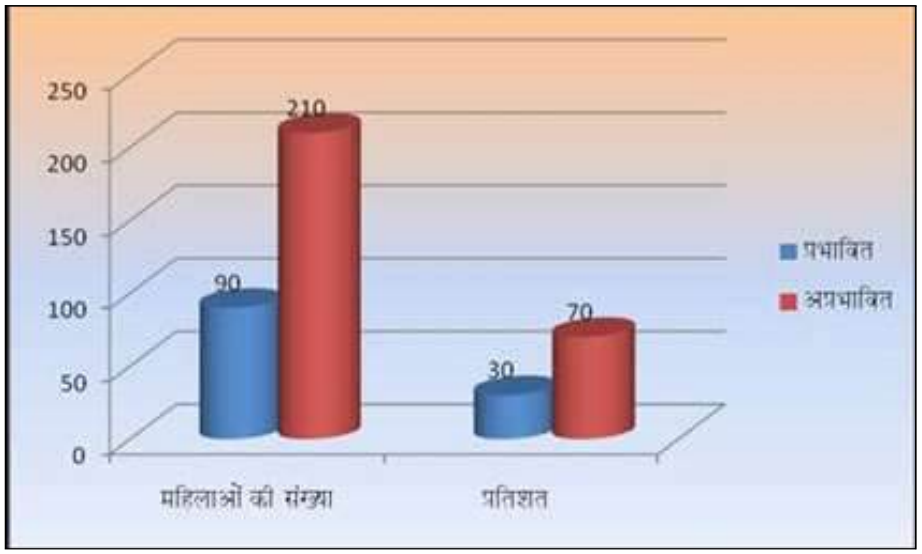

तालिका 03
कार्य के अनुपात में वेतन का अभाव

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	25	25
अप्रभावित	225	75
कुल	300	100

25 प्रतिशत महिलाएँ मानती हैं कि उन्हें श्रम के अनुपात में उचित वेतन नहीं मिलता। यह स्थिति विशेषतरू निम्न वर्ग की श्रमिकाओं में स्पष्ट है।

तालिका 04
आर्थिक निर्णयों में भागीदारी की कमी

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	81	27
अप्रभावित	219	73
कुल	300	100

विश्लेषण– परिवार में केवल 27 प्रतिशत महिलाएँ आर्थिक निर्णयों में भाग ले पाती हैं। पुरूष–प्रधान सोच महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता में बाधा बनती है।

तालिका 05
बचत की असमर्थता

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	114	38
अप्रभावित	186	62
कुल	300	100

विश्लेषण– 38 प्रतिशत महिलाएँ अपनी आय का कोई अंश बचाने में असमर्थ हैं। महँगाई और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ इसका प्रमुख कारण हैं।

तालिका 06
ऋण का बोझ

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	96	32
अप्रभावित	204	68
कुल	300	100

विश्लेषण– 32 प्रतिशत महिलाएँ ऋणग्रस्त हैं। अक्सर वे साहूकारों से उच्च ब्याज दर पर कर्ज लेती हैं, जिससे आर्थिक संकट बढ़ता हैं।

तालिका 07
वैवाहिक तनाव

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	108	36
अप्रभावित	192	64
कुल	300	100

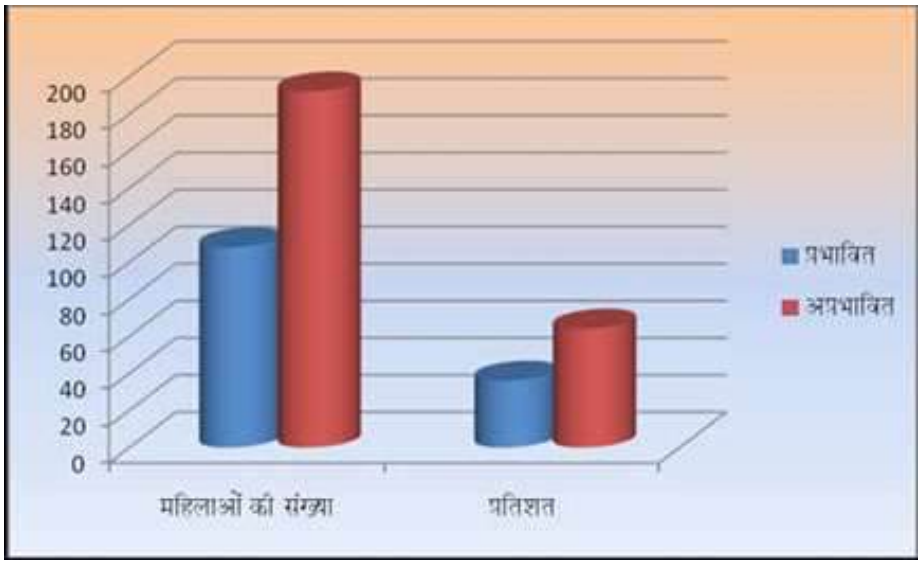

विश्लेषण- कार्य और परिवार के बीच संतुलन न बना पाने के कारण 36 प्रतिशत महिलाएँ वैवाहिक तनाव महसूस करती हैं।

तालिका 08
परिवार में सहयोग की कमी

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	126	42
अप्रभावित	174	58
कुल	300	100

विश्लेषण- 42 प्रतिशत महिलाएँ मानती हैं कि उन्हें परिवार से पर्याप्त सहयोग नहीं मिलता। यह पारंपरिक भूमिकाओं की जत्रडता को दर्शाता हैं।

तालिका 09
बच्चों की देखभाल में कठिनाई

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	147	49
अप्रभावित	153	51
कुल	300	100

विश्लेषण– लगभग आधी महिलाएँ बच्चों की देखभाल में कठिनाई झेलती हैं, विशेषकर वे जो लंबी कार्य अवधि में काम करती हैं।

तालिका 10
परिवारिक निर्णयों में भागीदारी की कमी

श्रेणी	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
प्रभावित	111	37
अप्रभावित	189	63
कुल	300	100

विश्लेषण- केवल 37 प्रतिशत महिलाएँ परिवार के निर्णयों मे भाग लेती हैं। इससे उनके आत्मविश्वास और सामाजिक स्थिति पर असर पड़ता है।

6. निवारण एवं सुधार के उपाय

6.1 सामाजिक उपाय

महिलाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन
महिला जागरूकता एवं समर्थन समूहों का विकास
लैंगिक समानता को बढ़ावा

6.2 पारिवारिक उपाय

घरेलू जिम्मेदारियों का समान वितरण
सहयोगपूर्ण पारिवारिक वातावरण
निर्णय–निर्माण में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी

6.3 नीतिगत एवं संस्थागत उपाय

समान वेतन और रोजगार सुरक्षा सुनिश्चित करना
सरकारी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन
कार्यस्थल पर सुरक्षा एवं मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान

6.4 शैक्षिक उपाय

शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और डिजिटल साक्षरता
कौशल विकास कार्यक्रमों का विस्तार

7. निष्कर्ष- प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि श्रमजीवी महिलाओं की समस्याएँ बहुआयामी और संरचनात्मक हैं। वे सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक और मानसिक दबावों के बीच संतुलन बनाने का निरंतर प्रयास करती हैं। 300 महिलाओं पर आधारित इस अध्ययन में लगभग आधी महिलाएँ विभिन्न स्तरों पर तनाव और असुरक्षा का सामना कर रही हैं।

अत: श्रमजीवी महिलाओं का सशक्तिकरण केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय विकास के लिए भी अनिवार्य है। समन्वित सामाजिक, पारिवारिक, शैक्षिक और नीतिगत प्रयासों के माध्यम से ही महिलाओं, परिवार और समाज की समग्र प्रगति सुनिश्चित की जा सकती है।

संदर्भ सूची-

1. देसाई, एन., एवं पटेल, वी. (2012), भारत में महिलाएँ और कार्य। नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स
2. शर्मा, आर. के. (2015)। समाजशास्त्रीय शोध पद्धति, जयपुर, रावत पब्लिकेशन्स
3. सिंह, बी. एन. (2018), भारतीय समाज में महिला श्रम की स्थिति, वाराणसी, चौखम्भा प्रकाशन
4. अग्रवाल, मीना (2016), महिला सशक्तीकरण: अवधारणा और यथार्थ। नई दिल्ली, एपीएच पब्लिशिंग
5. भारत सरकार, श्रम एवं रोजगार मंत्रालय (2020), भारत में महिला श्रमिकों की स्थिति, नई दिल्ली, भारत सरकार
6. भारत सरकार, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2019)।, कार्यरत महिलाओं से संबंधित नीतियाँ एवं योजनाएँ, नई दिल्ली, भारत सरकार
7. गुप्ता, एस. पी. (2014), लैंगिक असमानता और सामाजिक संरचना, इलाहाबाद, किताब महल
8. सेन, अमर्त्य (2001), विकास और स्वतंत्रता (हिंदी अनुवाद)। नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
9. कुमारी, रेखा (2017), असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं की समस्याएँ, एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, पटना, भारती प्रकाशन
10. इंटरनेशनल लेबर ऑर्गनाइजेशन, (2021)। महिला श्रमिक और कार्यस्थल सुरक्षा, जिनेवा
11. यादव, पी. के. (2019),भारतीय परिवार व्यवस्था और महिला की भूमिका, लखनऊ, न्यू रॉयल बुक कंपनी
12. चक्रवर्ती, उमा (2013)।, पितृसत्ता और सामाजिक असमानता, नई दिल्ली, पेंगुइन इंडिया
13. नाथ, आर. (2016), सामाजिक सर्वेक्षण एवं फील्डवर्क, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
14. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (2018), महिला रोजगार और जीवन स्थितियाँ, नई दिल्ली, भारत सरकार,
15. वर्मा, कुसुम (2020), महिला श्रम, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा, भोपाल, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

महात्मा ज्योतिबा फूले का राष्ट्र के प्रति सामाजिक- सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता

• भारती कुमारी
••रक्षा सिंह

सारांश- प्रस्तुत शोध प्रपत्र महात्मा ज्योतिबा फूले का राष्ट्र के प्रति सामाजिक-सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता पर केंन्द्रित है। वे एक महान मानवीय न्याय के विचारक, कार्यकर्ता, समाजसुधारक, लेखक, दार्शनिक, सम्पादक और क्रान्तिकारी थे। फूले ने वैज्ञानिक विचारों के आधार पर ही समाज परिवर्तन का अभियान चलाया, मानव मुक्ति का संकल्प किया और अपने महान सामाजिक-सांस्कृतिक सुधार के विचारों का परिचय दिया, वह वर्तमान समय में भी अधिक प्रासंगिक है। वे मानव मात्र की समानता के समर्थक थे उन्होंने समाजनीति, राजनीति, अर्थनीति, धर्मनीति, शिक्षा, स्त्री-पुरूष; समानता और सामाजिक न्याय, इत्यादि क्षेत्रों में अपने विचार एव नए मूल्य स्थापित किए। उन्होंने अस्पृश्यता, सामाजिक कुरीतियों के समाप्त करने, किसानों की स्थिति सुधारने और समाज में महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने का उल्लेखनीय कार्य किया था। यद्यिपि महात्मा ज्योतिबा फूले वंचित समूह, जाति, पंथ सम्प्रदाय, लिंग, भाषा, बालविवाह, क्षेत्र आदि के नाम पर होने वाले भेद-भाव के प्रबल विरोधी थे। विदित हो कि शिक्षा विशेष रूप से बालिका शिक्षा के उत्थान हेतु महात्मा ज्योतिबा फूले द्वारा किए गए कार्य वर्तमान परिवेश में भी उनका महत्वपूर्ण व प्रासंगिक है। अतएव यहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता का ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक विधि द्वारा विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

मुख्य शब्द- महात्मा ज्योतिबा फूले, सामाजिक-सांस्कृतिक, चिन्तन, प्रासंगिकता, वंचित समूह, ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक।

प्रस्तावना- महात्मा ज्योतिबा फूले को 19वीं सदी का प्रमुख समाज सेवक माना जाता है। वे भारतीय समाज में फैली अनेक कुरीतियों को दूर करने के लिए सतत् संघर्ष किया, अछुतों का उद्धार, नारी-शिक्षा, विधवा-विवाह और किसानों के हित के लिए ज्योतिबा ने

• शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)
•• असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर (बिहार)

उल्लेखनीय कार्य किया। ज्योतिबा फूले का जन्म 11 अप्रैल 1827 को महाराष्ट्र के सतारा जिले में मालि जाति के परिवार में हुआ था तथा उनका निधन 28 नवम्बर 1890 को हुआ था। वैसे उनका वास्तविक नाम ज्योति राव गोविंदराव फूले था किन्तु ज्योतिबा फूले के नाम से मशहूर हुए (योगमाया 2024)[1]। अतएव उनका परिवार सतारा से पुणे आ गया और माली का काम करने लगा था इसलिए उनके परिवार को फूले के नाम से जाना जाता था (की.,ध., 1964)[2]।

द्रष्टव्य है कि (7 वर्ष) की आयु में ज्योतिबा को गाँव के स्कूल में पढ़ाने भेजा गया, जातिगत, भेद-भाव के कारण उन्हें विद्यालय छोड़ना पड़ा। अरबी फारसी के विद्वान गफ्फार बेग मुंशी एवं फादर लिजीट साहब ज्योतिबा के पड़ोसी थे। उन्होने उनकी प्रतिभा एवं शिक्षा के प्रति रूचि देखकर उन्हें पुन: विद्यालय भेजा गया। वे स्कूल में सदा प्रथम आते रहें, धर्म पर टीका-टिप्पणी सुनने पर उनके अंदर जिज्ञासा हुई कि हिन्दू धर्म में इतनी विषमता, जाति-प्रभेद एवं वर्ण व्यवस्था क्या है तथा समाज, धर्म और देश के बारे में चिंतन किया करते थे। उन्होंने महसूस किया कि जातियों और पंथो पर बटे इस देश का सुधार तभी संभव है जब लोगों की मानसिकता में सुधार होगा। उस समय समाज में वर्ग भेद अपनी चरम सीमा पर था। स्त्री और दलित वर्ग की दशा अच्छी नहीं थी, उन्हें शिक्षा से वंचित रखा जाता था। ज्योतिबा को इस स्थिति पर बड़ा दु:ख हुआ था, उन्होंने स्त्री-पुरूष, दलित की शिक्षा के लिए सामाजिक संघर्षक का बीड़ा उठाया। तत्पश्चात् निश्चय किया कि वह वंचित वर्ग की शिक्षा के लिए स्कूलों का प्रबंध करेंगे, उस समय जात-पात, ऊँच-नीच की दीवारें बहुत ऊँची थी। दलितों एवं स्त्रियों की शिक्षा के रास्ते बंद थे, ज्योतिबा इस व्यवस्था को तोड़ने हेतु दलितों और लड़कियों को अपने घर में पढ़ाते थे। वह बच्चों को छिपाकर लाते और वापस पहुँचाते थे। जैसे-जैसे उनके समर्थक बढ़ा उन्होंने खुलेआम स्कूल चलाना प्रारंभ कर दिया।

अध्ययन का उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य महात्मा ज्योतिबा फूले का राष्ट्र के प्रति सामाजिक-सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता का अध्ययन करना है।

विधि-तंत्र- महात्मा ज्योतिबा फूले का राष्ट्र के प्रति सामाजिक-सांस्कृतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता हेतु द्वितीयक आँकड़े उपयोग किया गया है तत्पश्चात् ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक विधि द्वारा विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या- 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का समय भारतीय समाज के लिए पुनर्जागरण का काल माना जा सकता है क्योंकि साहित्य में अनेक नए रूपों और नवीन विषय-वस्तु का समावेश हुआ, पत्रकारिता के नए आयाम मिले जिसे जन-मानस में समाज-सुधार के आन्दोलन हुए परन्तु समाजिक व्यवस्था में क्रान्तिकारी बदलाव ना होकर बहुत परिवर्तन हुए इस समय शक्तिशाली व प्रभाव-शाली सामाजिक आन्दोलन के रूप में महात्मा ज्योतिबा फूले का भारतीय राजनीति में प्रवेश हुआ और उन्होंने वर्ण-व्यवस्था, जातिप्रथा को अमान्य करार दिया। महिलाओं, शूद्रों के लिए शिक्षा के दरवाजे खोल दिये जो केवल कुलीन लोगों के अधिकार क्षेत्र में आते थे (कु.वीनय 2017)[3]।

द्रष्टव्य है कि वे सक्रिय व शीघ्र परिवर्तन के सुधारक थे। उनके जीवन के सबसे

बड़ी विशेषता यह थी कि वे प्रत्येक कार्य को शीघ्र अति शीघ्र एवं निडरता के साथ करते थे। उनका मानना था कि सही कार्य के लिए कभी नहीं डरना चाहिए। उनके जीवन की "कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं था।" उन्होंने समझाया कि समाज की उन्नति शिक्षा द्वारा संभव है। इस प्रकार शिक्षा के द्वार खोलने वाले प्रथम व्यक्ति थे। ज्योतिबा फूले सत्य को ही धर्म की संज्ञा देते है, उसी को महत्व देते हैं। उनका आदर्श वाक्य है– "सत्यमेव जयते"

ध्यातव्य् है कि उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय एवं समस्त क्षेत्रों में अपने आधार पर विभक्त होना, उसमें उत्पन्न हुई सामाजिक एवं आर्थिक विषमता ज्योतिबा के चिन्तन के मुख्य केन्द्र बिन्दु रहे हैं। ज्योतिबा फूले एक वर्गहीन और शोषण मुक्त समाज का निर्माण करने हेतु सामाजिक क्रान्ति करना चाहते थे। इसलिए उन्हें "सामाजिक क्रान्ति का अग्रदूत" कहा जाता है। ज्योतिबा ने सामाजिक क्रान्ति हेतु तीन मुख्य आयामों को स्वीकार किया– तत्काल शोषित एवं उपेक्षित जनता को पराधीनता का एवम् शोषण का अनुभव कराकर उसके प्रति उनके मन में क्रोध उत्पन्न करना। उनमें आत्म सम्मान एवं आत्म गौरव का भाव–जाग्रत करना है। विभिन्न जातियों में विभिक्त वर्गों में मूलत: एक राष्ट्रीयता की भावना जाग्रत करना। ज्ञातव्य है कि सामाजिक क्रान्ति के प्रणेता माहत्मा ज्योतिबा फूले का महाराष्ट्र के समाज सुधारकों में अद्वितीय स्थान है। वह महान युग प्रवर्तक एवं कर्मयोगी थे। वे दलितों के मसीहा, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक विषमता के स्वाभिमानी एवं व्यक्तित्व के धनी थे। उन्होंने प्रचलित सामाजिक व्यवस्था की रूढ़िवादिता, ब्राह्मणवाद, संकीर्णता और जाति व्यवस्था के विरूद्ध संघर्ष किया। स्त्रियों एवं शूद्रों–अति शूद्रों के सर्वांगीण विकास में उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया। वे सम्पूर्ण मानवता के शुभ चिन्तक थे। उनके हृदय में शोषित, पीड़ित, दलित और उपेक्षित वर्गों के प्रति दया, ममता और सहानुभूति थी। सभी स्त्री–पुरूषों की समानता, स्वतंत्रता और बंधुता पर उन्होंने बल दिया। समाज के प्रत्येक वर्ग को समान अधिकार व न्याय दिलाने के लिए आजीवन संघर्ष किया था। विदित हो कि फूले हिन्दू समाज के समरांगन में डट चुके थे। समाज में व्याप्त बुराईयों के विरोध में उनका स्वर प्रबलता से उभरने लगा था। स्त्री–शिक्षा, दलित–शिक्षा, दलित–उद्धार आदि कार्यों के अतिरिक्त ज्योतिराव फूले सती प्रथा, विधवा मुण्डन, विधवा विवाह, बाल–हत्या, बहुविवाह, बेमेल–विवाह जैसे तत्कालीन समस्याओं पर क्रान्तिकारी कार्य किये। उन्होंने सती–प्रथा और विधवा मुण्डन का पुरजोर विरोध किया। विधवा औरतों को नारकीय जीवन से उबारने हेतु विधवा विवाह का समर्थन किया। ज्योतिराव फूले बहु–विवाह, बे–मेल विवाह के विरूद्ध थे। (नाई, कृ. ल., 2015)[4]।

उन्होंने एक समाज सुधारक की भूमिका निभाते हुए राष्ट्र के प्रति सामाजिक–सांस्कृतिक सुधार हेतु कार्यों की महत्वपूर्ण प्रासंगिकता निम्नलिखित हैं (शर्मा, न.कु., 2017)[5]–

जाति प्रथा और शोषण का विरोध- फूले ने वर्ण व्यवस्था को अन्यायपूर्ण बताया और "गुलामगिरी" नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने ब्राह्मणवादी बर्चस्व को चुनौती दी और सत्यशोधक समाज की स्थापना (24 सितम्बर, 1873) की।

स्त्री शिक्षा और महिला सशक्तिकरण- उन्होंने 1848 में पुणे में पहला बालिका विद्यालय खोला। उनकी पत्नी सावित्रीबाई फूले भारत की पहली महिला शिक्षिका बनी। विधवा विवाह को प्रोत्साहित किया और बाल विवाह का विरोध किया।

शिक्षा का प्रचार-प्रसार- यहाँ उनके विचार, अज्ञानता के कारण बुद्धि का विकास नहीं हुआ, बुद्धि के अभाव में नीति योजना का अभाव रहा, नीति के अभाव में तरक्की नहीं हुई और तरक्की के बिना धन सम्पत्ति–संसाधनों का अभाव रहा और संसाधनों के अभाव में वंचित समूहों व शुद्रों का विकास नहीं हुआ। उनका मानना था कि शिक्षा ही शोषित वर्गों की उन्नति का मुख्य साधन है। उन्होंने शिक्षा को सभी वर्गों के लिए सुलभ बनाने पर बल दिया।

कृषि एवं श्रमिक वर्ग का कल्याण- किसानों की समस्या पर ध्यान दिया और उन्हें संगठित करने का प्रयास किया। जल प्रबंधन और सिचाई के नए तरीकों को बढ़ावा दिया।

धार्मिक अंधविश्वासों का विरोध- फूले ने पाखंड और धार्मिक आंडबरों की आलोचना की। उन्होंने 'सार्वजनिक सत्यधर्म' की संकल्पना दी, जो सभी के लिए समान अधिकारों की बात करता है।

वर्तमान प्रासंगिकता- महात्मा फूले के विचार आज भी सामाजिक न्याय, शिक्षा और समानता के लिए प्रेरणादायक एवं प्रासंगिक हैं–

जातिगत भेदभाव और सामाजिक न्याय- आज भी जाति–आधारित भेद भाव और छुआ छूत समाज में मौजूद हैं। आरक्षण नीति और सामाजिक समावेशी की अवधारणाएँ फूले के विचारों से प्रभावित हैं।

महिला शिक्षा और सशक्तिकरण- फूले द्वारा शुरू किया गया महिला शिक्षा आन्दोलन आज बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ जैसी योजनाओं में झलकता है। लैंगिक समानता और महिलाओं के अधिकारों पर उनकी सोच आज भी प्रासंगिक है।

किसान और श्रमिक वर्ग की समस्याएँ- किसान आंदोलन और श्रमिक अधिकारों की लड़ाई महात्मा फूले के सिद्धान्तों को याद दिलाती है। जल संरक्षण, कृषि सुधार और किसानों के कल्याण पर फूले के विचार आज भी महत्वपूर्ण हैं।

शिक्षा सुधार और समावेशी विकास- सरकारी स्कूलों में सुधार, सबसके लिए समान शिक्षा और सामाजिक समानता की नीतियाँ फूले के विचारों पर आधारित हैं। डिजिटल शिक्षा और गरीब वर्गों के लिए मुफ्त शिक्षा योजनाएँ उनकी शिक्षण नीति को आगे बढ़ रही है।

धार्मिक कट्टरता और वैज्ञानिक सोच- धार्मिक सहिष्णुता और तर्कवादी दृष्टिकोण को बढ़ावा देने की जरूरत आज भी बनी हुई है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने और अंधविश्वासों को दूर करने के लिए फूले चिंतन मार्गदर्शक हो सकता है।

निष्कर्ष- महात्मा ज्योतिबा फूलो का राष्ट्र के प्रति सामाजिक–सांस्कृतिक चिन्तन ने केवल उनके समय में क्रांतिकारी था, बल्कि आज भी उतना ही प्रासंगिक है। शिक्षा, समाजिक न्याय, लैंगिक समानता और किसानों के उत्थान की दिशा में उनके विचार आधुनिक समाज के लिए मार्गदर्शक हैं। अगर समाज उनके सिद्धान्तों को अपनाये, तो एक समतावादी और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण संभव हो सकता है।

संदर्भ सूची-

1. योगमाया, 2004,महात्मा ज्योतिराव फूले दर्शन एवं चिन्तन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, पृ0-27
2. धनंजय की., 1964 महात्मा ज्योतिबा राव फूले-फादर ऑफ इण्डियन सोशल रिवोल्यूशन पोपलर प्रकाशन, बम्बई
3. कु. न., 2017समाज सुधार में माहत्मा ज्योतिबा फूले योगदान (1827-1890), आई.जे. सी.आर.टी. वोल्यूम, 5 ई.-4 दि. पृ.-39-44
4. नाई. कृ.ल., 2015 गुजरात एवं राजस्थान में नारी उत्थान के विशेष संदर्भ में महात्मा ज्योतिबा फूले एवं अन्य समाज सुधारकों की प्रासंगिकता, पी.एच.डी. शोध ग्रंथ कोटा विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान, शोध-गंगा, पृ.-120
5. शर्मा नं. कु., 2017 महात्मा ज्योतिराव फूले के शैक्षिक विचारों की अध्ययन पी.एच.डी. शोध ग्रंथ, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, शोध-गंगा, पृ. 143-167

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन

• समृद्धि ताम्रकार
••स्वाती पाण्डेय

सारांश- प्रस्तुत शोध अध्ययन ''किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन'' शीर्षक के अंतर्गत किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन लिंग तथा परिवेश के संदर्भ में करना था। अध्ययन हेतु छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत 11वीं कक्षा के 200 विद्यार्थियों (100 छात्र तथा 100 छात्राएँ) को स्तरीकृत गैर-आनुपातिक न्यादर्श विधि द्वारा चयनित किया गया। विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के मापन हेतु गुप्ता (2013) द्वारा निर्मित आत्मविश्वास सूची का प्रयोग किया गया तथा प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, प्रमाणिक विचलन एवं टी-परीक्षण का उपयोग किया गया। अध्ययन के निष्कर्षों से यह स्पष्ट हेतु कि लिंग के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर पाया गया, जिसमें छात्राओं का आत्मविश्वास छात्रों की अपेक्षा अधिक था। इसी प्रकार परिवेश के आधार पर भी विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर पाया गया जहाँ शहरी परिवेश के विद्यार्थियों का आत्मविश्वास ग्रामीण परिवेश के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया।

मुख्य शब्द- आत्मविश्वास, किशोर विद्यार्थी, लिंग एवं परिवेश।

प्रस्तावना- किशोरावस्था जीवन का वह महत्वपूर्ण चरण / अवस्था है जिसमें बाल्यावस्था से युवावस्था की ओर बढ़ता है और इसी दौरान शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक विकास तीव्र गति से होता है। इस अवस्था में आत्मविश्वास किशोर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व निर्माण का एक केंद्रीय तत्व माना जाता है, क्योंकि यही गुण उन्हें अपनी क्षमताओं को पहचानने, अपने विचारों को अभिव्यक्त करने तथा जीवन की चुनौतियों का सामना करने की शक्ति प्रदान करता है। विद्यालयी वातावरण में आत्मविश्वासी विद्यार्थी शैक्षणिक गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी करते हैं साथ ही सहपाठियों एवं शिक्षकों के साथ सकारात्मक संबंध भी स्थापित कर पाते है। इसके विपरित, आत्मविश्वास की कमी किशोरों में संकोच, डर, भय, निर्णयहीनता तथा

• शोधार्थी, शिक्षा संकाय, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग, (छ.ग.)
•• प्राध्यापक, शिक्षा संकाय, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग, (छ.ग.)

असफलता की भावना को जन्म दे सकती है, जो उनके शैक्षिक प्रदर्शन और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। अतः किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का अध्ययन उनके समग्र विकास को समझने की दृष्टि से अत्यंत आवश्यक हो जाता है। वर्तमान सामाजिक-शैक्षिक परिदृश्य में किशोर अनेक प्रकार के दबावों और अपेक्षाओं का सामना कर रहे हैं, जैसे शैक्षणिक प्रतिस्पर्धा, पारिवारिक आकांक्षाएँ, सामाजिक तुलना और तकनीकी माध्यमों का बढ़ता प्रभाव। इन सभी कारकों का किशोरों के आत्मविश्वास पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। सकारात्मक अनुभव, प्रोत्साहन और सहयोगात्मक वातावरण आत्मविश्वास को सुदृढ़ बनाते है, जबकि निरंतर आलोचना, असफलता और असुरक्षा की भावना आत्मविश्वास को कमजोर कर सकती है। इसलिए किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अध्ययन न केवल उनकी वर्तमान शैक्षिक स्थिति को समझने में सहायक है, अपितु उनके भावी जीवन में सफलता और आत्मनिर्भर नागरिक के रूप में विकास हेतु भी मार्गदर्शन प्रदान करता है।

संबंधित शोध अध्ययन- कुमार एवं पण्डियन (2025) के द्वारा उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में आत्मविश्वास पर अध्ययन किया गया। अध्ययन में तमिलनाडु के नमक्कल जिले के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 11वीं के 450 विद्यार्थियों जिसमें 242 छात्राएँ तथा 208 छात्रों को न्यादर्श हेतु चयन किया गया। अध्ययन में आत्मविश्वास सूची का प्रयोग कर आँकड़ों का चयन किया गया। प्राप्त आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु प्रसरण विश्लेषण एवं क्रांतिक अनुपात मापनी का प्रयोग किया गया। अध्ययन में निष्कर्ष पाया गया कि लिंग तथा परिवेश के आधार पर छात्र तथा छात्राओं के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। सिमरे एवं अन्य (2024) नें उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में आत्मविश्वास का अध्ययन किया। न्यादर्श हेतु मणिपुर राज्य के उखरूल जिला मुख्यालय में उच्च माध्यमिक विद्यालय के 11वीं और 12वीं कक्षा के कुल 200 विद्यार्थियों का चयन सरल यादृच्छिक न्यादर्श विधि के माध्यम से किया गया। डेटा एकत्र करने के लिए शोधकर्ता ने गजाला जिया द्वारा विकसित किशोर आत्मविश्वास मापनी का उपयोग किया। डेटा के विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए प्रतिशत और टी-परिक्षण सांख्यिकीय तकनीकों का उपयोग किया गया। प्रमुख निष्कर्ष में छात्रों और छात्राओं के आत्मविश्वास स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। कला और विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में भी महत्वपूर्ण अंतर देखा गया। पिलख्वाल (2023) नें माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत बालक-बालिकाओं के आत्मविश्वास स्तर का उनके वैयक्तिक पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन किया। शोध अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर अध्यनरत बालक-बालिकाओं के आत्मविश्वास स्तर का लिंग व निवास स्थान के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना था। शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए विवरणात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। न्यादर्श हेतु उत्तराखंड के जनपद बागेश्वर के विकासखंड बागेश्वर के राजकीय इंटर कॉलेज बाजीरोड एवं कंट्रीवाइड पब्लिक स्कूल बागेश्वर में अध्ययनरत कक्षा 9 व 10 के 120 छात्र छात्राओं को यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा चयन किया गया। आंकड़ों के संलन

हेतु पाण्डेय द्वारा निर्मित आत्मविश्वास मापनी एवं व्यक्तिगत सूचना प्रपत्र का प्रयोग किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मूल्य का उपयोग किया गया। आंकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर पाया गया कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत बालक-बालिकाओं के आत्मविश्वास स्तर में लिंग व निवास स्थान के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं होता है। राजकुमारी एवं कीर्ति (2023) नें माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का सामाजिक कौशल के संदर्भ में एक अध्ययन किया। अध्ययन में हरियाणा राज्य के सोनीपत जिले के सरकारी और निजी विद्यालयों से 100 विद्यार्थियों का सरल यादृच्छिक विधि द्वारा चयन किया गया। अध्ययन में सामाजिक कौशल मापने के लिए शर्मा (1997) द्वारा निर्मित सामाजिक कौशल उपकरण का प्रयोग किया गया। आत्मविश्वास मापने के लिए डी. डी. पांडे (हरिद्वार, 2010) द्वारा निर्मित आत्मविश्वास मापनी का उपयोग किया गया। आंकड़ों के विश्लेषण के लिए माध्य, प्रमाणिक विचलन, टी-परीक्षण, सहसंबंध का प्रयोग किया गया। निष्कर्ष में माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के आत्मविश्वास और सामाजिक कौशल के बीच कोई सार्थक संबंध नहीं पाया गया। रभा एवं साईकिया (2019) के द्वारा काम रूप जिला, असम, भारत के उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के आत्म-विश्वास और शैक्षणिक प्रदर्शन पर अध्ययन किया। इस अध्ययन के लिए वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। कामरूप जिले (असम) के 400 उच्च माध्यमिक विद्यालय विद्यार्थियों का न्यादर्श चुना गया। अन्वेषक ने डॉ. आर. गुप्ता द्वारा विकसित 'आत्म-विश्वास सूची, 2013' का उपयोग किया। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु सहसंबंध विधि का प्रयोग किया गया। निष्कर्ष के रूप में यह ज्ञात हुआ कि उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के आत्म-विश्वास और उनके शैक्षणिक प्रदर्शन के मध्य सार्थक सहसंबंध पाया गया।

उद्देश्य- प्रस्तुत शोध कार्य के उद्देश्य निम्नलिखित है -

1. लिंग के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का अध्ययन करना।
2. परिवेश के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं-प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु शोधकर्ता नें निम्नलिखित परिकल्पनाओं का चयन किया है -

H_{0-1} लिंग के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{0-2} परिवेश के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

अध्ययन की परिसीमा-

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के का चयन किया गया है।
2. प्रस्तुत अध्ययन हेतु उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के 11वीं कक्षा के 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्राएँ) का चयन किया गया है। अध्ययन में दुर्ग जिले के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के आधार पर विभाजित कर न्यादर्श लिया गया है।

जनसंख्या- प्रस्तुत शोध अध्ययन में छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के अंतर्गत आने वाले ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समस्त विद्यार्थियों को जनसंख्या के रूप में चयन किया गया है।

न्यादर्श- प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श का चयन छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्राएँ) को स्तरीकृत गैरआनुपातिक न्यादर्श विधि द्वारा चयन किया गया।

उपकरण- प्रस्तुत अध्ययन में किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के मापन हेतु गुप्ता (2013) द्वारा निर्मित आत्म विश्वास सूची (SCI-GR) का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विश्लेषण- अध्ययन में प्राप्त आँकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु मध्यमान, प्रमाणिक विचलन एवं टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं विवेचना-

H_{0-1} लिंग के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

तालिका क्रमांक - 1
छात्र तथा छात्राओं के आत्मविश्वास
के प्राप्तांको का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन तालिका

लिंग	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी-मूल्य
छात्र	100	33.01	7.043	2.851**
छात्राएँ	100	35.86	7.092	
df = 198		p > 0.01		

आरेख क्र. 1
छात्र तथा छात्राओं के आत्मविश्वास
के प्राप्तांको का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन का आरेख

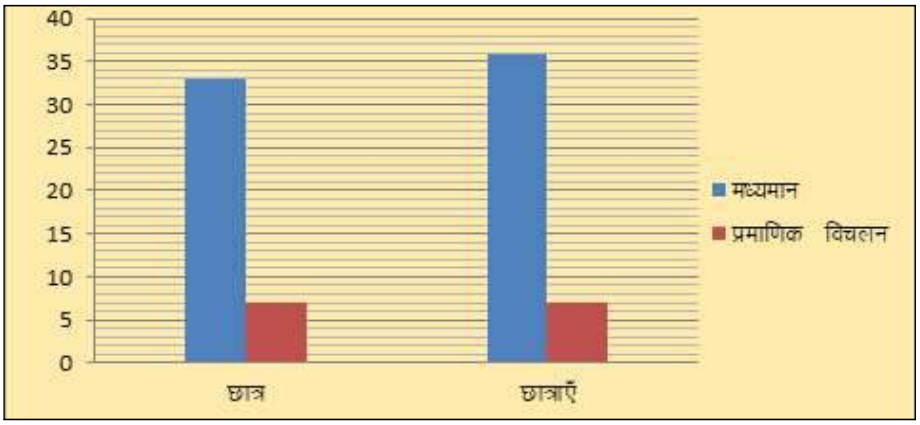

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि छात्रों के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान 33.01 व प्रमाणिक विचलन 7.043 है तथा छात्राओं के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान 35.86 व प्रमाणिक विचलन 7.092 प्राप्त हुआ। छात्र तथा छात्राओं के आत्मविश्वास के मध्य टी-मूल्य 2.851 है जो स्वतंत्रता की कोटि 198 तथा सार्थकता

स्तर 0.01 से अधिक है अत: दोनों के मध्य सार्थक अंतर पाया गया।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि छात्र एवं छात्राओं के आत्मविश्वास के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें छात्राओं में छात्रों की अपेक्षा आत्मविश्वास अधिक पायी जाती है।

H_{0-2} परिवेश के आधार पर किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

तालिका क्रमांक - 2
ग्रामीण तथा शहरी परिवेश के विद्यार्थियों
के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन तालिका

परिवेश	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी-मूल्य
ग्रामीण	100	31.85	7.198	3.172**
शहरी	100	35.04	7.020	
df = 198		p > 0.01		

आरेख क्र. 3
ग्रामीण तथा शहरी परिवेश के विद्यार्थियों
के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन का आरेख

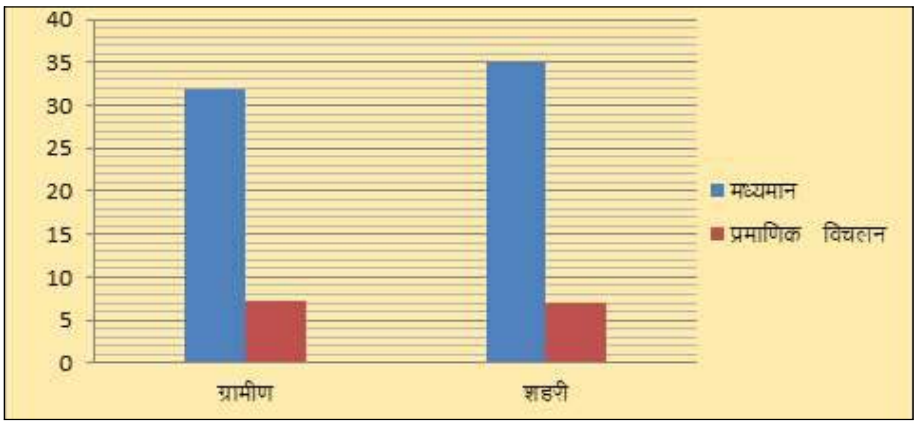

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि ग्रामीण परिवेश के किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान 31.85 व प्रमाणिक विचलन 7.198 है तथा शहरी परिवेश के किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के प्राप्तांको का मध्यमान 35.04 व प्रमाणिक विचलन 7.020 प्राप्त हुआ। ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के मध्य टी-मूल्य 3.172 है जो स्वतंत्रता की कोटि 198 तथा सार्थकता स्तर 0.01 से अधिक है अत: दोनों के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। जिसमें शहरी परिवेश के विद्यार्थियों में ग्रामीण परिवेश के विद्यार्थियों की अपेक्षा आत्मविश्वास अधिक पायी जाती है।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास पर लिंग एवं परिवेश दोनों का सार्थक

प्रभाव पाया गया है। लिंग के आधार पर किए गए विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि छात्र एवं छात्राओं के आत्मविश्वास में सार्थक अंतर विद्यमान है। सांख्यिकीय विश्लेषण के परिणामों के अनुसार छात्राओं का आत्मविश्वास छात्रों की अपेक्षा अधिक पाया गया। इसका संभावित कारण यह हो सकता है कि वर्तमान सामाजिक एवं शैक्षिक परिवेश में छात्राओं को समान अवसर, प्रोत्साहन तथा आत्म–अभिव्यक्ति के अधिक मंच प्राप्त हो रहे हैं, जिससे उनमें आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास का स्तर सु–ढ़ हुआ है। विद्यालयी वातावरण, शिक्षकों का सहयोग तथा परिवार की सकारात्मक भूमिका भी छात्राओं के आत्मविश्वास को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकती है। इसी प्रकार परिवेश के आधार पर किए गए अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि ग्रामीण एवं शहरी परिवेश के किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में भी सार्थक अंतर पाया गया। शहरी परिवेश के विद्यार्थियों का आत्मविश्वास ग्रामीण परिवेश के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया, इसके पीछे शहरी परिवेश में उपलब्ध शैक्षिक संसाधन, आधुनिक सुविधाएँ, प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण, तकनीकी साधनों तक पहुँच तथा विविध सह–शैक्षणिक गतिविधियों की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जा सकती है। जबकि ग्रामीण परिवेश में सीमित संसाधन, अवसरों की कमी तथा सामाजिक–सांस्कृतिक बंधन आत्मविश्वास के विकास में बाधक बन सकते हैं। समग्र रूप से यह अध्ययन यह संकेत देता है कि किशोर विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के विकास हेतु विद्यालय, परिवार एवं समाज को मिलकर ऐसे प्रयास करने चाहिए, जिनसे सभी विद्यार्थियों को समान अवसर, सहयोगात्मक वातावरण एवं सकारात्मक प्रेरणा प्राप्त हो सके, ताकि उनका सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ सूची-

1. Kumar, V. and Pandian, G. (2025). A study on self confidence among higher secondary school students. International Journal of Scientific Research and Engineering Development, 8(1), 1742-1746.
2. Pilkhwal, S. (2023). Comparative study of the self-confidence level of boys and girls studying at secondary level in the context of their personal background. Journal of Social Review and Development, 2(1), 21-24.
3. Rabha, B. and Saikia, P. (2019). A study on self –confidence andacademic performance of highersecondary school students of kamrup district, Assam, India. EPRA International Journal of Economic and Business Review, 7(2), 82–85.
4. Rajkumari and Kirti (2025). A study of self-confidence of secondary school students in relation to social skills. International Journal for Multidisciplinary Research, 5(3), 1–6.
5. Simray, R., Devi, L.N. and Meitei, L.C. (2024). Self-confidence among higher secondary school students. ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts, 5(6), 2210–2214.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

राष्ट्रवाद पर डॉ. अम्बेडकर के विचार: एक विश्लेषणात्मक अवलोकन

• दीपक कुमार दिनकर

सारांश- जनवरी 1950 में जब भारतीय संविधान को अपनाया गया, तो डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा कि भारत विरोधाभासों के युग में प्रवेश कर रहा है, क्योंकि उनका मानना था कि केवल राजनीतिक समानता ही सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र के लिए पर्याप्त शर्त नहीं है। संविधान सभा की अंतिम बैठक में अपने भाषण में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था कि जाति व्यवस्था और लोकतंत्र एक साथ नहीं रह सकते। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से भारत की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे, लेकिन वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी) के प्रमुख राष्ट्रवादी विमर्श के भी आलोचक थे। डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि कांग्रेस का राष्ट्रवाद राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्ति तक ही सीमित था और यह भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं करता था। डॉ. अम्बेडकर ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित एक न्यायसंगत और समतापूर्ण समाज के लिए अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। डॉ. अम्बेडकर ने तर्क दिया कि सच्चा राष्ट्रवाद होना चाहिए जिसकी बुनियाद स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित हो। उनका मानना था कि सभी भारतीयों को, चाहे उनकी जाति, धर्म या सामाजिक स्थिति कुछ भी हो, समान अधिकार और अवसर मिलने चाहिए। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि राष्ट्र-राज्य को सामाजिक न्याय और गरीबों व हाशिए पर पड़े लोगों के उत्थान के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए। उनका तर्क था कि कोई राष्ट्र तब तक पूरी तरह स्वतंत्र नहीं हो सकता जब तक उसके नागरिक सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न से मुक्त न हों। डॉ. अम्बेडकर के भारतीय राष्ट्रवाद के तहत बौद्ध धर्म अपनाने को राष्ट्रवाद कहा जा सकता है। हिंदू धर्म की परंपराओं में छुआछूत को बढ़ावा देने के तरीके से नाराज़ होने के बावजूद, उन्होंने कभी राष्ट्र के विरुद्ध नहीं जाकर उस बौद्ध धर्म को अपनाया, जो ईसाई धर्म या इस्लाम जैसे विदेशी धर्मों के बजाय भारत में उत्पन्न हुआ था। लेकिन, उनकी दृष्टि में, देश के सभी नागरिक पहले भारतीय थे; उनकी अन्य पहचानें बाद में आती थीं। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय राष्ट्रवाद के सामाजिक आधार को व्यापक और सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतीय राष्ट्रवाद को वृहद परिभाषा में

• सहायक प्रोफेसर (सीनियर स्केल),राजनीति विज्ञान विभाग, सुन्दरवती महिला महाविद्यालय भागलपुर, तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार

संयोजित करते हुए उन्होंने कहा कि हम सबसे पहले और अंत में भी भारतीय है। राष्ट्र-निर्माण के लिए उन्होंने संविधान का सहारा लिया। डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, महिलाओं, श्रमिकों और युवाओं को जो महत्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज़ है। डॉ. अम्बेडकर ने समता, बंधुत्व और न्याय पर आधारित राष्ट्र-निर्माण की बुनियाद को रखा। डॉ. अम्बेडकर ने स्वतंत्र और लोकतांत्रिक भारत के निर्माण के लिए सामाजिक समानता और सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण को आवश्यक माना। उनके अनुसार इस सिद्धांतों पर आधारित देश सामाजिक समरसता की ओर बढ़ेगा। डॉ. अम्बेडकर के विचार समकालीन विमर्श के लिए अधिक सशक्त और प्रासंगिक होते गए हैं। यह शोध आलेख राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्रवाद पर डॉ. अम्बेडकर के विचारों का मूल्याँकन करता है।

मुख्य शब्द- संविधान, राष्ट्र-निर्माण, राष्ट्रवाद, लोकतंत्र, सामाजिक समानता, सामाजिक समरसता, आर्थिक लोकतंत्र, सामाजिक न्याय

परिचय- राष्ट्रवाद आधुनिक विश्व का केंद्रीय मुद्दा है। सोवियत संघ के पतन के बाद से राष्ट्रवादी और नृजातिय संघर्षों में वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप जातीयता और राष्ट्रवाद में रुचि में वृद्धि ने इस क्षेत्र में व्यवस्थित अध्ययन की तत्काल आवश्यकता उत्पन्न कर दी है। डॉ. अम्बेडकर के राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्रवाद पर विचार का अध्ययन का उद्देश्य इसी आवश्यकता को पूरा करना है। भारत के राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख नेता एवं स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू राष्ट्र-निर्माण को बहुत महत्व देते थे। 1947 में एक आहत राष्ट्र के प्रशासन की बागडोर संभालते हुए, नेहरू और उनके सहयोगियों के सामने एक बहुत बड़ा कार्य थारू एक खंडित राजनीति से एक दूरदर्शी राष्ट्र का निर्माण। यह तभी संभव था जब राष्ट्र को व्यापक मतभेदों के बावजूद, सर्वजन कल्याण के एकमात्र कार्य में संलग्न रखा जाए। अंत्योदय, या सबसे वंचित वर्ग के कल्याण की भावना-जिसका गांधीजी ने राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान उत्साहपूर्वक समर्थन किया था-ने स्वतंत्र भारत के मूल चरित्र का निर्माण किया। नेहरू ने अपने "ट्रिस्ट विद डेस्टिनी" भाषण में इसी भावना को व्यक्त किया था जब उन्होंने नए राष्ट्र के "हर आँख से हर आँसू पोंछने" के संकल्प की पुष्टि की थी (चक्रवर्ती 2025, पृष्ठ संख्या-62) उन्होंने इस विचार को अपनी अनूठी शैली में विस्तार से समझाया; भारत की सेवा का अर्थ है, उन लाखों लोगों की सेवा जो पीड़ित हैं। इसका अर्थ है गरीबी, अज्ञानता, दरिद्रता, बीमारी और अवसर की असमानता का अंत। वास्तव में, नेहरू सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के आदर्श पर ज़ोर देते हैं, जिसे अंततः भारतीय संविधान ने अपनी प्रस्तावना में समाहित कर लिया। नेहरू के शब्दों और भारत के संविधान में यह स्पष्ट रूप से विद्यमान है कि न्याय का विचार राष्ट्र निर्माण का आधार है (सेजवल 2024, पृष्ठ संख्या-38) विविध वर्गों का सामान्यीकरण और समावेशन, प्रत्येक राष्ट्र-निर्माण प्रक्रिया का तार्किक परिणाम है। बहु-धार्मिक, बहुभाषी और बहु-जातीय भारत के संदर्भ

में, इसके निर्माताओं को स्वतंत्रता दी गई जिसके कारण वे राष्ट्र-निर्माण में सफलतापूर्वक आगे बढ़ते गए। विविध वर्गों का समावेशन संविधान द्वारा निहित लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अनुसार किया जाना था, जो राष्ट्र-निर्माण का मूल आधार था। जहाँ भारत में विशिष्ट मुद्दों के समाधान हेतु तैयार की गई लोकतंत्र की रणनीति संविधान का आधार थी, वहीं विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं के लिए विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट समस्याओं के समाधान हेतु परियोजनाएँ आवश्यक थीं (रमादु 2020, पृष्ठ संख्या-59) संविधान निर्माताओं ने यह कल्पना की थी कि लोकतंत्रों का विकास और संचालन उस प्रकार के राष्ट्र के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करेगा जिसका वे निर्माण करना चाहते थे। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, जो प्रारंभिक वर्षों में शासन के शीर्ष पर थे, ने इस बारे में अपने विचार व्यक्त किए थे कि लोकतंत्र के आधार पर भारत का निर्माण कैसे किया जा सकता है। ये नेता स्वतंत्रता संग्राम से आए थे और स्वतंत्रता संग्राम में व्यापक भागीदारी के बाद भी अपने-अपने वर्ग की समस्याओं से जुड़े रहे। इसलिए, स्वतंत्रता के बाद की लोकतांत्रिक संरचनाओं ने स्थानीय प्रयोगों से प्राप्त बड़ी संख्या में सामग्रियों की ओर ध्यान दिया। स्वतंत्रता के बाद से भारतीय राष्ट्रीय नीति की मूल मान्यता यह रही है कि राष्ट्र निर्माण के किसी भी उद्देश्य की सफलता के लिए आर्थिक विकास एक अनिवार्य पूर्वापेक्षा है। जवाहरलाल नेहरू शायद इतिहास के पहले राजनेता थे जिन्होंने सर्वोच्च राष्ट्रीय प्रयास की माँग करने वाले संघर्ष के बीच, आर्थिक विकास और राष्ट्रीय कल्याण के स्तर को ऊँचा उठाने पर विचार किया, जो स्वयं राष्ट्रीय नीति का उद्देश्य था (देवी 2017, पृष्ठ संख्या-735) प्रथम पंचवर्षीय जैसी योजना ने भारत की तीव्र आर्थिक विकास की आकांक्षा को पूर्ण रूप दिया। आर्थिक विकास की दिशा ने एक लोकतांत्रिक, न्यायसंगत और धर्मनिरपेक्ष समाज के निर्माण के हमारे प्रयास की दिशा को काफी हद तक निर्धारित किया है। आर्थिक नियोजन ने हमारी राष्ट्रीय गतिविधियों को एक अनुशासित स्वरूप प्रदान किया है। विशेष रूप से, इसने शिक्षा जैसे अव्यवस्थित क्षेत्र में व्यवस्था का आभास दिया है। तीव्र राष्ट्रीय आर्थिक विकास का परिणाम हमारे औद्योगिक विकास में अपने सबसे नाटकीय रूप में परिलक्षित होता है। जिसने न केवल हमारे लिए अति आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन संभव बनाया है, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं को बदलने, राजनीतिक शक्ति के वितरण और, काफी हद तक, उन सामाजिक समूहों के प्रभाव को कम करने में भी मदद की है जो भारत के औपनिवेशिक अतीत के उत्तराधिकारी थे (राउत 2020, पृष्ठ संख्या-7)

नेहरू के नेतृत्व में नवजात भारत की नीतियाँ और कार्यक्रम-चाहे वह बिजली उत्पादन और सिंचाई के लिए विशाल बाँधों का निर्माण हो, प्रमुख क्षेत्रों में विशाल सार्वजनिक उपक्रमों का निर्माण हो, या नियोजित अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना हो-सामाजिक और आर्थिक न्याय प्राप्त करने के आदर्श से प्रेरित थे (देवी 2017, पृष्ठ संख्या-735)। आज के बाज़ार अर्थव्यवस्था के मसीहा और साथ ही सर्वज्ञ राजनीतिक नेता नेहरु थे जिन्होंने नेहरूवादी अर्थशास्त्र की बुनियाद रखी है। नेहरु के अनुसार राष्ट्र-निर्माण का कार्य न्याय के चार आयामों के अंतर्गत होता है। प्रस्तावना में तीन का उल्लेख है; न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक। लेकिन भावनात्मक न्याय का

चौथा आयाम भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नेहरु के अनुसार न्याय के अन्य तीन रूप भावनात्मक आयाम के बिना, शासन–व्यवस्था द्वारा आत्मसात नहीं किए जाएँगे। स्वतंत्र भारत के पहले 20 वर्षों के दौरान भावनात्मक जुड़ाव का यह स्तंभ मज़बूत हुआ, जिससे राष्ट्र–निर्माण एक साध्य लक्ष्य बन गया। लेकिन आपातकाल के दिनों से, राष्ट्र–निर्माण की यह परियोजना लड़खड़ाने लगी और आज, इसकी गति धीमी पड़ गई है। राष्ट्र–निर्माण के चारों आयाम आज एक दूसरे से जुड़कर प्रक्रियागत है। सामाजिक रूप से हाशिए पर पड़े लोगों का विश्वास संविधान और विकासात्मक योजनाओं के द्वारा राष्ट्र–निर्माण में बना हुआ है। सामाजिक वंचना के कारण हासिए पर मौजूद लोगों को राष्ट्र–निर्माण के उत्सव में शामिल किया गया है। सरकार प्रायोजित विकास कार्य और समावेशी आर्थिक विकास राष्ट्र एकता और सामाजिक न्याय की प्राप्ति में सहायक हो रहा है। भारतीय लोकतंत्र में असहमति और आलोचना को प्रमुख स्थान दिया गया है। हालाँकि आर्थिक असमानताओं के कारण आर्थिक न्याय भी एक मृगतृष्णा बनकर रह गया है। वर्तमान समय में राष्ट्र–निर्माण में सरकार की आर्थिक नीतियाँ बाज़ार और पूँजी की कथित निष्पक्षता में विश्वास करती हैं। सरकार नवउदारवादी आर्थिक सिद्धांतों के साथ तालमेल बिठाने के लिए धीरे–धीरे सभी सामाजिक क्षेत्रों से पीछे हट रही है। वर्तमान समय में भारत में सकारात्मक कार्रवाई के ज़रिए गरीबों व कमज़ोरों के अधिकारों को महत्व दिया जा रहा है। पिछले दस वर्षों में सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में स्वास्थ्य और शिक्षा पर सरकार का खर्च लगातार बढ़ता जा रहा है। समावेशी आर्थिक विकास में समाज के कमज़ोर लोगों को आर्थिक मदद के लिए और खाद्य सुरक्षा को महत्व देते हुए आर्थिक उपकरण के रूप में सब्सिडी को प्रमुखता से प्रदान किया जा रहा है। हालाँकि देश में बढ़ती बेरोजगारी, मुद्रास्फीति, मूल्य वृद्धि, नए श्रम कानून कल्याणकारी राष्ट्र–निर्माण के समक्ष प्रमुख समस्या बनकर उभरा है। यह सभी समस्या आर्थिक न्याय को चुनौती दे रहा है। किसान का आर्थिक संकट, मज़दूर वर्ग की चिंता और हाशिए पर पड़े नागरिकों की लाचारी राष्ट्र–निर्माण में बाधक बन रहा है। राजनीतिक मतभेदों के बावजूद, राजनीतिक न्याय केवल सत्ता की राजनीति के प्रभाव से सुरक्षित, मज़बूत संस्थाओं की भूमिका से ही प्राप्त किया जा सकता है (रमेश 2022, पृष्ठ संख्या–7)।

राष्ट्र–निर्माण में राजनीतिक न्याय के लिए ऐसी संस्थाओं को मज़बूत करना आवश्यक है। लेकिन चिंता की बात यह है कि स्वतंत्रता और अखंडता के लिए जाने जाने वाले कई संस्थानों में ऐसे परिवर्तन हुए हैं कि राजनीतिक न्याय पूरी तरह से खतरे में पड़ गया है। राज्यपालों के अधिकार क्षेत्र का विस्तार से कई राज्यों में संस्थागत समस्या उत्पन्न हो गया है जिसकी वजह से कई कल्याणकारी योजनाओं के कार्यान्वयन में समस्या हो रहा है। इसके बावजूद राष्ट्र–निर्माण में सभी राजनीतिक दलों की भूमिका को स्वीकार किया गया है। राष्ट्र निर्माण तभी संभव है जब आम सहमति के साथ–साथ असहमति को भी स्थान दिया जाए। भारत का लोकतंत्र सहमति और असहमति को पर्याप्त स्थान देता है। यही कारण है कि भारत में चुनाव सत्तापक्ष और विपक्ष दोनों का चयन करता है। वर्तमान दौर में राष्ट्र–निर्माण और राष्ट्रवाद पर डॉ. अंबेडकर के विचार बहुत अधिक प्रासंगिक हो गया है। स्वतंत्र भारत में संविधान भारत में वंचित वर्गों के लिए

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का उम्मीद का स्रोत रहा है। डॉ. अंबेडकर ने यह सुनिश्चित किया कि आज़ादी से पहले वंचित वर्गों के खिलाफ जो अमानवीय व्यवहार और उनके प्रति अत्याचार होता रहा है वे उत्तर-औपनिवेशिक भारत में दोबारा न हों (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-22)।

इसलिए, संवैधानिक मूल्यों का क्षरण दलित समुदाय पर काफ़ी हद तक और प्रतिकूल रूप से प्रभाव डालता है। इसलिए, राष्ट्र-निर्माण में डॉ. अंबेडकर के विचार को समझना अत्यंत आवश्यक है। उनके संवैधानिक विचार को साकार करना ही राष्ट्र के सभी नागरिकों का प्रमुख कर्तव्य होना चाहिए। वर्तमान समय में राष्ट्र के बारे में डॉ. अंबेडकर के विचारों कार्यान्वयन करना बहुत आवश्यक है। राष्ट्र का अम्बेडकरवादी विचार भविष्य की अम्बेडकरवादी राजनीति के लिए एक व्यवहार्य राजनीतिक लक्ष्य प्रदान करता है (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-90)। साथ ही, इस तथ्य को देखते हुए कि राष्ट्र के इस विचार में पहले से ही वे सिद्धांत शामिल हैं जिन्हें राष्ट्र का संवैधानिक विचार परिभाषित करता है, इसे प्राप्त करने के लिए संघर्ष में उन सिद्धांतों की मान्यता और अनुप्रयोग अनिवार्य रूप से सुनिश्चित होना चाहिए। डॉ. अंबेडकर के दृष्टिकोण की विशिष्ट विशेषता यह है कि संविधान सभा के अन्य सदस्यों की तरह, उन्होंने भी हमारे संप्रभु गणराज्य के आधार के रूप में लोकतंत्र के संसदीय स्वरूप, एक प्रकार की समाजवादी अर्थव्यवस्था और स्वतंत्र न्यायपालिका का समर्थन किया (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-45)। डॉ. अंबेडकर ने राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा पर पहली बार अपनी पुस्तक "थॉट्स ऑन पाकिस्तान" में विचार किया, जिसे "पाकिस्तान या भारत का विभाजन" के रूप में पुनर्मुद्रित किया गया। एक प्रचलित राष्ट्रवादी दृष्टिकोण के अनुसार राष्ट्र मुख्यतः भूगोल, संस्कृति और भाषा का विषय है। भाषा, नस्ल, भू-भाग और संस्कृति, या धर्म की समानता ही राष्ट्र का निर्माण करती है। डॉ. अंबेडकर के विचार इस धारणा से भिन्न थे। डॉ. अंबेडकर ने तर्क दिया कि भौतिक अर्थों में एक राष्ट्र एक देश नहीं होता, चाहे उसमें भौगोलिक एकता कितनी भी क्यों न हो (भारद्वाज 2015, पृष्ठ संख्या-53)। एक राष्ट्र एक समान भाषा, समान धर्म या समान नस्ल से उत्पन्न एक समान संस्कृति द्वारा संश्लेषित लोग नहीं होते हैं। राष्ट्रीयता एक व्यक्तिपरक मनोवैज्ञानिक भावना है। यह एकता की सामूहिक भावना है जो इसे निभाने वालों को यह एहसास दिलाती है कि वे एक-दूसरे के सगे-संबंधी हैं। यह "प्रकृति की चेतना" की भावना है, जो उन लोगों को एक साथ बांधती है जो एक ही जाति के हैं। यह अपने समूह का हिस्सा बनने की लालसा (एक साथ रहने की तीव्र इच्छा) है। यही राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय भावना का सार है। डॉ. अंबेडकर की राष्ट्र की धारणा उनके समकालीनों की धार्मिक और आध्यात्मिक रूप से उन्मुख धारणाओं की तुलना में कहीं अधिक नैतिक रूप से उन्मुख थी। डॉ. अंबेडकर लिखते हैं, राष्ट्रीयता एकता की सामूहिक भावना की एक सामाजिक भावना है (गायकवाड़ 1998, पृष्ठ संख्या-516)। यह दयालुता, समान विचारधारा, जीवन में समान चीजों के होने, संचार, सहभागिता और उन सभी के साथ साझेदारी की चेतना की भावना है जो एक राष्ट्र का निर्माण करते हैं। इस अर्थ में, एक राष्ट्र एक ऐसा समाज है जहाँ 'सामाजिक अंतर्संयोजन' की असीमित गुंजाइश होती है। राष्ट्र संबद्ध जीवन

जीने का, संयुक्त संप्रेषित अनुभव का एक तरीका है। वे तर्क देते हैं, मुद्दा यह है कि राष्ट्रीयता मुख्यतः भूगोल, संस्कृति या भाषा का मामला नहीं है। राष्ट्र कोई भौतिक चीज़ नहीं है जिसमें कुछ वस्तुनिष्ठ विशेषताएँ, जैसे भाषा, नस्ल, क्षेत्र आदि की समानता, बनी रहती हैं। इसके विपरीत, राष्ट्र एक आध्यात्मिक वास्तविकता है जो लोगों को एक गहरे भाईचारे में बाँधती है।(भारती 2022, पृष्ठ संख्या–70)।

दूसरी ओर, राष्ट्रवाद का अर्थ है, उन लोगों के लिए एक अलग राष्ट्रीय अस्तित्व की इच्छा जो इस बंधुत्व के बंधन में बंधे हैं। इस संदर्भ में, डॉ. अंबेडकर ने कहा था, राष्ट्रीयता की भावना के बिना राष्ट्रवाद नहीं हो सकता (पन्निकर 2016, पृष्ठ संख्या–8)। लेकिन इसका उल्टा हमेशा सच नहीं होता। राष्ट्रीयता की भावना मौजूद हो सकती है। और फिर भी राष्ट्रवाद की भावना पूरी तरह अनुपस्थित हो सकती है। कहने का तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीयता राष्ट्रवाद में प्रज्वलित नहीं होती। राष्ट्रवाद में राष्ट्रीयता प्रज्वलित होने के लिए, 'राष्ट्र के रूप में जीने की इच्छा' का उदय होना आवश्यक है। राष्ट्रवाद उस इच्छा की गतिशील अभिव्यक्ति है। इस संदर्भ में, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि एक समान भूमि, भाषा, संस्कृति और धर्म किसी राष्ट्र के अस्तित्व के लिए आंशिक रूप से आवश्यक शर्तें हैं, लेकिन यह समानता किसी देश को ठोस अर्थ में राष्ट्र बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है। एकता की भावना, कि हम सभी एक–दूसरे के सगे–संबंधी हैं, वास्तव में लोगों को एक साथ बांधती है। यह एकता केवल उन सभी लोगों के बीच निरंतर संचार, सहभागिता और खुले आदान–प्रदान से ही संभव है जो एक राष्ट्र का निर्माण करते हैं। इस प्रकार, डॉ. अंबेडकर का प्रासंगिक संदेश यह है कि बंधुत्व, शब्द के ठोस अर्थ में, राष्ट्र के अस्तित्व के लिए एक आवश्यक शर्त है (देबनाथ 2018, पृष्ठ संख्या–4)। बंधुत्व, अपने देशवासियों के प्रति निष्पक्ष व्यवहार और समानता के मानसिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करता है। सामाजिक संबंधों में बंधुत्व का अभाव राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने के सभी प्रयासों को कमजोर करता है। इसलिए, यदि बंधुत्व का अभाव है, तो हम एक बनते हुए राष्ट्र ही बने रहेंगे और कभी भी एक राष्ट्र का ठोस दर्जा प्राप्त नहीं कर पाएँगे। जाति व्यवस्था, राष्ट्रवाद की अवधारणा के लिए एक बड़ी बाधा बनी हुई है। जाति व्यवस्था, वास्तव में, राष्ट्र या राष्ट्रीयता की अवधारणा के विपरीत है। जाति लोगों को विभाजित करती है और अलगाव और पृथक्करण की भावना को जन्म देती है। सबसे बढ़कर, यह एक असामाजिक भावना पैदा करती है और निम्न जातियों (या अछूतों) और उच्च जातियों के बीच मतभेद और विरोध को बढ़ावा देती है। सामाजिक संबंधों में बंधुत्व का अभाव एकता की भावना को कमज़ोर करता है, जो एक स्वस्थ राष्ट्र के लिए आवश्यक है। इसलिए दलितों के लिए एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना करना उचित है जो भेदभाव, अलगाव और पृथक्करण से मुक्त हो। इसके लिए राज्य और नागरिक समाज के उच्च जातियों के सदस्यों, दोनों की ओर से ईमानदार और निरंतर प्रयास आवश्यक हैं।

डॉ. अंबेडकर ने स्वतंत्र भारत के राष्ट्र–निर्माण के लिए भारत की परिस्थिति के अनुरूप संघवाद को आवश्यक माना और इसलिए वे भारतीय संघवाद के संवैधानिक शिल्पकार और नैतिक दार्शनिक थे (लखेरा 2022, पृष्ठ संख्या–8)। उनका तर्क था कि भारतीय संघवाद का उदय संयुक्त राज्य अमेरिका और आस्ट्रेलिया की तरह नहीं हुआ,

जहाँ विभिन्न राज्य स्वेच्छा से बातचीत और संधि के माध्यम से एक संघ बनाते हैं। भारतीय संघवाद को ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने आकार दिया था। भारतीय संघों पर पहले से मौजूद संप्रभु राज्यों द्वारा बातचीत नहीं की गई थी; बल्कि, उन्हें संविधान द्वारा विभिन्न राज्यों को एक संवैधानिक नियम के तहत एकजुट रखने के लिए बनाया गया था। डॉ. अंबेडकर ने भौगोलिक आकार, जनसंख्या और प्रशासनिक स्थिति के आधार पर भारतीय संघवाद की तुलना अन्य संघीय देशों से की। प्रत्येक भारतीय राज्य अपनी विशिष्ट भाषाओं, संस्कृतियों और राजनीति को दर्शाता है, जो अमेरिका की अधिक समरूप सामाजिक संरचना की तुलना में भारत की उल्लेखनीय विविधता को उजागर करता है। यह विविधता दुनिया के किसी भी अन्य संघ से बेजोड़ है। डॉ. अंबेडकर चाहते थे कि "राज्यों का संघ" या "भारत का संयुक्त राज्य" के बजाय "राज्यों का संघ" वाक्यांश का प्रयोग किया जाए। डॉ. अंबेडकर ने जानबूझकर "राज्यों का संघ" शब्द चुना ताकि यह दर्शाया जा सके कि भारतीय संघवाद विशिष्ट और मज़बूत है और भारत के राज्यों को अलग होने का अधिकार नहीं है।

डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि भारत नैतिक और मानसिक रूप से भी, संयुक्त राज्य बनने से बहुत दूर है क्योंकि संयुक्त राज्य अमेरिका में सभी राज्यों को समान संघीय शक्ति प्राप्त है, जबकि भारत में हर राज्य का राजनीतिक महत्व अलग-अलग है (भट्टाचार्य 2023, पृष्ठ संख्या-107)। भारत में उत्तर का एकीकरण और दक्षिण का बाल्कनीकरण हो रहा है, जिससे एक असममित संघ का निर्माण हो रहा है। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, भारत का संघ एकात्मक और संघीय दोनों है। डॉ. अंबेडकर एक ऐसा संविधान चाहते थे जो राष्ट्रीय एकता सुनिश्चित करे, लेकिन साथ ही राज्यों को सामान्य परिस्थितियों में अपनी स्वायत्तता बनाए रखने की भी अनुमति दे। डॉ. अंबेडकर ने स्पष्ट किया कि युद्ध अथवा सशष्ट्र विद्रोह के दौरान भारतीय राष्ट्रपति भारतीय संसद के दोनों सदनों से अनुमोदन प्राप्त करके देश को एकात्मक बनाने के लिए अपनी विशेष शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। डॉ. अंबेडकर ने स्वीकार किया कि भारतीय संघवाद अमेरिकी सीनेट की तरह कठोर है, और यूनाइटेड किंगडम के हाउस ऑफ़ लार्ड्स की तरह पूरी तरह एकात्मक नहीं है। भारत का संघवाद लचीला है; यानी कि यह अर्ध-संघीय है। डॉ. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक "भाषाविज्ञान राज्यों पर विचार" में तर्क दिया कि संघ तभी प्रभावी ढंग से कार्य कर सकते हैं जब राज्यों के बीच उचित संतुलन हो (भट्टाचार्य 2023, पृष्ठ संख्या-32)। मान लीजिए कि कुछ राज्य जनसंख्या, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से प्रभुत्वशाली हो जाते हैं, तो इससे संघीय इकाइयों के बीच असंतुलन पैदा होगा, जो संघ की एकता और स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर सकता है। एक छोटा राज्य खुद को हाशिए पर महसूस करेगा, और इससे संघीय चरित्र के प्रति असंतोष और अविश्वास पैदा होगा। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, दुनिया के सफल संघों ने इन जोखिमों को पहचाना, इसलिए उन्होंने एक संवैधानिक तंत्र तैयार किया जो बड़े राज्यों के राजनीतिक प्रभुत्व को सीमित कर सके। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, केंद्र और राज्य के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए क्षेत्रीय संतुलन आवश्यक है। उनकी चिंता यह थी कि यदि हिंदी पट्टी राष्ट्रीय राजनीति में प्रभावी हो गई, तो दक्षिण के लोग हाशिए पर चले जाएँगे और खुद को

अलग-थलग महसूस करेंगे, और अंततः इससे फूट पैदा होगी, जिससे राष्ट्रीय अखंडता को नुकसान पहुँचेगा। किसी भी क्षेत्र का राजनीतिक प्रभुत्व संघीय सहयोग को कमज़ोर कर सकता है और अलगाववादी आंदोलन को जन्म दे सकता है। अन्य राज्यों को यह महसूस नहीं होना चाहिए कि उन पर किसी और का शासन है, बल्कि उन्हें संघीय ढाँचे में समान भागीदार होना चाहिए। आकार, जनसंख्या या संसाधनों की परवाह किए बिना, प्रत्येक राज्य का संवैधानिक दर्जा समान है और किसी भी क्षेत्र का प्रभुत्व नीतिगत पूर्वाग्रह और अविश्वास को जन्म देता है। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, संघीय सरकार शासन का मध्य मार्ग है। एकात्मक सरकार पूर्णतः केंद्रीकृत होती है, संघ राज्यों का एक ढीला-ढाला गठबंधन होता है, लेकिन संघीय सरकार इन दोनों चरम सीमाओं के बीच का मध्य मार्ग है ((भट्टाचार्य 2023, पृष्ठ संख्या-42)। राष्ट्रवाद एकात्मक और संघीय, दोनों प्रकार की सरकारों में विद्यमान हो सकता है। संघवाद राष्ट्रीय एकता को कमज़ोर नहीं करता। उनका मानना था कि संघवाद शक्ति की समानता के सिद्धांत पर आधारित होना चाहिए। उनके अनुसार, सच्ची एकता तभी स्थापित होती है जब राज्यों में परस्पर सम्मान हो; अगर छोटे राज्य खुद को अलग-थलग महसूस करते हैं, तो यह भारतीय लोकतंत्र के लिए खतरा होगा। वे सांस्कृतिक संतुलन और सहयोग पर आधारित राष्ट्र चाहते थे। उन्होंने एक समावेशी लोकतंत्र की कल्पना की थी, न कि संख्यात्मक रूप से प्रभुत्व वाले राज्य की।

आधुनिक राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्रवाद की अवधारणा- राजनीतिक राज्य एक अनिवार्य राजनीतिक संगठन है जिसमें एक केंद्रीकृत सरकार होती है। और एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र के भीतर बल के वैध उपयोग पर एकाधिकार रखती है। राज्य को शासन संरचना के एक मॉडल के रूप में भी समझा जा सकता है जहाँ इसके नागरिक और लाभार्थी अपनी स्वाभाविक राजनीतिक इच्छाओं, आकांक्षाओं और अभिव्यक्तियों को मजबूत करने में लगे रहते हैं। राजनीतिक राज्य की अवधारणा कमोबेश एक गणितीय या वैज्ञानिक सूत्र की तरह है जिसे पूरा होने के लिए कुछ शर्तों की आवश्यकता होती है, और इसलिए चार तत्व यानी जनसंख्या, क्षेत्र, सरकार और संप्रभुता का होना आवश्यक है ताकि उनके संयोजन को 'राज्य' कहा जा सके (गोपाल 1991, पृष्ठ संख्या-32)। यह भी समझा जाता है कि 'राज्य' एक जैविक अवधारणा है, हालाँकि इसका विचार और कल्पना स्वाभाविक हो सकती है, लेकिन इसका निर्माण निश्चित रूप से मनुष्य की 'शासन' करने की अंतर्निहित इच्छा में निहित है और उसी से उत्पन्न होता है। संक्षेप में, राज्य एक संप्रभु सरकार वाला भूभाग है। दूसरी ओर, राजनीति विज्ञान में, "राष्ट्र" से तात्पर्य लोगों के उस समूह से है जो साझा संस्कृति, मूल्यों, लोक रीति-रिवाजों, धर्म और भाषा के माध्यम से एक इकाई के रूप में बंधे होते हैं। ये तत्व किसी दिए गए साझा भूभाग पर रहने वाले लोगों के समूह में राष्ट्रवाद की भावना विकसित करने के लिए आवश्यक हैं)। राज्य अक्सर राष्ट्रों के समान होते हैं और उन्हें "राष्ट्र-राज्य" कहा जाता है, लेकिन हमेशा ऐसा नहीं होता।

राष्ट्रवाद मुख्यत: उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के राजनीतिक चिंतन की एक परिघटना है। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राष्ट्रवाद का वास्तविक उदय होना शुरू हुआ, जब विशिष्ट राष्ट्रवाद और देशभक्ति की निष्ठाओं के साथ यह विचार जुड़ गया कि राष्ट्र वैध राजनीतिक सत्ता का स्रोत हैं (गोपाल 1991, पृष्ठ संख्या–33)। यहाँ राष्ट्रवाद और लोकप्रिय संप्रभुता के सिद्धांत के बीच घनिष्ठ संबंध है, जिसने उस पुरानी धारणा का स्थान ले लिया कि राजनीतिक सत्ता राजा या सम्राट से नीचे की ओर प्रवाहित होती है। रूसो उन्नीसवीं सदी के राष्ट्रवाद के अधिक उग्र रूपों का पूर्वानुमान लगाते हैं। उन्नीसवीं सदी के आरंभ का योगदान यह रोमांटिक विश्वास था कि प्रत्येक राष्ट्र एक जैविक एकता का निर्माण करता है, जिसकी अपनी आत्मा और अपनी विशिष्ट नियति होती है। विशेष रूप से जिनके भाषा संबंधी अभिव्यंजक सिद्धांत ने उनके इस विचार को बल दिया कि प्रत्येक राष्ट्र एक अनूठी संस्कृति का वाहक होता है, जिसमें डूब जाना ही मानव आत्म–सिद्धि का एकमात्र मार्ग है। हर्डर का राष्ट्रवाद मुख्यत: राजनीतिक न होकर सांस्कृतिक था। वह प्रत्येक राष्ट्रीय संस्कृति को अपने पड़ोसियों के साथ शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व में फलते–फूलते देखना चाहते थे, और उन्हें प्रशिया राज्य के आक्रामक सैन्यवाद से कोई सहानुभूति नहीं थी। फिर भी, उन्होंने राष्ट्रीयता और लोक स्वशासन को जोड़ना जारी रखा; प्रत्येक राष्ट्र की स्वतंत्रता की माला के गुलाबों को उसके अपने हाथों से तोड़ा जाना चाहिए, और उसे अपनी आवश्यकताओं, खुशियों और प्रेम से खुशी से उगना चाहिए। इस संदेश को यूरोप के उन सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के बीच तत्काल प्रतिक्रिया मिली जो लंबे समय से स्थापित साम्राज्यों से राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और राजनीतिक आत्म–अभिकथन फिष्ट के बाद के विचार में मिल गए। फिष्ट ने तीन सिद्धांतों को मिलाया; प्रथम, यह विचार कि राष्ट्र जैविक संपूर्ण हैं, द्वितीय प्रत्येक की अपनी भाषा और संस्कृति है; प्रत्येक व्यक्ति को अपने राष्ट्र के प्रति सर्वोच्च निष्ठा रखनी चाहिए– वास्तव में स्वतंत्रता में राष्ट्र द्वारा प्रतिनिधित्व किए गए उच्च कारण के साथ खुद की पहचान करना शामिल है; और तृतीय प्रत्येक राष्ट्र का अपना विशिष्ट मिशन होता है (गोपाल 1991, पृष्ठ संख्या–24)। फिष्ट ने राष्ट्रवाद और लोकप्रिय स्वशासन के बीच की कड़ी को भी कमजोर किया; राष्ट्रीय नेताओं को मजबूत और एकजुट लोगों को बनाने के लिए शिक्षा के बलपूर्वक तरीकों का उपयोग करने में उचित ठहराया जा सकता है। यहां हम राष्ट्रवाद के एक सत्तावादी रूप का पूर्वाभास देखते हैं जो राष्ट्रीय एकता के नाम पर घरेलू स्तर पर स्वतंत्रता को खत्म करने के लिए तैयार है। इसी काल में राष्ट्रवाद के एक उदारवादी रूप का भी उदय हुआ, जिसके अनुसार राष्ट्रीय स्वतंत्रता और राजनीतिक स्वतंत्रता एक साथ चलते हैं। यह इतालवी राष्ट्रवाद के जनक मैत्सिनी का दृष्टिकोण था, और जे.एस. मिल ने भी इसे दोहराया, जिन्होंने अपनी पुस्तक "कंसीडेरशंस ऑन रेप्रेज़ेंटेटिव गवर्न्मेंट (1861)" में सरकार की शक्ति को नियंत्रित करने और स्वतंत्र संस्थाओं को व्यावहारिक बनाने में राष्ट्रीय सहानुभूति की भूमिका पर ज़ोर दिया। उदारवादी राष्ट्रवाद सभी राष्ट्रों को आत्मनिर्णय के समान रूप से अच्छे दावों वाला मानता है, 'राष्ट्रीय नियति' के विचारों का विरोध करता है और तर्क देता है कि

राष्ट्रीय संस्कृतियाँ तभी सर्वोत्तम रूप से फलती-फूलती हैं जब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अन्य स्वतंत्रताएँ सुरक्षित हों। राष्ट्रवाद के बाद के इतिहास को राष्ट्रवाद के सत्तावादी और उदारवादी रूपों के बीच संघर्ष के रूप में देखा जा सकता है। उत्तरार्द्ध को द्वितीय विश्व युद्ध के अंत में वुडरो विल्सन द्वारा प्रतिपादित राष्ट्रीय आत्मनिर्णय के सिद्धांत में काम करते देखा जा सकता है और राष्ट्र संघ में सन्निहित किया जा सकता है; पूर्व को अंतर-युद्ध के वर्षों के फासीवादी आंदोलनों में अंतिम अभिव्यक्ति मिली। इस प्रकार राष्ट्रवाद हमें दो बिल्कुल अलग चेहरों के साथ प्रस्तुत करता रहता है। एक ओर यह लोगों के अपने विरासत में मिली संस्कृतियों की रक्षा और विकास करने और उन लोगों के साथ राजनीतिक रूप से स्वतंत्र होने के अधिकार के लिए खड़ा है जिन्हें वे अपने हमवतन मानते हैं। दूसरी ओर यह राष्ट्रीय संस्कृति में जबरन स्वदेशीकरण और अन्य लोगों की कीमत पर विदेशों में राष्ट्रीय हितों को बढ़ावा देने के लिए खड़ा है।

राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्रवाद पर डॉ. अम्बेडकर के विचार- राष्ट्र की अवधारणा 18वीं सदी की परिघटना है। 'राज्य' और 'राष्ट्र' समानार्थी शब्द नहीं हैं। एक परिभाषा के अनुसार, राज्य एक राजनीतिक और भू-राजनीतिक इकाई है, जबकि राष्ट्र एक सांस्कृतिक और जातीय इकाई है। इस प्रकार, राष्ट्र का एक नस्लीय स्वरूप होता है। राष्ट्र एक समान संस्कृति, जातीयता, नस्ल, धर्म और भाषा या इनमें से किसी एक को साझा करने वाले साथी निवासियों के प्रति एकरूपता की भावना का प्रतिनिधित्व करता है। नए भारत के राष्ट्र निर्माताओं में से एक, डॉ. अंबेडकर का राष्ट्रवाद न केवल औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध संघर्ष के रूप में है, बल्कि भारतीय परिवेश में सामाजिक संरचना में 'दलितों' के शोषण और 'अस्पृश्यता' की नापाक अवधारणा के विरुद्ध भी है (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-29)। डॉ. अंबेडकर के राष्ट्रवाद का एक महत्वपूर्ण तत्व भारतीय नागरिकों के बीच एकीकृत साझा हित है, जो पुरातन सामाजिक संरचना में दलित-शोषित वर्ग की 'सामाजिक पहचान, आर्थिक पुनर्वितरण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व' के बिना संभव नहीं होता। पश्चिमी आधुनिक राष्ट्रवाद के उत्कृष्टता आधारित राष्ट्रवाद के विरुद्ध, डॉ. अंबेडकर ने विचारों के इतिहास पर आधारित प्रबुद्ध भारत के जागरण और सामूहिक समावेश को महत्व दिया है। इस प्रकार, डॉ. अंबेडकर के लिए राष्ट्रवाद का अर्थ है- नागरिक जीवन का अधिकार और एकता के सूत्र में बंधे कर्तव्य बोध। डॉ. अंबेडकर को अक्सर दलितों या दलितों के हितों का एक अडिग समर्थक माना जाता है। लेकिन दलितों के लिए उनकी वकालत एक ऐसे भारतीय राष्ट्र के निर्माण की उनकी दृष्टि के व्यापक दायरे में थी, जिसका निर्माण आवश्यक था, क्योंकि उनका मानना था कि जब तक राष्ट्र के भीतर सभी के साथ समान व्यवहार नहीं किया जाता, तब तक राष्ट्र का अस्तित्व नहीं हो सकता-एक ऐसा लक्ष्य जो केवल जाति व्यवस्था के उन्मूलन से ही प्राप्त किया जा सकता है (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-54)। वे वंचित वर्गों की सुरक्षा की आवश्यकता से भी अनभिज्ञ नहीं थे, इसीलिए उन्होंने विधायी निकायों, सेवाओं आदि में उनके पर्याप्त प्रतिनिधित्व के पक्ष में तर्क दिया। डॉ. अंबेडकर के विचार-जाति उन्मूलन, दलित वर्ग के अधिकारों की सुरक्षा, राजनीतिक मामलों में उत्पीड़ितों का प्रतिनिधित्व, समतावादी आर्थिक व्यवस्था, महिलाओं के अधिकार और लोकतंत्र पर उनके विचार-सभी को

उनके समावेशी राष्ट्र के विचारों से जोड़ा जा सकता है। "मेरा सामाजिक दर्शन" शीर्षक वाले भाषण में, डॉ. अंबेडकर ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित एक न्यायसंगत और समतापूर्ण समाज के लिए अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। ऑल इंडिया रेडियो पर डॉ. अंबेडकर का भाषण भारतीय इतिहास की एक ऐतिहासिक घटना थी। यह पहली बार था जब किसी प्रमुख सार्वजनिक हस्ती ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित एक न्यायसंगत और समतापूर्ण समाज के लिए अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया था। डॉ. अंबेडकर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से भारत की स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे, लेकिन वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख राष्ट्रवादी विमर्श के भी आलोचक थे। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि कांग्रेस का राष्ट्रवाद राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्ति तक ही सीमित था और यह भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं करता था (देबनाथ 2021, पृष्ठ संख्या-9)। डॉ. अंबेडकर ने तर्क दिया कि सच्चा राष्ट्रवाद होना चाहिए आधारित स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित। उनका मानना था कि सभी भारतीयों को, चाहे उनकी जाति, धर्म या सामाजिक स्थिति कुछ भी हो, समान अधिकार और अवसर मिलने चाहिए। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि राष्ट्र-राज्य को सामाजिक न्याय और गरीबों व हाशिए पर पड़े लोगों के उत्थान के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए। उनका तर्क था कि कोई राष्ट्र तब तक पूरी तरह स्वतंत्र नहीं हो सकता जब तक उसके नागरिक सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न से मुक्त न हों। वे जाति व्यवस्था के विशेष आलोचक थे, जिसे वे आंतरिक उपनिवेशवाद का एक रूप मानते थे। डॉ. अंबेडकर का राष्ट्रवाद का दृष्टिकोण समावेशी और बहुलवादी था। उन्होंने इस विचार को खारिज कर दिया कि एक अखंड भारतीय पहचान हो सकती है। इसके बजाय, उनका मानना था कि भारत एक विविधतापूर्ण देश है जिसमें संस्कृतियों और परंपराओं का समृद्ध संगम है। उनका तर्क था कि राष्ट्र-राज्य किसी विशिष्ट धार्मिक या सांस्कृतिक पहचान के बजाय लोकतांत्रिक मूल्यों और सामाजिक न्याय के प्रति साझा प्रतिबद्धता पर आधारित होना चाहिए। राष्ट्रवाद पर डॉ. अंबेडकर के विचार एक दलित के रूप में उनके अपने अनुभवों से आकार लेते थे। उन्होंने जाति व्यवस्था के तहत दलितों द्वारा झेले जाने वाले भेदभाव और उत्पीड़न का प्रत्यक्ष अनुभव किया था। इसी ने उन्हें सामाजिक न्याय और समानता के प्रति गहरी प्रतिबद्धता विकसित करने में मदद की। उनका मानना था कि राष्ट्रवाद भलाई के लिए एक शक्तिशाली शक्ति हो सकता है, लेकिन केवल तभी जब इसका उपयोग सभी भारतीयों के अधिकारों के लिए किया जाए, न कि केवल कुछ विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के लिए (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-60)। डॉ. अंबेडकर का यह भी मानना था कि राष्ट्रवाद नागरिक पहचान की साझा भावना पर आधारित होना चाहिए। उन्होंने इस विचार को खारिज किया कि राष्ट्रवाद केवल रक्त और मिट्टी का मामला है। इसके बजाय, उन्होंने तर्क दिया कि राष्ट्रवाद एक सामाजिक और राजनीतिक संरचना है जिसे सक्रिय रूप से विकसित किया जाना चाहिए। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि राष्ट्रवाद स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए। उनका तर्क था कि ये सिद्धांत एक न्यायसंगत और समतामूलक समाज के निर्माण के

लिए आवश्यक हैं। डॉ. अंबेडकर ने इस विचार को खारिज कर दिया कि राष्ट्रवाद सामाजिक न्याय के साथ असंगत है। उन्होंने तर्क दिया कि राष्ट्र–राज्य की ज़िम्मेदारी है कि वह यह सुनिश्चित करे कि सभी नागरिकों को समान अधिकार और अवसर प्राप्त हों। राष्ट्रवाद समानता और स्वतंत्रता के सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए। समानता और स्वतंत्रता के बिना, वास्तविक राष्ट्रवाद संभव नहीं है। डॉ. अंबेडकर का राष्ट्रवाद का दृष्टिकोण एक सामाजिक समानता और लोकतांत्रिक भारत के विचार पर आधारित था जहाँ सभी नागरिकों को समान अधिकार और अवसर प्राप्त होंगे (कुंद्रा 2019, पृष्ठ संख्या–132)। उनका मानना था कि इस प्रकार का राष्ट्रवाद एक सशक्त और समृद्ध भारत के निर्माण का सर्वोत्तम आधार होगा। उनका मानना था कि राष्ट्रवाद में सभी हाशिए पर पड़े समुदायों को शामिल किया जाना चाहिए। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में राष्ट्रवाद की प्रमुख धारा की आलोचना करते हुए कहा कि यह पश्चिमी राष्ट्रवाद पर केंद्रित है और दलितों और पिछड़ों की दुर्दशा की अनदेखी करता है। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि राष्ट्रवाद समावेशी और बहुलवादी होना चाहिए। उन्होंने एक अखंड भारतीय पहचान के विचार को अस्वीकार किया। इसके बजाय, उनका तर्क था कि भारत एक विविधतापूर्ण देश है जिसमें संस्कृतियों और परंपराओं का समृद्ध संगम है। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि राष्ट्रवाद का इस्तेमाल सिर्फ़ कुछ विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के लिए ही नहीं, बल्कि सभी भारतीयों के अधिकारों के लिए लड़ने के लिए किया जा सकता है। उनका तर्क था कि राष्ट्रवाद का इस्तेमाल गरीबों और हाशिए पर पड़े लोगों के उत्थान और एक ज्यादा न्यायपूर्ण और समतामूलक समाज के निर्माण के लिए किया जाना चाहिए। डॉ. अंबेडकर के लिए, राष्ट्रीयता में एक गहरा भावनात्मक बंधन भी शामिल था, "किसी अन्य समूह से संबंधित न होने की लालसा" (जैकब 2010, पृष्ठ संख्या–26)। ऐसी भावना के लिए क्या परिस्थितियाँ होनी चाहिए? एक साझा नस्ल, संस्कृति और भाषा उस देशभक्ति का आधार बन सकती है जो विशेष रूप से भारतीय हो। राष्ट्रीयता के अस्तित्व के लिए एक समान नस्ल, भाषा या संस्कृति से बढ़कर कुछ होना आवश्यक है। राष्ट्रवाद के लिए एक आध्यात्मिक सार और एक आत्मीयता का बंधन होना आवश्यक है। सबसे बढ़कर, इसके लिए "एक राष्ट्र के रूप में जीने की इच्छा" आवश्यक है। इसलिए उन्होंने कहा कि "हम सबसे पहले और अंत में भी भारतीय हैं"। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, "बौद्ध साधन" शासक और शासित के बीच संबंधों के नियमों के संहिताकरण से संबंधित था। भारतीय संविधान की ड्राफ़्टिंग कमिटी की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने इस भावना से प्रेरित होकर संविधान की रूपरेखा को बनाया। उन्होंने तर्क दिया है कि ऐसे नियमों और शर्तों की स्थापना समाज के लिए पवित्र है। संहिताबद्ध नियमों और शर्तों का यह समूह, जो संविधान है, न केवल सत्तारूढ़ शासन की वैधता और दीर्घायु स्थापित करता है, बल्कि उन शर्तों को भी निर्धारित करता है जो राष्ट्र–निर्माण की गतिशीलता को अनुमति देती हैं। डॉ. अंबेडकर की समझ में, राजनीतिक आचरण में विचारों की बहुलता को स्वीकार किया जाना चाहिए। इसलिए, विचारों की बहुलता का अर्थ है कि मूलभूत मतभेदों के बावजूद मिलकर काम करना, बातचीत करना और ऐसे निर्णय पर पहुँचना जिसके लिए सभी पक्षों से समझौता करना आवश्यक हो, और उन संस्थाओं और परंपराओं का पोषण करना और

उनमें भाग लेना जो नई संभावनाओं के निर्माण के लिए एक सक्षम ढाँचा स्थापित करें (जैकब 2010, पृष्ठ संख्या–25)। सामान्य अर्थ में, राष्ट्रवाद का अर्थ है एक विचारधारा जो पूरी तरह से अपनी मातृभूमि या अपनी पसंद के किसी अन्य देश के प्रति समर्पण पर आधारित होती है। यह किसी देश और राष्ट्रीयता को महत्वपूर्ण नैतिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक मूल्य प्रदान करने वाले दावों, निर्देशों और कार्य–दृष्टिकोणों का एक जटिल मिश्रण है। इस प्रकार, इन मूल्यों से विशिष्ट कर्तव्य और अधिकार प्राप्त होते हैं। भारतीय राष्ट्रवाद के प्रति डॉ. अंबेडकर का दृष्टिकोण विशिष्ट उद्देश्यों और लक्ष्यों के साथ शुरू हुआ, जो समाज के हाशिए पर पड़े वर्ग की उन्नति के समान थे। उन्होंने समाज के निचले तबके के समान अधिकारों के लिए प्रयास किया क्योंकि वे समानता और बुनियादी नागरिक अधिकारों से बेहद वंचित थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि इन लोगों के विकास के बिना एक राष्ट्र वास्तविक अर्थों में सशक्त नहीं हो सकता। डॉ. अंबेडकर का राष्ट्रवाद का अनूठा विचार आंतरिक उत्पीड़न और बाह्य प्रभुत्व, दोनों के विरुद्ध एक प्रतिरोध से विकसित हुआ था। डॉ. अंबेडकर का राष्ट्रवाद सामाजिक भाईचारे की भावना, एकता की भावना और देश के उत्पीड़ित वर्ग की स्थिति में सुधार के लिए दृढ़ संकल्प पैदा करने का प्रयास करता है (कटारिया 2012, पृष्ठ संख्या–608)। उन्होंने एक बार कहा था कि अपने देश की राजनीतिक स्वतंत्रता पर अपना सारा ध्यान केंद्रित करना और सामाजिक एवं आर्थिक स्वतंत्रता की सबसे गंभीर समस्या को भूल जाना पूरी तरह से गलत है। यह सोचना आत्मघाती है कि राजनीतिक स्वतंत्रता का अर्थ अनिवार्य रूप से वास्तविक सर्वांगीण स्वतंत्रता है। वे समाज के विभिन्न वर्गों में आंतरिक एकता चाहते थे और मानते थे कि सामाजिक समावेशन की प्रक्रिया राष्ट्र के विकास का अभिन्न अंग है। वे मूलतः जातिगत भावना, यानी गहराई से जड़ जमाई सांप्रदायिकता, को नकारना चाहते थे। इसलिए, रंग, जाति और पंथ की परवाह किए बिना, राष्ट्रवाद तभी पूर्णतः सुव्यवस्थित होता है जब पूरे राष्ट्र में सामाजिक सद्भाव और भाईचारा सर्वत्र व्याप्त हो। वे धार्मिक सहिष्णुता के प्रबल समर्थक थे और उनकी आकांक्षा थी कि, धर्म वह शक्ति हो जो मानव समाज की एकजुटता को और गहरा करे, जो लोगों को सामाजिक और भावनात्मक एकता के लिए एकजुट कर सके, लोगों को सैन्य एकता और राजनीतिक स्थिरता की ओर ले जा सके (रोड्रिग्स 2017, पृष्ठ संख्या–104)। उनके अनुसार, भारत में राष्ट्रवाद ने एक नवीन सिद्धांत प्रतिपादित किया है, जिसे उन्होंने बहुमत की इच्छा के अनुसार अल्पसंख्यकों पर शासन करने का बहुसंख्यकों का दैवीय अधिकार कहा है। वे राष्ट्रवाद और जाति के नाम पर सभी प्रकार के उत्पीड़न और पाखंड की निंदा करते हैं। आंतरिक उत्पीड़न और गुलामी से मुक्ति उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी बाहरी प्रभुत्व यानी ब्रिटिश शासन से मुक्ति। उन्होंने एक बार कहा था कि दार्शनिक रूप से, एक राष्ट्र को एक इकाई मानना संभव हो सकता है। लेकिन समाजशास्त्रीय रूप से, इसे कई वर्गों से मिलकर नहीं माना जा सकता और राष्ट्र की स्वतंत्रता, यदि उसे वास्तविकता बनना है, तो उसमें शामिल विभिन्न वर्गों की स्वतंत्रता को सुनिश्चित करना होगा, खासकर उन लोगों की जिन्हें दास वर्ग माना जाता है। अगर किसी देश की स्वतंत्रता को उसके लोगों की स्वतंत्रता से अलग नहीं किया जा सकता, तो सच्ची स्वतंत्रता एक भ्रामक अवधारणा होगी। राष्ट्रवाद के प्रति उनकी संपूर्ण

दृष्टि राष्ट्र और जनता, दोनों के प्रति उनके आत्म-सम्मान की भावना से उपजी थी। वंचित वर्गों और गरीबों के प्रति उनके मन में गहरी संवेदना थी, जिसने उन्हें उनके बुनियादी अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया। डॉ. अंबेडकर के राष्ट्रवाद का दृष्टिकोण अपने समय से आगे था। उन्होंने माना कि जाति की समस्या एक सच्चे अखंड और लोकतांत्रिक भारत के निर्माण में एक बड़ी बाधा है। वे यह भी समझते थे कि राष्ट्रवाद संकीर्ण धार्मिक या क्षेत्रीय पहचान पर आधारित नहीं हो सकता। राष्ट्रवाद पर डॉ. अंबेडकर के विचार आज भी प्रासंगिक हैं। वे एक अधिक न्यायसंगत और समतामूलक समाज के निर्माण के बारे में सोचने के लिए एक मूल्यवान ढाँचा प्रदान करते हैं। संविधान सभा की बहसों, जिनकी अध्यक्षता डॉ. अंबेडकर ने की थी, ने भारतीय संविधान में व्यक्त समझौते को मूर्त रूप दिया। यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व वाले आंदोलन की व्यापक सहमति का प्रतिनिधित्व करता था। मतभेदों और असहमतियों के बावजूद, यह दृढ़ विश्वास और प्रतिबद्धता से रहित कोई व्यावहारिक राजनीतिक समझौता नहीं था, बल्कि आपसी विश्वास पर आधारित एक समझौता था जिसमें विभिन्न अंतर्निहित दृष्टिकोणों और परिप्रेक्ष्यों को शामिल किया जाना था, जिन्हें संवेदनशीलता और समझदारी से सुलझाया जाना था (देसाई 2020, पृष्ठ संख्या-9)। राष्ट्रवादी जिस स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे, वह अनुसूचित जातियों और भारतीय समाज के अन्य उत्पीड़ित वर्गों के लिए बहुत कम थी। ब्रिटिश शासन से मुक्ति उनकी दासता और दुखों का अंत नहीं करती। इसलिए, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि जहाँ भारतीय समाज के उन्नत वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले राष्ट्रवादी ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। वहीं डॉ. अंबेडकर जैसे लोग, जो दलितों, आदिवासियों और अन्य उत्पीड़ित, पिछड़े लोगों का प्रतिनिधित्व करते थे, उन लोगों के सामाजिक समानता को प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। जिनकी अविभाज्य मानवता को इतिहास की सबसे दमनकारी और अपमानजनक सामाजिक पृथक्करण प्रणाली, जिसे जाति व्यवस्था कहा जाता है, ने छीन लिया था। डॉ. अंबेडकर और दलितों को एक स्वायत्त राजनीतिक पहचान के रूप में मान्यता मिलने की गारंटी होती, तो वे राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल हो जाते। कांग्रेस और अन्य राष्ट्रवादियों द्वारा हाशिए पर पड़े वर्गों के बीच सत्ता के पुनर्वितरण के अस्पष्ट वादों ने डॉ. अंबेडकर की हिचकिचाहट को और पुष्ट किया। डॉ. अंबेडकर राष्ट्रवाद के उस आख्यान को लेकर ज्यादा संशयी थे जो आज तक स्वतंत्रता सेनानियों, खासकर अतिवादी किस्म के, की स्वतंत्रता, त्याग, समर्पण और गौरव की परंपरा का ज़िक्र करता रहा है (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या-48)। लेकिन साथ ही, राष्ट्रवाद का यह आख्यान दलितों और अन्य मेहनतकश जनता के बीच सत्ता और प्रतिष्ठा के असमान वितरण के ठोस और इसलिए विवादास्पद प्रश्न के बारे में बेहद अस्पष्ट और अमूर्त है। राष्ट्रवादियों ने हमेशा समाज के वंचित वर्गों के बीच सत्ता के वितरण की तीखी आलोचना की है और इसलिए उन्हें दलितों के बीच सत्ता के अभाव पर अफसोस जताने का मौका शायद ही कभी मिला हो। इसके विपरीत, उन्होंने इस तरह के वितरण का विरोध बेशक किसी ठोस तार्किक आधार पर नहीं, बल्कि देशभक्ति के आधार पर किया है, जो स्वतंत्रता संग्राम के दौरान कुछ चुनिंदा वर्गों के लिए ही सुविधाजनक था। भाषाई आधार पर राज्यों

के निर्माण के लिए डॉ. अंबेडकर का समर्थन उनके इस विश्वास से उपजा था कि सामाजिक एकरूपता लोकतंत्र को बेहतर ढंग से काम करने में मदद करेगी (रोड्रिग्स 2017, पृष्ठ संख्या-104)। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, एक समरूप समाज यह सुनिश्चित करेगा कि कोई भी समूह सत्ता का दुरुपयोग करने का प्रयास न करे। डॉ. अंबेडकर का समाधान "एक राज्य, एक भाषा" था। प्रत्येक राज्य एक भाषाई इकाई होना चाहिए, लेकिन आगे राष्ट्रवाद को बढ़ावा देने के खतरे से बचने के लिए, क्षेत्रीय भाषा राज्य की आधिकारिक भाषा नहीं हो सकती थी, जो हिंदी होनी चाहिए थी। इस प्रकार प्रशासनिक इकाई भाषाई राज्य होनी चाहिए, लेकिन प्रशासनिक भाषा पूरे देश में साझा होनी चाहिए (भारद्वाज 2015, पृष्ठ संख्या-55)। डॉ. अंबेडकर न तो भाषाई समूहों के आत्मनिर्णय के पक्ष में थे, न ही एक एक ही भाषा केंद्रित, एक राज्य के निर्माण के पक्ष में। यानी कि डॉ. अंबेडकर चाहते थे कि भाषा को ध्यान में रखकर दक्षिण भारत के राज्यों का गठन हो लेकिन केवल एक ही भाषा को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए बल्कि एक हीं राज्य में सभी तरह के भाषा को महत्व दिया जाना चाहिए। उनके अनुसार साझा भाषा ही ऐसे राज्यों को व्यवहार्य बनाएगी। राष्ट्रीय एकीकरण किसी देश के नागरिकों के बीच एक समान पहचान की सामान्य चेतना है। इसका मूलत: अर्थ है कि यद्यपि हम विभिन्न क्षेत्रों, जातियों, विभिन्न भाषाएँ बोलने और विभिन्न धर्मों को मानने वाले हैं, फिर भी हम इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि हम सब एक हैं। डॉ. अंबेडकर एक सुसंगठित समाज में दृढ़ विश्वास रखते थे, जिसकी उन्होंने परिकल्पना की थी, जो मौजूदा पारंपरिक व्यवस्था की बुराइयों को दूर करेगा और समाज के पिछड़े वर्ग को मुख्यधारा के समाज में सामाजिक एकीकरण की ओर ले जाएगा (बिधुत 2016, पृष्ठ संख्या-6)। राष्ट्रीय एकीकरण पर उनके विचार हमारे संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से व्यक्त किए गए हैं। डॉ. अंबेडकर ने राष्ट्र निर्माण में योगदान दिया, क्योंकि वे जातिगत भेदभाव, जैसे अस्पृश्यता, के उन्मूलन के पक्षधर थे, जो भारत को एक एकीकृत और आधुनिक राष्ट्र के रूप में स्थापित होने से रोक रहा था। डॉ. अंबेडकर भारत को एक राष्ट्र बनाने के बारे में चेतावनी देते हैं। संविधान प्रस्तुत करते समय उन्होंने 25 नवंबर 1949 के अपने भाषण में 'राष्ट्र' की अपनी अवधारणा के बारे में बताया था। उन्होंने कहा, मेरा मानना है कि यह मानकर कि हम एक राष्ट्र हैं, हम एक बहुत बड़े भ्रम को पाल रहे हैं। उन्होंने कहा कि भारत आधुनिक राष्ट्र-निर्माण की ओर अग्रसर हो रहा है। उनका तर्क था कि हज़ारों जातियों में बँटे लोग एक राष्ट्र कैसे हो सकते हैं? जितनी जल्दी हम यह समझ लें कि सामाजिक और मनोवैज्ञानिक अर्थों में हम अभी तक एक राष्ट्र नहीं हैं, उतना ही हमारे लिए बेहतर है। क्योंकि तभी हम एक राष्ट्र बनने की आवश्यकता को समझ पाएँगे और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के तरीकों और साधनों पर गंभीरता से विचार कर पाएँगे। जातियाँ राष्ट्र-विरोधी हैं। सबसे पहले तो इसलिए क्योंकि वे सामाजिक जीवन में अलगाव लाती हैं। वे इसलिए भी राष्ट्र-विरोधी हैं क्योंकि वे एक जाति से दूसरी जाति के बीच ईर्ष्या और द्वेष पैदा करती हैं। इस प्रकार, संविधान प्रस्तुत करते समय भी डॉ. अंबेडकर के मन में भारत को एक राष्ट्र बनाने के लिए 'जाति के विनाश' का महत्व था (आर- 2020, पृष्ठ संख्या-40)। महात्मा जोतिराव फुले ने भी कहा था कि जाति व्यवस्था ने अंतर्जातीय भोजन और

अंतर्जातीय विवाह को असंभव बना दिया हैं। इससे उनके बीच अलग–अलग व्यवहार पैटर्न और अलग–अलग सांस्कृतिक लक्षण पैदा हो गए हैं। ऐसे विभाजित लोग एक राष्ट्र कैसे बना सकते हैं? इससे पता चलता है कि फुले और डॉ. अंबेडकर, दोनों ही राष्ट्र और जाति के उन्मूलन को कितना महत्व दे रहे थे। डॉ. अंबेडकर हमें शासक वर्ग के सांस्कृतिक नियंत्रण की भी याद दिलाते हैं, अपने ग्रंथ 'कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के साथ क्या किया' में वे कहते हैं, "भारत में शासक वर्ग हीं सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक" नीतियों को तय करते हैं (कुमार 2023, पृष्ठ संख्या–65)। इसके लिए वे जो परीक्षण देते हैं वे हैं, पहला है लोगों की भावनाएँ और दूसरा है प्रशासन का नियंत्रण। इसका मतलब है कि जाति व्यवस्था के रक्षक और निर्माता शासक वर्ग हैं। यह स्थिति आज भी एक तथ्य बनी हुई है। डॉ. अंबेडकर ने संविधान प्रस्तुत करते समय स्पष्ट किया था कि राष्ट्र निर्माण की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहेगी। दूसरी तरफ़ डॉ. अंबेडकर के समतावादी समाज के विरोधी राज्य और राष्ट्र में भेद करते हैं। भारतीय संदर्भ में, पाश्चात्य भावना से प्रेरित राष्ट्रवादी कहते हैं कि राष्ट्र, राज्य से ऊपर है, अर्थात सरकार राष्ट्र से गौण है। किसी भी राष्ट्र के लिए एक निश्चित मात्रा में सामाजिक सामंजस्य आवश्यक है। किसी भी राष्ट्र में, और विशेष रूप से हमारे जैसे विविधता से भरपूर विशाल राष्ट्र में, जहाँ अधिकांश लोग गरीबी और अभाव का जीवन जीते हैं, यह सामाजिक सामंजस्य और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। हमारे लोकतंत्र के लिए सबसे महत्वपूर्ण एकरूपता नहीं, बल्कि समानता पर एक मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में एकजुट आग्रह के ढांचे के भीतर विविधता को स्वीकार करना है, जो बहिष्कार का मार्ग प्रशस्त करता है। यह मददगार नहीं है क्योंकि यह स्वयंसिद्ध प्रतीत होता है कि सामाजिक सामंजस्य राष्ट्र–राज्य के लिए प्राथमिक है। एक बहु–जातीय, बहु–सांस्कृतिक राष्ट्र–राज्य का मूल सार राष्ट्रीय एकता है। इसलिए, राज्य को समाज के कमज़ोर वर्गों को आवश्यक सहायता और समर्थन प्रदान करते हुए, एकजुट और करुणामय समाजों के निर्माण पर विचार करना चाहिए। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, सामाजिक सामंजस्य केवल बड़े संघर्षों की अनुपस्थिति के बारे में नहीं है – ऐसा कुछ जो मैं मानता हूँ, हर कोई चाहेगा– बल्कि किसी भी समाज के भीतर विविधता की मान्यता और संरक्षण द्वारा सकारात्मक रूप से निर्मित किया जा सकता है (सिंह 2020, पृष्ठ संख्या–7)। डॉ. अंबेडकर का कहना था कि अक्सर नागरिक समाज अंतर्राष्ट्रीयता की बात करते हैं, लेकिन एक खुले समाज और साथ मिलकर रहने की हमारी क्षमता की पूर्वशर्तें भी हैं। यह स्वीकार करना आवश्यक है कि हमारे लोगों के एक बड़े हिस्से में विभाजनकारी हित आकार ले सकते हैं। औपनिवेशिक राज्यों में, कई हिस्सों में, उद्देश्यपूर्ण या अन्यथा व्यवहार करने वाले अंतर्राष्ट्रीय समाजों ने राष्ट्र–निर्माण की इस प्रक्रिया में नागरिक समाज संगठनों की तुलना में अधिक योगदान दिया। औपनिवेशिक समाज इतने लंबे समय तक एक–दूसरे के प्रति दिखाई गई एकता और प्रतिबद्धता पर हावी रहा, इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह तथ्य भी है कि एकजुट होकर समानता की मांग को अक्सर अलगाववाद माना जाता था और इस प्रकार उसे दबा दिया जाता था। एक एकजुट नागरिकता के निर्माण के स्पष्ट रूप से बहुत अलग प्रतिकूल परिणाम होते हैं।

निष्कर्ष- राष्ट्रों पर चर्चा करते हुए, डॉ. अंबेडकर ने ज़ोर देकर कहा कि इस तथ्य का बोध कि भारत एक राष्ट्र नहीं है, राष्ट्र-निर्माण की दिशा में पहला कदम कहा जा सकता है। उनके अनुसार, "जितनी जल्दी हम यह समझेंगे कि हम अभी एक राष्ट्र नहीं हैं" उतनी ही जल्दी हमें एक राष्ट्र बनने की आवश्यकता का एहसास होगा और हम इस लक्ष्य को प्राप्त करने के तरीकों और साधनों पर गंभीरता से विचार करेंगे। डॉ. अंबेडकर का तर्क है कि राष्ट्रीयता "एक प्रकार की चेतना, उस नातेदारी के बंधन के अस्तित्व का बोध" है और राष्ट्रवाद "उन लोगों के लिए एक अलग राष्ट्रीय अस्तित्व की इच्छा है जो इस नातेदारी के बंधन से बंधे हैं"। डॉ. अंबेडकर कभी भी राष्ट्रवाद के विचार के विरुद्ध नहीं थे, बल्कि कांग्रेस के राष्ट्रवाद के उस संस्करण के विरुद्ध थे, जिसमें भारत को ब्रिटिश उपनिवेशवाद से मुक्ति तो मिलनी थी, लेकिन जातिगत पदानुक्रम से मुक्ति नहीं, जिसके बंधन में लाखों अनुसूचित जातियाँ सैकड़ों वर्षों से जकड़ी हुई थीं। डॉ. अंबेडकर ने इस प्रश्न को सामाजिक स्तर से नीचे से उठाया और जाति के इस सामाजिक प्रश्न को लोकतंत्र और राष्ट्रवाद के राजनीतिक प्रश्न से जोड़कर इसे राजनीतिक ऊँचाई तक पहुँचाया। डॉ. अंबेडकर के अनुसार, सामाजिक एकता के बिना राजनीतिक एकता हासिल करना मुश्किल है। महज राजनीतिक एकता से भारत एक राज्य हो सकता है। लेकिन राज्य होना राष्ट्र होना नहीं है और जो राज्य राष्ट्र नहीं है, उसके अस्तित्व के संघर्ष में बचने की संभावना कम होती है। डॉ. अंबेडकर ने तर्क दिया कि जाति, भाषा और देश राष्ट्र निर्माण के लिए पर्याप्त नहीं हैं। रेनन को उद्धृत करते हुए, डॉ. अंबेडकर ने तर्क दिया कि "एक राष्ट्र एक जीवित आत्मा है, एक आध्यात्मिक सिद्धांत है"। दो चीजें, जो वास्तव में एक ही हैं, आत्मा, इस आध्यात्मिक सिद्धांत का निर्माण करती हैं। एक अतीत में है, दूसरी वर्तमान में। एक है स्मृतियों की समृद्ध विरासत का साझा स्वामित्व; दूसरा है वास्तविक सहमति, साथ रहने की इच्छा, उस अविभाजित विरासत को गरिमापूर्ण ढंग से संरक्षित करने की इच्छा जो विरासत में मिली है। देशभक्ति और राष्ट्रवाद के उनके विचारों में राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व और नैतिक मूल्य निहित थे। उन्होंने न केवल देश के प्रत्येक उत्पीड़ित व्यक्ति की मुक्ति के लिए, बल्कि स्वतंत्र राष्ट्र में भी सभी पराधीन लोगों की स्वतंत्रता के लिए प्रयास किया। उनका मुख्य विचार यह था कि अस्पृश्यता, जाति व्यवस्था, रूढ़िवादिता, जाति, पंथ, नस्ल और लिंग के आधार पर भेदभाव के व्यापक उन्मूलन के बिना, राजनीतिक व्यवस्था ऐसे लोगों को प्राथमिकता देगी जो इस प्रकार की गतिविधियों में लिप्त हैं। उस व्यापक सामाजिक आधारशिला को स्थापित करने में योगदान दिया जिस पर आधुनिक भारत खड़ा है। उन्होंने अलगाववादी और भाषाई विचारधाराओं के विरुद्ध संघर्ष को भी प्रोत्साहित किया। उनका मत था कि विभिन्न भाषाओं को राष्ट्रवाद की भावना में बाधा नहीं बनना चाहिए। उन्होंने स्विट्जरलैंड, कनाडा और दक्षिण अफ्रीका का उदाहरण दिया जहाँ अलग-अलग भाषाएँ हैं।

संदर्भ सूची-

1. कुमार, प्रो. विवेक (2023), डिकोडिंग अंबेडकर; आइडियाज ऑफ नेशन एंड नेशन बिल्डिंग, नई दिल्ली, मनोहर पब्लिकेशनस
2. बिधुत, चक्रवर्ती(2025), भारत में राष्ट्रवाद के अनेक विचार, प्राथमिकताएं और चुनौतियां, न्यूयार्क, रूतलेज पब्लिकेशन
3. राउत, संतोष आई (2020), "भारत को मुक्ति दिलाना, राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और डॉ. अंबेडकर का संदर्भ", जर्नल ऑफ़ सोशल इंक्लूज़न स्टडीज़, खंड-5, अंक-2, पृष्ठ संख्या-1-12
4. सिंह, मनोज, लक्ष्मी डॉ एन. और राव, डॉ. के.एस. (2023) अंबेडकर का राष्ट्रवाद का दृष्टिकोण, एकता, न्याय और लोकतंत्र का मार्ग, नई दिल्ली, श्री साईं प्रिंटोग्राफस।
5. रमादु, श्रीपति (2020), "अंबेडकर के राष्ट्रावाद की व्याख्या", आईओएसआर जर्नल ऑफ़ इकोनोमिक्स और फ़ाइनैन्स, खंड-11, अंक-3, पृष्ठ संख्या- 58-61
6. डॉ. अम्बेडकर फ़ाउंडेशन (2013), डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर, लेखन और भाषण, URL: https://www.mea.gov.in/Images/attach/amb/Volume_08.pdf
7. तेजानी, शबनम (2013), "लोकतंत्र के लिए आवश्यक शर्तें, बी.आर. अंबेडकर राष्ट्रवाद", अल्पसंख्यकों और पाकिस्तान पर विचार, इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीक्ली, खंड-48, अंक-50, पृष्ठ संख्या- 111-119
8. गायकवाड़, एस.एम.(1998), "अंबेडकर और भारतीय राष्ट्रवाद", पोलिटिकल एंड इकोनोमिक वीक्ली, खंड-33, अंक-10, पृष्ठ संख्या-515-518
9. भारती, मोग्गलन (2022), "कौन सी बात किसी राष्ट्र को एकजुट रखती है?", सामाजिक वैज्ञानिक जर्नल, खंड-50, अंक-7, पृष्ठ संख्या- 67-76
10. पांडे, मनीष कुमार (2023), "डॉ. अंबेडकर के राष्ट्रवाद पर विचार", रविशंकर विश्वविद्यालय का जर्नल, खंड-29, अंक-2, पृष्ठ संख्या-1-16
11. पनिकर, केएन (2016), "राष्ट्रवाद और उसके आलोचक", सामाजिक वैज्ञानिक जर्नल, खंड-44, अंक-9, पृष्ठ संख्या-3-18
12. देबनाथ, कुणाल (2018), "भारत में राष्ट्र निर्माण के संबंध में अंबेडकर के विचार", सेज जर्नल, खंड-5, अंक-1, पृष्ठ संख्या- 1-10
13. लखेरा, डॉ. पंकज (2022), "अंबेडकर का राष्ट्रवाद", शोध समीक्षा अंतर्रष्ट्रीय बहुविषयक पत्रिका, खंड-7, अंक-8, पृष्ठ संख्या-1-14
14. भारद्वाज, वसुधा (2015), "अंबेडकर का विभेदीकरण का विरोधाभास, उत्तर-औपनिवेशिक भारत में भाषा, राष्ट्र और राज्यों की मान्यता", भारतीय आर्थिक और सामाजिक इतिहास समीक्षा, खंड-52, अंक-1, पृष्ठ संख्या- 50-64
15. आर., थिरुनावुक्कारासु (2020), अंबेडकर की जाति-विरोधी विचारधारा और एक राष्ट्र का निर्माण, नई दिल्ली, रूतलेज
16. बिधुत, चक्रवर्ती (2016), "बी.आर. अंबेडकर, गांधीवादी जगत में एक "विद्रोही-उदारवादी", भारतीय ऐतिहासिक समीक्षा, खंड-43, अंक-2, पृष्ठ संख्या- 1-10
17. सिंह, बाल्मिकी प्रसाद (2020), "न्याय के साधन के रूप में डॉ. बी.आर. अंबेडकर का संवैधानिकवाद का दर्शन, सामाजिक", इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीक्ली, खंड-66, अंक-4, पृष्ठ संख्या- 1-12
18. देबनाथ, कुणाल (2021), "बीआर अंबेडकर के समावेशी भारतीय राष्ट्र संबंधी विचारों का पुनर्मूल्यांकन", दलितों की समकालीन आवाज़ जर्नल, खंड-14, अंक-2, पृष्ठ संख्या-1-14

19. रमेश, हरि (2022), "जाति, लोकतंत्र और राज्य की कार्रवाई पर बी.आर. अंबेडकर का दृष्टिकोण", राजनीतिक सिद्धांत जर्नल, खंड-50, अंक-5, पृष्ठ संख्या- 1-10
20. देसाई, प्रकाश (2020), "आधुनिक भारत में राष्ट्रवादी चिंतन, स्वतंत्रता के विचार का अन्वेषण", जर्नल ऑफ़ ह्यूमन वैल्यूज़, खंड-27, अंक-2, पृष्ठ संख्या- 1-12
21. कुंद्रा, नकुल (2019), "राष्ट्र और राष्ट्रवाद को समझना", अंत:विषयक साहित्यिक अध्ययन जर्नल, खंड-21, अंक-2, पृष्ठ संख्या-125-49
22. कटारिया, कांता (2012), "डॉ. बी.आर. अंबेडकर एक राष्ट्र निर्माता के रूप में", भारतीय राजनीति विज्ञान पत्रिका, खंड-73, अंक-4, पृष्ठ संख्या- 601-614
23. जैकब, एंड्रयू (2010), "भारत में समावेशी राष्ट्रवाद की ओर, क्या यह संभव है?", जर्नल ऑफ़ फ़ैकल्टी ऑफ़ आर्ट्स एंड सोशल साइयन्स- यूनिवर्सिटी ऑफ़ मलेशिया, खंड-25, अंक-1, पृष्ठ संख्या- 23-33
24. रोड्रिग्स, वैलेरियन (2017), "अंबेडकर एक राजनीतिक दार्शनिक के रूप में", इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीक्ली, खंड-52, अंक-15, पृष्ठ संख्या- 101-107
25. देवी, काँटा (2017), "जवाहरलाल नेहरू का राष्ट्रवाद और अंतराष्ट्रीयतावाद पर विचार", इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ अप्लाइड रीसर्च, खंड-3, अंक-1, पृष्ठ संख्या-734-736
26. सेजवल, लक्ष्मण (2024), "जवाहरलाल नेहरू; राष्ट्रवाद की अवधारणा", रिसर्च हब इंटरनेशनल मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च जर्नल, खंड-11, अंक-7, पृष्ठ संख्या-36-40
27. भट्टाचार्य, हरिहर (2023), भारत में असमित संघवाद, न्यूयार्क, पालग्रेव मैकमिलन।
28. गोपाल, एस (1991), "तीसरी दुनिया में राष्ट्र निर्माण", विश्व मामले; अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों की पत्रिका, खंड-3, अंक-1, पृष्ठ संख्या-31-35

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की स्थिति, कल और आज

•सीमा श्रीवास्तव
•• प्रतिमा बिसेन

सारांश- भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय विचार परंपरा में महिला व पुरुष आपस में प्रतिद्वंदी नहीं अपितु संपूरक हैं । बस नैसर्गिक विशेषताओं के अनुसार कार्यक्षेत्र अलग अलग हैं। वैदिक काल से ही महिलाओं को स्वतंत्रता व सम्मानीय स्थान प्राप्त रहा है। आज भी वनवासी व मध्यमवर्गीय लोक जनसामान्य में महिलाओं की स्थिति बहुत सीमा तक ठीक दृष्टिगत होती है। काल व परिस्थिति के साथ महिलाओं की स्थिति निम्नतर होती गई है किंतु पारिवारिक दायित्वों व ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि व अन्य कार्यों में महिलाओं का बड़ा सहभाग है। मध्य प्रदेश एक विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक परिवेश लिए हुए प्राकृतिक संपदा से भरपूर राज्य है। प्रदेश के विभिन्न जिलों में महिलाओं की स्थिति भिन्न-भिन्न है। उत्तर पश्चिमी क्षेत्र के जिलों की अपेक्षा दक्षिण पूर्वी जिलों में महिलाओं का स्तर सुदृढ़ है। मध्य प्रदेश का लगभग तीन चौथाई हिस्सा ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत आता है। ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय प्रमाणों के अनुसार इस क्षेत्र में प्राचीन काल में महिलाएं राजनैतिक व सामरिक रूप से सक्रिय थी। मध्य प्रदेश में विभिन्न हिस्सों में कई महिला शासिकाओं ने शासन किया। दक्षिण पूर्वी जिलों में भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज प्रथा, घूंघट प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियां नगण्य रही हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की तात्कालिक एवं वर्तमान सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक व शैक्षणिक स्थितियों का प्राप्त द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण किया गया है।

मुख्य शब्द- स्थिति, कुरीतियां, ऐतिहासिक, वर्तमान।

प्रस्तावना- भारतीय समाज में आदि काल से ही महिलाओं का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है उसे सृष्टि का आधार शक्ति माना गया है। महिलाओं को धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप शक्ति या प्रकृति का रूप माना जाता है और उसके बिना पुरुष अधूरा है। यही कारण है कि बिना पत्नी के पुरुष को धार्मिक कार्य करने की अनुमति नहीं

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ज.शं.त्रि. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय बालाघाट
सहायक प्राध्यापक, वनस्पतिशास्त्र, शासकीय ज.शं.त्रि. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय बालाघाट

है। वैदिक काल की सामाजिक व्यवस्था मुख्य रुप से ग्रामीण व आरण्यक थी। तब समाज में महिलाओं को महत्वपूर्ण स्थान व सम्मान प्राप्त था। वे समाज व परिवार में पुरुषों के समतुल्य स्थान रखती थी। उन्हें वे सारे अधिकार प्राप्त है, जो एक सामान्य पुरुष को मिलते थे। तथा अपने जीवन का निर्णय करने का अधिकार भी उनके हाथ में था। निश्चित रूप से यह एक आदर्श स्थिति थी, किंतु समय के साथ इस आदर्शवाद में कमी होती गई और महिलाओं का स्थान उनकी शारीरिक शक्ति के कम होने से धीरे-धीरे सिमटता चला गया। मध्यकाल के पूर्व तक महिलाओं की रक्षा का दायित्व भले ही पिता, पति व पुत्र के साथ में था किन्तु परिवार व समाज में उसका सम्मान व व्यक्तित्व सुरक्षित था। उसे कार्य करने की स्वतंत्रता थी। वह गृह कौशल के साथ साथ शिक्षा व शारीरिक कौशल भी अर्जित करती थी और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध में भाग भी लेती थी। महिलाओं को गृह स्वामिनी माना जाता था और परिवार का सारा दायित्व उसके हाथों होता था। समाज में भी उसे सम्मानीय स्थान था और अपने विचार अभिव्यक्त करने की उसे बहुत सीमा तक स्वतंत्रता थी। पर स्त्री को मां या बहन की दृष्टि से ही देखा जाता था। उनका अपमान करना दंडनीय अपराध था। ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं को अधिक स्वतंत्र वातावरण प्राप्त था। मध्यप्रदेश में सम्मिलित प्राचीन तत्कालीन शासकीय राज्यों जैसे अवंतिका (मालवा), चेदी राज्य (वर्तमान बुंदेलखंड), महाकौशल आदि क्षेत्रों में भी कमोवेश यही स्थिति दृष्टिगत होती हैं। मध्य प्रदेश का एक बड़ा भू-भाग भील व गोंड जनजाति राजवंशों के हाथ में लम्बे समय तक रहा हैं। एवं इन क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति अधिक सुदृढ़ रही है। ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय प्रमाणों के अनुसार इस क्षेत्र में प्राचीन काल में महिलाएं राजनैतिक व सामरिक रूप से सक्रिय थी, जो यह दर्शाता हैं कि पुराने समय में इस क्षेत्र में महिलाओं को बाहर अस्त्र-शस्त्र सीखने, युद्ध में जाने व अन्य गतिविधियों में सम्मिलित होने की अनुमति थी। मध्यप्रदेश का अधिकांश भूभाग ग्रामीण परिवेश वाला है तथा यहां जनसामान्य में महिलाओं को बहुत कुछ आर्थिक, धार्मिक व सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त रही। वे पुरुषों के साथ न केवल फसल उत्पादन व अन्य ग्रामीण कुटीर उद्योगों से संबंधित कार्य करती अपितु कुशल शिल्पकार व लोककला की संरक्षिका भी थी। पश्चिमी आक्रांताओं के आक्रमणों के पश्चात उनकी सामाजिक व धार्मिक दृष्टि में महिलाओं का हेय स्थान होने के कारण महिलाओं पर अत्याचार बढ़े। तथा तद् उपरांत सल्तनत व मुगल शासन आने पर महिलाओं की स्थिति निम्नतर होती चली गई। तथा अनेक सामाजिक कुरीतियां जैसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, बालिका शिशु हत्या, सती प्रथा आदि का का प्रसार बहुत तेजी से हुआ। और समाज में रुढ़िवादिता बढ़ती गई। पुरातन समय से मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्वी जिलों में जहां मुगल शासन का प्रभाव कम था वहां महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक अच्छी रहीं। मध्य प्रदेश में विभिन्न हिस्सों में कई महिला शासिकाओं जैसे रानी दुर्गावती, राजमाता अहिल्याबाई, भोपाल की बेगमें, अवंतिबाई आदि ने शासन किया। मध्यकाल से लेकर आज तक मध्यप्रदेश में अनेक विदुषी, वीर एवं कलाकार महिलाएं हुई जिन्होंने सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में अपना गहरा प्रभाव छोड़ा है । जो यह दर्शाता है कि प्रदेश में महिलाओं की स्थिति अत्यधिक विचारणीय नहीं रहीं। वर्तमान में मध्यप्रदेश भारत के मध्य में स्थित उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात,

महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ से लगा राज्य है। तथा यह एक विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक परिवेश को लिए हुए प्राकृतिक संपदा से भरपूर राज्य है। प्रदेश के विभिन्न जिलों में महिलाओं की स्थिति भी भिन्न-भिन्न है। जहां उत्तर पश्चिमी क्षेत्र के जिलों में महिलाओं की विभिन्न दृष्टिकोणों से स्थिति कमजोर है वही दक्षिण पूर्वी जिलों में महिलाओं का स्तर अपेक्षाकृत सुदृढ़ है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहां का लिंग अनुपात 931 है। दक्षिण पूर्वी जिलों में लिंगानुपात सामान्यत: 950 से ऊपर है विशेष रुप से बालाघाट 1030 अलीगढ़ 1011 डिंडोरी 1002 मंडला 1008 में लिंगानुपात बहुत अच्छा है। मध्य प्रदेश का लगभग तीन चौथाई हिस्सा ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत आता है। यहां भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज प्रथा, घूंघट प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियां बहुत कम या नगण्य रही हैं। आज भी हमें वनवासी व मध्यमवर्गीय लोक जनसामान्य में महिलाओं की स्थिति बहुत सीमा तक ठीक दृष्टिगत होती है। काल व परिस्थिति के साथ महिलाओं की स्थिति निम्नतर होती गई है किंतु पारिवारिक दायित्वों व ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि व अन्य कार्यों में महिलाओं का बड़ा सहभाग है। प्रस्तुत शोधपत्र में मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की तात्कालिक एवं वर्तमान सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक व शैक्षणिक स्थितियों का प्राप्त द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण किया गया है।

प्राचीन काल में मध्य प्रदेश में महिलाओं की स्थिति

वैदिक काल के पूर्व- प्रागैतिहासिक काल में पुरुष और स्त्री दोनों ही जीवन की आधारभूत आवश्यकता की पूर्ति हेतु शिकार कर भोजन की तलाश में घुमंतू जीवन जीते हुए गांव में अपना निवास करते थे जिसके साक्ष मध्यप्रदेश के भीमबेटका (जिला-रायसेन)की पहाड़ियों से प्राप्त होते हैं शिकारी जीवन में पुरुष एवं स्त्री में कोई भेद नहीं था दोनों ही सभी प्रकार के कार्य करते थे। गुफाओं से प्राप्त चित्रों से स्पष्ट होता है कि नारी की शारीरिक संरचना एवं प्रजनन शक्ति को लेकर के नर अवश्य आश्चर्यचकित था तथा उसके प्रजनन क्षमता के कारण उसे देवी के रूप में आराधना करके स्वयं को सुरक्षित महसूस करता था (पाण्डेय व पाण्डेय 2014)।

वैदिक काल- मध्यप्रदेश में वैदिक काल में क्षिप्रा व नर्मदा नदी के तट अनेक ऋषि-मुनियों तपस्या स्थली रहे हैं। नर्मदा के तट पर मार्कण्डेय, भृगु, कपिल, जमदग्नि आदि ऋषियों के आश्रम थे। इन आश्रमों में ऋषि पत्नियां भी शिक्षा प्रदान करने का कार्य करती थी तथा गुरुकुल का प्रबंधन ऋषि पत्नियों के हाथ में होता था। साथ ही अनेक कन्याए भी शिक्षा ग्रहण करती थी। (ऋग्वेद 8/91/ 5-6) यदि किसी कारणवश वैदिक शिक्षा प्राप्त करने में महिला असफल हो जाती थी तब वे विभिन्न प्रकार के व्यावहारिक विषयों, शिल्पों, गृह उपयोगी विषयों, ललित कलाओं, सैनिक शिक्षा आदि में विशेषज्ञ होती थी। इस काल में महिलाओं की परिवारिक स्वंतत्रता का कुछ अनुमान महर्षि जमदग्नि और उनकी पत्नी रेणुका के कथानक से पता चलता है रेणुका महाराजा प्रसनजीत की विदुषी पुत्री थी जो विवाह उपरांत गंधर्व राज चित्रसेन पर आसक्त हो गई थी तब जमदग्नि ने अपने पुत्रों को अपनी माता का वध करने कहा किंतु उनकी प्रथम चार पुत्रों ने माता का वध करने से इंकार कर दिया व अंतिम पुत्र परशुराम ने माता का सिर धड़ से अलग कर दिया था किंतु जब पिता ने वर मांगने कहा तो उन्होंने सबसे पहले अपनी

माता को ही जीवित करने की प्रार्थना की थी इससे ज्ञात होता है कि मां का स्थान उच्च था तथा उसकी भूल क्षम्य थी।

महाकाव्य काल- महाकाव्य काल अर्थात् रामायण व महाभारत काल में स्त्री शिक्षा के स्वरुप में परिवर्तन आया और वे व्यवहारिक शिक्षा की ओर अधिक ध्यान देने लगी। भीष्म ने कहा है कि स्त्रियों को पूज्य मानना चाहिए, क्योंकि जिस घर में स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता का निवास करते है। महाभारत अनुशासन पर्व (40/46/5) उत्तरा ने अर्जुन से शिक्षा प्राप्त किया था। महाभारत (39)कुन्ती अथर्ववेद की विद्वान् थी। महाभारत (3/305) पतंजलि के द्वारा लिखित महाभाष्य में वर्णन मिलता है कि जो स्त्रियाँ काश कृत्स्न द्वारा लिखित मीमांसा शास्त्र का अध्ययन करती थी, उन्हें इसी नाम से जाना जाता था। महाभाष्य (4/1/14) बौद्धकाल में स्त्रियों की वैदिक शिक्षा पर धीरे-धीरे प्रतिबन्ध लगना शुरू हो गया। (https://abhivyakti-life/2021/05/01)। ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति का अनुमान शकुंतला व गोपियों के कथानक से पता चलता हैं जहां उन्हें अपनी इच्छा से अपने लिए वर चुनने का अधिकार था वहीं वे शिक्षित व सुदृढ़ थी। अनुमानत: नर्मदा के उत्तरी भाग जैसे मालवा, बुंदेलखंड आदि में लगभग यही स्थिति रही होगी। इस समय नर्मदा के दक्षिणी तट पर अनेक आरण्यक संस्कृतियां निवास करती थी जिनमें महिला व पुरुष समान भाव से रहते थे। महिलाओं को पुरुषों के ही समान कार्य करने की स्वतंत्रता थी। वे शिकार करती व जंगल से अन्य खाद्य सामग्री व जीवन के लिए उपयोगी सामग्रियों का एकत्रित करती थी। उन्हें जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता थी किंतु सामुहिक धार्मिक कार्यों में उनका सहभाग कम परिलक्षित होता है।

मौर्य व गुप्त काल- मौर्य काल में पूरा मध्यप्रदेश मौर्यशासन के अंतर्गत था। उस समय महिलाओं की स्थिति में हास हुआ था। उनपर सामाजिक प्रतिबंध बढ़ने लगे थे। फिर भी वे धार्मिक व सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेती शिक्षा ग्रहण करती थी। चल अचल संपत्ति रखने की अधिकारी थी। गुप्तकाल में मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग में नाग शक्ति का, नर्मदा के दक्षिणी तट पर वाकटकों का, नर्मदा के उत्तरी भाग पर गुप्तों का शासन था। इन तीनों शासनों में महिलाओं की स्थिति सम्मान जनक थी। उनका विवाह रजस्वला होने के पूर्व अवश्य होने लगे थे किन्तु सभी तरह की शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। सामाजिक व धार्मिक समारोहों में वे भाग लेती थी (तसीवाल 2018)। ग्रामीण व आरण्यक क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति पूर्ववत बनी हुई थी उसमें बहुत अधिक परिवर्तन नहीं आया था।

मध्यकाल- पूर्व मध्य काल में 1060 तक मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र में परमार, बुंदेलखंड में चंदेल, गोंडवाना व महाकौशल क्षेत्र में गोंड राजसत्ता रही। इस समय बढ़ते आपसी संघर्षों व तुर्की के आक्रमणों के कारण परिवर्तित होते सामाजिक परिस्थितियों से महिलाओं की स्थिति में बहुत अधिक गिरावट आयी। बालिका जन्म को हेय समझा जाने लगा। आक्रांताओं के द्वारा महिलाओं पर किए जाने वाले दुर्व्यवहार से बाह्य सामाजिक धार्मिक कार्यक्रमों में महिलाओं की उपस्थिति निषेध होने लगीं। पर्दा प्रथा का प्रचलन बढ़ने लगा। ग्रामीण क्षेत्र में भी यह प्रभाव दिखाने लगे। क्योंकि छोटी राज्य इकाईयो के कारण वे प्रत्यक्ष रूप से वे राज्य व्यवस्था से प्रभावित हो रहे थे। किन्तु अब भी महिलाओं

को आदर की दृष्टि से देखा जाता। उनकी शिक्षा की व्यवस्था थी। पर सती प्रथा, बाल विवाह, बालिका शिशु हत्या, जैसी कुरीतियां ने समाज में स्थान बना लिया था (मिश्र 2020)। ग्रामीण क्षेत्र भी इससे अछूते नहीं रहे। किन्तु गोंडवाना व महाकौशल क्षेत्रों में महिलाओं के प्रति ये कुरीतियां कम थी। और उन्हें कुछ अधिक मात्रा में सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। 13वीं सदी के बाद मध्यप्रदेश का सम्पूर्ण भाग मुगलों के प्रभाव में आ गया। जिसके बाद महिलाओं की दशा अत्यंत दयनीय होती गई। ग्रामीण महिलाएं को अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता था। जहां पुरुषों के सैन्य गतिविधियों में जाने व संघर्षों में हताहत होने के कारण उन्हें कृषि व अन्य घरेलू उद्योगों में अधिक शारीरिक श्रम करना पड़ रहा था। वहीं उनके प्रति सामाजिक दुर्व्यवहार, पारिवारिक जीवन में प्रवेश कर गया था, वे परिवार में हाशिए पर पहुंच गई। जिसका प्रभाव आज भी मालवा, निमाड़, बुंदेलखंड व महाकौशल में दिखाई देता है। इस समय भी गोड़वाना व उसके समीपस्थ भागों में महिलाओं का जीवन सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक रूप से अधिक उन्नत था।

ब्रिटिश काल- ब्रिटिश काल में सर्वाधिक दुष्प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र पर पड़ा। लगान वसूली, जमींदारी प्रथा ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को झकझोर दिया। मध्यप्रदेश में भी ग्रामीण अंचलों में आर्थिक स्थिति निम्नतम स्तर पर पहुंच गई। जिसका प्रभाव महिलाओं के जीवन पर भी पड़ा। वे अब निम्न कोटि की प्राणि बन गई। ग्रामीण क्षेत्रों में महाजन परिवारों की अपेक्षा संभ्रांत परिवारों में महिलाओं की स्थिति अधिक निम्नतम थी। फिर 1856 की क्रांति के प्रसार में बुन्देलखण्ड की ग्रामीण महिलाओं ने रोटी व कमल के माध्यम से बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। वही अनेक ग्रामीण महिलाओं ने भी रानी लक्ष्मीबाई एवं अन्य प्रांतों की महिला सेना में सम्मिलित हो युद्ध में भाग लिया। इसी काल खण्ड में विभिन्न समाज सुधार आंदोलनों के कारण समाज के रूढ़िवादी मूल्यों में न्यूनता आयी और स्त्रियों के बंधन कम होने लगे। किन्तु ग्रामीण महिलाओं को इसका बहुत कम लाभ मिला। (पाण्डेय एवं पाण्डेय 2014) महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन के समय ग्रामीण बहनों ने भी आगे आकर भाग लिया।

स्वतंत्रता के बाद- अनेक सरकारी व सामाजिक कार्यक्रमों के कारण महिलाओं को सामाजिक आर्थिक धार्मिक व राजनैतिक क्षेत्रों में आगे बढ़ने के अवसर प्राप्त हुए। किन्तु मध्यप्रदेश के ग्रामीण अंचलों में परिवर्तन की यह बयार बहुत धीमी गति से चली। वहीं दूसरी और आर्थिक लोभ व प्रतिष्ठा के नाम पर बाल विवाह, दहेज प्रथा, दहेज हत्या, भ्रूण हत्या जैसी कुरीतियों ने प्रदेश के चंबल, मालवा, बुंदेलखंड आदि उत्तर पश्चिमी भागों में भयावह रूप ले लिया। जिससे महिलाओं को अत्यधिक विचारणीय दशा में पहुंचा दिया। तथा यहां का लिंग अनुपात निम्न स्तर पर चला गया। जिससे महिलाओं के अपहरण व अनाचार में बढ़ोत्तरी हुई।

मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलायें वर्तमान परिदृश्य- वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 7.27 करोड़ है जिसमें महिलाओं की संख्या 63.74 प्रतिशत है। इसमें ग्रामीण महिलाओं की जनसंख्या 2,54,08,016 है। दूसरे शब्दों में अधिसंख्या महिलायें ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हैं। लेकिन दूसरी ओर

चिंतनीय यह है कि दशकीय वृद्धि दर में ग्रामीण महिलायें नगरीय महिलाओं से पीछे हैं। नगरीय महिलाओं की वृद्धि दर 25.69 प्रतिशत की तुलना में ग्रामीण महिलाओं मे यह दर 18.48 प्रतिशत है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाएं नगरीय क्षेत्रों में पलायन कर रही है दूसरी ओर मध्यप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में लिंगानुपात 936 है जबकि नगरीय क्षेत्रों में 918 है। वही शिशुओं (0-6 वर्ष) में यह ग्रामीण 923 व नगरीय 901 है। जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका जन्म को प्रोत्साहित करने की प्रवृत्ति की ओर इंगित करता है। यद्यपि मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों में इस अनुपात में पर्याप्त भिन्नता दिखाई देती है। दुर्गम जनजातीय क्षेत्रों में लिंगानुपात अधिक है जो इनमे महिलाओं की सुदृढ़ स्थिति की ओर इंगित करता है।

बाल विवाह- देश में मध्यप्रदेश पहला राज्य है जिसने बाल विवाह रोकने के लिये वर्ष 2013 में लाड़ो अभियान प्रारंभ किया। इसके प्रभावी क्रियान्वयन के कारण मध्यप्रदेश महिला बाल विकास के वार्षिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2012-13 में बाल विवाह की दर 42 प्रतिशत थी वह NFHS.4 के अनुसार 2015-16 में 12 प्रतिशत कम होकर 30 प्रतिशत हो गई है। मध्यप्रदेश केसरी (14.09.2018) की रिपोर्ट के अनुसार NFHS.4 की रिपोर्ट में देश के 100 जिलों में बाल विवाह कर दिया गया जिसमें 8 जिले मध्यप्रदेश के हैं। बाल विवाह की सबसे अधिक दर मध्यप्रदेश के झाबुआ की 31.2 प्रतिशत है, शाजापुर 26.7 प्रतिशत, राजगढ़ 26.1 प्रतिशत, मंदसौर 25.2, टीकमगढ 25 प्रतिशत, शिवपुरी 19.7 प्रतिशत, उज्जैन 19.1, रतलाम 19 प्रतिशत है। इस रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में जिन परिवारों की आय गरीबी रेखा से नीचे है ऐसे परिवारों में बाल विवाह अधिक देखे गये हैं। Hindioneindia.com की 18 सितम्बर 2021 की रिपोर्ट के अनुसार एनसीआरवी के आकड़ों से स्पष्ट होता है कि भारतवर्ष में 2020 में बाल विवाह के मामलों में 50 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। विशेषज्ञों के अनुसार इसका तात्पर्य यह है कि बाल विवाह के मामलों में वृद्धि के साथ इसकी रिपार्ट में भी वृद्धि हुई है।

शैक्षणिक परिदृश्य- शिक्षा किसी भी व्यक्ति एवं समाज के विकास का एक महत्वपूर्ण निर्धारक कारक है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की समुचित सुविधाओं का अभाव ग्रामीण जनसंख्या के विकास में एक बहुत बड़ी बाधा है। उस पर सदियों से परंपराओं और रूढ़िओं के नाम पर ग्रामीण बालिकाओं के लिये पर्दे से निकलकर शिक्षा प्राप्त करने के मार्ग में अनेक बाधायें आती रही हैं। इसी क्रम में मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर का अध्ययन करने पर पाते हैं कि मध्यप्रदेश में ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता दर मात्र 52.43 प्रतिशत है जबकि मध्यप्रदेश के ग्रामीण पुरूषों में यह दर 74.74 प्रतिशत नगरीय महिलाओं में यह 76.52 प्रतिशत है। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश की कुल ग्रामीण महिला जनसंख्या में लगभग आधी महिलायें शिक्षा से वंचित है जो कि 21वीं सदी के "महिला सशक्तीकरण" के दावे को झुठलाता है। मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता दर कम होने का सबसे बड़ा कारण है- बीच में ही पढ़ाई छोड़ देना। जिसके कई कारण हैं जैसे माता-पिता के बाहर रहने पर घर एवं भाई-बहनों की देखभाल करना, कृषि कार्यो में हाथ बटाना, कमाई के

लिये पास के नगरीय क्षेत्रों में जाकर कार्य करना इत्यादि। मध्यप्रदेश की ग्रामीण आबादी में महिला साक्षरता सबसे अधिक बालाघाट जिले में 67.1 प्रतिशत एवं सबसे कम अलीराजपुर जिले मे मात्र 26.4 प्रतिशत है। भारत में प्रतिवर्ष 100 में से 17 लड़किया 10वीं कक्षा तक आते-आते पढाई छोड़ देती है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश में ड्रापआउट रेट 44.92 प्रतिशत है जो कि वर्ष 2001 में 50.10 प्रतिशत था। लड़कियों में यह 43.31 प्रतिशत है।

ग्रामीण महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता- महिलाओं की उन्नति व विकास के लिये आवश्यक है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी सहभागिता हो। भारतीय संविधान में नीति निर्धारक स्तर पर ही स्त्री पुरूष समानता की बात कही गई है। संविधान की धारा-14 स्पष्टत: महिलाओं को हर क्षेत्र में समान अवसर व समान अधिकार देती है, बावजूद इसके भारत के राजनैतिक परिदृश्य में महिलाओं की भूमिका लगभग नगण्य है। निर्णय प्रक्रिया में सशक्त भागीदारीं के अभाव में उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यद्यपि पिछले कुछ समय में महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता में अंतर आया है लेकिन राजनैतिक शक्ति संरचना में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिखाई नही देता। 73वें संविधान संशोधन द्वारा मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं को पंचायती राज व्यवस्था में 33 प्रतिशत आरक्षण मिला जो बाद में 50 प्रतिशत हो गया। पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग मध्यप्रदेश शासन के प्रशासकीय प्रतिवेदन 2018-19 के अनुसार ग्राम पंचायतों में 3.85 लाख पदाधिकारी निर्वाचित हुए जिसमें महिला की संख्या विभिन्न स्तरों को मिलाकर 2.2 लाख थी। यह आंकड़े बताते हैं कि राजनीति में मध्यप्रदेश की महिलाओं की सहभागिता में वृद्धि हुई है। (के. शुभा एवं बी.एस. भार्गव) ने अपने अध्ययन में यह पाया है कि ग्रामीण महिलाओं की पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी ने उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं वैधानिक उन्नति का मंच प्रदान किया है। के.के सिन्हा के अनुसार अब ग्रामीण महिलायें गांव के विकास के बारे में मार्गदर्शन दे रही है। बावजूद इसके शिक्षा के अभाव में उन्हे पंचायती गतिविधियों के संचालन में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। दूसरी ओर गरीबी प्रचलित सामाजिक रूढ़ियों, पुरूषों का वर्चस्व इत्यादि भी उनके विकास में बाधक है। पिछले लोकसभा में सिर्फ 11 प्रतिशत महिलायें सांसद बन पाई थी अर्थात 90 लाख महिलाओं पर एक महिला सांसद। सोचने की बात यह है कि जब महिला मतदाताओं की संख्या पुरूष मतदाताओं से बहुत कम नहीं है तो महिलाओं की राजनीति मे सहभागिता कम क्यों है।

मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति- प्रसिद्व अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन (1995)के अनुसार सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण महिलायें मुख्यत: परिवार की जिम्मेदारी संभालती हैं। महिलाओं द्वारा घर में किये गये कार्य की आर्थिक गणना नहीं होती। सामान्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को घरेलू कार्यो के साथ जंगल से लकड़ी लाना, मीलों दूर से पानी लाना कृषि कार्य मुख्य जिम्मेदारी होती है। इन सबके अलावा छोटे मोटे आर्थिक कार्य भी उनके द्वारा किये जाते हैं। मध्यप्रदेश की ग्रामीण

महिलाओं का जीवन भी इसी तरह का है। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार एक श्रमिक के रूप में वे 51 प्रतिशत जिम्मेदारी सम्हालती है। UNDP की रिपोर्ट (1994-95) के अनुसार विश्व की 1.3 अरब गरीब आबादी में 70 प्रतिशत महिलायें हैं जो विभिन्न संसाधनों जैसे आर्थिक शैक्षणिक, स्वास्थ्य तथा सामाजिक अभावों के साथ जीवन जीने को बाध्य होती है। इंदिरा नूयी, चंदा कोचर, नीता अंबानी जैसे नामों की चमक के पीछे देश की लगभग 30 प्रतिशत महिलायें आज भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन बिता रही है, और जो सक्षम है और कहीं कार्यरत है उनमें से अधिकांश महिलाओं का परिवार में अपनी कमाई पर कोई अधिकार नही होता। विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि स्वसहायता समूहों के माध्यम से मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार तो हुआ ही है साथ ही अब परिवार में निर्णायक भूमिका में भी उनकी स्थिति सुदृढ़ हुई है। (Role of Self Help Group (SHGS) in Impowermrnt of Rural Women in Indore block of M.P.– Jaya Mehra, Sandhya Choudhury, N.K. Punjabi and K.L. Dangs) भारत में श्रम एवं रोजगार विभाग की 5वीं वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार मध्यप्रदेश में ग्रामीण महिलाओं की कार्यबल सहभागिता दर केवल 15 प्रतिशत है जबकि ग्रामीण पुरूषों की 60 प्रतिशत है। इसी प्रकार मध्यप्रदेश की ग्रामीण महिलाओं में बेरोजगारी दर 18 से 29 वर्ष आयु समूह में 15 प्रतिशत एवं पुरूषों में यह 6 प्रतिशत है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश में कुल 3 पुरूषों में से 2 पुरूष एवं कुल 5 महिलाओं में से 4 महिलायें कृषक अथवा कृषि श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं। विभिन्न शोध यह बताते हैं कि यद्यपि ग्रामीण महिलायें लगातार 17-18 घंटे कार्य करती हैं किंतु उनके इन कार्यो की आर्थिक गणना नहीं होती। अतीत का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि महिलाओं की आत्मनिर्भरता में मदद के कोई साधन नहीं थे। उन्हें ऋण देने की बात कोई सोच नहीं सकता था, बाजार की गतिशीलता के लिये उन्हें अप्रासंगिक माना जाता था और इसीलिये हाशिये पर डाल दिया गया था। किन्तु धीरे-धीरे स्थिति बदली। विभिन्न योजनाओं से लाभान्वित हो छोटे- छोटे समूहों में लघु वित्त के रूप में आर्थिक सहायता ने महिलाओं को काफी सशक्त और समर्थ बना दिया है। अनेक भारतीय गांवों में महिलाओं ने साहूकारों से कर्ज लेना बंद कर दिया है। महिला स्वसहायता समूह अब बैंकों में अपनी बचत जमा करते हैं और कहीं-कहीं तो वे कम्प्युटर पर इसका हिसाब-किताब रखते हैं।

सुझाव- ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर आधारित कौशल विकास प्रशिक्षण हेतु संस्थान की स्थापना व नए पाठ्यक्रम लागू कर स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा दिए जाने की आवश्यकता है भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आश्रित है और ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है लेकिन यहां भी परंपरागत शिक्षा पद्धति प्रदान करने के लिए परंपरागत डिग्री पाठ्यक्रम उपलब्ध है जबकि वहां कृषि आधारित कौशल विकास प्रशिक्षण की आवश्यकता है निश्चित रूप से यदि इस पर ध्यान दिया जाएगा तो ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति बेहतर हो सकेगी।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. आनंद कुमार मिश्र, भारतीय समाज में महिला स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का विश्लेषणात्मक वर्णन प्राचीन काल (वैदिक काल) से आधुनिक काल (19वीं शताब्दी) rd, The Expression: international multi disciplinary e- journal, volume 6, Issue 4, 2020, ISSN: 2395 - 4132 page 26–30
2. डॉ. दीपशिखा पाण्डेय, डॉ. सुशांत कुमार पाण्डेय– भारत में महिलाओं की परिवर्तित सामाजिक अवस्था एक तुलनात्मक अध्ययन (आदिकाल से स्वतंत्रता प्राप्ति तक),
3. International Journal of Scientific & Innovative Studies, ISSN: 2347- 7660 vol 2, Sep 14
4. रजनी तसीवाल, भारतीय समाज में नारी के विभिन्न रूप और गांधी की नारी की समीक्षा, Shrinkhal Ek Shodhparak Vaicharik Patrika, volume 6, Issue 9 (part 1),2019 ISSN 2321-290a
5. Abhay Tiwari & Ravindrak–women's Empowerment in Madhya Pradesh, A socio-economic Analysis
6. G.R. Gangle, P.B. Reddy Status of women and social opportunities in Madhya Pradesh, India- , volume 3, Issue 8, August special-2014, ISSN n6 227-8160
7. Jaya Mehra, Sandhya Choudhury, N.K. Punjabi and K.L. Dangs) Role of Self-Help Group (SHGS) in Impowermrnt of Rural Women in Indore block of M.P.
8. Kailash Meena, मुगल काल में स्त्रियों की दशा व स्थिति, https://wwwkailasheducation.com,2021
9. Nidhi Gupta & Dr. Manju Malhotra- Women's access of education, A case study of Madhya Pradesh, IJRREST: International Journal of Research Review in Engineering Science & Technology
10. Sita Anantha Raman, women in India: A social and cultural history (volume 1), pub. ABC-CLIO, California, ISBN 978 0 313 37711- 2 (ebook)
11. Naresh Rout, Role of Women in Ancient India, Odish Review, 2016
12. Dr. Shraddha Arya, Women in the Purans
13. Madhya Pradesh Profile- census of India 2011
14. Website: - (I) gaonconncetion.com

(ii) freepressjournal.in (2Nov 2021)
(iii) zeenews.com (7 June 2018)
(iv) mp.gov.in/education

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

समकालीन भारत में धारणीय कृषि : समीक्षात्मक अनुशीलन

• निशान्त सक्सेना
•• अरूण श्रीवास्तव

सारांश- धारणीय कृषि एक ऐसी कृषि पद्धति है जो भविष्य की पीढ़ियों की क्षमताओं से समझौता किए बिना वर्तमान खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करती है। यह पारिस्थितिकी संतुलन, सीमित पर्यावरणीय क्षति और दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता पर जोर देती है। हरित तरीकों को अपनाने के माध्यम से, यह मिट्टी, पानी और जैव विविधता जैसे प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करके पर्याप्त कृषि उत्पाद पैदा करती है। यह दृष्टिकोण फसल चक्रण, जैविक खेती और कुशल जल उपयोग के माध्यम से मृदा संरक्षण का समर्थन करता है। संधारणीय कृषि रसायनों के कम स्तर, मिट्टी में बेहतर उर्वरता और नवीकरणीय ऊर्जा को अपनाने पर अधिक ध्यान केंद्रित करती है। यह वैश्विक खाद्य सुरक्षा, पर्यावरणीय समस्याओं और जलवायु परिवर्तन के मुद्दों को हल करने के लिए एक समग्र समाधान होगा जो किसानों की आर्थिक लचीलापन का समर्थन करता है। यह मिट्टी, पानी और जैव विविधता जैसे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करती है, जिससे पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव कम होते हैं, यह किसानों की आजीविका में सुधार करती है और पौष्टिक भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करती है, जिससे सामाजिक कल्याण को बढ़ावा मिलता है, यह लंबे समय तक चलने वाली कृषि पद्धतियां अपनाती है, जिससे कृषि क्षेत्र की आर्थिक स्थिरता बनी रहती है।

मुख्य शब्द- पर्यावरणीय स्थिरता, मृदा संरक्षण, फसल विविधता, कीट प्रबंधन, कृषि वानिकी, जैव विविधता, जैविक पुनरुपयोग

प्रस्तावना- कृषि में रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से जहाँ खेती की लागत में वृद्धि हुयी है। वही मृदा उर्वरता में निरन्तर कमी आ रही है। आज देश में बढ़ती हुयी जनसंख्या को पर्याप्त खाद्यान्न उपलब्ध कराने की बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। वहीं विगत साठ वर्षों से प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुन्ध दोहन से हमने बहुत कुछ खो दिया है। दिन प्रतिदिन नई तकनीकों का प्रयोग करके अधिक उत्पादन की चाह में हमने पर्यावरण प्रदूषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण और मृदा प्रदूषण को बढ़ावा दिया है। एक ही खेत में लगातार धान्य फसलों के

• शोधार्थी, वाणिज्य विभाग, एआरएनआई विश्वविद्यालय, कांगड़ा, हिमांचल प्रदेश
•• शोध निर्देशक, एआरएनआई विश्वविद्यालय, कांगड़ा, हिमांचल प्रदेश

सघन खेती करने से तथा असंतुलित उर्वरकों एवं रसायनिक कीटनाशी के प्रयोग से मृदा संरचनाएं, वायु संचार की दशा तथा मृदा जैविक पदार्थ में लगतार गिरावट आयी है। इसके अतिरिक्त मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं तथा कृषक मित्र केंचुओं की संख्या में कमी हुयी है। इसके फलस्वरूप फसलोत्पादन एवं मृदा उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। फसलोत्पादन की वृद्धि दर में गिरावट आई है। जिसे अपनाकर प्राकृतिक संसाधनों को बिना क्षति पहुंचाये समाज को खाद्य एवं पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। दीर्घकाल तक हम इस तरह की खेती पर जीवन व्यतीत कर प्रश्नगत है। अभी हाल ही के दशकों में संसार बहुत तेजी से सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, तकनीकी, पर्यावरणीय एवं कृषि परिस्थितिकी तौर पर बदला है। कारण–बढ़ती हुई मानवीय भोजन, वस्त्र, मकान आदि की पूर्ति के लिए भूमि, जल एवं पर्यावरण का अत्यधिक दोहन हुआ जिससे टिकाऊ खेती की आवश्यकता महसूस हुई। अत: टिकाऊ खेती वह खेती है जो मानव की बदलती आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु कृषि में लगने वाले साधनों का इस प्रकार सफल व्यवस्थित उपयोग किया जाना ताकि प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास न होने पाए और पर्यावरण भी सुरक्षित रहे। टिकाऊ खेती कोई एक नारा नहीं है, बल्कि यह एक भविष्य की अनिवार्य आवश्यकता है, जिसमें खाद्यान्न जनसंख्या, भूमि, जल–पर्यावरण तथा लाभ खर्च अनुपात में सामंजस्य जरूरी है तभी भविष्य में मानव पेट भर सकेंगे।

परिभाषा के अनुसार बदलते पर्यावरण अर्थात् धरती के तापक्रम में वृद्धि, समुद्र के स्तर में बढ़ोत्तरी एवं ओजोन की परत में क्षति आदि नई उत्पन्न विषमताओं में कृषि को संधारणीयता देने के साथ–साथ बढ़ती आबादी को अन्न खिलाने के लिए उत्पादकता के स्तर पर क्रमागत वृद्धि करना ही टिकाऊ खेती है। दूसरे शब्दों में वह खेती है जो मानव की वर्तमान एवं भावी पीढ़ी की अन्न, चारे, वस्त्र तथा ईंधन की आवश्यकताओं को पूरा करे जिसमें परम्परागत विधियाँ एवं नई तकनीकों का समावेश हो, भूमि पर दबाव कम पड़े, जैव–विविधता नष्ट न हो, रसायनों का कम प्रयोग, जल एवं मृदा प्रबन्ध सही हो, संधारणीय खेती कहलाएगी।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन- शोध साहित्य का पुनरावलोकन शोध प्रक्रिया का दूसरा महत्वपूर्ण चरण होता है इसके अन्तर्गत शोधकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह चुने गए शोध पद्धतियों कठिनाइयों एवं निष्कर्षों का अध्ययन करें जो उससे पूर्व के अध्ययनकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत किए गए है। शोध साहित्य के पुनरावलोकन हेतु स्त्रोत दो प्रकार के होते हैं–

1. प्राथमिक या प्रत्यक्ष स्त्रोत
2. द्वितीयक या अप्रत्यक्ष स्त्रोत

1. प्राथमिक या प्रत्यक्ष स्त्रोत- प्राथमिक स्त्रोत के अंतर्गत अनुसंधानकर्ताओं के मौलिक लेख, ताम्रपत्र पर लिखे लेख, शिलालेख, ताम्रलिपि आदि आते हैं।

2. द्वितीयक या अप्रत्यक्ष स्त्रोत- द्वितीयक स्त्रोत के अन्तर्गत पुस्तकें, पाठ्यपुस्तकें समय–समय पर प्रकाशित होने वाले पत्र–पत्रिकायें, अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय शोध सारांश विश्वकोष पत्रावली समाचार पत्र विचारगोष्ठी के लेख, भाषण आदि आते हैं।

'धारणीय कृषि विकास' की अवधारणा कृषि क्षेत्र में उन्नति के साथ-साथ समृद्धि लाने वाली नवीन अवधारणा है। शोध हेतु चयनित शीर्षक के सम्बन्ध में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रकाशित पुस्तकें, शोध पत्र, समाचार पत्र एवं विचारगोष्ठी लेख उपलब्ध है जिनमें से कुछ प्रमुख स्त्रोतों का अध्ययन शोधार्थी द्वारा किया गया है जिसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है-

कार्य में धारणीय आजीविका राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबन्ध संस्थान (2013)- कृषि में धारणीय कृषि की संकल्पना एक संसाधन प्रबन्ध रणनीति है जिसका उद्देश्य संसाधन आधार को संरक्षित रखते हुए पर्यावरणीय गुणवत्ता सुनिश्चित करते हुए तथा जैव विविधता के वांछित स्तर को बनाए रखते हुए फार्म परिवारों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लाभकर तथा धारणीय उत्पादन को प्रदान करना है।

धारणीय विकास, ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन (2017)- अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा अंगीकृत संयुक्त राष्ट्र धारणीय विकास लक्ष्यों (एस.डी.जी.) में सामाजिक आर्थिक और पर्यावरणीय मुद्दे व्यापक रूप से शामिल है जिन्हें सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (एस.डी.जी.) के आधार पर तैयार किया गया था। ध्यान देने वाली बात यह है कि धारणीय विकास लक्ष्यों में सभी प्रकार और सभी रूपों में व्याप्त गरीबी जिसमें चरम सीमा भी शामिल है, को समाप्त करने के लिये एक सार्वभौमिक करार शामिल है जिसमें कुल सत्रह धारणीय विकास लक्ष्य हैं जिनके 169 उद्देश्य है और उन्हें सन् 2030 तक प्राप्त करना है। भारत ने इन धारणीय विकास लक्ष्यों को तैयार करने में और आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अध्ययन के उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य धारणीय कृषि के लाभकारी परिणामों के माध्यम से कृषकों के जीवन में होने वाले परिवर्तन और धारणीय कृषि के विकासोपरान्त कृषकों की आर्थिक गतिविधियों पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है।

परिकल्पना-

- धारणीय कृषि विकास से कृषकों की आर्थिक स्थिति में पर्याप्त मात्रा में सुधार हुए है।
- धारणीय कृषि विकास के अन्तर्गत मृदा उर्वरकता, पर्यावरणीय संरक्षण और स्वास्थ्यप्रद वातावरण पर भी विशेष रूप से सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए है।

शोध विधि- शोध अध्ययन हेतु वर्णनात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया ग्या है। अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु द्वितीयक आंकड़ों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक आंकड़ों को प्रकाशित पुस्तकों, पत्रिकाओं, शोध पत्रों, विभिन्न वेबसाइट एवं वार्षिक विभागीय रिपोर्टों से एकत्रित किया गया है।

धारणीय कृषि का अर्थ- धारणीय कृषि खेती की वह पद्धति है जो भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित और सम्पूर्ण भोजन की आपूर्ति के साथ भोजन उपलब्ध कराने की क्षमता को सुनिश्चित करते हुए मृदा, जल और वातावरण के प्राकृतिक संसाधनों के अनुरक्षण और परिरक्षण के लिए प्रतिबद्ध है।

धारणीय कृषि में कई व्यवहारों की अनुशंसा की गई है जो आधुनिक कृषि की

समस्या के कारण उत्पन्न समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करती है, जैसे मृदा उत्पादकता में कमी, कृषि प्रदूषण का प्रघात उच्च उत्पादन लागत के कारण आय में कमी, कम या अनार्थिक आय।

धारणीय कृषि के सिद्धान्त- धारणीय कृषि के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं-

- कृषक और परिवार सहित सभी कृषि पद्धतियों के बीच अंतर-सम्बन्धता।
- पद्धति में वांछित जैव संबंधों को अधिकतम किए जाने तथा इन संबंधों में बाधक सामग्री और व्यवहार का प्रयोग कम से कम किए जाने की आव''यकता।
- समन्वित संसाधनों का संरक्षण करने वाली, साम्यपूर्ण कृषि पद्धति के सृजन के लिए पूर्वानुभवों और अद्यतन वैज्ञानिक उन्नति का अनुप्रयोग।
- पर्यावरणीय अवक्रमण को कम करना, कृषि उत्पादकता बनाए रखना, अल्प और दीर्घावधिक अर्थक्षमता का संवर्धन तथा स्थायी ग्रामीण समुदाय तथा जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखना।
- प्राकृतिक संसाधन आधार और इसकी वहन क्षमता पर अतिरिक्त भार को दूर करना।

धारणीय कृषि के तत्व- धारणीय कृषि के तत्व कई क्षेत्रों में समान है। उनकी धारणीयता में सुधार की पद्धतियां भिन्न-भिन्न कृषि पारिस्थितिकीय क्षेत्र में भिन्न-भिन्न हो सकती है। तथापि किसानों के बीच व्यवहार के कुछ समान सेट होते हैं जिसके द्वारा वे फार्म या स्थानीय संसाधनों के उपयोग से अधिक धारणीय दृष्टिकोण के लिए प्रयास करते हैं तदापि उनमें से प्रत्येक दीर्घकालिक कृषि लाभप्रदता, पर्यावरणीय प्रबंध और जीवन की गुणवत्ता को साकार करने में अधिकाधिक योगदान करते हैं।

क) मृदा संरक्षण- समोच्च खेती, समोच्च बंध, श्रेणीकृत बंध, वनस्पति बंध, तिर्यक फसल, आच्छादन फसल, कम जुताई आदि सहित मृदा संरक्षण पद्धतियों से वायु और जल से होने वाले मृदा क्षरण को रोकने में सहायता मिलती है।

ख) फसल विविधता- फार्म में फसल विविधता में वृद्धि करके मौसल, विपणन दशाओं, कीट और रोग आपात की विषयम स्थितियों में होने वाले जोखिमों को कम करने में सहायता मिलती है। फसल और अन्य पादपों जैसे वृक्षों, झाड़ियों, चारागहों की विविध में वृद्धि से भी मृदा संरक्षण, निवास संरक्षण में सहायता मिलती है और लाभप्रद कीटों की संख्या में वृद्धि होती है।

ग) पोषक तत्व प्रबंध- आवश्यक पोषक तत्वों के समन्वित प्रबंध से मृदा उर्वरता की धारणीयता और पर्यावरण संरक्षण में सुधार लाया जा सकता है। कृषि (निम्न लागत) इनपुटों जैसे जैव खाद, कम्पोस्ट, फसल अवशेष की हरी खाद के अधिकाधिक उपयोग से न केवल उत्पादन लागत में कमी आएगी वरन इससे मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि होगी।

घ) कीट प्रबंध- उपलब्ध कृषि संरक्षण पद्धति जैसे कृषीय, भौतिकी, यांत्रिकी, जैवीय और रासायनिक पद्धतियों के समन्वय से कीट प्रबंध करना एक धारणीय दृष्टिकोण है जो पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के अलावा उत्पादन लागत को भी ईष्टतम बनाती है।

ड.) जल की गुणवत्ता और जल संरक्षण- शून्य जुताई, गहरी जुताई, पलवार और सूक्ष्म सिंचाई तकनीक जैसे व्यवहार से दीर्घकालिक आधार पर मृदा आर्द्रता के

संरक्षण और परिवर्तन के अलावा जल उपभोग या आवश्यकता को ईष्टतम बनाने में मदद मिलती है। यह पेयजल और भूजल की गुणवत्ता को सुरक्षित रखने में भी सहायक होती है।

च) कृषि वानिकी- वन-पशुचारण, कृषि-वन-पशुचारण, कृषि-बागवानी, कृषि-वन-पशुचारण, वीथिका-फसल, ली-कृषि को संयोजन से मृदा और जल संरक्षण तथा लाभप्रदता में सहायक होती है। यह जलावन, बागवानी उत्पाद की प्राप्ति के साथ ही ग्रामीण लोगों को संतुलित पोषाहार प्रदान करने में सहायक होता है।

छ) विपणन- उन्नत विपणन सुविधाओं से कृषकों के लिए लाभप्रद और धारणीय आय सुनिश्चित होती है। प्रत्यक्ष विपणन से मध्यवर्तियों को बाहर रखा जा सकता है और अधिक आय सुनिश्चित होती है।

धारणीय कृषि के आधार- धारणीय कृषि के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं-

- विभिन्न फसलों का फसल प्रणाली में समावेश करने से प्रति इकाई लागत को कम किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की खाद्यान्न जैसे धान्य, दाल, तेल व रेशा इत्यादि आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण होता है।
- संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें जिससे भरपूर एवं गुणवत्ता युक्त फसलों का उत्पादन हो सके। यहाँ संतुलित उर्वरक प्रयोग से तात्पर्य सिर्फ यह है कि नत्रजन फास्फोरस व पोटास का सही अनुपात में प्रयोग करें। आवश्यक संतुलित उर्वरकों के प्रयोग से मृदा में पोणक तत्वों की उपलब्धता में होने वाले असंतुलन कम होते हैं।
- एकीकृत पोषक तत्वों की आपूर्ति का प्रबन्ध आवश्यक है। इसके अन्तर्गत कार्बनिक खादें जैसे गोबर की खाद, हरी खाद, वर्मी कम्पोस्ट इत्यादि का रासायनिक उर्वरकों के साथ उचित मात्रा में प्रयोग किया जाता है इसमें उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य में भारी सुधार होता है।
- जल का समुचित प्रयोग करें। फसलों में जल के उचित प्रबन्धन से उर्वरक एवं अन्य उत्पादन घटकों की उपयोग क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।
- खरपतवारों का एकीकृत नियंत्रण करना। खरपतवार के प्रभावशाली नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी रसायनों का जैविक तौर तरीका अपनाया जाए साथ ही प्रदूषण को कम करने के उपाय किए जाए।
- रोगों एवं कीटों को एकीकृत नियंत्रण करना। रोगों एवं कीटों का समन्यवित नियंत्रण करने से कीटों व रोगों का रसायनिक पदार्थों के प्रति होने वाले सहनशीलता को नियंत्रित किया जा सकता है तथा साथ ही साथ कृि लागत में भी कमी की जा सकती है।

धारणीय कृषि के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलू-

(क) सकारात्मक पहलू

- किसी भी किसान द्वारा वहनीय
- किसी भी प्रकार की अत्याधुनिक/आयातित और विशेष प्रौद्योगिकी की

आवश्यकता नहीं।

- पर्यावरणीय संरक्षण और सुरक्षा
- स्वास्थ्यकर वातावरण/स्वास्थ्यकर खाद्य।
- पारिस्थितिकीय अवक्रमण के निवारण/उसे रोकने में सहायक।
- रोग और कीट प्रतिरोधकता के उच्चतर स्तर से अधिक सुरक्षित।
- जैविक पुर्नउपयोग से मृदा उर्वरता को बनाए रखना।
- अधिक जैव-विविधता।
- प्राकृतिक संसाधनों का कुशल उपयोग।
- स्व-संपोषक।

(ख) नकारात्मक पहलू

- पुनरूत्पादन कृषि के लाभ प्राप्त करने में अधिक समय लेती है।
- परिवर्तन का धीमा होना।
- प्रारम्भ में कृषकों को परिवर्तन के लिए प्रेरित करना कठिन।
- अपेक्षतया श्रम गहन है।
- उपलब्ध संसाधनों के आबंटन/उपयोग के लिए समुचित योजना की आव''यकता पड़ती है।
- आरम्भिक उपज कम होती है।

धारणकीय कृषि तथा इको फार्मिंग- धारणीय कृषि को टिकाऊ कृषि एवं ईको फार्मिंग भी कहते हैं। वर्तमान में यह प्रणाली इस उद्देश्य पर प्रभावशाली है कि वर्तमान समय की आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिये कृषि एवं सम्बन्धित संसाधनों का प्रयोग इस स्तर पर हो कि पर्याप्त मात्रा में वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति होने के साथ-साथ भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिये पर्याप्त मात्रा में संसाधन बने रहे साथ ही पारिस्थितिकीय तब भी स्वस्थ्य रूप में विद्यमान रहे।

संधारणीय उत्पादन पद्धतियां

संयत्र उत्पादन पद्धतियां	फसलों और संवर्धन तौर-तरीके का विविधीकरण
	मिट्टी की गुणवत्ता का प्रबन्धन।
	सामग्री का कुशल और मानवीय उपयोग।
	किसान के लक्ष्यों, जीवन शैली से सम्बन्धित चयनों पर विचार करना।
पाु उत्पादन पद्धतियां	खेती में पशुधन को शामिल करते समय प्रबन्धन योजना विकसित करना।
	पशु चयन, कृषि क्षमताओं और बाधाओं को ध्यान में रखना।
	पशु पोषण जिसमें खाद्य गुणवत्ता और समय-समय पर पशु स्वास्थ्य की निगरानी शामिल है।
	पशुओं के प्रदर्शन में सुधार करने के लिये बेहतर अनुवांशिक स्टॉक और गुणवत्ता वाले जर्मप्लाज्म का उपयोग करना।
	संधारणीय पशुधन उत्पादन के लिये एक पशु स्वास्थ्य कार्यक्रम महत्वपूर्ण है।

भारत में धारणीय कृषि से संबंधित प्रमुख आंकड़े- प्राकृतिक खेती 800,000 से अधिक किसानों द्वारा अपनाई जा रही है, जबकि जैविक बाजार के 2022-27 के बीच 25.25 प्रतिशत की CAGR से बढ़ने की उम्मीद है। भारत का जैविक खाद्य बाजार वित्त

वर्ष 2022–27 के दौरान 25.25 प्रतिशत की CAGR (चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर) से बढ़ने की उम्मीद है। इसके अलावा, कृषि में डिजिटल तकनीकों (जैसे एआई, ड्रोन) का उपयोग बढ़ रहा है।

जैविक और प्राकृतिक खेती-

- प्रौद्योगिक खेती भारत में सबसे तेजी से बढ़ने वाली तकनीक कृषि पद्धतियों में से एक है, जिसे लगभग 8,00,000 किसानों द्वारा अपनाया गया है।
- जैविक खाद्य बाजार के 2022–27 के दौरन 25.25 प्रतिशत की CAGR से बढ़ने की उम्मीद है, जो टिकाऊ प्रथाओं की बढ़ती मांग को दर्शाता है।

तकनीकी प्रगति और डिजिटल कृषि-

- स्टार्टअप और निजी कंपनियाँ किसानों को सशक्त बनाने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), उपग्रह प्रौद्योगिकी और इंटरनेटर ऑफ थिंग्स (IoT) जैसे उपकरणों का उपयोग कर रही हैं।
- ड्रोन और रिमोट सेंसर जैसे उपकरण किसानों को फसल के स्वास्थ्य की निगरानी करने, सिंचाई को अनुकूलित करने और कीटों के संक्रमण की शीघ्र पहचान करने में मदद करते हैं, जिससे कृषि उत्पादकता और टिकाऊपन में सुधार होता है।

नीतिगत पहलें-

- राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (NMSA) जैसी सरकारी पहलें अधिक टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देती हैं।
- भारतीय कदन्न अनुसंधान संस्थान (IIMR) के नेतृत्व में मिलेट क्रांति (बाजरा क्रांति) भारत को श्री अन्न (बाजरा) के उत्पादन में वैश्विक नेता के रूप में स्थापित कर रही है।

जल और संसाधन प्रबंधन-

- भूजल का अत्यधिक दोहन एक बड़ी चुनौती है, जिससे भूजल की कमी हो रही है।
- चावल और गन्ना जैसी पानी की गहन फसलों को बढ़ावा देने वाले न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) और मुफ्त बिजली नीतियों ने इस मुद्दे को और बढ़ाया है।

महिला किसानों का सशक्तिकरण-

- कृषि श्रम शक्ति में 42 प्रतिशत महिलाएँ हैं लेकिन उनके पास केवल 14 प्रतिशत कृषि भूमि है।
- अगर महिला किसानों को पुरुषों के समान संसाधनों तक पहुँच मिले, तो कृषि उपज में 20–30 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है।

चुनौतियाँ-

- जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन और भूजल की कमी एक गंभीर समस्या है।
- कृषि उत्पादन में आधुनिक उपकरणों और तकनीकों का उपयोग सीमित है।
- मिट्टी की खराब गुणवत्ता और बुनियादी सुविधाओं का अभाव भी उपज को प्रभावित करता है।

निष्कर्ष- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हमारा देश परम्परागत कृषि विकास योजना जैसी पहलों के माध्यम से धारणीय कृषि को बढ़ावा दे रहा है जिसमें जैविक खेती पर ध्यान केन्द्रित किया गया है और रासायनिक निर्भरता को कम किया जा रहा है। पीएम कुसुम जैसे कार्यक्रम अक्षय ऊर्जा का समर्थन करते हैं जो कि किसानों को पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं को अपनाने और दीर्घकालीन कृषि स्थिरता प्राप्त करने में मदद करते हैं। जलवायु परिवर्तन से निपटने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और संसाधनों के संरक्षण के लिए धारणीय कृषि को वैश्विक स्तर पर एक महत्वपूर्ण समाधान के रूप में मान्यता प्राप्त है। आज देश ऐसे अभिनव अभ्यास और नीतियाँ अपना रहे है जो पर्यावरण संरक्षण को आर्थिक और सामाजिक कल्याण के साथ संतुलित करते हैं। आज सम्पूर्ण विश्व जलवायु परिवर्तन से निपटने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए धारणीय कृषि प्रणाली को अपना रहा है। धारणीय कृषि से देश में नए-नए रोजगार के अवसर पैदा हो रहे है और ग्रामीण आजीविका के मानकों में सुधार हो रहा है। धारणीय कृषि प्रणाली से खेती में सिंथेटिक उर्वरकों जैसे इनपुट की बचत होती है और पैदावार बढ़ती है, लागत कम होती है और जैविक उत्पादों के लिए बाजार के अवसर बेहतर होते हैं, जिससे दीर्घकालीन वित्तीय सुरक्षा मिलती है।

संदर्भ सूची-

1. अग्रवाल, अनुपम एवं अग्रवाल, शरद, 2025, अर्थशास्त्र राजीव बंसल, एस.बी.पी.डी-पब्लिकेशन, आगरा।
2. कुमार, अजीत एवं जैन, अभिषेक, 2025, अर्थशास्त्र अरिहंत पब्लिकेशन, मेरठ।
3. पंचोली, मुकेश, 2024, व्याख्याता वाणिज्य, दृष्णा पब्लिकेशन, जयपुर।
4. जैन, संतोष एवं निषाद ज्योति, 2023, सरकार की विभिन्न योजनाओं में कृषि में नवाचार एवं ग्रामीण विकास, IJCRT, Volume-11, Issue March, 2023.
5. https://nconf.dac.gov.in
6. https://nmsa.dac.gov.in
7. https://www.nabard.org.in
8. www.static.pib.gov.in
9. https://rural.gov.in
10. https://www.gaonjunction.com

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

समकालीन हिंदी कविता में आध्यात्मिक शून्यता और मानवीय करुणा

•अम्बा शुक्ला

सारांश- समकालीन हिंदी कविता आधुनिक तथा उत्तर-आधुनिक समाज की उस आंतरिक स्थिति को अभिव्यक्त करती है जहाँ मनुष्य अर्थ-संकट, मूल्य-विघटन और संबंध-विच्छेद के बीच खड़ा है। यह स्थिति 'आध्यात्मिक शून्यता' के रूप में उभरती है, जो केवल धार्मिक आस्था के क्षय का नहीं, बल्कि जीवन-अर्थ, नैतिक दिशा और संवेदनात्मक संबंधों के क्षरण का संकेत है। समकालीन कविता इस शून्यता को सजावटी ढंग से नहीं, बल्कि आलोचनात्मक ईमानदारी के साथ दर्ज करती है। इसी के साथ, वह मानवीय करुणा को एक वैकल्पिक आध्यात्मिक शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करती है, जो भावुकता नहीं, बल्कि नैतिक उत्तरदायित्व और सह-अनुभूति का रूप है। यह शोध-पत्र समकालीन हिंदी कविता में आध्यात्मिक शून्यता के स्वरूपों का विश्लेषण करता है तथा दिखाता है कि मानवीय करुणा किस प्रकार इस शून्यता का प्रतिरोध और पुनर्निर्माण करती है।

मुख्य शब्द- समकालीन कविता, आध्यात्मिक शून्यता, मानवीय करुणा, अस्तित्वबोध, संवेदना

1. भूमिका- इक्कीसवीं सदी का मनुष्य अभूतपूर्व तकनीकी प्रगति, बाजारवादी संस्कृति और तीव्र सूचना–प्रवाह के बीच जी रहा है। बाह्य सुविधाएँ बढ़ी हैं, पर आंतरिक संतुलन डगमगाया है। परंपरागत आस्थाएँ प्रश्नांकित हुईं और उनके स्थान पर स्थायी वैचारिक आधार विकसित नहीं हो सका। परिणामस्वरूप मनुष्य के भीतर एक गहरा शून्य पैदा हुआ है, जो आध्यात्मिक भी है और नैतिक भी।

समकालीन हिंदी कविता इसी शून्यता का रचनात्मक दस्तावेज है। यह कविता किसी आदर्श लोक की स्थापना नहीं करती, बल्कि यथार्थ की दरारों में छिपी मनुष्यता को खोजती है। इस संदर्भ में निर्मल वर्मा का कथन उल्लेखनीय है–

"आधुनिक मनुष्य का सबसे गहरा संकट बाहरी अभाव नहीं, बल्कि आंतरिक रिक्तता है,
जो उसे अर्थहीन कर्मशीलता में धकेल देती है।"
(वर्मा, 2004, पृ. 47)

• हिंदी विभाग, शासकीय सुखराम नागे महाविद्यालय, नगरी, धमतरी (छत्तीसगढ़)

2. आध्यात्मिक शून्यता: वैचारिक विवेचन- आध्यात्मिक शून्यता का आशय ईश्वर-निषेध से अधिक अर्थ-निषेध से है। यह वह अवस्था है जहाँ जीवन लक्ष्यपूर्ण दिखता है, पर अर्थहीन अनुभव होता है; जहाँ संबंध हैं, पर आत्मीयता नहीं। समकालीन कविता इस शून्यता को अनुभूति के स्तर पर व्यक्त करती है, चुप्पी, अकेलेपन, विखंडित संवाद और प्रश्नाकुलता के माध्यम से। यहाँ कविता दार्शनिक समाधान नहीं देती; वह संकट को उसकी पूरी जटिलता के साथ सामने रखती है।

3. समकालीन हिंदी कविता में आध्यात्मिक शून्यता के रूप

(क) अस्तित्वगत अकेलापन- आधुनिक जीवन की भीड़ के बीच मनुष्य का अकेलापन कविता का केंद्रीय स्वर है। यह सामाजिक नहीं, आध्यात्मिक निर्वासन का परिणाम है। अशोक वाजपेयी की पंक्तियाँ इस स्थिति को सघन रूप में पकड़ती हैं-

"इतनी भीड़ है मेरे चारों ओर
कि अकेलेपन को भी जगह नहीं मिलती।"
(वाजपेयी, 1998, पृ. 81)

(ख) मूल्य-विघटन और नैतिक असमंजस- समकालीन कविता सही-गलत के स्थिर मानक नहीं देती। वह असमंजस को दर्ज करती है। इस प्रवृत्ति को नामवर पांडेय इस प्रकार रेखांकित करते हैं-

"आज की कविता सही और गलत का निर्णय नहीं सुनाती,
बल्कि उस असमंजस को दर्ज करती है जिसमें मनुष्य जी रहा है।"
(पांडेय, 1990, पृ. 66)

(ग) ईश्वर की चुप्पी- समकालीन कविता में ईश्वर अनुपस्थित नहीं, बल्कि मौन है। यह मौन आस्था के संकट का संकेत है। निर्मल वर्मा लिखते हैं-

"समकालीन कविता ईश्वर का निषेध नहीं करती,
वह उसकी अनुपस्थिति से उपजे प्रश्नों से जूझती है।"
(वर्मा, 2004, पृ. 53)

4. मानवीय करुणा: आध्यात्मिक शून्यता का प्रतिरोध- जहाँ आध्यात्मिक शून्यता मनुष्य को तोड़ती है, वहीं मानवीय करुणा उसे जोड़ती है। समकालीन कविता में करुणा कोई भावुक सहानुभूति नहीं, बल्कि नैतिक हस्तक्षेप है, जो शोषण, हिंसा और संवेदनहीनता के विरुद्ध खड़ा होता है। केदारनाथ सिंह का कथन इस करुणा का सार प्रस्तुत करता है—

"अगर कुछ बचा रह गया है इस समय में,
तो वह है मनुष्य के लिए मनुष्य की चिंता।"
(सिंह, 2001, पृ. 109)

5. करुणा का काव्यात्मक स्वरूप- समकालीन कविता में करुणा छोटे, साधारण बिंबों में व्यक्त होती है, भूखा बच्चा, थका मज़दूर, अकेली स्त्री। कविता बड़े घोषणापत्र नहीं रचती; वह अनुभव को साझा करती है। इस संदर्भ में अशोक वाजपेयी का कथन प्रासंगिक है-

"कविता का काम सहानुभूति जगाना नहीं, बल्कि संवेदना को जिम्मेदारी में बदलना है।"

(वाजपेयी, 1998, पृ. 86)

6. मानवीय आध्यात्मिकता का प्रस्ताव- समकालीन हिंदी कविता पारंपरिक आध्यात्मिकता का पुनर्पाठ करती है। यहाँ आध्यात्मिकता का अर्थ पूजा-पाठ नहीं, बल्कि मनुष्य के प्रति उत्तरदायित्व है। इस नई दृष्टि को सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की पंक्तियाँ सूत्रबद्ध करती हैं—

"सबसे बड़ा धर्म है
आदमी को आदमी बने रहने देना।"

(सक्सेना, 1978, पृ. 23)

7. निष्कर्ष- समकालीन हिंदी कविता आध्यात्मिक शून्यता की ईमानदार अभिव्यक्ति है, पर वह निराशा में समाप्त नहीं होती। मानवीय करुणा इसके भीतर आशा की वह नैतिक शक्ति है जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है। इस प्रकार कविता यह सिद्ध करती है कि जब पारंपरिक आस्थाएँ कमजोर पड़ जाएँ, तब भी संवेदना और उत्तरदायित्व जीवन को अर्थ दे सकते हैं।

संदर्भ सूची-

1. वर्मा, निर्मल, भारतीय संस्कृति और आधुनिक बोध, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ. 42–55।
2. वाजपेयी, अशोक, कुछ पूर्वग्रह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ. 73–88।
3. सिंह, केदारनाथ, मेरे समय के लोग, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 101–115।
4. सक्सेना, सर्वेश्वर दयाल, खूँटियों पर टँगे लोग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978, पृ. 19–27।
5. पांडेय, नामवर, कविता के नए प्रतिमान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990, पृ. 61–79।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 42, Hindi Edition, Year-21, Jan.- June 2025

हिंदी साहित्य में बदलते जीवन-मूल्य: एक ऐतिहासिक एवं विमर्शात्मक अध्ययन

• नीतिका तोमर

सारांश- हिंदी साहित्य भारतीय समाज की जीवन-दृष्टि, चेतना और मूल्यबोध का सशक्त दस्तावेज रहा है। समाज में होने वाले ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का सीधा प्रभाव जीवन-मूल्यों पर पड़ता है, और वही प्रभाव साहित्य में विविध रूपों में अभिव्यक्त होता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में हिंदी साहित्य की प्रमुख कालधाराओं आदिकाल से लेकर समकालीन काल तक में जीवन-मूल्यों के स्वरूप, उनके परिवर्तन की दिशा तथा मूल्य-संकट की समकालीन स्थिति का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य केवल मूल्य-ह्रास का चित्रण नहीं करता, बल्कि बदलते समय में नए मानवीय जीवन-मूल्यों की खोज और स्थापना की प्रक्रिया में भी सक्रिय भूमिका निभाता है।

मुख्य शब्द- हिंदी साहित्य, जीवन-मूल्य, सामाजिक परिवर्तन, आधुनिकता, मूल्य-संकट

1.प्रस्तावना- जीवन–मूल्य किसी भी समाज की वैचारिक और नैतिक संरचना का मूल आधार होते हैं। मनुष्य के आचरण, संबंधों और सामाजिक व्यवहार को ये मूल्य दिशा प्रदान करते हैं। साहित्य, विशेषत: हिंदी साहित्य, सदैव इन मूल्यों की अभिव्यक्ति, समीक्षा और पुनर्संरचना का माध्यम रहा है।

हिंदी साहित्य का इतिहास वस्तुत: भारतीय समाज में घटित मूल्यगत परिवर्तनों का इतिहास है। जैसे–जैसे समाज की चेतना बदली, वैसे–वैसे साहित्य में जीवन–मूल्यों की अवधारणा भी परिवर्तित होती गई। पीएचडी स्तर पर जीवन–मूल्यों का अध्ययन साहित्य को केवल सौंदर्यबोध तक सीमित न मानकर उसे सामाजिक–सांस्कृतिक विमर्श के रूप में देखने की अपेक्षा करता है।

2.जीवन-मूल्य: अवधारणा एवं सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य- जीवन–मूल्य वे नैतिक, सामाजिक और मानवीय सिद्धांत हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति और समाज अपने जीवन का संचालन करते हैं। सत्य, प्रेम, करुणा, समानता, स्वतंत्रता, न्याय और मानवीय गरिमा जीवन–मूल्यों के प्रमुख आयाम हैं।

• ग्राम + पोस्ट ऑफिस- लांघा, तहसील- विकासनगर, जिला- देहरादून

रामविलास शर्मा के अनुसार साहित्य समाज की चेतना का सघन रूप है, अत: सामाजिक मूल्य-परिवर्तन का प्रभाव साहित्य में स्वाभाविक रूप से परिलक्षित होता है। इसी दृष्टि से हिंदी साहित्य में जीवन-मूल्यों का अध्ययन सामाजिक इतिहास को समझने का भी एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

3.शोध-पद्धति- प्रस्तुत शोध-पत्र में निम्नलिखित पद्धतियों का प्रयोग किया गया है-

- ऐतिहासिक एवं कालक्रमिक पद्धति
- वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति
- समाजशास्त्रीय आलोचना
- पाठ-विश्लेषण
- अध्ययन मुख्यत: प्रामाणिक ग्रंथालयीय स्रोतों पर आधारित है।

4.आदिकालीन हिंदी साहित्य और जीवन-मूल्य- आदिकालीन हिंदी साहित्य सामंती सामाजिक व्यवस्था से गहराई से जुड़ा हुआ था। इस काल के साहित्य में जीवन-मूल्य मुख्यत: वीरता, स्वामिभक्ति, युद्ध, बलिदान और कुल-मर्यादा से संबंधित थे।

यहाँ व्यक्ति से अधिक राज्य, राजा और सत्ता को महत्व दिया गया। मानवीय करुणा, समानता और सामाजिक न्याय जैसे मूल्य अपेक्षाकृत गौण रहे। इस प्रकार आदिकालीन जीवन-मूल्य सामूहिक सत्ता-केंद्रित और सामंती चेतना से संचालित थे।

5.भक्तिकाल: मानवीय जीवन-मूल्यों की स्थापना- भक्तिकाल हिंदी साहित्य में जीवन-मूल्यों के इतिहास का एक महत्वपूर्ण मोड़ है। इस काल के संत और भक्त कवियों ने जीवन-मूल्यों को आध्यात्मिक आधार प्रदान करते हुए उन्हें मानवीय रूप दिया।

कबीर, रैदास और अन्य निर्गुण संतों ने जाति-पांति, ऊँच-नीच और धार्मिक पाखंड का विरोध किया तथा प्रेम, करुणा और समानता को जीवन-मूल्य के रूप में स्थापित किया।

सगुण भक्त कवियों, विशेषत: तुलसीदास, ने आदर्श पारिवारिक, सामाजिक और नैतिक मूल्यों को प्रस्तुत किया। इस प्रकार भक्तिकाल ने जीवन-मूल्यों का लोकतंत्रीकरण किया।

6.रीतिकाल: जीवन-मूल्यों का संकुचन- रीतिकाल में हिंदी साहित्य दरबारी वातावरण और शृंगारिक चेतना से प्रभावित हो गया। इस काल में जीवन-मूल्य सौंदर्य, भोग और विलास तक सीमित हो गए।

सामाजिक यथार्थ, मानवीय संघर्ष और नैतिक प्रश्न साहित्य के केंद्र से हट गए। परिणामस्वरूप जीवन-मूल्यों की व्यापक सामाजिक भूमिका इस काल में कमजोर पड़ती दिखाई देती है।

7.आधुनिक काल: जीवन-मूल्यों का पुनर्निर्माण- आधुनिक काल में हिंदी साहित्य ने सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना को जीवन-मूल्य के रूप में पुनर्स्थापित किया। भारतेंदु हरिश्चंद्र और द्विवेदी युग के साहित्यकारों ने साहित्य को समाज-सुधार का माध्यम बनाया।

स्वतंत्रता, राष्ट्रप्रेम, नारी-उद्धार, शिक्षा और सामाजिक न्याय जैसे मूल्य इस काल के साहित्य में प्रमुख रूप से उभरे। यह काल जीवन-मूल्यों के पुनर्निर्माण का काल माना जा सकता है।

8.छायावाद: व्यक्ति-केंद्रित जीवन-मूल्य- छायावादी साहित्य में जीवन-मूल्य व्यक्ति की आंतरिक चेतना से जुड़े हुए दिखाई देते हैं। आत्मसम्मान, सौंदर्यबोध, प्रकृति-प्रेम और आध्यात्मिक स्वतंत्रता इस काल के प्रमुख मूल्य हैं।

हालाँकि छायावाद में सामाजिक यथार्थ से दूरी भी देखने को मिलती है, फिर भी इसने व्यक्ति की गरिमा और आत्मिक स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण जीवन-मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित किया।

9.प्रगतिवाद: सामाजिक न्याय और वर्ग-चेतना- प्रगतिवादी साहित्य में जीवन-मूल्य सामाजिक यथार्थ और वर्ग-संघर्ष से जुड़े हुए हैं। प्रेमचंद, नागार्जुन और अन्य प्रगतिशील लेखकों ने शोषित, पीड़ित और श्रमिक वर्ग की समस्याओं को केंद्र में रखा। श्रम की गरिमा, सामाजिक समानता और मानवीय करुणा इस काल के प्रमुख जीवन-मूल्य हैं।

10.समकालीन हिंदी साहित्य और मूल्य-संकट- समकालीन हिंदी साहित्य में जीवन-मूल्य जटिल और द्वंद्वात्मक रूप में उपस्थित हैं। एक ओर उपभोक्तावाद, तकनीकी संस्कृति और नैतिक विघटन है, तो दूसरी ओर स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श और आदिवासी चेतना जैसे नए जीवन-मूल्य उभर रहे हैं। समकालीन साहित्य मूल्य-संकट के साथ-साथ मूल्य-खोज का भी साहित्य है।

11.बदलते जीवन-मूल्यों के कारण

क. औद्योगीकरण और शहरीकरण

ख. वैश्वीकरण और पूँजीवादी अर्थव्यवस्था

ग. तकनीकी विकास

घ. पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं का विघटन

12.निष्कर्ष- प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य में जीवन-मूल्य स्थिर नहीं रहे हैं। वे समय, समाज और चेतना के अनुसार निरंतर परिवर्तित होते रहे हैं। हिंदी साहित्य केवल मूल्य-ह्रास का दस्तावेज नहीं है, बल्कि वह नए मानवीय मूल्यों के निर्माण और पुनर्स्थापना की प्रक्रिया में भी सक्रिय भूमिका निभाता है। यही इसकी ऐतिहासिक और समकालीन प्रासंगिकता है।

संदर्भ सूची-

- शर्मा, रामविलास, साहित्य और समाज
- नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का समालोचनात्मक इतिहास
- प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य
- बच्चन सिंह, आधुनिक हिंदी साहित्य
- नामवर सिंह, दूसरी परंपरा की खोज

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

चुनाव परिणामों पर मतदान व्यवहार का प्रभाव: एक अध्ययन (मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश के संदर्भ में)

• वर्चसा सैनी

सारांश- लोकतांत्रिक व्यवस्था में चुनाव केवल प्रतिनिधि चयन की प्रक्रिया नहीं, बल्कि नागरिकों की राजनीतिक चेतना, सामाजिक संरचना और सामूहिक व्यवहार का दर्पण होते हैं। मतदान व्यवहार वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मतदाता अपने सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, जातिगत, शैक्षिक एवं वैचारिक प्रभावों के आधार पर अपने मत का प्रयोग करता है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य मुज़फ्फरनगर (उत्तर प्रदेश) जिले के संदर्भ में यह विश्लेषण करना है कि विभिन्न सामाजिक वर्गों का मतदान व्यवहार चुनाव परिणामों को किस प्रकार प्रभावित करता है। मुज़फ्फरनगर एक सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से विविध जिला है, जहाँ कृषि आधारित अर्थव्यवस्था, जातीय संरचना, धार्मिक बहुलता और राजनीतिक जागरूकता चुनावी व्यवहार को प्रभावित करती है। इस अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्रोतों का प्रयोग करते हुए 60 उत्तरदाताओं का चयन किया गया, जिनमें सामान्य वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के मतदाता सम्मिलित हैं। शोध में यह स्पष्ट हुआ कि जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक विचारधारा और स्थानीय मुद्दे मतदान निर्णय को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि मतदान व्यवहार का सीधा प्रभाव चुनाव परिणामों पर पड़ता है और लोकतंत्र की दिशा निर्धारित करने में इसकी केंद्रीय भूमिका है।

मुख्य शब्द- मतदान व्यवहार, चुनाव परिणाम, लोकतंत्र, राजनीतिक भागीदारी, जाति, वर्ग

मतदान व्यवहार से आशय मतदाताओं द्वारा चुनाव के समय किसी विशेष प्रत्याशी या दल के पक्ष में मतदान करने की प्रवृत्ति से है। यह व्यवहार सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, जातिगत, शैक्षिक और राजनीतिक कारकों से प्रभावित होता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से मतदान व्यवहार को सामाजिक संरचना और सामूहिक चेतना का परिणाम माना जाता है।

• अस्सिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, जे.के.पी. (पीजी) कॉलेज, मुज़फ्फरनगर उत्तर प्रदेश

अवधारणात्मक विश्लेषण- प्रस्तुत अध्ययन का अवधारणात्मक ढाँचा "मतदान व्यवहार" को केंद्र में रखकर विकसित किया गया है, क्योंकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में यही वह मूल प्रक्रिया है जिसके माध्यम से जनता अपनी राजनीतिक इच्छा, सामाजिक चेतना और सामूहिक आकांक्षाओं को अभिव्यक्त करती है। मतदान व्यवहार केवल मतदान करने की क्रिया मात्र नहीं है, बल्कि यह एक जटिल सामाजिक–राजनीतिक प्रक्रिया है, जो व्यक्ति के सामाजिक परिवेश, आर्थिक परिस्थिति, सांस्कृतिक मूल्य, धार्मिक विश्वास, जातिगत पहचान, शिक्षा स्तर, राजनीतिक विचारधारा तथा समसामयिक मुद्दों से प्रभावित होकर निर्मित होती है। मतदान व्यवहार को व्यक्ति और समाज के अंत:संबंध का प्रतिफल माना जाता है। कोई भी मतदाता सामाजिक शून्य में निर्णय नहीं लेता, बल्कि वह जिस समाज, वर्ग, जाति, धर्म और आर्थिक संरचना में रहता है, वही उसके राजनीतिक दृष्टिकोण को आकार देती है। इसीलिए मतदान व्यवहार को "व्यक्तिगत चयन" के साथ–साथ "सामूहिक सामाजिक प्रक्रिया" के रूप में समझना आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन में यही मान्यता अवधारणात्मक आधार के रूप में स्वीकार की गई है।

इस अवधारणात्मक ढाँचे का पहला प्रमुख घटक सामाजिक संरचना है। सामाजिक संरचना में जाति, वर्ग, धर्म और समुदाय जैसे तत्व सम्मिलित होते हैं। भारतीय समाज, विशेषकर उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में, जाति अभी भी सामाजिक संगठन का एक प्रभावी आधार बनी हुई है। जातिगत पहचान न केवल सामाजिक संबंधों को निर्धारित करती है, बल्कि राजनीतिक निष्ठाओं और मतदान निर्णयों को भी प्रभावित करती है। मुज़फ्फरनगर जैसे बहुजातीय जिले में विभिन्न जाति समूहों के सामूहिक हित, पारंपरिक नेतृत्व और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की आकांक्षा मतदान व्यवहार को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है।

दूसरा महत्वपूर्ण घटक आर्थिक स्थिति है। मतदाता की आय, आजीविका का साधन, रोजगार की स्थिरता और सरकारी योजनाओं पर निर्भरता उसके मतदान निर्णय में निर्णायक भूमिका निभाती है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग सामान्यत: उन राजनीतिक दलों और प्रत्याशियों की ओर आकर्षित होता है, जो कल्याणकारी योजनाओं, सब्सिडी, रोजगार और स्थानीय विकास के वादे करते हैं। इसके विपरीत, आर्थिक रूप से सशक्त वर्ग अपेक्षाकृत नीतिगत, दीर्घकालिक और वैचारिक मुद्दों को महत्व देता है। इस प्रकार आर्थिक स्थिति मतदान व्यवहार और अंतत: चुनाव परिणामों को प्रभावित करने वाला एक केंद्रीय कारक बन जाती है।

अवधारणात्मक ढाँचे का तीसरा घटक शिक्षा और राजनीतिक चेतना है। शिक्षा न केवल ज्ञान का माध्यम है, बल्कि यह व्यक्ति में तर्कशीलता, विवेक और आलोचनात्मक दृष्टि भी विकसित करती है। उच्च शिक्षित मतदाता भावनात्मक या जातिगत अपीलों की तुलना में नीति, विकास, शासन क्षमता और वैचारिक स्पष्टता को अधिक महत्व देता है। वहीं, कम शिक्षित या अशिक्षित मतदाता परंपरा, समुदाय और स्थानीय प्रभावों से अधिक प्रभावित हो सकता है। इस अध्ययन में शिक्षा को मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाला एक सशक्त मध्यस्थ माना गया है।

चौथा प्रमुख घटक राजनीतिक विचारधारा और दलगत निष्ठा है। लोकतांत्रिक राजनीति में राजनीतिक दल केवल संगठन नहीं होते, बल्कि वे विशिष्ट विचारधाराओं, मूल्यों और दृष्टिकोणों का प्रतिनिधित्व करते हैं। मतदाता प्रायः किसी दल की विचारधारा, उसके नेतृत्व, ऐतिहासिक भूमिका और सामाजिक आधार से जुड़ाव महसूस करता है। यह वैचारिक प्रतिबद्धता मतदान व्यवहार को स्थायित्व प्रदान करती है और चुनाव परिणामों को दीर्घकालिक रूप से प्रभावित करती है।

अवधारणात्मक ढाँचे का पाँचवाँ तत्व स्थानीय मुद्दे और परिस्थितियाँ हैं। रोजगार, कृषि, गन्ना मूल्य, कानून-व्यवस्था, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी स्थानीय समस्याएँ मतदाताओं के दैनिक जीवन से सीधे जुड़ी होती हैं। इसलिए ये मुद्दे मतदान निर्णय में अत्यंत प्रभावी भूमिका निभाते हैं। मुज़फ्फरनगर जैसे कृषि-प्रधान जिले में स्थानीय आर्थिक और सामाजिक मुद्दे राष्ट्रीय या वैचारिक प्रश्नों की तुलना में अधिक निर्णायक सिद्ध होते हैं।

इन सभी घटकों का संयुक्त प्रभाव मतदान व्यवहार को निर्मित करता है, और यही मतदान व्यवहार आगे चलकर चुनाव परिणामों को निर्धारित करता है। इस प्रकार अवधारणात्मक ढाँचा यह स्पष्ट करता है कि चुनाव परिणाम किसी एक कारक का परिणाम नहीं होते, बल्कि वे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, वैचारिक और स्थानीय तत्वों के पारस्परिक अंतःक्रिया से उत्पन्न होते हैं। अतः प्रस्तुत अध्ययन का अवधारणात्मक विश्लेषण यह मानता है कि मतदान व्यवहार लोकतांत्रिक व्यवस्था की आत्मा है। इसके माध्यम से समाज की संरचना, प्राथमिकताएँ और चेतना चुनाव परिणामों के रूप में परिलक्षित होती हैं। मुज़फ्फरनगर के संदर्भ में यह ढाँचा यह समझने में सहायक सिद्ध होता है कि किस प्रकार विविध सामाजिक-आर्थिक तत्व मिलकर मतदाता के निर्णय को प्रभावित करते हैं और लोकतांत्रिक राजनीति की दिशा निर्धारित करते हैं।

समस्या का परिचय एवं अध्ययन की पृष्ठभूमि- भारत जैसे विशाल लोकतांत्रिक देश में चुनावी राजनीति अत्यंत जटिल और बहुआयामी है। मतदाताओं का व्यवहार केवल व्यक्तिगत पसंद का परिणाम नहीं होता, बल्कि सामाजिक संरचना, परंपरा, सामूहिक स्मृति और राजनीतिक वातावरण से निर्मित होता है।

मुजफ्फरनगर जिला उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में स्थित है और इसे "भारत का चीनी बाउल" कहा जाता है। यहाँ की अर्थव्यवस्था कृषि, गन्ना उत्पादन, चीनी मिलों, इस्पात और कागज उद्योग पर आधारित है। सामाजिक –ष्टि से यह जिला बहुजातीय, बहुधार्मिक और राजनीतिक रूप से संवेदनशील क्षेत्र रहा है। इस पृष्ठभूमि में यह जानना आवश्यक हो जाता है कि यहाँ के मतदाता किन आधारों पर मतदान करते हैं और उनका यह व्यवहार चुनाव परिणामों को किस प्रकार प्रभावित करता है।

शोध का महत्व, उद्देश्य एवं अध्ययन की सीमाएँ

(क) शोध का महत्व

- लोकतांत्रिक प्रक्रिया की गहन समझ विकसित करना
- मतदान व्यवहार के सामाजिक कारकों का विश्लेषण
- चुनावी राजनीति में जनसहभागिता की भूमिका स्पष्ट करना

(ख) शोध के उद्देश्य

1. मतदान व्यवहार की प्रकृति का अध्ययन करना
2. सामाजिक वर्गों के मतदान पैटर्न का विश्लेषण करना
3. चुनाव परिणामों पर मतदान व्यवहार के प्रभाव को समझना

(ग) अध्ययन की सीमाएँ

अध्ययन केवल मुजफ्फरनगर जिले तक सीमित है

नमूना आकार सीमित (60 उत्तरदाता) है

साहित्य समीक्षा- पूर्व शोधों में मतदान व्यवहार को विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन किया गया है।

लिपसेट (1960) ने सामाजिक वर्ग और राजनीतिक व्यवहार के संबंध को स्पष्ट किया।

एंडरसन (1995) ने जाति और चुनावी राजनीति के प्रभाव को रेखांकित किया।

भारतीय संदर्भ में योगेंद्र यादव और सुहास पलशीकर ने मतदान व्यवहार को सामाजिक न्याय और पहचान की राजनीति से जोड़ा।

इन अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि मतदान व्यवहार सामाजिक संरचना का प्रतिबिंब है। प्रस्तुत अध्ययन इन शोधों को स्थानीय संदर्भ में आगे बढ़ाता है।

शोध समस्या- मुजफ्फरनगर जिले में विभिन्न सामाजिक वर्गों के मतदान व्यवहार का चुनाव परिणामों पर क्या प्रभाव पड़ता है? यह समस्या सामाजिक और राजनीतिक दोनों –ष्टियों से महत्वपूर्ण है।

परिकल्पनाएँ

1. जातिगत पहचान मतदान व्यवहार को प्रभावित करती है।
2. आर्थिक स्थिति और शिक्षा स्तर मतदान निर्णय को प्रभावित करते हैं।
3. मतदान व्यवहार का चुनाव परिणामों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

शोध पद्धति-

(क) शोध का प्रकार- वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक

(ख) डेटा के स्रोत

प्राथमिक स्रोत – साक्षात्कार, प्रश्नावली

द्वितीयक स्रोत – पुस्तकें, शोध पत्र, सरकारी रिपोर्ट

(ग) नमूना तकनीक

स्तरीकृत यादृच्छिक नमूना

उत्तरदाताओं की संख्या – 60

सामान्य वर्ग – 20

अनुसूचित जाति – 20

अनुसूचित जनजाति – 20

डेटा विश्लेषण एवं प्रस्तुति

तालिका 01

क्या जाति आपके मतदान निर्णय को प्रभावित करती है?

उत्तर	संख्या
हाँ	38
नहीं	22

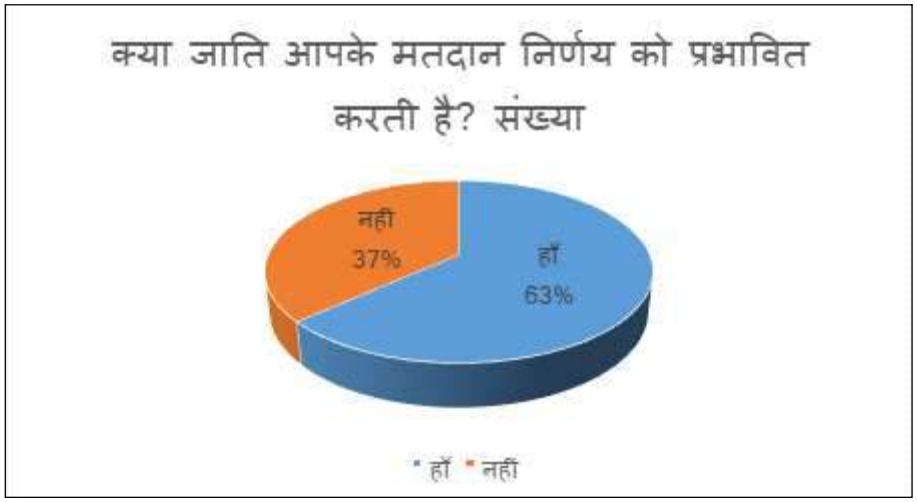

तालिका 01 के अनुसार जाति के मतदान निर्णय पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 38 उत्तरदाता, अर्थात् लगभग 63 प्रतिशत, इस मत से सहमत पाए गए कि जाति उनके मतदान निर्णय को प्रभावित करती है, जबकि 22 उत्तरदाता, जो लगभग 37 प्रतिशत हैं, ने यह माना कि जाति का उनके मतदान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह आँकड़े स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि बहुसंख्यक मतदाताओं के लिए जातिगत पहचान आज भी एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व बनी हुई है। विशेषकर पारंपरिक सामाजिक संरचना वाले क्षेत्रों में जाति मतदाता की राजनीतिक पसंद और दलगत झुकाव को प्रभावित करती है। हालांकि एक उल्लेखनीय अल्पसंख्यक वर्ग ऐसा भी है जो जातिगत प्रभाव से ऊपर उठकर मतदान करता है, फिर भी समग्र रूप से जाति का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

तालिका 02

शिक्षा स्तर का मतदान व्यवहार पर प्रभाव

शिक्षा स्तर	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रभावित (प्रतिशत)	अप्रभावित (प्रतिशत)
प्राथमिक / अशिक्षित	18	14	04
माध्यमिक	22	15	07
उच्च शिक्षा	22	11	09
कुल	60	40 (67 प्रतिशत)	20 (33 प्रतिशत)

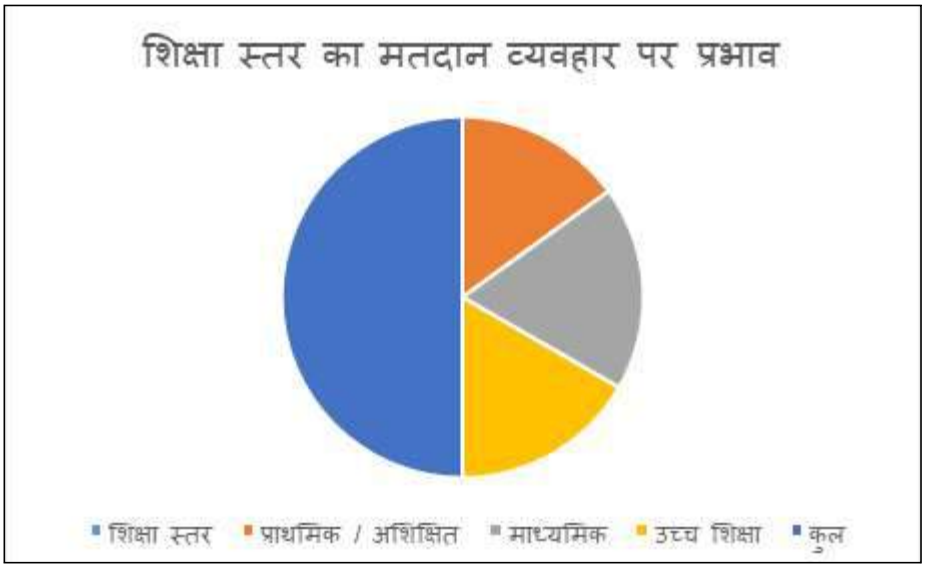

तालिका 02 के आधार पर शिक्षा स्तर और मतदान व्यवहार के संबंध का विश्लेषण किया गया। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 40 उत्तरदाता, अर्थात् लगभग 67 प्रतिशत, मतदान निर्णय में किसी न किसी रूप में प्रभावित पाए गए, जबकि 20 उत्तरदाता (33 प्रतिशत) अप्रभावित रहे। प्राथमिक अथवा अशिक्षित वर्ग में 78 प्रतिशत मतदाता प्रभावित पाए गए, जो यह दर्शाता है कि यह वर्ग भावनात्मक, जातिगत और पारंपरिक कारकों से अधिक प्रभावित होता है। माध्यमिक शिक्षा प्राप्त मतदाताओं में यह प्रतिशत घटकर 68 रहा, जबकि उच्च शिक्षा वर्ग में केवल 55 प्रतिशत मतदाता प्रभावित पाए गए। इससे स्पष्ट होता है कि जैसे-जैसे शिक्षा स्तर बढ़ता है, वैसे-वैसे मतदान में विवेकपूर्ण और स्वतंत्र निर्णय की प्रवृत्ति सशक्त होती जाती है।

तालिका 03

आर्थिक स्थिति एवं मतदान निर्णय

आर्थिक स्थिति	उत्तरदाता	मतदान निर्णय पर प्रभाव
निम्न आय वर्ग	24	18 (75 प्रतिशत)
मध्यम आय वर्ग	26	16 (62 प्रतिशत)
उच्च आय वर्ग	10	04 (40 प्रतिशत)
कुल- 60	38	18 (63 प्रतिशत)

तालिका 03 के आधार पर आर्थिक स्थिति और मतदान निर्णय के बीच संबंध का विश्लेषण किया गया। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 38 उत्तरदाता, अर्थात् लगभग 63 प्रतिशत, मतदान निर्णय में आर्थिक कारकों से प्रभावित पाए गए, जबकि शेष 22 उत्तरदाता (37 प्रतिशत) अपेक्षाकृत अप्रभावित रहे। निम्न आय वर्ग के 24 उत्तरदाताओं में से 18, यानी 75 प्रतिशत मतदाता प्रभावित पाए गए, जिससे स्पष्ट होता है कि यह वर्ग सरकारी योजनाओं, सब्सिडी और तात्कालिक लाभों से अधिक प्रभावित होता है। मध्यम आय वर्ग में यह प्रभाव 62 प्रतिशत रहा, जबकि उच्च आय वर्ग में केवल 40 प्रतिशत मतदाता प्रभावित पाए गए। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जैसे-जैसे आर्थिक

सशक्तता बढ़ती है, मतदान निर्णय अधिक स्वतंत्र और विचाराधारित होता जाता है।

तालिका 04
स्थानीय मुद्दों का मतदान पर प्रभाव

स्थानीय मुद्दे	प्रभावित उत्तरदाता	प्रतिशत
रोजगार	18	30
कृषि एवं गन्ना मूल्य	16	27
कानून-व्यवस्था	14	23
शिक्षा/स्वास्थ्य	12	20
कुल	60	100

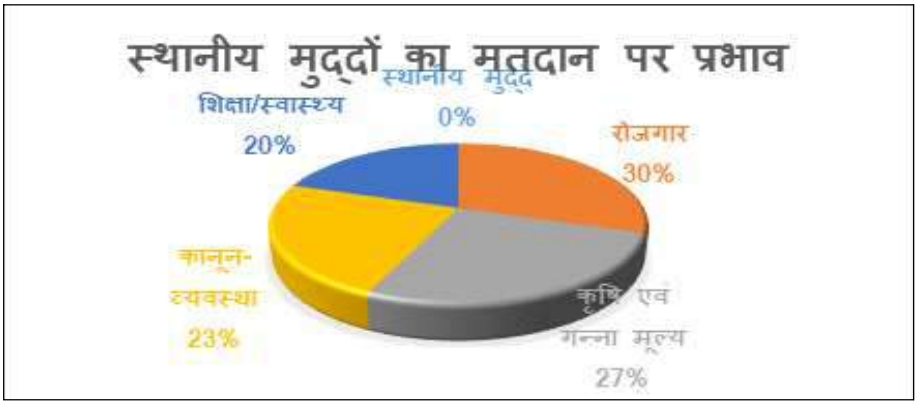

तालिका 04 के अनुसार स्थानीय मुद्दों का मतदान व्यवहार पर महत्वपूर्ण प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कुल 60 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 18 उत्तरदाता, अर्थात् 30 प्रतिशत, ने रोजगार को अपने मतदान निर्णय का प्रमुख आधार बताया। इसके बाद कृषि एवं गन्ना मूल्य से जुड़े मुद्दों को 16 उत्तरदाताओं (27 प्रतिशत) ने महत्वपूर्ण माना, जो जिले की कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था को दर्शाता है। कानून-व्यवस्था को 14 उत्तरदाताओं (23 प्रतिशत) ने प्रभावी कारक माना, जबकि शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसे सामाजिक विकास से जुड़े मुद्दों को 12 उत्तरदाताओं (20 प्रतिशत) ने प्राथमिकता दी। यह विश्लेषण स्पष्ट करता है कि मतदाता अपने दैनिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े स्थानीय मुद्दों के आधार पर मतदान करते हैं, और यही मुद्दे सामूहिक रूप से चुनाव परिणामों को दिशा प्रदान करते हैं।

तालिका 05
राजनीतिक दल की विचारधारा का प्रभाव

विचारधारा से प्रभावित	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
हाँ	34	57
नहीं	26	43
कुल	60	100

तालिका 05 के आधार पर राजनीतिक दल की विचारधारा के मतदान व्यवहार पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया। कुल 60 उत्तरदाताओं में से 34 उत्तरदाता, अर्थात् 57 प्रतिशत,

ने यह स्वीकार किया कि वे किसी न किसी राजनीतिक दल की विचारधारा से प्रभावित होकर मतदान करते हैं, जबकि 26 उत्तरदाता, जो लगभग 43 प्रतिशत हैं, ने स्वयं को वैचारिक प्रभाव से मुक्त बताया। यह आँकड़े दर्शाते हैं कि बहुसंख्यक मतदाताओं के लिए राजनीतिक विचारधारा अब भी मतदान निर्णय का एक महत्वपूर्ण आधार बनी हुई है। विशेष रूप से शिक्षित और जागरूक मतदाताओं में वैचारिक प्रतिबद्धता अधिक स्पष्ट दिखाई देती है। हालांकि एक उल्लेखनीय वर्ग ऐसा भी है जो व्यक्ति, स्थानीय मुद्दों या तात्कालिक लाभों को प्राथमिकता देता है, फिर भी समग्र रूप से विचारधारा चुनावी व्यवहार और परिणामों को प्रभावित करने वाला सशक्त कारक सिद्ध होती है।

इन तालिकाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा, आर्थिक स्थिति, स्थानीय मुद्दे और राजनीतिक विचारधारा सभी मिलकर मतदान व्यवहार को प्रभावित करते हैं। परिणामस्वरूप चुनाव परिणाम केवल संख्यात्मक प्रक्रिया नहीं, बल्कि सामाजिक-आर्थिक संरचना का प्रतिफल होते हैं।

परिकल्पनाओं का सत्यापन- प्रस्तुत अध्ययन में निर्धारित परिकल्पनाओं का सत्यापन तालिकाओं से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर किया गया है। यह विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि मुजफ्फरनगर जिले में मतदाताओं का मतदान व्यवहार किस प्रकार विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारकों से प्रभावित होकर चुनाव परिणामों को दिशा देता है।

प्रथम परिकल्पना यह थी कि जातिगत पहचान मतदान व्यवहार को प्रभावित करती है। तालिका 01 के अनुसार कुल 60 उत्तरदाताओं में से 38 (लगभग 63 प्रतिशत) ने स्वीकार किया कि जाति उनके मतदान निर्णय को प्रभावित करती है, जबकि 22 उत्तरदाताओं ने इसे अस्वीकार किया। यह बहुमत दर्शाता है कि जातिगत संरचना अभी भी मतदान व्यवहार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। विशेष रूप से ग्रामीण और परंपरागत सामाजिक ढाँचे में जाति एक संगठक तत्व के रूप में उभरती है, जो प्रत्याशी चयन और दलगत समर्थन को प्रभावित करती है। अत: आँकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रथम परिकल्पना पूर्णत: सत्य सिद्ध होती है।

द्वितीय परिकल्पना में यह माना गया था कि आर्थिक स्थिति और शिक्षा स्तर मतदान निर्णय को प्रभावित करते हैं। तालिका 02 एवं तालिका 03 के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा और आय, दोनों ही कारक मतदान व्यवहार को प्रभावित करते हैं, किंतु इनका प्रभाव समान रूप से नहीं पाया गया। कम शिक्षित वर्ग में 78 प्रतिशत मतदाता मतदान निर्णय में प्रभावित पाए गए, जबकि उच्च शिक्षा वर्ग में यह प्रतिशत घटकर 55 रह गया। इसी प्रकार, निम्न आय वर्ग के 75 प्रतिशत मतदाता आर्थिक कारकों से प्रभावित पाए गए, जबकि उच्च आय वर्ग में यह प्रभाव केवल 40 प्रतिशत रहा। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा और आर्थिक स्थिति मतदान व्यवहार को प्रभावित तो करती है, परंतु उच्च शिक्षा और आय के साथ मतदाता अपेक्षाकृत विवेकपूर्ण और नीति-आधारित निर्णय लेते हैं। इस प्रकार द्वितीय परिकल्पना आंशिक रूप से सत्य सिद्ध होती है, क्योंकि प्रभाव सभी वर्गों में समान तीव्रता से नहीं पाया गया।

तृतीय परिकल्पना यह थी कि मतदान व्यवहार का चुनाव परिणामों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। तालिका 04 और तालिका 05 के निष्कर्ष इस परिकल्पना को मजबूत आधार प्रदान करते हैं। स्थानीय मुद्दों जैसे रोजगार, कृषि एवं गन्ना मूल्य, कानून-व्यवस्था तथा शिक्षा-स्वास्थ्य ने मतदाताओं के निर्णय को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया। इसके अतिरिक्त, 57 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा राजनीतिक विचारधारा से प्रभावित होकर मतदान करना यह दर्शाता है कि मतदान व्यवहार केवल व्यक्तिगत पसंद नहीं, बल्कि सामाजिक-आर्थिक और वैचारिक कारकों का समन्वित परिणाम है। चूँकि यही व्यवहार अंततः प्रत्याशियों की विजय-पराजय और सत्ता संरचना को निर्धारित करता है, अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि मतदान व्यवहार का चुनाव परिणामों पर प्रत्यक्ष और निर्णायक प्रभाव पड़ता है। इस आधार पर तृतीय परिकल्पना पूर्णतः सत्य सिद्ध होती है।

निष्कर्ष- समग्र रूप से, तालिकाओं पर आधारित यह विश्लेषण प्रमाणित करता है कि मुज़फ्फरनगर जिले में मतदान व्यवहार सामाजिक संरचना, आर्थिक परिस्थिति, शिक्षा स्तर, स्थानीय मुद्दों और राजनीतिक विचारधारा के अंतर्संबंध से निर्मित होता है। यही संयुक्त प्रभाव चुनाव परिणामों को आकार देता है और लोकतांत्रिक प्रक्रिया की वास्तविक दिशा निर्धारित करता है। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि मतदान व्यवहार चुनाव परिणामों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। जाति, वर्ग, धर्म और आर्थिक स्थिति मतदाताओं के निर्णय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मुज़फ्फरनगर जैसे विविधतापूर्ण जिले में मतदान व्यवहार लोकतांत्रिक राजनीति की दिशा निर्धारित करता है।

संदर्भ सूची-

- लिपसेट, एस. एम. (1960), पॉलिटिकल मैन: सोशल बेसिस ऑफ पॉलिटिक्स, न्यूयॉर्क
- एंडरसन, जे. (1995), कास्ट एंड इलेक्टोरल पॉलिटिक्स इन इंडिया, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
- यादव, योगेन्द्र. (1999), भारत में चुनावी राजनीति. नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
- यादव, योगेन्द्र, एवं पलशीकर, सुहास. (2006), भारत में लोकतंत्र और चुनावी व्यवहार, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स
- दुबे, एस. सी. (2001), आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन
- कोठारी, सी. आर. (2014), शोध पद्धति: विधियाँ एवं तकनीकें, नई दिल्ली, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स
- भारत निर्वाचन आयोग, (2022), भारत में चुनावों पर सांख्यिकीय प्रतिवेदन, नई दिल्ली, भारत सरकार
- भारत सरकार (2011), जनगणना 2011: जिला जनगणना पुस्तिका, मुजफ्फरनगर
- शर्मा, आर. एन. (2010), भारतीय समाजशास्त्र, जयपुर, रावत पब्लिकेशन्स
- सिंह, के. एस. (2005), भारत की जाति संरचना और राजनीति, नई दिल्ली, पियर्सन एजुकेशन

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

बुंदेली लोक परंपराओं में स्त्री की स्थिति: साहित्यिक और सामाजिक अध्ययन

•कुमारी रश्मि
•• के. सी. जैन

सारांश- साहित्यिक और सामाजिक अध्ययन बुंदेलखंड की समृद्ध लोक संस्कृति के संदर्भ में स्त्री जीवन के विभिन्न आयामों की जांच करता है। बुंदेलखंड, मध्य भारत का एक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र, लोकगीतों, व्रत-कथाओं, लोककथाओं तथा परंपराओं के लिए जाना जाता है, जहां स्त्री को भावुकता, समर्पण और विरह से जोड़ा गया है। स्त्री को साहित्यिक रूप से लोकगीतों (जैसे फाग, कजरी, दादरा) तथा गाथाओं में प्रेम, त्याग और दृढ़ता की प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है, जबकि सामाजिक रूप से वह परिवार की संरक्षक, कृषि और घरेलू कामों की प्रमुख भागीदार तथा सांस्कृतिक परंपराओं की संवाहक है। पत्र का मुख्य उद्देश्य लोक साहित्य और परंपराओं के माध्यम से स्त्री सशक्तिकरण के तत्वों (साहस और भावनात्मक अभिव्यक्ति) और चुनौतियों (पितृसत्तात्मक बंधन, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक अपेक्षाएं) का विश्लेषण करना है। शोध विधि मुख्यत: माध्यमिक स्रोतों पर आधारित है; ये शामिल हैं बुंदेली लोक साहित्य संग्रह, विद्वानों के कार्य (जैसे नर्मदा प्रसाद गुप्त सहित) और सांस्कृतिक दस्तावेजों का गुणात्मक अध्ययन। निष्कर्ष की ओर संकेत करते हुए, यह स्पष्ट होता है कि बुंदेली लोक परंपराएं स्त्री को समर्पित, सशक्त और पुरुष-निर्भर भूमिकाओं तक सीमित करती हैं। शिक्षा, वैश्वीकरण और महिला सशक्तिकरण आंदोलन के कारण आज बदलाव की जरूरत है, ताकि परंपरागत सम्मान के साथ समानता और स्वतंत्रता मिल सकें।

मुख्य शब्द- बुंदेली लोक साहित्य, स्त्री-विमर्श, सामाजिक स्थिति, लोकगीत, सशक्तिकरण, बुंदेलखंड संस्कृति

परिचय- बुंदेलखंड मध्य भारत का एक प्राचीन और समृद्ध भौगोलिक–सांस्कृतिक क्षेत्र है, जो वर्तमान में उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के कुछ जिलों में फैला हुआ है। इसे यमुना, चंबल, बेतवा, केन और नर्मदा की नदियों ने बनाया है, जो इसे अलग बनाते हैं। पुराने

• शोधार्थी, हिंदी, महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविधालय छतरपुर, शोध केंद्र - शासकीय स्नातोकत्तर महाविधालय टीकमगढ़
•• प्राध्यापक, हिंदी, शासकीय स्नातोकत्तर महाविधालय टीकमगढ़

समय में इसे 'जेजाकभुक्ति' या 'जुझौतीखंड' कहा जाता था, लेकिन मध्यकालीन बुंदेल राजवंशों के उदय के साथ इसे 'बुंदेलखंड' कहा जाता था। यह क्षेत्र एक कृषि-आधारित समाज का हिस्सा है, जहाँ सूखा, जल संकट और पठारी भूमि मुख्य बातें हैं। इसकी संस्कृति वैदिक काल से लेकर चंदेल, बुंदेला और मराठा शासन के दौरान विकसित हुई है। चंदेल वंश के खजुराहो मंदिर और बुंदेला राजाओं की वीर गाथाएँ इसकी सांस्कृतिक धरोहर का सबूत हैं। यहाँ की लोक परंपराएँ, जैसे राई नृत्य, आल्हा गान और कई त्योहार, जीवंत हैं।

बुंदेलखंड के ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्री की सामाजिक स्थिति बहुत जटिल और विवादपूर्ण रही है। एक ओर, पितृसत्तात्मक व्यवस्था में बेटों की तुलना में बेटों को शिक्षा, संपत्ति और संसाधनों में अधिक प्राथमिकता दी जाती है, इसलिए पुत्र वरीयता प्रबल है। विशेषकर ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा की कमी है, जिससे उनकी साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से कम है। यह भी एक बड़ी चुनौती है कि आप अपने पैसे पर निर्भर हैं; महिलाएँ मुख्यतः घरेलू कार्य, कृषि मजदूरी और जल-इंधन संग्रहण में काम करती हैं, लेकिन उनकी भूमिका आय या निर्णय लेने में सीमित है। महिलाएँ जल संकट से बचने के लिए लंबी दूरी तय कर पानी लाती हैं, जो उनकी दैनिक जिम्मेदारी बढ़ाती है। फिर भी, लोक परंपराओं में स्त्री को साहस, धैर्य और समर्पण की प्रतीक के रूप में देखा जाता है, जैसे वीरांगनाओं की गाथाएँ (झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई) या सती प्रथा की लोककथाएँ, जो उनकी रक्षा की भावना (सम्मान) स्त्री को साहित्यिक संदर्भ में बुंदेली लोक परंपराएँ केंद्र में रखती हैं। पतिव्रत धर्म कथाओं, जैसे करवाचौथ और वटसावित्री पर आधारित है। करवाचौथ की कथाओं (जैसे करवा या वीरवती की कहानी) में स्त्री का त्याग और समर्पण पति के लिए दिखाया जाता है, जहाँ वह चंद्रमा को अर्घ्य देकर निर्जल व्रत रखती है। सावित्री-सत्यवान की कथा वटसावित्री व्रत में सावित्री की साहस और पति को यम से छीनने की दृढ़ता को दिखाती है। स्त्री की भावनाएँ, जैसे प्रेम, विरह, संघर्ष और सौंदर्य, लोकगीतों (जैसे कजरी, फाग, राई) और नाट्य (जैसे दीवारी या अखाड़ा नृत्य) में महत्वपूर्ण हैं। महिलाएँ अक्सर ये गीत गाती हैं, जो उनकी भावनाओं को व्यक्त करती हैं।

क्या बुंदेली लोक परंपराएँ वास्तव में स्त्री को सशक्त बनाती हैं या उसे पारिवारिक और पितृसत्तात्मक बंधनों में बांधती हैं? स्त्री को लोक साहित्य में दृढ़ और त्यागी चित्रित किया जाता है, लेकिन यह अधिकतर पुरुष-निर्भर भूमिकाओं (पत्नी, माँ) तक सीमित है। आजकल, महिलाओं की स्वतंत्रता को सामाजिक मानसिकता, कम शिक्षा और आर्थिक निर्भरता ने बाधित किया है। यह अध्ययन लोक परंपराओं के माध्यम से स्त्री विमर्श को समझने की कोशिश करता है, जो सांस्कृतिक संरक्षण और सामाजिक परिवर्तन की जरूरत है। महिला सशक्तिकरण और वैश्वीकरण के दौर में इन परंपराओं की पुनर्व्याख्या आवश्यक है।

नाटक, लोकगीत और व्रत-कथाओं का विश्लेषण करके इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सामाजिक दृष्टिकोण खोजना है। यह स्त्री की स्थिति को लोक परंपराओं से कैसे प्रतिबिंबित और प्रभावित किया जाता है, साथ ही आधुनिक नारीवादी दृष्टिकोण से उनकी व्याख्या कैसे की जा सकती है। साहित्य समीक्षा, विधि, विश्लेषण और निष्कर्ष आगे के खंडों में दिखाए जाएंगे।

साहित्य समीक्षा- बुंदेली लोक साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण लेकिन कम खोजा गया विषय रहा है। मौजूदा अध्ययनों में डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त का योगदान महत्वपूर्ण है, जो बुंदेलखंड की लोक संस्कृति पर केंद्रित हैं। बुंदेलखंड की लोक संस्कृति का इतिहास, बुंदेली फागकाव्य: एक मूल्यांकन और लोककवि ईसुरी और उनका साहित्य में लोकगीत, फाग और आल्हा गाथाओं का विश्लेषण गुप्त जी की कृतियों में से कुछ हैं। इनमें स्त्री को भावनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया गया है, जहाँ वह त्याग, संघर्ष और स्वाभिमान का प्रतीक बनती है। गुप्त के कार्यों में बुंदेली उपन्यासों और कहानियों में स्त्री स्वाभिमान का चित्रण स्पष्ट है, जैसे महिलाओं की सामाजिक भूमिका और लोक जीवन की वास्तविकताओं में उनकी दृढ़ता। इसके बावजूद, ये शोध मुख्यत: सांस्कृतिक इतिहास पर केंद्रित हैं, न कि नारीवादी दृष्टिकोण से। महिलाओं की स्थिति वैदिक काल से भारतीय समाज में एक लंबी प्रक्रिया से विकसित हुई है। महिलाएँ वैदिक युग में शिक्षा और यज्ञों में भागीदार थीं, लेकिन मध्यकालीन काल में पितृसत्तात्मक बंधन बढ़े। बुंदेलखंड में यह विकास चंदेल और बुंदेला राजवंशों से जुड़ा, जहाँ वीरांगनाओं (जैसे झाँसी की रानी) की कहानियाँ प्रचलित हुईं, लेकिन दैनिक जीवन में स्त्री पर निर्भरता बनी रही। वर्तमान अध्ययनों में यह विकास सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में देखा जाता है, लेकिन बुंदेली संदर्भ में विशिष्ट कार्य सीमित हैं। प्रमुख स्रोतों में लोक व्रत-कथाएँ स्त्री-चेतना का मजबूत माध्यम हैं। करवाचौथ (वीरवती या करवा की कहानी) में स्त्री का त्याग और समर्पण पति के लिए दिखाया जाता है, जो पतिव्रत धर्म को बल देता है। वटसावित्री व्रत में सावित्री की दृढ़ता स्त्री साहस और यम से पति को छीनने की गाथा का प्रतीक है। दसामाता और भैया दूज की कथाओं में बहन का भाई के प्रति समर्पण स्त्री की भूमिका को चित्रित करते हैं। ये कहानियाँ दृढ़ता और समर्पण का प्रदर्शन करती हैं, लेकिन अक्सर पुरुष-निर्भरता को प्रोत्साहित करती हैं। लोक साहित्य में सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण विस्तृत है; नि:संतान महिलाओं पर दोषारोपण आम है, जो पितृसत्तात्मक समाज के विचारों को प्रतिबिंबित करता है। बुंदेली लोकगीतों में कजरी और फाग में महिलाएँ विरह, प्रेम और सामाजिक संघर्ष व्यक्त करती हैं, जहाँ नि:संतानता या दहेज जैसे मुद्दे सामने आते हैं। महिलाओं की भूमिका संवाहक के रूप में बुंदेली फोकलोर में सांस्कृतिक अध्ययनों में महत्वपूर्ण है। महिलाएं कजरी गायन करती हैं, जहाँ वे भावनात्मक रूप से सावन की बारिश, दु:ख और मायके की याद को व्यक्त करती हैं। महिलाओं की भावनात्मक अभिव्यक्ति और सामाजिक सद्भाव इन गीतों से होता है। महिलाओं द्वारा राधा-कृष्ण या स्थानीय प्रेम कहानियाँ गाने वाले फाग गीतों में शृंगार रस प्रधान है। दीवारी नृत्य (या बरेदी) में पुरुष कलाकार लाठियों से करतब करते हैं, जो कृष्णकालीन गोवंश को बचाने और वीरता का प्रतीक हैं, जबकि महिलाएँ दर्शक या ग्वालिन मूर्ति में सहभागी होती हैं। राई नृत्य में महिलाएं सांस्कृतिक समारोहों में शामिल होती हैं, ऐसा कुछ अध्ययनों ने बताया है। महिलाएँ जोगिया बाबा जैसे लोक नाटकों में भक्ति और समर्पण की भूमिकाओं को निभाती हैं, जो लोक परंपराओं में उनकी संरक्षक छवि को मजबूत करती हैं। मौजूदा अध्ययनों की एक बड़ी कमी यह है कि अधिकांश काम ऐतिहासिक और वर्णनात्मक हैं, जैसे गुप्त जी के फोकलोर संग्रह, जो सांस्कृतिक

संरक्षण पर जोर देते हैं। सिमोन द बोउवार की 'दूसरा लिंग' की तुलना या फेमिनिस्ट फोकलोर थ्योरी जैसे आधुनिक नारीवादी विचारों में बहुत कमी है, जो स्त्री को केवल त्यागी या समर्पित के रूप में देखते हैं, न कि स्वतंत्र एजेंसी वाली। शिक्षा और वैश्वीकरण के प्रभाव से बदलाव की चर्चा कम होती है। यह लेख साहित्यिक चित्रण को सामाजिक वास्तविकता से जोड़कर नारीवादी व्याख्या प्रस्तुत करेगा, जिससे बुंदेली लोक परंपराओं में स्त्री की कठिन स्थिति को नया दृष्टिकोण मिलेगा।

शोध विधि- यह अध्ययन मुख्यत: माध्यमिक अनुसंधान का उपयोग करता है, जिसमें बुंदेली लोक साहित्य और परंपराओं से संबंधित सामग्री का व्यापक विश्लेषण किया गया है। मौजूदा लोक साहित्य संग्रहों, प्रकाशित पुस्तकों और विद्वानों के कार्यों का उपयोग प्राथमिक डेटा संग्रहों (जैसे क्षेत्र सर्वे या साक्षात्कार) की बजाय किया गया है। बुंदेली लोकगीत (फाग, कजरी, आल्हा गाथाएँ) और व्रत-कथाएँ (करवाचौथ, वटसावित्री, भैया दूज आदि) प्रमुख स्रोत हैं। डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त की पुस्तकें, जैसे बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास, बुन्देली फागकाव्य: एक मूल्यांकन, बुन्देली लोक संस्कृति और लोककवि ईसुरी और उनका साहित्य, विद्वानों के कामों में महत्वपूर्ण हैं। अन्य संदर्भों में रामचरण हयारण की बुन्देलखंड की संस्कृति और साहित्य, डॉ. बलभद्र तिवारी की बुन्देली लोक काव्य, और bundelkhand.in और bundeliijhalak.com जैसे वेबसाइटों पर उपलब्ध सांस्कृतिक सामग्री शामिल हैं। इन स्रोतों से लोक परंपराओं में स्त्री का चित्रण मिला है।

विषयगत विश्लेषण शोध का गुणात्मक दृष्टिकोण है। समर्पण (पतिव्रता, त्याग), संघर्ष (विरह, सामाजिक दबाव), साहस और भावनात्मक अभिव्यक्ति साहित्यिक स्तर पर चर्चा की गई हैं। नारीवादी सिद्धांत (Feminist Theory) सामाजिक स्तर पर आधारित है, विशेष रूप से सिमोन द बोउवार की प्रसिद्ध कृति द सेकंड सेक्स (The Second Sex) से, जिसमें स्त्री को समाज द्वारा पुरुष-निर्भर और अधीनस्थ भूमिका में बांधा गया है। यह सिद्धांत लोक परंपराओं में स्त्री की स्थिति को पितृसत्तात्मक बंधनों के संदर्भ में समझाता है और सशक्तिकरण के तत्वों (जैसे सावित्री की दृढ़ता) को दिखाता है।

डेटा के कई स्रोत हैं, जैसे मुद्रित किताबें (जैसे नर्मदा प्रसाद गुप्त की रचनाएँ), ऑनलाइन उपलब्ध PDFs (जैसे bundelkhand-in is Culture of Bundelkhand जैसे दस्तावेज), सांस्कृतिक ब्लॉग्स (जैसे bundeliijhalak.com पर लोक साहित्य से संबंधित लेख) और अकादमिक पोर्टल। ये स्रोत विश्वसनीय हैं और बुंदेलखंड की लोगों की संस्कृति पर फोकस करते हैं।

विश्लेषण: साहित्यिक अध्ययन- बुंदेली लोक साहित्य में स्त्री को भावनात्मक गहराई, साहस और समर्पण से चित्रित किया गया है। यह लेखन मौखिक परंपरा पर आधारित है, इसलिए सीधे ग्रामीण महिलाओं की आवाज को दिखाता है। स्त्री, व्रत-कथाएँ, लोकगीत और क्षेत्रीय साहित्य तीनों में केंद्र में है, लेकिन उसकी शक्ति मुख्यत: परिवार और पुरुष के बारे में है। लोक व्रत-कथाएँ बुंदेलखंड में स्त्रियों के जीवन का सबसे अच्छा चित्रण हैं। सावित्री-सत्यवान की प्रसिद्ध गाथा वटसावित्री व्रत की कथा

है। इसमें सावित्री अपने पति को यमराज से वापस लेती है। बुंदेली संस्करण में महिलाएँ वट वृक्ष के नीचे बैठकर कथा सुनाती और गाती हैं। कथा स्त्री के साहस और विवेक की प्रशंसा करती है, लेकिन उसका एकमात्र उद्देश्य पति की रक्षा है। बुंदेलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास लेखक नर्मदा प्रसाद गुप्त बताते हैं कि बुंदेलखण्ड की महिलाओं में आज भी सावित्री की दृढ़ता है, जो सूखे और अभाव में भी परिवार को संभालती हैं। इसी प्रकार करवाचौथ की कहानी में वीरवती (या करवा) नामक एक युवती अपने पति को बचाने के लिए निर्जला व्रत रखती है। बुंदेलखंड के गाँवों में यह कहानी बहुत स्थानीय है। कथा में दो बातें हैं: अंधविश्वास (चंद्रमा को अर्घ्य देने से पति की आयु बढ़ना) और त्याग। ये कहानियाँ स्त्री को बलवान दिखाती हैं, लेकिन उसकी शक्ति पुरुष पर निर्भर है। स्वतंत्र निर्णय या स्वार्थ के लिए कोई जगह नहीं है। इस तरह, व्रत-कथाएँ लगता है कि स्त्री को बल देती हैं, लेकिन वास्तव में पतिव्रता धर्म की सीमाओं में सीमित है। बुंदेली स्त्री की भावनात्मक अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम लोकगीत और काव्य है। सावन महीने में महिलाएँ एक साथ कजरी गीत गाती हैं। मुख्य रूप से इसमें बारिश की बूंदों, मायके की याद और दर्द हैं। "कजरिया मोरी कारी कारी, सैयां मोरे परदेसी रे..।यह विरह प्रेमी के साथ-साथ ससुराल की बंधनपूर्ण जीवन का भी संकेत है। दादरा और फाग गीतों में प्रेम और शृंगार रस का मुख्य स्थान है। फाग में राधा-कृष्ण की लीला को स्थानीय प्रेम कहानियों से जोड़कर गाया जाता है, जिसमें एक स्त्री खुलकर अपनी इच्छाएँ बताती है। डॉ. बलभद्र तिवारी (बुंदेली लोक काव्य) कहते हैं कि फाग गीतों में दहेज, सास की ज्यादती और भ्रूण हत्या जैसे सामाजिक मुद्दे भी उभरते हैं। उदाहरण के लिए, "दहेज न दई बाबुल, ससुराल में मार खाई रे... "स्त्री इन गीतों में अपनी पीड़ा, संघर्ष और संघर्ष को गाकर हल्का करती है। यह लिखित साहित्य में दुर्लभ भावनात्मक मुक्ति का माध्यम है। गीत विद्रोह की बात करता है, लेकिन परिवार की मर्यादा ही समाधान है। लोकगीत इस तरह स्त्री को आवाज देते हैं, लेकिन सामाजिक व्यवस्था को नहीं चुनौती देते। स्त्री स्वाभिमान भी बुंदेली साहित्य में लिखित रूप में मौजूद है। डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त की कहानियाँ और उपन्यास इसका सबसे अच्छा उदाहरण हैं। बुंदेली उपन्यासों और कहानियों में उनकी कई पात्र ग्रामीण महिलाएँ हैं जो सामाजिक बुराइयों के खिलाफ संघर्ष करती हैं। एक कहानी में, विधवा होने के बावजूद नायिका दहेज के खिलाफ लड़ने और अपनी बेटी को पढ़ाने का फैसला करती है। "बुंदेली स्त्री में वीरांगनाओं का खून है," गुप्त जी ने लिखा है। वह नहीं बोलती। उनकी रचनाओं में लोकगीतों और व्रत-कथाओं के तत्व हैं, जो साहित्य और लोक परंपरा का सुंदर संयोजन बनाते हैं। यही कारण है कि उनके पात्र बुंदेलखंड के गाँवों की वास्तविक महिलाओं की तरह लगते हैं, न कि कल्पना। संक्षेप में, साहित्यिक अध्ययन से पता चलता है कि बुंदेली लोक साहित्य में स्त्री भावुक, दृढ़ और आत्मनिर्भर होती है। गीत भावनाओं को मुक्त करते हैं, व्रत-कथाएँ साहस की कहानियाँ हैं और लिखित साहित्य आत्मसम्मान को स्वर देता है। परिवार और पुरुष दोनों ही स्त्री की शक्ति को परिभाषित करते हैं। यह चित्रण सशक्तिकरण का एक उदाहरण है, लेकिन अभी पूर्ण स्वतंत्रता से दूर है।

सामाजिक अध्ययन- सामाजिक अध्ययन बताता है कि बुंदेली लोक परंपराओं में स्त्री की सामाजिक स्थिति परंपरागत भूमिकाओं, चुनौतियों और आज के बदलावों को संतुलित करती है। स्त्री को लोक संस्कृति में परिवार और समाज की संरक्षक बताया जाता है, लेकिन पितृसत्तात्मक व्यवस्था उसकी स्वतंत्रता को सीमित करती है।
स्त्री विवाह, जन्म और उत्सवों का केंद्र होता है। बुंदेलखंड में जन्म, विवाह या उत्सवों पर बधाई नृत्य किया जाता है,

जिसमें महिलाएँ और पुरुष ढोलक या मंजीरा जैसे वाद्ययंत्रों पर जोर-शोर से नृत्य करते हैं। महिलाएँ समूह में गाकर-नाचकर सामाजिक सद्भाव बनाती हैं, यह नृत्य शीतला देवी को धन्यवाद देने या बधाई देने का माध्यम है। राई नृत्य, बुंदेलखंड का प्रमुख लोक नृत्य, भी ऐसा ही हैरू महिलाएँ पारंपरिक कपड़े (करधनी, पैजनी) पहनकर सरसों के दाने की तरह घूमकर नाचती हैं, जो खुशी के अवसरों (जैसे फसल, विवाह) पर किया जाता है। सामाजिक एकता और उत्सव की भावना इन नृत्यों से बढ़ती है, लेकिन महिलाओं की भागीदारी अधिकतर घरेलू और सांस्कृतिक संरक्षण तक सीमित रहती है। पितृसत्तात्मक संबंध स्पष्ट हैं: पुरुष निर्णय लेते हैं, जबकि महिलाएँ मदद करती हैं। लेकिन ये परंपराएँ महिलाओं को सामाजिक सद्भाव का माध्यम बनाती हैं, जहाँ उनकी उपस्थिति अनिवार्य है।

बुंदेलखंड की ग्रामीण महिलाओं के सामने कठिन चुनौतियाँ हैं। क्षेत्र की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था और सूखे की वजह से व्यापक आर्थिक निर्भरता; महिलाएँ कृषि, जल संग्रहण और घरेलू काम करती हैं, लेकिन पुरुष आय पर नियंत्रण रखते हैं। शिक्षा की कमी एक महत्वपूर्ण बाधा है- पुराने आंकड़ों में महिलाओं की साक्षरता दर लगभग 36 प्रतिशत है, जो राष्ट्रीय औसत से कम है। इन चुनौतियों में घरेलू शोषण, पुत्र वरीयता और असमान लिंगानुपात शामिल हैं। इनका सामना लोक परंपराएँ प्रतीकात्मक रूप से सशक्तिकरण के रूप में करती हैं। उदाहरण के लिए, दसामाता जैसे व्रत-कथाएँ महिलाओं की दृढ़ता और परिवार को बचाने की क्षमता को दिखाती हैं, जो उन्हें अभाव में भी संघर्ष करने की प्रेरणा देती हैं। ये कथाएँ महिलाओं को सामाजिक शोषण का मुकाबला करने में साहस और त्याग की शक्ति देती हैं। इसके बावजूद, ये परंपराएँ वास्तविक सशक्तिकरण (जैसे शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता) की जगह प्रतीकात्मक रहती हैं।

आज, वैश्वीकरण का प्रभाव विविध है। एक ओर, यह महिलाओं को नई नौकरियां, शिक्षा और जागरूकता देता है, जिससे वे अपनी पारंपरिक भूमिकाओं से बाहर निकल जाते हैं। हस्तशिल्प, स्वयं सहायता समूहों और डिजिटल अवसरों ने ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक सशक्तिकरण दिया है, जो वैश्वीकरण ने लाया है। दूसरी ओर, पारंपरिक व्यवसायों (जैसे कृषि और हथकरघा) पर इसका प्रभाव पड़ता है, जिससे निर्भरता बढ़ जाती है। बुंदेलखंड की लोककथाओं में स्त्री योद्धाओं की कहानियाँ, खासकर झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की कहानियाँ, आज के सशक्तिकरण के लिए प्रेरणा हैं। बुंदेली लोकगीतों पर आधारित सुभद्रा कुमारी चौहान की प्रसिद्ध कविता 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी' ने रानी

के साहस को अमर बनाया है। ये गाथाएँ महिलाओं में स्वतंत्रता और संघर्ष की भावना जगाती हैं, जो वैश्वीकरण के दौर में शिक्षा और अधिकारों की माँग को बढ़ावा देती हैं।

कुल मिलाकर, बुंदेली परंपराएँ स्त्रियों को सामाजिक सद्भाव की संवाहक मानती हैं, लेकिन पितृसत्ता उनके सामने चुनौतियाँ लाती है। आधुनिक वैश्वीकरण और योद्धा गाथाएँ बदलाव की संभावना दिखाती हैं, जहाँ स्त्रियाँ स्वतंत्र और सशक्त हो सकती हैं और केवल समर्पित नहीं रह सकतीं।

निष्कर्ष- यह शोध पत्र बुंदेलखंड की समृद्ध लोक संस्कृति के आईने में स्त्री जीवन के बहुआयामी और जटिल स्वरूप को गहनता से अध्ययन करता है। मुख्य निष्कर्ष यह है कि बुंदेली लोक परंपराएँ, जैसे व्रत-कथाएँ, लोकगीत, नृत्य, उत्सव और गाथाएँ, स्त्री को सांस्कृतिक संरक्षक और संवाहक की प्रमुख भूमिका देती हैं। वह परिवार की एकता, भावनात्मक अभिव्यक्ति, सामाजिक सद्भाव और परंपराओं की निरंतरता का प्रतीक है। उदाहरण के लिए, वटसावित्री और करवाचौथ की कथाएँ स्त्री के साहस, त्याग और दृढ़ता को प्रशंसनीय ढंग से चित्रित करती हैं, जबकि कजरी, फाग और राई जैसे लोकगीतों में उसकी पीड़ा, प्रेम और संघर्ष की भावनाएँ जीवंत हो उठती हैं। ये परंपराएँ स्त्रियों को समाज में सम्मान और गरिमा प्रदान करती हैं, खासकर ग्रामीण समाजों में जहाँ स्त्रियाँ जल संग्रहण, कृषि और घरेलू कामों की प्रमुख हैं।

यह चित्रण, हालांकि, मुख्यत: पितृसत्तात्मक ढांचे में सीमित है। स्त्री का साहस और शक्ति अक्सर पुरुष-निर्भर भूमिकाओं (जैसे पत्नी, माँ, बहन या त्यागी) से जुड़े होते हैं। लोकगीतों में सामाजिक मुद्दे (दहेज, नि:संतानता का दोषारोपण) उठते हैं, लेकिन समाधान पारिवारिक मर्यादा में ही खोजा जाता है, यह साहित्यिक विश्लेषण से स्पष्ट है कि व्रत-कथाएँ पतिव्रता धर्म को मजबूत करती हैं। महिलाओं पर सबसे अधिक प्रभाव आर्थिक निर्भरता, शिक्षा की कमी, पुत्र वरीयता और जल संकट है। बुंदेलखंड के सूखाग्रस्त क्षेत्रों में पानी की खोज में महिलाएँ किलोमीटर पैदल चलती हैं, जो उनके दैनिक जीवन की कठोर वास्तविकता है। राष्ट्रीय परंपराएँ इन चुनौतियों का प्रतीकात्मक मुकाबला करती हैं, लेकिन उन्हें आर्थिक स्वायत्तता, स्वतंत्र निर्णय और समान अधिकार नहीं दे सकतीं। इसलिए, सामाजिक बदलाव की आवश्यकता स्पष्ट है। लैंगिक समानता, आर्थिक अवसरों और शिक्षा के माध्यम से महिलाओं को पूर्ण स्वतंत्रता और एजेंसी मिलनी चाहिए।

आज के परिप्रेक्ष्य में यह बदलाव आशाजनक है। बुंदेलखंड में महिलाएँ अब लोक परंपराओं को सशक्तिकरण का साधन मानती हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण 2011 से परमार्थ संस्था के सहयोग से चल रहा जल सहेलियाँ आंदोलन है। 2025 तक इसने एक हजार से अधिक जल निकायों को पुनर्जीवित किया है, 400 हजार लोगों को लाभ दिया है और 2000 से अधिक महिलाओं को जल प्रबंधन में नेतृत्व दिया है। जल सहेलियों ने फरवरी 2025 में 300 किलोमीटर की पैदल यात्रा की, जो जल संरक्षण और महिला सशक्तिकरण का संदेश फैलाया। ठीक उसी तरह, 2006 में संपत पाल देवी ने गुलाबी गैंग की शुरुआत की, जो आज भी घरेलू हिंसा, दहेज और

शोषण के खिलाफ लड़ रही है, जिसमें हजारों महिलाएँ गुलाबी साड़ी पहनकर न्याय की माँग करती हैं। ये आंदोलन लोक परंपराओं (समूह गायन, नृत्य) की भावनात्मक शक्ति को वर्तमान मुद्दों से जोड़ते हैं, जिसमें स्त्री केवल संरक्षक नहीं, बल्कि परिवर्तन की अगुआ बन रही है।

बुंदेलखंड के ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए, जिसमें लोकगीतों, व्रत-कथाओं और नृत्यों का उपयोग कर लैंगिक समानता, जल संरक्षण और महिला शिक्षा पर जोर दिया जाए। स्कूलों, सामुदायिक केंद्रों और समारोहों में इन परंपराओं को नारीवादी रूप से पुनर्जीवित किया जाए; उदाहरण के लिए, सावित्री की कहानी को स्वतंत्र निर्णय लेने की प्रेरणा के रूप में पढ़ाया जाए। लिंग संवेदीकरण और कौशल प्रशिक्षण के लिए स्वयं सहायता समूहों, एनजीओ और सरकारी कार्यक्रमों, जैसे जल जीवन मिशन, को प्रोत्साहित किया जाए। जल सहेलियाँ और गुलाबी गैंग जैसे म,डलों को विस्तार देकर लोक साहित्य को डिजिटल प्लेटफ,र्म पर बचाया जाए, ताकि युवा पीढ़ी परंपरा और आधुनिकता का संतुलन सीखे।

आगे की रिसर्च के लिए पूर्व अध्ययन आवश्यक है, बुंदेलखंड के विभिन्न जिलों (झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर आदि) में ग्रामीण महिलाओं से प्रत्यक्ष साक्षात्कार, फोकस ग्रुप डिस्कशन और जल सहेलियों जैसे समूहों का क्षेत्रीय कार्य तुलनात्मक अध्ययन, जैसे बुंदेली संस्कृति को अवधी, ब्रज, राजस्थानी या उत्तराखंडी संस्कृति से तुलना करना, उपयोगी होगा, जिससे क्षेत्रीय समानताएँ और अंतर स्पष्ट हों। डिजिटल युग में जलवायु परिवर्तन, नारीवादी पुनर्व्याख्या और लोक साहित्य के ऑनलाइन संरक्षण पर भी व्यापक अध्ययन की आवश्यकता है।

अंत में, बुंदेली लोक परंपराएँ स्त्री की आंतरिक शक्ति और साहस का उत्सव हैं। वे सदियों से त्याग और धैर्य की प्रेरणा देते रहे हैं. हालांकि, ये परंपराएँ न्याय और बदलाव को सिर्फ समकालीन मूल्यों, जैसे समानता, स्वतंत्रता और सशक्तिकरण से जोड़ सकती हैं। जैसे गुलाबी गैंग और जल सहेलियाँ, महिलाएं अपनी पारंपरिक शक्ति को आधुनिक संघर्ष से जोड़ सकती हैं, जो न केवल परिवार, बल्कि पूरे समाज को बदल सकती हैं। यह अध्ययन सिर्फ आगे की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा बनने वाले परिवर्तन की ओर एक विनम्र प्रयास है।

संदर्भ सूची-

- बोउवार, सिमोन द, द सेकंड सेक्स, अनु. हिंदी. राजकमल प्रकाशन, 2010.
- तिवारी, बलभद्र, बुंदेली लोक काव्य, बुंदेलखंड साहित्य अकादमी, 2010.
- हयारण 'मित्र', रामचरण, बुन्देलखंड की संस्कृति और साहित्य, बुंदेलखंड प्रकाशन, 1985.
- गुप्ता, नर्मदा प्रसाद, बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1980.
- गुप्ता, नर्मदा प्रसाद, बुन्देली फागकाव्य: एक मूल्यांकन, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, 1992.
- गुप्ता, नर्मदा प्रसाद, लोककवि ईसुरी और उनका साहित्य, लोकभारती प्रकाशन, 2005.

- चौहान, सुभद्रा कुमारी. 'खूब लड़ी मर्दानी– खूब लड़ी मर्दानी', भारतीय प्रेस, 1930.
- बुंदेली लोकगीत और व्रत–कथाएँ, Bundeli Jhalak, 2024, bundeliijhalak.com/lok-sahitya. Accessed 18 Dec. 2025.
- "Culture of Bundelkhand." Bundelkhand.in, 2025, bundelkhand.in/culture. Accessed 18 Dec. 2025.
- "Gulabi Gang: Fight for Justice." Pink Gang Official, 2025, gulabigang.in. Accessed 18 Dec. 2025.
- "Jal Saheliyan: Women-led Water Revolution in Bundelkhand." Parmarth Samaj Sevi Sansthan, 2025, parmarth.org/jal-saheli. Accessed 18 Dec. 2025.
- Pandey, A. "Women in Bundelkhand Folklore: A Feminist Reading." Journal of Indian Folkloristics, vol. 15, no. 2, 2023, pp. 45-62.
- Sharma, R. "Role of Women in Bundelkhand's Water Conservation Movements." Economic and Political Weekly, vol. 57, no. 18, 2022, pp. 34-41.
- Bundelkhand Region: Socio-Economic Profile. Government of India, Ministry of Rural Development, 2024.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

साम्प्रतिक संदर्भ में कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों का प्रभाव

• गार्गी लोहनी

सारांश- संचार मानव जीवन की मूलभूत और नैसर्गिक आवश्यकताओं में एक है। मानव सभ्यता के आरंभिक दौर से अद्यतन मनुष्य अपने अकेलेपन को दूर करने तथा अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए संचार माध्यमों का प्रयोग करता आया है। ये और बात है कि समय एवं स्थान के साथ इन माध्यमों में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित होता है। यही वह माध्यम है जिसके कारण मानव समाज आज विकास की इन ऊँचाईयों को पाने में सफल रहा है। इसका दायरा केवल सूचनाओं के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं है बल्कि यह एक जटिल प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अपने विचार, भावनाएँ, अनुभव, ज्ञान और सांस्कृतिक प्रथाओं को अन्य व्यक्तियों या समूहों तक इस प्रकार पहुँचाता है कि उन्हें समझा जा सके और प्रतिक्रिया स्वरूप विचार साझा किये जा सकें। इसके माध्यम से ज्ञान, परंपराएँ, रीति-रिवाज, कला, साहित्य और विज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होते रहे हैं। लोक साहित्य इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोक साहित्य; साहित्य की एक विधा है। यह विधा किसी समुदाय, जाति, वर्ग या क्षेत्र की सामूहिक चेतना, जीवन अनुभव, लोक विश्वास, ऐतिहासिक स्मृति और सांस्कृतिक मूल्यों को मौखिक रूप में संरक्षित कर पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित एवं संरक्षित करती आयी है। लिखित साहित्य के उद्भव से पूर्व ही लोक साहित्य का उद्भव हो चुका था और यह किसी भी समाज की प्रारंभिक सांस्कृतिक चेतना का द्योतक है। विदित है कि भारतीय संस्कृति की नींव लोक परंपराओं पर आधारित है, और लोक साहित्य इस परंपरा का प्रमुख भंडार है। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि सामुदायिक ज्ञान, नैतिकता, जीवन-दर्शन और अनुभवों का जीवंत भंडार भी है। लोक साहित्य में लोकगीत, लोककथाएँ, कहावतें, मुहावरे, हास्य-व्यंग्य और लोकनाट्य शामिल हैं, जो जनजीवन, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक प्रथाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। कुमाऊँनी लोक साहित्य लोक साहित्य का ही एक रूप है। कुमाऊँ क्षेत्र में लोक साहित्य की परंपरा का इतिहास अत्यंत समृद्ध है, विशेषकर लोकगीत और लोकगाथाओं में जनमानस की सुख-दुःख, सामाजिक जागरूकता और रीति-रिवाजों की झलक स्पष्ट रूप से मिलती है। आधुनिक समय में संचार

• असिस्टेंट प्रोफेसर एवं प्रभारी, हिन्दी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय कुणीधार मानिला, अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

माध्यमों के विकास ने लोक साहित्य के संरक्षण, प्रसार और प्रस्तुति हेतु एक विस्तृत विकल्प प्रस्तुत किया लेकिन साथ ही साथ संक्रमण की स्थिति उत्पन्न करने का कार्य भी किया। कुमाऊँनी साहित्य एवं संस्कृति के समक्ष उत्पन्न चुनौतियाँ एवं उसका क्षरण सांस्कृतिक संक्रमण का ही परिणाम है। ऐसे में यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि आधुनिक संचार माध्यमों का कुमाऊँनी साहित्य पर क्या प्रभाव पड़ा है। इसके लिए यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि वर्तमान में कुमाऊँनी भाषा की वास्तविक दशा क्या है, कुमाऊँनी साहित्य की वास्तविक स्थिति क्या है तथा किन-किन आधुनिक संचार माध्यमों ने स्थानीय साहित्य को प्रभावित किया है। विषय के इसी महत्व के दृष्टिगत प्रस्तुत शोध पत्र हेतु 'साम्प्रतिक संदर्भ में कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों का प्रभाव' शीर्षक का चयन किया गया है। यह अध्ययन मूल रूप से प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है साथ ही आवश्यकतानुरूप द्वितीयक तथ्यों का भी प्रयोग किया गया है। विषय के सामयिक महत्व एवं अध्ययन की प्रासंगिकता के दृष्टिगत अध्ययन के सम्पादन हेतु वैज्ञानिक पद्धति का क्रमबद्ध प्रयोग किया गया है।

मुख्य शब्द- संचार, साहित्य, लोक साहित्य, सांस्कृतिक विरासत, सांस्कृतिक विलम्बना, लोक परंपरा, साहित्यकार

प्रस्तावना- संचार मानव जीवन की नैसर्गिक आवश्यकता है। यह अंग्रेजी के शब्द कम्यूनिकेशन (Communication) का हिन्दी रूपांतर है, जो लैटिन भाषा के शब्द कम्यूनिस (Communis) से बना है, जिसका अर्थ है (To Make Common, To Share, To Import, To Transmit) सूचनाओं के आदान-प्रदान में समान भागीदारी निश्चित करना अर्थात किसी सूचना को आपस में साझा करना या उसका सम्प्रेषण करना। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि संचार एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति या व्यक्ति का समूह अपने विचारों, भावनाओं एवं संवेगों को अन्य व्यक्ति या व्यक्ति के समूह तक उस रूप में पहुँचाये जिसे वह समझ सके तथा प्रतिक्रिया स्वरूप अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सके। अन्य रूपों में संचार शब्द संस्कृत की चर धातु में सम उपसर्ग के मेल से बना है। चर का अर्थ होता है चलना या आगे बढ़ना जबकि सम शब्द का तात्पर्य सम्यक से होता है। इस अर्थ में सम्यक् रूप से आगे बढ़ना या चलना ही संचार कहलाता है। संचार के संबंध में प्रचलित इन दोनों विचारों के आधार पर हम कह सकते हैं कि संचार एक ऐसी प्रक्रिया है, जो व्यक्तियों को आपस में अपने विचार, भावनाओं, आचार, ज्ञान आदि को विभिन्न संकेतों एवं भाषाओं के माध्यम से साझा करने का अवसर उपलब्ध कराती है। इसी अवसर के कारण हमारी प्राचीन ज्ञान परंपरा एवं सांस्कृतिक धरोहर, परंपरा एवं रीति रिवाज, ज्ञान एवं विज्ञान, कला एवं साहित्य आदि समय के बंधनों से परे निरंतर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती रही है। यही वह विशेषता है, जो मानव को प्रगति के मार्ग पर नित-नये मील का पत्थर स्थापित करने का आधार रही है, जो सामयिक परिवेश में भी मानव जीवन एवं समाज में इसकी

अनिवार्यता एवं प्रासंगिकता को सिद्ध करती है। ये और बात है कि समय के साथ संचार माध्यमों में निरंतर परिवर्तन हुआ है, जो सांस्कृतिक विरासत एवं ज्ञान सम्पदा को संरक्षित करने के विविध माध्यमों के उद्भव एवं विकास का कारण बनी है। साहित्य सृजन भी ऐसी ही एक विधा है, जो तात्कालिक परिवेश की घटनाओं, उपलब्धियों, सांस्कृतिक विरासत, परंपरा, रीति-रिवाज आदि को कलात्मक एवं रचनात्मक रूप में एक समुदाय से दूसरे समुदाय तक तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य करती है।

अपने आरंभिक समय से अद्यतन साहित्य समाज को समझने के सबसे सशक्त माध्यमों में एक रहा है। यही कारण है कि इसे समाज का दर्पण कहा जाता है। लोक साहित्य, साहित्य की ही एक महत्वपूर्ण विधा है। यह वह साहित्य है जो किसी जाति, वर्ग, समुदाय या क्षेत्र की सामूहिक चेतना, जीवन-अनुभव, लोक विश्वास, ऐतिहासिक स्मृति और सांस्कृतिक मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक रूप से संजोकर रखता है। लिखित साहित्य के उद्भव से बहुत पहले लोक साहित्य का निर्माण हो चुका था; अतः यह किसी भी समाज की आरंभिक सांस्कृतिक चेतना का द्योतक है। लोक साहित्य न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि सामुदायिक ज्ञान, जीवन-दर्शन, नैतिकता और अनुभवों का जीवंत भंडार भी है। इससे यह भी स्पष्ट है कि लोक साहित्य का प्रत्यक्ष संबंध लोक जीवन के विविध पहलुओं यथा खुशी, गम, विरह, मिलन, तीज-त्योहार आदि से है। यही कारण है कि इसे लोक परंपरा का मूलाधार माना जाता है।

विदित है कि भारतीय संस्कृति का आधार उसकी लोक परंपरा है, और इस परंपरा का मूलाधार है- लोक साहित्य। लोक साहित्य ही हमें किसी देश अथवा क्षेत्र में रहने वाले जन-साधारण के आचार-व्यवहार से परिचित कराता है। लोक साहित्य विभिन्न रूपों में होते हुए भी अनेकता में एकता की भावना को प्रदर्शित करता है। जितना प्राचीन मनुष्य है, उतना ही प्राचीन लोक साहित्य है। जनमानस की सरल और सहज अभिव्यक्ति ही लोक साहित्य है। लोक साहित्य मौखिक या परंपरागत रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होता रहा है। इसका सृजन जनमानस द्वारा किया जाता है और इसका स्वरूप मौलिक होता है। लोक साहित्य जन समुदाय की भावनाओं तथा संकल्पनाओं को सजीव रूप में प्रस्तुत करने का माध्यम है। सूचना समाज के अभ्युदय के बाद मानवीय विचारों, भावनाओं, परंपराओं के प्रति सोच में उहापोह की स्थिति ने समाज में सांस्कृतिक विलम्बना की स्थिति को प्रबलता प्रदान की है। ऐसे में लोक साहित्य संरक्षण एवं संवर्द्धन की दिशा की तलाश करना तथा इसके सहयोगी कारकों की खोज करना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। विषय की प्रासंगिकता और सामयिक आवश्यकता के दृष्टिगत इसका अध्ययन इसे छोटे छोटे भौगोलिक क्षेत्रों में बांटकर किया जाना सामयिक परिस्थिति एवं विषय की प्रासंगिकता के दृष्टिगत अनुकूल प्रतीत होता है। विषय की इसी प्रासंगिकता के दृष्टिगत प्रस्तुत शोध पत्र हेतु 'साम्प्रतिक संदर्भ में कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों का प्रभाव' शीर्षक का चयन किया गया है।

कुमाऊँ उत्तराखण्ड का अभिन्न अंग है, जो भारत का एक प्रमुख पर्वतीय प्रदेश है। यही कारण है कि कुमाऊँ का अधिकांश भूभाग घने जंगलों एवं पर्वतीय भूभागों से घिरा है। कुमाऊँ में लोक साहित्य की परम्परा प्राचीन समय से चली आ रही है जो यहाँ के लोक गीत, लोक कथा, लोकोक्ति–मुहावरों एवं लोकनाट्य के रूप में प्रतिबिम्बित होती है। "वस्तुतः लोक साहित्य उस सदानीरा, सदावाहिनी नदी की तरह है जो सतत प्रवाहमान है। एक घड़ा जल इस नदी से निकालकर कोई भी लोक साहित्य का अध्येता, जिज्ञासु पाठक व विद्वान अपनी प्यास बुझा सकता है और प्यास बढ़ा भी सकता है।"

विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात होता है कि कुमाऊँ के उत्तरी और दक्षिणी सीमान्त को छोड़कर कुमाऊँ के सभी जिले नैनीताल, अल्मोड़ा, बागेश्वर, पिथौरागढ़, चम्पावत और ऊधमसिंह नगर कुमाऊँनी भाषी क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। प्रायः कुमाऊँ बोली में लिखित साहित्य की परम्परा का अभाव दिखलाई पड़ता है। कुमाऊँ क्षेत्र में अनेक साहित्यकार हुए हैं लेकिन उनकी साहित्य रचनाएँ हिन्दी भाषा में होने के कारण कुमाऊँनी साहित्य की अल्पता दृष्टिगत होती है। "कुमाऊँनी में लिखित शिष्ट साहित्य की परम्परा अधिक प्राचीन नहीं है। यद्यपि लिखित रूप में कुमाऊँनी भाषा का प्रयोग ग्याहरवीं सदी से उपलब्ध तामपत्रों एवं सरकारी अभिलेखों में देखने को मिलता है, परन्तु साहित्यिक अभिव्यक्ति के रूप में उसका लिखित रूप गुमानी (1790–1846) से प्रारम्भ होता है। गुमानी ने जिस तरह की परिष्कृत कुमाऊँनी का प्रयोग अपनी कविताओं में किया है, उससे लगता है कि उनसे पूर्व भी कुमाऊँनी साहित्य लिखा जाता रहा होगा, लेकिन उसकी कोई प्रमाणिक जानकारी अभी तक सामने नहीं आ पाई है।"

कुमाऊँनी लोक साहित्य कविता, नाटक, लोक गीत, लोक गाथा, लोकोक्ति, मुहावरों, हास्य–व्यंग्य सभी विधाओं से परिपूर्ण है। लोक साहित्य चाहे लोकगीत के रूप में हो या लोकगाथाओं के रूप में, सभी में क्षेत्र विशेष तथा उसमें निवासरत जीवन का प्रत्येक पहलू इसमें दृष्टिगत होता है। लोक साहित्य में लोक गाथाओं का विशेष महत्व रहा है। कुमाऊँ की पौराणिक गाथायें, वीरगाथायें, धार्मिक गाथायें एवं यहाँ के जनान्दोलन से जुड़े प्रसंग लोक साहित्य में मौजूद हैं। कुमाऊँनी लोकगीतों में जनमानस की सुखात्मक और दुखात्मक अभिव्यक्ति के साथ ही सामाजिक जन चेतना के स्वर भी परिलक्षित होते हैं। जन समाज में प्रचलित रीति–रिवाजों, परम्पराओं, आस्थाओं तथा रूढ़ियों की जानकारी भी हमें इन गीतों तथा लोकगाथाओं के माध्यम से प्राप्त होती है। "किसी भी क्षेत्र विशेष को जानने–समझने के लिए उस क्षेत्र विशेष के लोक साहित्य का अनुशीलन विशेष महत्व रखता है और लोक साहित्य के अन्य अनेक क्षेत्रों में भी लोकगाथायें ही वह सबसे महत्वपूर्ण तत्व है जिसके माध्यम से हम समस्त लोक के ताने–बाने को जान और समझ सकते हैं। समाज, संस्कृति, इतिहास, विकास क्रम, मान्यतायें, परम्पराएँ और समाजिक संरचना यदि किसी एक ही विधा में दिखलाई देती है तो वह लोकगाथा ही है और पिछले कुछ वर्षो से अनेक विद्वानों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से कुमाऊँ के साहित्य और समाज को जानने की इच्छा से लोकगाथाओं का व्यापक अनुशीलन किया है।"

अध्ययन का महत्व- सम्प्रति सूचना तंत्र के अभूतपूर्व विकास ने भारत के अन्य क्षेत्रों के समान ही कुमाऊँनी लोक साहित्य को भी प्रभावित किया है। जिसका अध्ययन सामाजिक एवं प्रशासनिक दोनों ही दृष्टिकोण से सामयिक परिवेश की मांग के अनुरूप प्रासंगिक है। इसकी सामयिक प्रासंगिकता को और अधिक स्पष्ट करने के लिए इसे सामाजिक महत्व एवं योजना बनाने में महत्व शीर्षक के अंतर्गत आवंटित कर नीचे आलेखित किया गया है–

सामाजिक महत्व-

1. इसके माध्यम से समाज लोक साहित्य पर पाश्चात्य प्रभावों से अवगत हो सकेगा।
2. कुमाऊँनी भाषा संरक्षण के प्रति जागरूकता प्रसारित करने तथा युवा पीढ़ी को इससे जोड़ने में सहायक होगा।
3. आधुनिक संचार माध्यमों के माध्यम से लोक साहित्य के प्रसार की संभावनाओं एवं उसके महत्व से अवगत होंगे।
4. लोक साहित्य संरक्षण में आधुनिक संचार माध्यमों की प्रभावकता से अवगत हो सकेंगे।

प्रशासनिक/योजना बनाने के दृष्टिकोण से महत्व

1. उच्च शिक्षण संस्थानों सहित विभिन्न संगठनों द्वारा कराये जाने वाले शोध कार्यों में सहायक एवं मार्गदर्शक सिद्ध होगा।
2. राज्य एवं केन्द्र स्तरीय सांस्कृतिक संगठनों एवं सरकारी निकायों द्वारा सांस्कृतिक संरक्षण एवं संवर्द्धन से संबंधित योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन में सहायक।
3. कुमाऊँनी भाषा संरक्षण एवं प्रसार संबंधी नीतियों के क्रियान्वयन में संचार माध्यमों के प्रयोग संबंधी नीति बनाने में सहायक।

अध्ययन का उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र वर्तमान में कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों के प्रभाव पर केन्द्रित है। इस शोध पत्र की सीमाओं को निर्धारित करने के लिए विषय के महत्व के आधार पर अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है, ताकि अध्ययन हेतु सूचनाओं का संकलन उन उद्देश्यों के दृष्टिगत किया जा सके। इन उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है–

1. कुमाऊँनी भाषा की वास्तविक दशा का अध्ययन करना।
2. कुमाऊँनी साहित्य की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करना।
3. कुमाऊँनी साहित्य पर संचार माध्यमों के प्रभाव का अध्ययन करना।
4. कुमाऊँनी साहित्य को प्रभावित करने वाले आधुनिक संचार माध्यमों का अध्ययन करना।

अध्ययन पद्धति- प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक तथ्यों पर आधारित एक मौलिक कृति है। इस कृति को पूर्ण करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति के अन्वेषणात्मक एवं वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। क्योंकि अध्ययन मूल रूप से प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है, इसलिए सर्वप्रथम तथ्य संकलन हेतु अध्ययन क्षेत्र का सीमांकन किया गया

है। तत्पश्चात अध्ययन समग्र एवं प्रतिदर्श का निर्धारण किया गया। प्रस्तुत अध्ययन के लिए सीमांकित अध्ययन क्षेत्र में निवासरत 10 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के समस्त रहवासी अध्ययन समग्र हैं। इन अध्ययन समग्र में से चरणबद्ध तरीके से सोद्देश्य निदर्शन पद्धति का प्रयोग कर 671 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। इन चयनित उत्तरदाताओं से साक्षात्कार के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया है। साक्षात्कार; साक्षात्कार अनुसूची में निहित प्रश्नों पर आधारित रहा है साथ ही आवश्यकतानुरूप असहभागी अवलोकन का भी प्रयोग किया गया है। इस प्रकार संकलित तथ्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष का आलेखन किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण- हम सभी भली-भांति अवगत हैं कि समकालीन समाज संचार-क्रांति के दौर से गुजर रहा हैं। इस दौर में न केवल सूचना सम्प्रेषण के माध्यमों में बदलाव आया है बल्कि इसके उद्देश्यों, इसकी दिशा एवं गति में भी परिवर्तन हुआ है। नये तकनीकी माध्यमों जैसे कम्प्यूटर, इंटरनेट, स्मार्टफोन, टेबलेट आदि के प्रयोग ने डाटा संग्रहण से लेकर प्रेषण तक की प्रक्रिया को अकल्पनीय गति प्रदान करने का कार्य किया है। इस सदी के छठे दशक और इसके बाद के समाज में आये इस प्रकार के तकनीकी बदलावों ने इस समाज को छठे दशक से पूर्व के इतिहास से बिल्कुल भिन्न स्वरूप प्रदान किया है। इसके परिणामस्वरूप न केवल सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आया है बल्कि इसने मानव चेतना एवं उसकी वैचारिक क्षमता को भी प्रभावित किया है। यदि हम साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र में इन तकनीकी विकास के प्रभावों की बात करें तो यह सकारात्मक और नकारात्मक दोनो ही रूपों में दिखाई देता है। आज मानव सूचना सम्प्रेषण एवं संग्रहण के लिए अनेक तकनीकी माध्यमों का विकास कर चुका है। इन माध्यमों का प्रयोग आज मानव द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में सूचना संग्रहण एवं सम्प्रेषण के लिए किया जा रहा है। अन्य क्षेत्रों के समान ही साहित्य और विशेषकर लोक साहित्य तथा संस्कृति से जुड़े ज्ञान एवं सूचनाओं के संग्रहण में भी तकनीकी माध्यमों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। बावजूद इसके यह कहना कि संचार के आधुनिक माध्यमों ने लोक साहित्य को सिर्फ सकारात्मक रूप में प्रभावित किया है, अतिशयोक्ति होगी। आज सोशल मीडिया, टी.वी. एवं वेब मीडिया जैसे आधुनिक संचार माध्यमों ने स्थानीय संस्कृति को संरक्षित करने के साथ-साथ संक्रमित करने कार्य भी किया है। संक्रमण की यही अवस्था आज स्थानीय संस्कृति के क्षरण का कारण साबित हो रही है।

सम्प्रति देश के सभी राज्यों में निवासरत जनता के हृदय में लोक साहित्य स्थानीय बोलियों और भाषाओं के रूप में समृद्ध है। उत्तराखण्ड राज्य का कुमाऊँ मण्डल भी इस तथ्य से अछूता नहीं है। कुमाऊँ के लोक साहित्य में जन-भावनाओं की अभिव्यक्ति के साथ ही जनजागृति के स्वर स्वत: ही सम्मिलित हैं। कुमाऊँनी जनमानस के जीवन के प्रत्येक सुख-दुख, हर्ष-शोक, उल्लास-विलास एवं आन्दोलित मन:स्थिति और जागरूक संघर्ष का सरल परन्तु यथार्थ चित्रण यहाँ के लोक साहित्य में उपलब्ध है। यह लोक साहित्य जनसमाज एवं नागरिकों के गौरवशाली इतिहास एवं समृद्ध परम्परा के साथ ही प्रकृति संरक्षण एवं मानवीय संवेदनशीलता का भी सहज प्रतिनिधि है। इसी कारण

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु कुमाऊँनी साहित्य के प्रभावों का आकलन करने हेतु 'कुमाऊँनी लोक साहित्य पर संचार माध्यमों का प्रभाव' विषय से संबंधित विभिन्न विचारों पर चयनित उत्तरदाताओं से सूचनाओं का संकलन किया है। इन सूचनाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वर्तमान में ग्रामीण परिवार में निवासरत चयनित उत्तरदाताओं में सर्वाधिक 66.36 प्रतिशत उत्तरदाता कुमाऊँनी भाषा लिखना, पढ़ना और बोलना जानते हैं, 20.07 प्रतिशत उत्तरदाता इस भाषा को सिर्फ समझते है तथा 13.56 प्रतिशत उत्तरदाता इस भाषा को समझते हैं और साथ ही बोल लेते हैं। प्राप्त सूचनाओं के विश्लेषण से यह भी स्पष्ट है कि 100 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि कुमाऊँनी भाषा लिखने-बोलने वालों की संख्या में कमी आयी है। स्थानीय भाषा की बढ़ती उपेक्षा के लिए आज अनेक कारक जिम्मेवार हैं। आधुनिक शिक्षा, हिन्दी एवं अंग्रेजी जैसी राष्ट्रीय भाषाओं को महत्व प्रदान किया जाना तथा स्थानीय भाषाओं में रोजगारोन्मुख शिक्षा का अभाव, पलायन आदि प्रमुख हैं। इस संबंध में संकलित सूचनाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 44.86 प्रतिशत उत्तरदाता वर्तमान शिक्षा व्यवस्था, पलायन तथा आधुनिक संचार माध्यमों के विकास के सम्मिलित प्रभावों को कुमाऊँनी शिक्षा के प्रति बढ़ती उपेक्षा का कारण मानते हैं जबकि 12.97 प्रतिशत उत्तरदाता आधुनिक शिक्षा व्यवस्था को इसके लिए उत्तरदायी कारक मानते हैं, 15.65 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि पलायन के कारण कुमाऊँनी बोलने वालों की संख्या में निरंतर कमी आयी हैं, 11.77 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इसके लिए विभिन्न अलग-अलग कारणों को जिम्मेवार माना जबकि 14.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कुमाऊँनी के जानकार लोगों की कमी का बड़ा कारण आधुनिक संचार माध्यमों का बढ़ता प्रभाव है। इसने समाज में संक्रमण की स्थिति को जन्म दिया है, जिसके प्रतिफल स्वरूप स्थानीय भाषाओं का प्रभुत्व क्षीण हुआ है, उपेक्षा बढ़ी है। और यही कारण है कि आज अधिकांश स्थानीय भाषाओं के समक्ष अस्तित्व बचाने का प्रश्न खड़ा है। कुमाऊँनी भाषा भी ऐसी ही एक भाषा है।

संकलित प्राथमिक तथ्यों के विश्लेषण के अनुसार अधिकांश उत्तरदाता (59.17 प्रतिशत) इस बात को स्वीकार करते हैं कि स्थानीय स्तर पर आधुनिक संचार माध्यमों की पहुंच ने स्थानीय संस्कृति को संक्रमित किया है। जबकि महज 27.12 प्रतिशत उत्तरदाता इस विचार के प्रति अपनी असहमति व्यक्त करते हैं। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग इसके प्रति तटस्थता की स्थिति में रहा। आधुनिक संचार माध्यमों एवं सांस्कृतिक संक्रमण के मध्य संबंधों को जानने लिए उत्तरदाताओं से इससे संबंधित विचार पर भी सूचनाओं का संकलन किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि आधुनिक संचार माध्यमों महत्वपूर्ण माध्यम यथा 'टीवी/इंटरनेट पर प्रसारित सामाजिक-सांस्कृतिक मुद्दों पर आधारित कार्यक्रमों ने वैश्विक/पाश्चात्य संस्कृति के प्रति आकर्षण बढ़ाने में भूमिका निभाई है' से अधिकांश 77.49 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत रहे जबकि महज 8.35 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस विचार के संबंध में अपनी असहमति व्यक्त की। उत्तरदाताओं का एक बड़ा वर्ग 14.16 प्रतिशत इस संबंध में कोई भी विचार रखने से बचता दिखा। स्थानीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है खान-पान। संकलित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि 90.76 प्रतिशत उत्तरदाताओं

ने 'संचार माध्यमों पर प्रसारित कार्यक्रमों को स्थानीय खान-पान को प्रभावित करने वाले कारकों के रूप में स्वीकार किया है जबकि 2.24 प्रतिशत इसके विपरीत विचार रखते हैं। 7 प्रतिशत उत्तरदाता इस विचार के संबंध में अपने विचार व्यक्त करने से बचते दिखे।

इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि 'संचार माध्यमों पर प्रसारित कार्यक्रमों ने स्थानीय खान-पान' को प्रभावित किया है। इससे यह ज्ञात होता है कि आज के दौर में स्थानीय संस्कृति निरंतर प्रभावित हो रही है, जिसमें संचार माध्यमों की अपनी अहम भूमिका रही है।

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु प्राथमिक तथ्य संकलन के दौरान कुछ ऐसी सूचनाओं का संकलन भी किया गया जिसे स्थानीय साहित्य संरक्षण की दिशा में सकारात्मक पहल या प्रभाव माना जाता है। यह कदम एक मार्गदर्शक की भूमिका का निर्वहन करता है। इस संदर्भ में सर्वप्रथम दूरदराज के क्षेत्रों में शिक्षा पर इसके प्रभावों का ऑकलन किया गया। इस संबंध में संकलित सूचनाओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 83.46 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात से सहमत हैं कि ऑनलाइन शिक्षण व्यवस्था ग्रामीण एवं दुर्गम क्षेत्रों में शिक्षा के लिए अच्छा विकल्प है जबकि 14.31 प्रतिशत उत्तरदाता इससे असहमत हैं। 2.24 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में तटस्थ विकल्प का चयन किया। इसी संदर्भ में न्यू मीडिया पर प्रसारित मनोरंजन संबंधी कार्यक्रम (रील/सिनेमा/डॉक्यूमेंट्री/सीरियल आदि) के प्रति बच्चों में बढ़ते आकर्षण के कारण स्थानीय संस्कृति के लिए अवसर का सृजन हुआ है, के प्रति सर्वाधिक 59.46 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि परिवर्तित स्वरूप के साथ अवसर बढ़े हैं, 31.15 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि अवसर घटे हैं जबकि 8.49 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि अवसर पारंपरिक रूप में बढ़े हैं। अन्य 0.89 प्रतिशत ने अन्य विकल्प का चयन किया है। इससे यह स्पष्ट है कि संचार माध्यमों ने स्थानीय साहित्य एवं संस्कृति के क्षरण के साथ-साथ उसके संरक्षण-संवर्द्धन एवं प्रचार-प्रसार के लिए नवीन विकल्प का भी सृजन किया है। आज जरूरत इस बात की है कि साहित्य संरक्षण की दिशा में संचार माध्यमों की भूमिका एवं अवसर की पहचान कर इसका प्रयोग किया जाए।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध पत्र के आलेखन के लिए किये गये अध्ययन के क्रम में प्राप्त अनुभव, अर्जित ज्ञान तथा संकलित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि लोक साहित्य का संबंध आम जनों की भावनाओं एवं जीवनगत अभिव्यक्तियों से है। इसमें स्थानीय समाज से जुड़ी विशिष्टताओं के गुण समाहित होते हैं, जो इन्हें अन्य समाज से किसी न किसी रूप में पृथक करते हैं। पृथकता का यही गुण इसे एक अलग पहचान दिलाता है। सम्प्रति सूचना तंत्र का अभूतपूर्व विकास इस पहचान को संक्रमित कर उनके स्वरूप को धूमिल करने अथवा उसके क्षरण का कारण बना है। ये और बात है कि इसमें क्षरण के साथ-साथ संरक्षण एवं प्रचार-प्रसार के गुण भी समाहित हैं। लेकिन इसके लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि इसके लिए स्थानीय लोगों में इसके प्रति सजगता की भावना प्रबल हो। विषय के इसी महत्व के

दृष्टिगत इससे संबंधित विभिन्न विचारों एवं मुद्दों पर सूचनाओं का संकलन किया गया है, जिससे स्पष्ट है कि –

- आज भी कुमाऊँ के ग्रामीण अंचल में कुमाऊँनी भाषा लिखने, पढ़ने एवं बोलने वाले लोगों की संख्या पायी जाती है, लेकिन निरंतर इसमें कमी दर्ज की जा रही है।
- आज स्थानीय युवा वर्ग कुमाऊँनी भाषा की जगह रोजगारोन्मुख हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा को अधिक महत्व प्रदान कर रहे हैं। स्थानीय भाषा की यह उपेक्षा, पलायन तथा आधुनिक संचार माध्यमों के बढ़ते प्रभाव ने कुमाऊँनी भाषा के क्षरण के लिए आधार तैयार करने का कार्य किया है, जिसका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव लोक साहित्य पर दिखाई देता है।
- लोक साहित्य लोक संस्कृति पर आधारित है। आज कुमाऊँ के न केवल शहरी क्षेत्रों में बल्कि ग्रामीण एवं दूर–दराज के क्षेत्रों में आधुनिक संचार माध्यमों के बढ़ते प्रभुत्व ने स्थानीय संस्कृति को संक्रमित करने का कार्य किया है। हालांकि इसने इसके संरक्षण एवं प्रसार के लिए अवसर भी प्रदान किया है। आज जरूरत इस बात की है कि इस अवसर का समुचित एवं सुनियोजित उपयोग करने हेतु पर्याप्त प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम का संचालन किया जाए।
- आज वेब मीडिया, सोशल मीडिया एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर प्रसारित पाश्चात्य संस्कृति ने अन्य क्षेत्रों के समान ही कुमाऊँनी संस्कृति में निहित खान–पान एवं रहन–सहन को भी प्रभावित किया है। आज या तो स्थानीय खान–पान का स्वरूप परिवर्तित हो चुका है, या विलुप्ति की कगार पर खड़ा है। इन्हें संरक्षित किया जाना समय की मांग बन चुकी है।
- कुमाऊँनी लोक साहित्य मूल रूप से पीढ़ी–दर–पीढ़ी मौखिक परंपरा द्वारा संरक्षित एवं संवर्द्धित रहा है। इसमें भाषा के जानकारों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। आज जबकि इस भाषा के जानकार लोगों की संख्या में निरंतर कमी दर्ज की जा रही है, इसे लिखित रूप में संरक्षित किया जाना आवश्यक हो गया है। ऐसे में शिक्षा की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। शहरी क्षेत्रों से लेकर दुर्गम क्षेत्रों तक आधुनिक संचार माध्यमों की पहुंच ने ऑनलाइन शिक्षण एवं प्रशिक्षण व्यवस्था की पहुंच सुनिश्चित कर इसे साकार रूप दिया है।
- आज ऐसे बुजुर्ग जो लिखने–पढने में सक्षम नहीं हैं लेकिन श्रुति परंपरा के माध्यम से स्थानीय साहित्य के वाहक बने हुए हैं, की आवाज को रिकॉर्ड कर, उस पर डॉक्यूमेंट्री या मूवी के माध्यम से संरक्षित किया जा सकता है। यह आधुनिक संचार माध्यमों की पहुंच के बिना अकल्पनीय प्रतीत होता है।

संदर्भ सूची-

1. बिष्ट, प्रो. शेर सिंह, कुमाऊँ हिमालय : समाज एवं संस्कृति, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी, 2010
2. रावत, प्रो. चन्द्रकला, लोक साहित्य, देवभूमि प्रकाशन, हल्द्वानी, 2018
3. पनेरू, डॉ. डी. के., कुमाउँनी लोक साहित्य, देवभूमि प्रकाशन, हल्द्वानी, 2013
4. चातक डॉ. गोविन्द, भारतीय लोक संस्कृति का संदर्भ, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996.
5. भट्ट, डॉ. पुष्पलता, कुमाऊँनी लोक साहित्य, संस्कृति, भाषा एवं साहित्य, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली, 2010.
6. पोखरिया, प्रो. देव सिंह, कुमाऊँनी लोक साहित्य, अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, 1994.
7. रयाल, डॉ. राकेश, भारत में इलैक्ट्रॉनिक एवं न्यू मीडिया, समय साक्ष्य, देहरादून, 2019
8. शाह, डॉ. नागेश कुमार, कुमाँऊनी शब्द सम्पदा, न्यू आस्था प्रकाशन, लखनऊ, 2021
9. गुसांई, डॉ. मेहरबान सिंह एवं गुसांई, डॉ. अनुराधा, उत्तराखण्ड का सम्पूर्ण इतिहास एवं संस्कृति, एस.यू.एस. पब्लिकेशन्स, देहरादून, 2025
10- www.merapahadforam.com

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer- Reviewed Research Journal
Impact Factor 7.0 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 43, Hindi Edition, Year-22, July- Dec. 2025

महिला सुरक्षा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए.आई.) की भूमिका

• उमा शर्मा
•• रूपेश कुमार दुबे

सारांश- महिला सुरक्षा आज के समाज में एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन चुका है, और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस(ए.आई.) इस दिशा में एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करता है। (ए.आई.) तकनीकों का उपयोग करके महिला सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए स्मार्ट निगरानी, इमरजेंसी अलर्ट सिस्टम, और डेटा विश्लेषण जैसी प्रणालियाँ विकसित की जा रही हैं। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश के लखनऊ शहर में श्सेफ सिटीश परियोजना के तहत (ए.आई.) सक्षम कैमरे लगाए गए हैं जो महिलाओं के चेहरे के हाव-भाव और शारीरिक भाषा का विश्लेषण करके संभावित खतरों का पूर्वानुमान करते हैं। इसके अतिरिक्त, (ए.आई.) आधारित चौटबॉट्स कानूनी और सुरक्षा संबंधी सलाह प्रदान करने में सहायक हो सकते हैं, जिससे महिलाएं किसी भी परिस्थिति में त्वरित सहायता प्राप्त कर सकें। हालांकि, (ए. आई.) तकनीकों के उपयोग में गोपनीयता और पूर्वाग्रह जैसी चुनौतियाँ भी मौजूद हैं, जिन्हें संबोधित करना आवश्यक है। इस प्रकार, (ए.आई.) महिला सुरक्षा में एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभर रहा है, बशर्ते कि इसका उपयोग जिम्मेदारी और संवेदनशीलता के साथ किया जाए।

मुख्य शब्द- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए.आई.), महिला सुरक्षा, स्मार्ट निगरानी, इमरजेंसी अलर्ट, डेटा विश्लेषण, सेफ सिटी परियोजना, चौटबॉट्स, कानूनी सलाह, गोपनीयता, पूर्वाग्रह

प्रस्तावना- भारत सहित पूरी दुनिया में महिलाओं के प्रति हिंसा, छेड़छाड़, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न और अन्य प्रकार के अपराधों की समस्याएँ गंभीर रूप से विद्यमान हैं। महिलाओं के खिलाफ अपराध न केवल मानवाधिकारों का उल्लंघन हैं, बल्कि समाज की नींव को भी कमजोर करते हैं। महिलाओं की सुरक्षा, सम्मान और अधिकारों का संरक्षण दुनिया भर में एक प्रमुख मुद्दा बन चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की

• संकाय सदस्य, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन, मध्य प्रदेश
•• संकाय सदस्य, भूविज्ञान अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मध्य प्रदेश

रिपोर्ट के अनुसार, हर तीन में से एक महिला अपने जीवनकाल में शारीरिक या यौन हिंसा का शिकार होती है। भारत में यह स्थिति और भी विकट है। यहाँ पर 2019 में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, 33 प्रतिशत महिलाओं को कभी न कभी शारीरिक या मानसिक हिंसा का सामना करना पड़ता है। 2016 में राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) के अनुसार, भारत में प्रति दिन औसतन 100 से अधिक महिलाएँ बलात्कार और यौन उत्पीड़न का शिकार होती हैं। इन आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि महिलाओं की सुरक्षा एक अत्यधिक महत्वपूर्ण और संवेदनशील मुद्दा बन चुका है।[1]

महिलाओं के खिलाफ हिंसा की समस्याएँ नई नहीं हैं। यह समाजों में प्राचीन काल से चली आ रही हैं। प्राचीन भारतीय समाज में भी महिलाओं के खिलाफ हिंसा की घटनाएँ रहीं, हालांकि उस समय इसका स्वरूप भिन्न था। वेदों और उपनिषदों में महिलाओं को सम्मानित स्थान प्राप्त था, लेकिन समाज की संरचना में बदलाव के साथ ही उनके अधिकारों में भी कमी आई। मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति और भी नाजुक हो गई, जहाँ बहुमत में महिलाएँ अपमान, अत्याचार, और शोषण का शिकार होती थीं। ब्रिटिश शासन के दौरान महिलाओं के प्रति अत्याचारों की घटनाएँ बढ़ी और भारतीय समाज में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए विभिन्न सुधारक आंदोलनों का जन्म हुआ, जैसे रानी वेलु नचियार, सरोजिनी नायडू, और अन्य महिलाओं ने समाज में महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए संघर्ष किया।

स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान की और उन्हें पुरुषों के समान अधिकार दिए, लेकिन असल में महिलाओं के खिलाफ हिंसा और उत्पीड़न की घटनाएँ बढ़ती गईं। 1980 के दशक से लेकर 2000 के दशक तक महिलाओं के खिलाफ हिंसा की घटनाओं में वृद्धि देखी गई। 2012 का निर्भया कांड एक ऐतिहासिक घटना बनी, जिसने भारतीय समाज और सरकार को महिलाओं की सुरक्षा को लेकर गंभीरता से सोचने पर मजबूर किया। इस कांड के बाद भारत में महिला सुरक्षा से जुड़े कानूनों में कई महत्वपूर्ण बदलाव किए गए, जैसे दुष्कर्म के अपराध को और कड़ा बनाना और महिलाओं के खिलाफ हिंसा के मामलों में त्वरित न्याय सुनिश्चित करना।

तकनीकी क्रांति और महिला सुरक्षा (Technological Revolution and Women's Safety)– हाल के वर्षों में तकनीकी क्रांति ने समाज के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित किया है, और महिला सुरक्षा भी इसका हिस्सा बनी है। विशेष रूप से आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए.आई.) मशीन लर्निंग (ML) और डेटा एनालिटिक्स जैसी तकनीकों ने सुरक्षा उपायों को और अधिक स्मार्ट, कुशल और प्रतिक्रिया–क्षम बना दिया है। इन तकनीकों का उपयोग महिला सुरक्षा के क्षेत्र में प्रभावी तरीके से किया जा रहा है, जिससे महिलाओं के खिलाफ अपराधों को कम किया जा सकता है और घटनाओं के बाद त्वरित कार्यवाही की जा सकती है।

भारत में स्मार्टफोन और इंटरनेट का प्रचलन तेजी से बढ़ा है। रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 2023 तक लगभग 75 प्रतिशत लोगों के पास स्मार्टफोन है, और मोबाइल इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या 700 मिलियन के पार जा चुकी है। इस डिजिटल दुनिया में तकनीकी उपकरणों का उपयोग महिला सुरक्षा को बढ़ाने के लिए किया जा रहा

है। महिलाओं के खिलाफ हिंसा, छेड़छाड़, यौन उत्पीड़न जैसी घटनाओं के खिलाफ विभिन्न मोबाइल ऐप्स और स्मार्ट डिवाइस विकसित किए गए हैं, जो तत्काल मदद प्रदान करने में सक्षम हैं।[2]

ए.आई. और मशीन लर्निंग का योगदान- ए.आई. और मशीन लर्निंग ने महिला सुरक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। ए.आई. तकनीकों का उपयोग कर सुरक्षा सिस्टम को इस तरह से डिजाइन किया जा सकता है, जिससे किसी भी आपातकालीन स्थिति का तुरन्त पता लगाया जा सके और सही समय पर प्रतिक्रिया की जा सके। उदाहरण के लिए, कई स्मार्टफोन ऐप्स में एक इमरजेंसी बटन होता है, जिसे दबाने पर उस महिला की लोकेशन तत्काल पुलिस और निकटतम सुरक्षा अधिकारियों को भेजी जाती है। कुछ ऐप्स में ए.आई. तकनीक का उपयोग करके महिलाओं को पहले से किसी संभावित खतरे का संकेत मिलता है, जैसे कि यदि किसी महिला को किसी अजनबी ने घेर लिया है या उसे नुकसान पहुँचाने की कोशिश की है, तो ऐप स्वत: अलर्ट भेज सकता है।[3]

इसके अतिरिक्त, मशीन लर्निंग का उपयोग अपराधियों की पहचान और भविष्य में होने वाले अपराधों की भविष्यवाणी करने में किया जा सकता है। डेटा एनालिटिक्स और पैटर्न रेक,ग्निशन तकनीकों की मदद से, संभावित अपराधी की गतिविधियों को ट्रैक किया जा सकता है और उसे समय रहते रोका जा सकता है।

स्मार्ट डिवाइस और सेंसर- स्मार्ट डिवाइस और सेंसर भी महिला सुरक्षा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ महिलाओं के पास अब 'सेल्फ-डिफेंस' गहनों के रूप में स्मार्ट गहनों का विकल्प होता है, जैसे स्मार्ट बैंगल्स या हार, जो दबाने पर अलार्म या एसओएस संदेश भेजते हैं। इसके अलावा, कुछ स्मार्टवॉच और फिटनेस ट्रैकर्स भी आपातकालीन स्थिति में मदद करने के लिए डिजाइन किए गए हैं। ये डिवाइसें महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति की मॉनिटरिंग के साथ-साथ असामान्य गतिविधियों की पहचान भी कर सकती हैं, जैसे कि अचानक गिरना या लड़ाई-झगड़ा होना।[4]

डिजिटल प्लेटफार्म और सुरक्षा ऐप्स- भारत में कई डिजिटल प्लेटफार्म और सुरक्षा ऐप्स मौजूद हैं, जो महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, 'बीट-दी-फ्रंट' और 'सुरक्षा' जैसे ऐप्स में महिलाओं को एक बटन दबाकर तुरंत पुलिस और परिवार के सदस्य को अलर्ट भेजने का विकल्प मिलता है। इसके अलावा, महिला सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए कई पुलिस विभागों और गैर-सरकारी संगठनों ने विशेष ऐप्स और हेल्पलाइन नंबर भी शुरू किए हैं, जो किसी भी आपातकालीन स्थिति में तत्काल सहायता प्रदान करते हैं।

महिला सुरक्षा में ए.आई.की प्रमुख तकनीकें

फेस और ऑब्जेक्ट रिकग्निशन- ए.आई. का एक महत्वपूर्ण उपयोग महिला सुरक्षा में फेस और ऑब्जेक्ट रिकग्निशन की तकनीक के रूप में किया जा रहा है। इस तकनीक का उपयोग सुरक्षा कैमरों और निगरानी प्रणालियों में किया जाता है। ए.आई.आधारित कैमरे और सॉफ्टवेयर संदिग्ध व्यक्तियों की पहचान कर सकते हैं और उनकी गतिविधियों पर निगरानी रख सकते हैं। यह विशेष रूप से सार्वजनिक स्थानों जैसे मॉल, सड़क, पार्क,

और अन्य भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर महिलाओं की सुरक्षा में मददगार साबित हो रहा है।

फेस रिकग्निशन तकनीक में ए.आई. द्वारा व्यक्ति की चेहरे की विशेषताओं को स्कैन किया जाता है और उन्हें डेटाबेस में पहले से मौजूद चेहरों से मिलाया जाता है। यदि किसी संदिग्ध व्यक्ति का चेहरा पहले से पहचान में आता है या किसी अपराध में शामिल रहा है, तो उसे तुरंत अलर्ट किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर, अगर एक महिला किसी सार्वजनिक स्थान पर अकेले जा रही है और उसके आसपास संदिग्ध लोग मौजूद हैं, तो ए.आई. आधारित कैमरे उन व्यक्तियों को पहचान सकते हैं और तुरंत सुरक्षा अधिकारियों को सूचित कर सकते हैं। 2020 के अंत तक, चीन जैसे देशों में 300 मिलियन से अधिक CCTV कैमरे काम कर रहे थे, जिनमें ए.आई. आधारित फेस रिकग्निशन तकनीक का उपयोग किया जा रहा था।[5]

ऑब्जेक्ट रिकग्निशन तकनीक का उपयोग यह पहचानने में किया जाता है कि किसी स्थान पर कोई संदिग्ध वस्तु, जैसे कि हथियार या खतरनाक सामग्री, मौजूद है। ए. आई. सिस्टम को प्रशिक्षित करके यह सुनिश्चित किया जाता है कि वे किसी अप्रत्याशित या संदिग्ध वस्तु की पहचान कर सकें और तत्काल सुरक्षा अधिकारियों को सूचित कर सकें। इस प्रकार, ए.आई. आधारित निगरानी प्रणाली महिलाओं को संभावित खतरों से पहले ही चेतावनी देने में सक्षम होती है।

नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग- नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग तकनीक का उपयोग महिलाओं द्वारा आपातकाल में भेजे गए संदेशों या वॉयस कमांड को तुरंत समझने के लिए किया जाता है। NLP का उद्देश्य कंप्यूटर को मानव भाषा को समझने और विश्लेषण करने में सक्षम बनाना है। यह तकनीक महिला सुरक्षा ऐप्स में अत्यधिक उपयोगी साबित हो रही है, जहाँ महिलाओं को अपने संदेशों या वॉयस कमांड के जरिए तुरंत मदद की आवश्यकता होती है।

वॉयस रिकग्निशन और संदेश विश्लेषण के माध्यम से, NLP तकनीक महिला के द्वारा भेजे गए संकेतों को पहचान सकती है और आपातकालीन प्रतिक्रिया प्रणाली को सक्रिय कर सकती है। उदाहरण के लिए, एक महिला अगर किसी असुरक्षित स्थिति में है, तो वह अपनी वॉयस के जरिए सुरक्षा ऐप्स को अलर्ट कर सकती है, जैसे कि 'मुझे बचाओ' या ष्मुझे खतरा है। NLP तकनीक इन संदेशों को तुरन्त समझकर संबंधित अधिकारियों को सूचित करती है।[6]

भारत में 2017 में लॉन्च किए गए 'हिम्मत ऐप' में NLP का उपयोग किया गया है। इस ऐप का उद्देश्य महिलाओं को तत्काल मदद प्रदान करना है। इस ऐप को उपयोगकर्ता के द्वारा भेजे गए व,यस संदेशों या टेक्स्ट मैसेज से सक्रिय किया जाता है, और इस ऐप के जरिए महिलाओं की लोकेशन का ट्रैकिंग भी किया जा सकता है। जब किसी महिला को आपातकालीन स्थिति का सामना करना पड़ता है, तो यह ऐप तत्काल पुलिस और परिवार के सदस्यों को अलर्ट भेज देता है।[7]

प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स- प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स एक और ए.आई. तकनीक है जिसका महिला सुरक्षा में उपयोग किया जा रहा है। इस तकनीक का उद्देश्य पिछले अपराधों के डेटा का विश्लेषण करके भविष्य में संभावित अपराधों का अनुमान लगाना

है। ए.आई. द्वारा अपराधों का विश्लेषण करने से यह समझा जा सकता है कि कौन से स्थान या समय में अपराध की संभावना अधिक है और उसे रोकने के लिए क्या कदम उठाए जा सकते हैं।

उदाहरण के तौर पर, ए.आई. अपराध के रिकॉर्ड को देखकर यह पहचान सकता है कि किन स्थानों पर महिलाओं के खिलाफ हिंसा या यौन उत्पीड़न के मामले अधिक होते हैं। इसके आधार पर, सुरक्षा एजेंसियाँ इन क्षेत्रों में अधिक सुरक्षा इंतजाम कर सकती हैं, जैसे कि अतिरिक्त पुलिस गश्त, सीसीटीवी कैमरा निगरानी, और महिला पुलिसकर्मियों की तैनाती।[8]

डेटा एनालिटिक्स की मदद से यह भी समझा जा सकता है कि महिलाओं के खिलाफ अपराध कब और क्यों होते हैं और इसके आधार पर सुरक्षा उपायों को प्राथमिकता दी जा सकती है। भारत में 2018 के राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) के आंकड़ों के अनुसार, हर 16 मिनट में एक महिला के साथ अपराध होता है। इस प्रकार के आँकड़ों का विश्लेषण करने से प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स अपराधों को रोकने के लिए महत्वपूर्ण सुरक्षात्मक उपाय सुझा सकता है।[9]

स्मार्ट मोबाइल एप्लिकेशन- आजकल स्मार्टफोन का उपयोग जीवन के हर क्षेत्र में बढ़ रहा है, और महिलाओं की सुरक्षा को सुनिश्चित करने में भी स्मार्टफोन ऐप्स का अहम योगदान है। ए.आई. आधारित सुरक्षा ऐप्स महिलाओं को सुरक्षा के विभिन्न उपाय प्रदान करते हैं, जैसे कि SOS अलर्ट, रीयल-टाइम लोकेशन शेयरिंग, और नजदीकी थानों से संपर्क।

My Safetipin, Raksha, और Himmat App जैसे ए.आई. आधारित ऐप्स महिलाओं को अपने आसपास के खतरे के बारे में सचेत करते हैं। ये ऐप्स महिलाओं को इमरजेंसी में तुरंत SOS भेजने का विकल्प प्रदान करते हैं, जिससे उनके परिवार या सुरक्षा एजेंसियाँ तुरंत अलर्ट हो सकती हैं। इसके अलावा, इन ऐप्स में रीयल-टाइम लोकेशन ट्रैकिंग और पैनिक बटन जैसे फीचर्स होते हैं, जो आपातकालीन स्थितियों में महिला की लोकेशन और गतिविधियों का पता लगाने में मदद करते हैं।[10]

विशेष रूप से Himmat App को दिल्ली पुलिस द्वारा विकसित किया गया था, जो महिलाओं को उनके आसपास की सुरक्षा स्थिति के बारे में जानकारी प्रदान करता है और अगर उन्हें खतरा होता है तो तुरंत पुलिस को सूचित करता है। 2020 तक, इस ऐप को लगभग 2.5 मिलियन से अधिक लोगों द्वारा डाउनलोड किया गया था और इसने हजारों आपातकालीन मामलों में तुरंत मदद प्रदान की।

व्यावहारिक उदाहरण

हिमायत: दिल्ली पुलिस द्वारा 'हिम्मत ऐप'- दिल्ली पुलिस द्वारा विकसित 'हिम्मत ऐप' एक बहुत अच्छा उदाहरण है, जिसमें ए.आई. आधारित फीचर्स का उपयोग किया गया है। यह ऐप महिलाओं की सुरक्षा के लिए डिजाइन किया गया है, ताकि उन्हें किसी भी आपातकालीन स्थिति में तत्काल मदद मिल सके। 'हिम्मत ऐप' का उद्देश्य महिलाओं को उनका सुरक्षा अधिकार समझाना और उन्हें बिना किसी डर के मदद प्राप्त करने का एक सुरक्षित और सरल तरीका प्रदान करना है।[11]

हिम्मत ऐप के कुछ महत्वपूर्ण फीचर्स में निम्नलिखित शामिल हैं–

1.लोकेशन ट्रैकिंग- इस ऐप का सबसे महत्वपूर्ण फीचर महिलाओं का लोकेशन ट्रैकिंग है। जब भी कोई महिला आपातकालीन स्थिति का सामना करती है, ऐप का उपयोग करते हुए वह अपनी लोकेशन को तत्काल पुलिस और अपने परिवार के सदस्यों को भेज सकती है। इससे मदद के लिए पहुँचना तेज और सरल हो जाता है।

2. **SOS बटन और अलर्ट-** एक महिलाओं के लिए इस ऐप में SOS बटन का विकल्प उपलब्ध है, जो दबाते ही महिला की लोकेशन पुलिस और परिवार को भेज देता है। इसके अलावा, ऐप में वॉयस कमांड और टेक्स्ट कम्युनिकेशन के जरिए महिला अपनी स्थिति को और भी स्पष्ट कर सकती है।

3.रीयल-टाइम वीडियो रिकॉर्डिंग- हिम्मत ऐप में एक और शानदार फीचर रीयल-टाइम वीडियो रिकॉर्डिंग का है। जब महिला को खतरा महसूस होता है, तो वह इस ऐप के माध्यम से वीडियो रिकॉर्ड कर सकती है, जिसे पुलिस और परिवार को भेजा जा सकता है। यह महत्वपूर्ण सबूत प्रदान करता है, जो बाद में कानूनी कार्रवाई के लिए सहायक हो सकता है।[12]

इस ऐप के बारे में एक रिपोर्ट के अनुसार, 2020 तक इस ऐप को लगभग 2.5 मिलियन से अधिक लोग डाउनलोड कर चुके थे और इसने हजारों आपातकालीन स्थितियों में मदद प्रदान की थी।

CCTV निगरानी प्रणाली में ए.आई. का समावेश- आजकल मेट्रो शहरों में महिला सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए CCTV निगरानी प्रणाली में ए.आई. का समावेश किया जा रहा है। विशेष रूप से दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु, और अन्य प्रमुख शहरों में सुरक्षा के लिए स्मार्ट सिटी परियोजनाओं के तहत ए.आई. आधारित निगरानी कैमरे लगाए जा रहे हैं। ये कैमरे न केवल लाइव वीडियो फुटेज रिकॉर्ड करते हैं, बल्कि ए.आई. की मदद से संदिग्ध गतिविधियों को भी तुरंत पहचान सकते हैं और पुलिस को सतर्क कर सकते हैं।[13]

1.संदिग्ध गतिविधियों की पहचान- ए.आई. आधारित CCTV कैमरे संदिग्ध गतिविधियों की पहचान करने के लिए प्रशिक्षित होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति किसी महिला के पास आकर उसे परेशान करता है, तो ए.आई. तकनीक तुरंत इसे पहचान सकती है। ए.आई. निगरानी कैमरे स्वचालित रूप से संदिग्ध गतिविधियों को पहचानकर पुलिस को अलर्ट भेज सकते हैं।

2.वास्तविक समय में प्रतिक्रिया- ए.आई. द्वारा संचालित CCTV कैमरे रीयल-टाइम में वीडियो का विश्लेषण कर सकते हैं। यदि किसी व्यक्ति ने किसी महिला के साथ आपत्तिजनक व्यवहार किया है, तो उस स्थान पर एक तत्काल प्रतिक्रिया होती है। ये कैमरे संबंधित सुरक्षा अधिकारियों को तुरंत अलर्ट भेजते हैं, जिससे सुरक्षा एजेंसियों को तेजी से कार्रवाई करने का मौका मिलता है।

3.आंकड़ों का विश्लेषण और प्रेडिक्टिव एनालिटिक्स- ए.आई. तकनीक, CCTV कैमरे और डेटा विश्लेषण का उपयोग यह अनुमान लगाने के लिए किया जा सकता है कि किन स्थानों पर महिलाओं के खिलाफ अपराध अधिक होते हैं। इससे शहरों के उन क्षेत्रों में सुरक्षा की अतिरिक्त व्यवस्था की जा सकती है, जो महिलाओं के लिए अधिक

जोखिमपूर्ण हो सकते हैं।

उदाहरण के तौर पर, दिल्ली में स्मार्ट सिटी परियोजना के तहत CCTV निगरानी में ए.आई. का समावेश किया गया है, जिससे शहर भर में महिला सुरक्षा में बढ़ोतरी हुई है। ए.आई. आधारित CCTV कैमरों द्वारा की गई निगरानी और डेटा विश्लेषण से पहले से तय किया जा सकता है कि किसी स्थान पर अपराध होने की अधिक संभावना है, और उसे रोकने के लिए सुरक्षात्मक कदम उठाए जा सकते हैं।

चैटबॉट्स और हेल्पलाइन असिस्टेंट्स- ए.आई. की एक और महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकी जो महिला सुरक्षा में सहायक हो रही है, वह है चैटबॉट्स और हेल्पलाइन असिस्टेंट्स। इन वर्चुअल असिस्टेंट्स का उपयोग महिलाओं को कानूनी सहायता, मानसिक स्वास्थ्य परामर्श और आपातकालीन सहायता प्रदान करने के लिए किया जा रहा है।[14] ए.आई. आधारित चैटबॉट्स और हेल्पलाइन असिस्टेंट्स 24/7 उपलब्ध रहते हैं और महिला उपयोगकर्ताओं को तुरंत प्रतिक्रिया प्रदान करते हैं।

1.कानूनी सहायता- कई ए.आई. चैटबॉट्स और हेल्पलाइन असिस्टेंट्स महिलाओं को कानूनी सहायता प्रदान करने में मदद करते हैं। जब कोई महिला यौन उत्पीड़न, घरेलू हिंसा, या अन्य किसी अपराध का शिकार होती है, तो ये असिस्टेंट्स उसे कानूनी विकल्प, सही प्रक्रिया और आवश्यक दस्तावेजों की जानकारी देते हैं। इसके अलावा, ये असिस्टेंट्स महिला को अगले कदम उठाने के लिए मार्गदर्शन भी करते हैं, जैसे कि पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करना या अस्पताल में चिकित्सा सहायता प्राप्त करना।

2.मानसिक स्वास्थ्य परामर्श- मानसिक स्वास्थ्य भी महिला सुरक्षा के महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है। कई ए.आई. चैटबॉट्स महिलाओं को मानसिक स्वास्थ्य परामर्श भी प्रदान करते हैं। ये चैटबॉट्स महिलाओं से उनकी भावनाओं और अनुभवों के बारे में बात करते हैं, और उन्हें मदद की आवश्यकता होने पर उचित मानसिक स्वास्थ्य पेशेवर से संपर्क करने की सलाह देते हैं। Wysa और Woebot जैसे ए.आई. आधारित चैटबॉट्स महिलाओं को तनाव, चिंता, अवसाद और अन्य मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के लिए सहायक बातें प्रदान करते हैं।

3.आपातकालीन मदद- ए.आई. चैटबॉट्स आपातकालीन स्थितियों में तुरंत मदद प्रदान करने के लिए डिजाइन किए जाते हैं। जैसे ही महिला किसी खतरे की स्थिति का सामना करती है, वह चैटबॉट्स को अपनी स्थिति के बारे में जानकारी दे सकती है। इसके बाद, चैटबॉट्स महिला की लोकेशन और समस्या को समझकर उसे आपातकालीन सेवाएँ जैसे कि पुलिस, एम्बुलेंस या मानसिक स्वास्थ्य सहायता तक पहुँचाते हैं। उदाहरण– ब्रिटेन में "TrueImage" नामक एक ए.आई. चैटबॉट्स महिला उपयोगकर्ताओं को घरेलू हिंसा, उत्पीड़न, और यौन शोषण के मामलों में सलाह और कानूनी सहायता प्रदान करता है। यह चैटबॉट उपयोगकर्ता के संदेशों का विश्लेषण करता है और सही मार्गदर्शन देता है।

चुनौतियाँ- महिला सुरक्षा के क्षेत्र में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ए.आई. तकनीकों के बढ़ते उपयोग के बावजूद, कई चुनौतियाँ भी सामने आती हैं, जिनका समाधान करना आवश्यक है ताकि इन तकनीकों का अधिकतम लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँच

सके। ए.आई. आधारित सुरक्षा उपाय प्रभावी और सुरक्षित होने चाहिए, साथ ही सभी महिलाओं तक समान रूप से उपलब्ध होने चाहिए। यहाँ हम उन प्रमुख चुनौतियों पर विस्तार से चर्चा करेंगे जो महिला सुरक्षा में ए.आई. के उपयोग में बाधा उत्पन्न कर रही हैं।

प्राइवेसी की चिंता- ए.आई. तकनीकों में डेटा का संग्रह और विश्लेषण एक अनिवार्य हिस्सा होता है। महिला सुरक्षा के लिए प्रयुक्त ए.आई. सिस्टम जैसे कि फेस रिकग्निशन, लोकेशन ट्रैकिंग, और वीडियो निगरानी में बड़ी मात्रा में संवेदनशील व्यक्तिगत डेटा एकत्रित किया जाता है। इस डेटा की सुरक्षा और निजता को सुनिश्चित करना सबसे बड़ी चुनौती है।[15]

डेटा लीक और गलत उपयोग- यदि ये डेटा सुरक्षा के उचित प्रबंधों के बिना संग्रहित किया जाए, तो इसका दुरुपयोग हो सकता है। महिलाओं की लोकेशन, व्यक्तिगत पहचान, और निजी बातचीत जैसे डेटा का गलत हाथों में जाना उनके लिए नई समस्याएँ पैदा कर सकता है। उदाहरण के तौर पर, अगर लोकेशन ट्रैकिंग डेटा किसी अपराधी के हाथ लग जाए, तो महिला की सुरक्षा और भी खतरे में पड़ सकती है।

प्राइवेसी उल्लंघन के जोखिम- ए.आई. आधारित फेस रिकग्निशन और CCTV निगरानी प्रणालियाँ महिलाओं के अधिकारों और निजता का उल्लंघन कर सकती हैं। बिना महिला की सहमति के उनके निजी स्थानों और गतिविधियों की निगरानी करना संवैधानिक और नैतिक रूप से गलत है।

डेटा संरक्षण कानूनों का अभाव या कमी- भारत में व्यक्तिगत डेटा सुरक्षा अधिनियम अभी भी विकसित हो रहा है, जिससे प्राइवेसी सुरक्षा की कमी बनी हुई है। जब तक सख्त डेटा संरक्षण नीतियाँ लागू नहीं होतीं, तब तक महिलाओं का डेटा जोखिम में रहेगा।

तकनीकी साक्षरता की कमी- ए.आई. आधारित सुरक्षा तकनीकों का उपयोग तभी प्रभावी हो सकता है जब महिलाएं इन तकनीकों और उपकरणों को समझ सकें और उनका सही उपयोग कर सकें। लेकिन ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में महिलाओं में तकनीकी साक्षरता की कमी एक बड़ी बाधा है।

डिजिटल डिवाइड- भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 65 प्रतिशत महिलाएं इंटरनेट और स्मार्टफोन का उपयोग नहीं कर पाती हैं। ऐसी स्थिति में ए.आई. आधारित मोबाइल ऐप्स और सुरक्षा तकनीकें इन महिलाओं तक पहुंच पाना कठिन होता है।

शिक्षा और प्रशिक्षण की कमी- तकनीकी जानकारी और डिजिटल साक्षरता के अभाव में महिलाएं न केवल इन ऐप्स का उपयोग करने में असमर्थ होती हैं, बल्कि वे साइबर खतरों और तकनीकी जालसाजी की शिकार भी हो सकती हैं।

भाषाई बाधाएँ- कई ए.आई. ऐप्स और चैटबॉट्स केवल अंग्रेजी या कुछ प्रमुख भाषाओं में उपलब्ध होते हैं, जिससे क्षेत्रीय और स्थानीय भाषाओं की महिलाओं को उनका उपयोग करना मुश्किल होता है।

भौगोलिक असमानता- भारत जैसे विशाल देश में तकनीकी संसाधनों और सुरक्षा प्रणालियों का वितरण असमान है।[16] शहरी और ग्रामीण, विकसित और पिछड़े इलाकों के बीच ए.आई. तकनीकों का उपयोग और पहुंच में बड़ा अंतर है।

शहरी बनाम ग्रामीण क्षेत्र- महानगरों में ए.आई. आधारित CCTV, स्मार्टफोन ऐप्स, और तेज इंटरनेट जैसी सुविधाएँ अधिक उपलब्ध हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी डिजिटल अवसंरचना (Infrastructure) की कमी है। इसका परिणाम यह होता है कि ग्रामीण महिलाओं को ए.आई. आधारित सुरक्षा सेवाओं का लाभ बहुत कम मिलता है।

असमान सुरक्षा कवरेज- ग्रामीण इलाकों में पुलिस स्टेशन और सुरक्षा अधिकारियों की कमी होती है। ऐसे क्षेत्रों में ए.आई. आधारित सिस्टम के लिए आवश्यक समर्थन भी सीमित होता है, जिससे आपातकालीन स्थिति में मदद पहुँचाना कठिन हो जाता है।

संसाधनों की कमी- ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली, नेटवर्क कनेक्टिविटी और तकनीकी उपकरणों की कमी ए.आई. आधारित तकनीकों के प्रभावी उपयोग में बाधा डालती है।

भविष्य की दिशा- ए.आई. तकनीक में निरंतर विकास के साथ महिला सुरक्षा के क्षेत्र में अत्यंत सटीक, अनुकूल और किफायती समाधान विकसित होने की संभावनाएं तेजी से बढ़ रही हैं। आज की डिजिटल दुनिया में महिलाओं की सुरक्षा एक महत्वपूर्ण चुनौती है, जिसे पारंपरिक तरीकों से पूरी तरह हल करना संभव नहीं हो पा रहा। ऐसे में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) की तकनीकें महिलाओं की सुरक्षा के लिए नए आयाम खोल रही हैं। विशेषज्ञों के अनुसार, अगले 5 से 10 वर्षों में ए.आई. तकनीक में होने वाले उन्नत विकास से महिलाओं की सुरक्षा के क्षेत्र में कई क्रांतिकारी बदलाव आएंगे।

सबसे पहले, वियरएबल डिवाइसेज (Wearable Devices) महिलाओं की सुरक्षा के लिए बहुत प्रभावशाली साबित होंगी। वर्तमान में उपलब्ध स्मार्ट वॉच, पेंडेंट, और ब्रेसलेट में GPS ट्रैकिंग, SOS अलार्म, और हार्टबीट मॉनिटरिंग जैसी सुविधाएं हैं। भविष्य में, ए.आई. सक्षम वियरएबल डिवाइसेज अधिक संवेदनशील और स्मार्ट होंगी, जो खतरनाक परिस्थितियों का अनुमान पहले से लगा सकेंगी। उदाहरण के तौर पर, अगर कोई महिला खतरे में है, तो ये डिवाइसेज न केवल उसकी लोकेशन तुरंत पुलिस को सूचित करेंगी, बल्कि आसपास के सुरक्षा नेटवर्क को भी सक्रिय कर देंगी। अनुमान है कि 2030 तक विश्व में 75 प्रतिशत महिलाएं ऐसे स्मार्ट वियरएबल्स का उपयोग करेंगी, जिससे महिलाओं की सुरक्षा की घटनाओं में 40 प्रतिशत तक कमी आ सकती है।[17]

दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र है ए.आई. ड्रोन। ड्रोन का उपयोग पहले से ही निगरानी, आपदा प्रबंधन, और खोज एवं बचाव कार्यों में किया जा रहा है। महिला सुरक्षा के लिए ड्रोन तकनीक का विस्तार और बेहतर होगा। ये ड्रोन संवेदनशील इलाकों में गश्त करेंगे, संदिग्ध गतिविधियों को तुरंत पहचानेंगे, और खतरे की स्थिति में तत्काल प्रतिक्रिया देंगे। ड्रोन में ए.आई. तकनीक के कारण वेड़ में छुपे खतरों का अनुमान लगाना और स्वत: आवश्यक सहायता भेजना संभव होगा। उदाहरण के लिए, अगर कोई महिला अकेली चल रही है और उसे खतरा महसूस होता है, तो ड्रोन उसकी मदद के लिए तुरंत स्थान पर पहुंच सकता है। आने वाले दशक में ड्रोन सुरक्षा प्रणालियों का विस्तार 60 प्रतिशत तक होगा, जिससे महिला सुरक्षा में काफी सुधार होगा।

तीसरा पहलू है स्मार्ट सिटी इन्फ्रास्ट्रक्चर में ए.आई. का समावेश, विशेषकर स्मार्ट स्ट्रीट लाइट्स। आजकल स्मार्ट स्ट्रीट लाइट्स में सेंसर लगे होते हैं, जो प्रकाश को

नियंत्रित करते हैं। भविष्य में ये स्मार्ट लाइट्स ए.आई. के साथ जुड़कर संदिग्ध गतिविधियों का पता लगा सकेंगी। जैसे कि किसी सुनसान इलाके में अनजान व्यक्ति का प्रवेश होते ही लाइट अपने आप तेज हो जाएगी और संबंधित सुरक्षा एजेंसियों को अलर्ट भेज देगी। इससे महिलाओं के लिए रात के समय अकेले बाहर निकलना अधिक सुरक्षित हो जाएगा। शोध बताते हैं कि स्मार्ट स्ट्रीट लाइट्स की स्थापना से अपराध दर में 25 से 30 प्रतिशत की गिरावट आ सकती है।

इसके अलावा, ए.आई. आधारित वीडियो एनालिटिक्स और फेशियल रिकग्निशन तकनीकें भी महिला सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी। CCTV कैमरों के साथ जुड़े ए.आई. सिस्टम संदिग्ध व्यवहार को पहचानकर तुरंत अलर्ट भेजेंगे। इससे पुलिस और सुरक्षा एजेंसियां तेजी से प्रतिक्रिया कर सकेंगी। इसके साथ ही, ए.आई. चैटबॉट्स और हेल्पलाइन सिस्टम भी 24/7 महिलाओं की सहायता के लिए उपलब्ध रहेंगे, जो आपातकालीन स्थिति में उन्हें मानसिक और तकनीकी समर्थन देंगे।

महिला सुरक्षा के लिए ए.आई. तकनीक का यह विकास न केवल तकनीकी रूप से उन्नत होगा, बल्कि इसे किफायती भी बनाया जाएगा ताकि हर वर्ग की महिला इसका लाभ उठा सके। अनुमान है कि अगले 10 वर्षों में ए.आई. आधारित सुरक्षा उपकरणों की लागत 50 प्रतिशत तक कम हो जाएगी, जिससे ये तकनीक अधिक सुलभ बनेगी। सरकारें और निजी संस्थान भी इस क्षेत्र में निवेश बढ़ाएंगे, जिससे एक व्यापक सुरक्षा नेटवर्क तैयार होगा।

अंततः, भविष्य में ए.आई. तकनीक महिलाओं की सुरक्षा का एक अनिवार्य और प्रभावी हिस्सा बन जाएगी। वियरएबल डिवाइसेज, ए.आई.सक्षम ड्रोन, स्मार्ट स्ट्रीट लाइट्स, और उन्नत वीडियो एनालिटिक्स मिलकर एक समग्र सुरक्षा प्रणाली का निर्माण करेंगे जो महिलाओं को अधिक सुरक्षित, आत्मनिर्भर, और सशक्त बनाएगी। इससे महिलाओं के प्रति समाज का दृष्टिकोण भी सकारात्मक रूप से बदलेगा और वे भयमुक्त होकर जीवन के हर क्षेत्र में अपने अधिकारों का उपयोग कर सकेंगी। इसलिए ए.आई. तकनीक की निरंतर प्रगति महिला सुरक्षा के भविष्य की दिशा को नयी ऊँचाइयों पर ले जाएगी।

निष्कर्ष- ए.आई. तकनीक महिला सुरक्षा के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी भूमिका निभा सकती है, बशर्ते इसे सही दिशा में और उत्तरदायित्व के साथ प्रयोग किया जाए। आज के डिजिटल युग में जब महिलाओं की सुरक्षा एक बड़ी चिंता का विषय बन चुकी है, तब ए.आई. तकनीक एक प्रभावी समाधान प्रदान कर सकती है। इसके माध्यम से हम न केवल सटीक और त्वरित प्रतिक्रिया सुनिश्चित कर सकते हैं, बल्कि महिलाओं को असुरक्षित महसूस करने की स्थितियों से भी निपटने के लिए मजबूत संरचनाएं विकसित कर सकते हैं। हालांकि, इस तकनीक के सही उपयोग के लिए नीति-निर्माताओं, तकनीकी विशेषज्ञों, और समाज को मिलकर काम करने की आवश्यकता है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि ए.आई. आधारित महिला सुरक्षा तंत्र का निर्माण करते समय सभी पक्षों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए। इसके साथ ही, यह जरूरी है कि इस तकनीक का प्रयोग पूरी तरह से उत्तरदायित्वपूर्ण और संवेदनशील तरीके से किया जाए,

ताकि इसका दुरुपयोग न हो।

सरकारों को उपयुक्त नीतियाँ और कानून बनाकर इन तकनीकों को कानूनी दायरे में लाना होगा। वहीं, तकनीकी विशेषज्ञों को यह सुनिश्चित करना होगा कि ए.आई. प्रणालियाँ सही डेटा और एल्गोरिदम का उपयोग करती हैं, ताकि महिलाओं के अधिकारों का उल्लंघन न हो और उनकी सुरक्षा में कोई चूक न हो। इसके अलावा, समाज में तकनीकी साक्षरता बढ़ाना और महिलाओं के अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। यदि इन सभी पहलुओं को सही ढंग से लागू किया जाता है, तो ए. आई. तकनीक महिलाओं की सुरक्षा को एक नई दिशा दे सकती है, जिससे एक सुरक्षित और समर्थ समाज का निर्माण हो सके। इस दिशा में निरंतर प्रयास और सुधार की आवश्यकता होगी, लेकिन यह एक सशक्त भविष्य की नींव रखेगा, जहां महिलाएं बिना किसी भय के अपने जीवन के हर क्षेत्र में आगे बढ़ सकेंगी।

संदर्भ सूची-

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन (2019), महिलाओं के विरुद्ध हिंसा: एक वैश्विक स्वास्थ्य समस्या, WHO प्रेस जिनेवा।
2. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (2017), गृह मंत्रालय नई दिल्ली, भारत सरकार
3. शर्मा, ए, कुमार, आर, – गुप्ता, एस (2021), आपातकालीन अलर्ट सिस्टम में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का अनुप्रयोग। भारतीय प्रौद्योगिकी पत्रिका, 15(3), पृष्ठ संख्या 45
4. मेहता, पी, व्यास, डी, – जोशी, एम (2020), स्मार्ट डिवाइस और महिला सुरक्षा: एक तकनीकी विश्लेषण। साइबर सुरक्षा अनुसंधान नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 78
5. झांग, एल, वांग, क्यू, – ली, एच (2020), चीन में AI आधारित निगरानी प्रणालियों का विकास, एशियाई प्रौद्योगिकी समीक्षा, पृष्ठ संख्या 112
6. अग्रवाल, आर, सिंह, वी, – चौहान, ए (2019), प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण और महिला सुरक्षा एप्लिकेशन। कंप्यूटर विज्ञान अनुसंधान, पृष्ठ संख्या 219
7. दिल्ली पुलिस (2017), हिम्मत ऐप: महिला सुरक्षा में एक नई पहल, दिल्ली पुलिस प्रकाशन, दिल्ली
8. पटेल, एन, शाह, के, – रेड्डी, एस (2021), अपराध पूर्वानुमान में मशीन लर्निंग की भूमिका, भारतीय पुलिस अनुसंधान पत्रिका, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 51
9. राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (2019), गृह मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली
10. वर्मा, ए, कपूर, आर, – मिश्रा, पी (2020), भारत में महिला सुरक्षा मोबाइल एप्लिकेशन का तुलनात्मक अध्ययन। सामाजिक प्रौद्योगिकी अनुसंधान केंद्र , पृष्ठ संख्या 104
11. दिल्ली पुलिस (2018), हिम्मत ऐपरू उपयोग और प्रभावशीलता रिपोर्ट, दिल्ली पुलिस मुख्यालय, दिल्ली
12. गुप्ता, एस, शर्मा, डी, – कुमार, ए (2021), रियल-टाइम वीडियो रिकॉर्डिंग और महिला सुरक्षा, डिजिटल सुरक्षा पत्रिका, 9(3), पृष्ठ संख्या 67
13. स्मार्ट सिटी मिशन (2020), भारतीय शहरों में AI आधारित निगरानी प्रणालियों का कार्यान्वयन, शहरी विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
14. राजपूत, एम, सक्सेना, वी, – थॉमस, जे (2020), चौटबॉट्स और महिला सुरक्षा: एक व्यापक समीक्षा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता अनुसंधान केंद्र, पृष्ठ संख्या 173
15. खान, एफ, अली, एस, – नायडू, पी (2021), AI प्रणालियों में डेटा गोपनीयता की

चुनौतियां, साइबर कानून समीक्षा, पृष्ठ संख्या 45

16. मिश्रा, ए, पांडे, आर, – त्रिपाठी, एस (2020), भारत में डिजिटल विभाजन और महिला सुरक्षा पर इसका प्रभाव, सामाजिक न्याय अध्ययन केंद्र, पृष्ठ संख्या 94
17. तकनीकी पूर्वानुमान संस्थान (2021), 2030 तक वियरेबल तकनीक का भविष्य, प्रौद्योगिकी अनुसंधान केंद्र मुंबई

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India

Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0973-3914

9 770973 391009

Honorary Editor: Prof. Akhilesh Shukla, Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications, Rewa - 486001 (M.P.)
and Printed at Glory Offset Nagpur